जीव विज्ञान

कक्षा 11 के लिए पाठ्यपुस्तक



राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
फरवरी 2006 फाल्गुन 1927

PD 3T + 2T MB

ISBN 81-7450-509-1

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नई दिल्ली 110 016

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III इस्टेज
बैंगलूर 560 085

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप
पनिहटी
कोलकाता 700 114

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021

प्रकाशन सहयोग

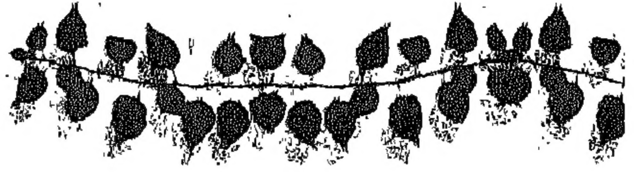
अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग	:	पी.राजाकुमार
मुख्य उत्पादन अधिकारी	:	शिव कुमार
मुख्य संपादक	:	श्वेता उप्पल
मुख्य व्यापार अधिकारी	:	गौतम गांगुली
संपादक	:	मरियम बारा
उत्पादन सहायक	:	मुकेश गौड़

सज्जा एवं आवरण
श्वेता राव

चित्रांकन
ललित कुमार मौर्या

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा यंग प्रिंटिंग प्रेस, 2626, गली नं. 7, बिहारी कॉलोनी, शाहदरा, दिल्ली 110 032 द्वारा मुद्रित।



आमुख

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) सुझाती है कि बच्चों के स्कूली जीवन को बाहर के जीवन से जोड़ा जाना चाहिए। यह सिद्धांत किताबी ज्ञान की उस विरासत के विपरीत है जिसके प्रभाववश हमारी व्यवस्था आज तक स्कूल और घर के बीच अंतराल बनाए हुए हैं। नई राष्ट्रीय पाठ्यचर्या पर आधारित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें इस बुनियादी विचार पर अमल करने का प्रयास है। इस प्रयास में हर विषय को एक मज़बूत दीवार से घेर देने और जानकारी को रटा देने की प्रवृत्ति का विरोध शामिल है। आशा है कि ये कदम हमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में वर्णित बाल-केंद्रित व्यवस्था की दिशा में काफ़ी दूर तक ले जाएँगे।

इस प्रयत्न की सफलता अब इस बात पर निर्भर है कि स्कूलों के प्राचार्य और अध्यापक बच्चों को कल्पनाशील गतिविधियों और सवालों की मदद से सीखने और सीखने के दौरान अपने अनुभवों पर विचार करने का कितना अवसर देते हैं। हमें यह मानना होगा कि यदि जगह, समय और आज़ादी दी जाए तो बच्चे बड़ों द्वारा सौंपी गई सूचना-सामग्री से जुड़कर और जूझकर नए ज्ञान का सृजन करते हैं। शिक्षा के विविध साधनों एवं स्रोतों की अनदेखी किए जाने का प्रमुख कारण पाठ्यपुस्तक को परीक्षा का एकमात्र आधार बनाने की प्रवृत्ति है। सर्जना और पहल को विकसित करने के लिए ज़रूरी है कि हम बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में पूरा भागीदार मानें और बनाएँ, उन्हें ज्ञान की निर्धारित खुराक का ग्राहक मानना छोड़ दें।

ये उद्देश्य स्कूल की दैनिक ज़िंदगी और कार्यशैली में काफ़ी फेरबदल की माँग करते हैं। दैनिक समय-सारणी में लचीलापन उतना ही ज़रूरी है जितना वार्षिक कैलेण्डर के अमल में चुस्ती, जिससे शिक्षण के लिए नियत दिनों की संख्या हकीकत बन सके। शिक्षण और मूल्यांकन की विधियाँ भी इस बात को तय करेंगी कि यह पाठ्यपुस्तक स्कूल में बच्चों के जीवन को मानसिक दबाव तथा बोरियत की जगह खुशी का अनुभव बनाने में कितनी प्रभावी सिद्ध होती है। बोझ की समस्या से निपटने के लिए पाठ्यक्रम निर्माताओं ने विभिन्न चरणों में ज्ञान का पुनर्निर्धारण करते समय बच्चों के मनोविज्ञान एवं अध्यापन के लिए उपलब्ध समय का ध्यान रखने की पहले से अधिक सचेत कोशिश की है। इस कोशिश को और गहराने के यत्न में यह पाठ्यपुस्तक सोच-विचार और विस्मय, छोटे समूहों में बातचीत एवं बहस और हाथ से की जाने वाली गतिविधियों को प्राथमिकता देती है।

एन.सी.ई.आर.टी. इस पुस्तक की रचना के लिए बनाई गई पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के परिश्रम के लिए कृतज्ञता व्यक्त करती है। परिषद् विज्ञान एवं गणित पाठ्यपुस्तक सलाहकार समूह के अध्यक्ष प्रोफ़ेसर जयंत विष्णु नार्लीकर और इस पुस्तक के मुख्य सलाहकार, प्रोफ़ेसर के. मुरलीधर, जंतु विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली के द्वारा समिति के कार्यों का मार्गदर्शन करने के लिए विशेष आभारी है। इस पाठ्यपुस्तक के विकास में कई शिक्षकों ने योगदान किया, इस योगदान को संभव बनाने के लिए हम उनके प्राचार्यों के आभारी हैं। हम उन सभी संस्थाओं और संगठनों के



प्रति कृतज्ञ हैं जिन्होंने अपने संसाधनों, सामग्री तथा सहयोगियों की मदद लेने में हमें उदारतापूर्वक सहयोग दिया। हम माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रोफ़ेसर मृणाल मीरी एवं प्रोफ़ेसर जी.पी. देशपांडे की अध्यक्षता में गठित निगरानी समिति (मॉनिटरिंग कमेटी) के सदस्यों को अपना मूल्यवान समय और सहयोग देने के लिए धन्यवाद देते हैं। व्यवस्थागत सुधारों और अपने प्रकाशनों में निरंतर निखार लाने के प्रति समर्पित एन.सी.ई.आर.टी. टिप्पणियों एवं सुझावों का स्वागत करेगी जिनसे भावी संशोधनों में मदद ली जा सके।

निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद

नई दिल्ली
20 दिसंबर 2005



पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अध्यक्षः विज्ञान एवं गणित पाठ्यपुस्तक सलाहकार समिति

जे.वी. नार्लीकर, *इमेरिटस प्रोफ़ेसर*, अंतर-विश्वविद्यालय केंद्र : खगोलविज्ञान और खगोलभौतिकी, पुणे

मुख्य सलाहकार

के. मुरलीधर, आचार्य जंतु विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सदस्य

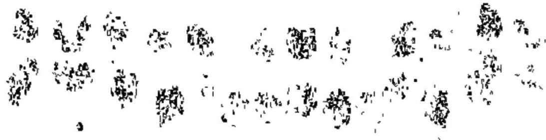
अजीत कुमार कवठेकर, *प्रवाचक* (वनस्पति विज्ञान), श्री वेंक्टेश्वर कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
आर.के. सेठ, यू.जी.सी. वैज्ञानिक सी, जंतु विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
आर.पी. सिंह, *प्रवक्ता (जीव विज्ञान)*, राजकीय प्रतिभा विकास विद्यालय, किशनगंज, दिल्ली
एस.सी. जैन, *आचार्य*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
के. सरथ चंद्रन, *प्रवाचक (जंतु विज्ञान)*, श्री वेंक्टेश्वर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
जे.एस. गिल, *आचार्य*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
टी.एन. लखनपाल, *आचार्य (अवकाश प्राप्त)*, जैव विज्ञान विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला
तेजिंदर चावला, *पी.जी.टी. (जीव विज्ञान)*, गुरु हरकिशन पब्लिक स्कूल, वसंत विहार, नई दिल्ली
दिनेश कुमार, *प्रवाचक*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
नलिनी निगम, *प्रवाचक (वनस्पति विज्ञान)*, रामजस कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रतिमा गौर, *आचार्या*, जंतु-विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
बी.बी.पी. गुप्ता, *आचार्य*, जंतु विज्ञान विभाग, *नार्थ-ईस्टर्न हिल यूनीवर्सिटी*, शिलांग
यू.के. नंदा, *आचार्य*, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भुवनेश्वर
रत्नम कौल वट्टल, *प्रवाचक (वनस्पति विज्ञान)*, जाकिर हुसैन कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
संगीता शर्मा, *पी.जी.टी (जीव विज्ञान)*, केंद्रीय विद्यालय, जे.एन.यू., नई दिल्ली
सावित्री सिंह, *प्राचार्य*, आचार्य नरेंद्र देव कालेज, दिल्ली विश्वविद्याल, दिल्ली; भूतपूर्व सदस्य, विज्ञान शिक्षा एवं संचार केंद्र, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
सी.वी. सिमरे, *प्रवक्ता*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
सुनयना शर्मा, *प्रवक्ता (जीव विज्ञान)*, राजकीय प्रतिभा विकास विद्यालय, द्वारका, नई दिल्ली

हिंदी अनुवादक

उदेश शर्मा, *प्रवक्ता (जीव विज्ञान)*, जवहार राज.हा.से. स्कूल, अजमेर
एस.के. सिंह, *सहायक अचार्य*, कालेज ऑफ फिशरीज, राजेंद्र कृ.वि.वि. ढोली, मुजफ्फरपुर
कवींद्र नाथ तिवारी, *प्रवाचक (वनस्पति विज्ञान)*, महिला महाविद्यालय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
के.बी. गुप्ता, *प्रोफ़ेसर (अवकाश प्राप्त)*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
पी.आर. यादव, *प्रवाचक (जंतु विज्ञान)*, डी.ए.वी. कालेज, मुजफ्फरनगर
शारदेंदु, *प्रवाचक (वनस्पति विज्ञान)*, साइंस कालेज, पटना विश्वविद्यालय, पटना

सदस्य-समन्वयक

बी.के. त्रिपाठी, *प्रवाचक*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली




शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के ध्यानार्थ

जीव विज्ञान जीवों का व्यवस्थित अध्ययन है। यह पृथ्वी पर जीवों की कथा है। जीव विज्ञान जीवन के स्वरूपों एवं जीवन प्रक्रमों का विज्ञान है। जीव वैज्ञानिक प्रणाली प्राय: उन भौतिक नियमों को चुनौती देती है जोकि पदार्थ के व्यवहार और हमारे जगत में ऊर्जा को नियंत्रित करते हैं। ऐतिहासिक रूप से, जीव वैज्ञानिक ज्ञान मानव शरीर एवं उसकी क्रियाशीलता के आनुषांगिक ज्ञान का रूप रहा। बाद में; जैसा कि हम जानते हैं, इसे औषधीय व्यवहार के आधार पर जाना गया। यद्यपि जीव वैज्ञानिक ज्ञान का अंशत: विकास मानव उपयोग से अलग हटकर के भी हुआ तथा जीवन की उत्पत्ति, जैव-विविधता के विस्तार की उत्पत्ति, विभिन्न पर्यावासों में वनस्पति एवं प्राणियों का विकास आदि जैसे मूलभूत प्रश्न जीवविज्ञानियों की परिकल्पना में समाहित हुए।

जीवधारियों का वृहद् वर्णन, चाहे वह संरचना-विकास या शरीर क्रिया विज्ञान अथवा वर्गीकरण आदि का परिप्रेक्ष्य रहा हो, इन सबने वैज्ञानिकों को पूर्णतया आकर्षित किया, परंतु कुछ और नहीं तो सुविधावश, विषय वस्तु का कृत्रिम विभाजन वनस्पति विज्ञान एवं जंतु विज्ञान और अन्य अंगों यहाँ तक कि बाद में सूक्ष्म जीव विज्ञान उपखंडों में कर दिया। इस दौरान, जीव विज्ञान में भौतिक विज्ञान की सघन भागीदारी हुई और जीव विज्ञान के क्षेत्र में जैव रसायन तथा जैव भौतिकी जैसी नई उपविधाएं स्थापित हुईं। 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में मेंडेल के कार्य एवं उसके अनुसंधानों ने आनुवंशिक विज्ञान के अध्ययन को प्रोत्साहित किया। डी एन ए की दोहरी हेलिकल संरचना की खोज और अनेक जैव अणुओं की त्रैआयामी संरचना के गूढ़ लिप्यांतरण ने प्रभुत्वपूर्ण आण्विक जीव विज्ञान के क्षेत्र को प्रतिभासिक विकास दिया और इसे स्थापित किया। एक अर्थ में, कार्यात्मक विधा जिसका जीव प्रक्रमों में निहित क्रिया विधि पर ज्यादा प्रभाव है उसे अधिक ध्यान, समर्थन, बौद्धिक तथा सामाजिक मान्यता प्राप्त हुई। दुर्भाग्यवश जीव विज्ञान को संस्थापित एवं आधुनिक जीव विज्ञान में बाँट दिया गया। अतएव बहुत से कार्यरत जीव वैज्ञानिकों के प्रयास का लक्ष्य जीव वैज्ञानिक अनुसंधानों, जिज्ञासा एवं परिकल्पना प्रेरित बौद्धिक प्रयोगों की अपेक्षा कुछ अधिक ही अनुभववादी बन गया जैसा कि सैद्धांतिक भौतिकी, प्रयोगात्मक भौतिकी, संरचनात्मक रसायन विज्ञान एवं पदार्थ विज्ञान में होता है। सौभाग्यवश और सहज ही जीव विज्ञान के सामान्य एकीकारी सिद्धांतों की खोज एवं अनुसंधान हुए और उनका महत्व भी बढ़ा। डोबेजनास्की, हालडेन, पेरूज, खुराना, मार्गन, डार्लिंग्टन, फिशर तथा अन्य के कार्यों से जीव विज्ञान की संस्थापित एवं आण्विक, दोनों विधाओं को सम्मान एवं गरिमा प्राप्त हुई। परिस्थितिकी विज्ञान तथा वर्गिकी जीव विज्ञान एकीकारी जीव वैज्ञानिक विधा के रूप में स्थापित हुई। जीव विज्ञान के हर क्षेत्र का न केवल जीव विज्ञान की विशिष्ट शाखाओं ही बल्कि विज्ञान एवं गणित की विभिन्न विधाओं के साथ भी संबंध विकसित हुआ। शीघ्र ही इनके बीच की सीमाएं समाप्त होने लगीं और अब ये सीमाएं पूर्ण रूप से विलुप्त होने की कगार पर हैं। मानव जीव विज्ञान, जैव चिकित्सा विज्ञान तथा मानव मस्तिष्क की संरचना, कार्य तथा मूलक्रिया में हुई विशेष प्रगति ने जीव विज्ञान को मर्यादित तथा रहस्यमय बनाया और दार्शनिक सूक्ष्मदृष्टि प्रदान की है। यहाँ तक कि जीव विज्ञान आज प्रयोगशालाओं, संग्रहालयों तथा प्राकृतिक उद्यानों तक सीमित न रहकर जनमानस की आकांक्षाओं से जुड़े सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक मुद्दे तथा नीतियों की विषयवस्तु बन गई है। शिक्षाविद् भी पीछे नहीं रहे और उन्होंने यह महसूस किया कि शैक्षिक प्रशिक्षण के सभी चरणों में विशेष रूप से विद्यालयीय एवं पूर्वस्नातक शिक्षा के स्तर पर जीव विज्ञान को समन्वयित विज्ञान एवं अंतर्विधा की परिप्रेक्ष्य में पढ़ाया जाना चाहिए। जीव विज्ञान के सभी व्यावहारिक एवं बुनियादी क्षेत्रों में आज समन्वय की आवश्यकता है। जीव विज्ञान आज के युग की आवश्यकता है। इसकी अनिवर्चनीय एवं दृढ़ संकल्पनाएं भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र तथा गणित की भाँति सर्वजनीन हैं।

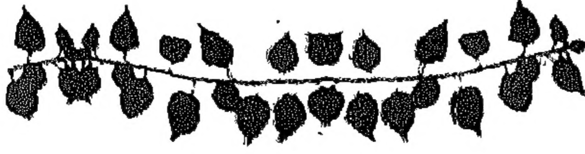


विद्यालय स्तरीय बच्चों हेतु यह पुस्तक समन्वयिक जीव विज्ञान की पहली प्रस्तुति है। जीव विज्ञान शिक्षण एवं अध्ययन में भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र आदि जैसी अन्य विधाओं के समन्वय का अभाव इसकी एक कमी रही है। इसके अलावा भौतिकी रसायन परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो पादपों, प्राणियों तथा सूक्ष्मजीवियों में अनेकों प्रक्रम समान हैं। कोशिका जीव विज्ञान ने पादपों, प्राणियों तथा सूक्ष्म जीवियों में निहित विविध स्पष्ट प्रत्याभासों को एकीकारी सामान्य कोशिकीय गतिविधियों के स्तर पर प्रकट किया है। ठीक इसी प्रकार से आण्विक विज्ञान (उदाहरणार्थ जैव रसायन या अण्विक जीव विज्ञान) ने यह उद्घाटित किया है कि इन सभी स्पष्ट तथा विविध पादपों, प्राणियों तथा सूक्ष्म जीवों में समान आण्विक क्रिया तंत्र होता है। पादपों एवं प्राणियों में श्वसन, उपापचय, ऊर्जा उपभोग, वृद्धि, जनन एवं परिवर्धन जैसे प्रत्याभासों की चर्चा अपेक्षाकृत भिन्न-भिन्न असंबद्ध तथ्यों के रूप में प्रस्तुत करने के एकीकृत विधि से की जा सकती है, ऐसी विविध तथा विशिष्ट विधाओं को एकीकृत करने का प्रयास इस पुस्तक में किया गया है। हालांकि; यह समन्वयन आंशिक ही रहा न कि पूर्णरूपेण। आशा है कि अगले कुछ वर्षों में शिक्षण एवं अधिगम के क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों से इस पुस्तक के अगले संस्करणों में वनस्पति विज्ञान, जंतु विज्ञान तथा सूक्ष्म जीव विज्ञान का समन्वयन बेहतर प्रदर्शित होगा और जीव विज्ञान की प्रकृति सही मायनों में प्रतिबिंबित होगी जो मनुष्य के लिए, मनुष्य के द्वारा मनुष्य का भावी विज्ञान है।

कक्षा ग्यारहवीं जीव विज्ञान की यह नई पुस्तक पाठ्यचर्या में हुए परिवर्तन एवं रूपरेखा को ध्यान में रखते हुए पूर्णतया पुनर्लिखित है। यह पुस्तक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम विन्यास (2005) के दिशानिर्देशों के अभिप्राय के अनुरूप है। विषयवस्तु को पाँच इकाइयों के अंतर्गत 22 अध्यायों में प्रस्तुत किया गया है। प्रत्येक इकाई में संबंधित क्षेत्र के प्रख्यात वैज्ञानिक का संक्षिप्त जीवन-परिचय दिया गया है। प्रत्येक अध्याय के प्रथम पृष्ठ पर सभी उपशीर्षकों को क्रमवार प्रस्तुत किया गया है तथा अध्याय के अंतर्गत इन्हें दशमलव अंकक्रम की पद्धति में दर्शाया गया है। अध्याय के अंत में पाठ का सारांश दिया गया है जो विद्यार्थी को ध्यान दिलाता है कि क्या कुछ इस अध्याय से सीखा जाना अपेक्षित है। प्रत्येक अध्याय के अंत में कुछ प्रश्न समूह दिए गए हैं। यह प्रश्न अनिवार्यत: विद्यार्थियों की विषयवस्तु की समझ को परखने हेतु तैयार किए गए हैं। कुछ प्रश्न पूर्णत: सूचना एवं स्मृति पर आधरित हैं तो कुछ विश्लेषणात्मक सोच पर आधारित हैं जो सही समझ की परख करते हैं। कुछ प्रश्न समस्या प्रधान हैं जिनके सरलीकरण और उत्तर ढूँढ़ने के लिए विश्लेषण, एवं अंतर्दृष्टि की आवश्यकता होती है। इन सबसे विद्यार्थी के मस्तिष्क में विषयवस्तु की विवेचनात्मक समझ की परख होती है।

इस पुस्तक की रचना में वर्णनात्मक शैली, चित्रों, अभ्यास-क्रियाकलापों, अभिव्यक्ति की सुस्पष्टता तथा विद्यालय में उपलब्ध समय के भीतर विषय को पूरा करने को विशेष महत्व दिया गया है। इस सुन्दर पुस्तक के इस स्वरूप को लाने में कार्यरत शिक्षकों सहित, अत्याधिक प्रतिभावान एवं समर्पित बहुत सारे लोगों का सहयोग प्राप्त हुआ है। विद्यालय स्तर पर छात्रों एवं शिक्षकों के लिए जीव विज्ञान बोझ न बने यह सुनिश्चित करना हमारा प्रमुख उद्देश्य रहा है। हम वास्तव में यह कामना करते हैं कि जीव विज्ञान शिक्षण एवं जीव विज्ञान अधिगम (सीखना) एक आनंददायक क्रियाकलाप बने।

के मुरलीधर, अचार्य
जंतु विज्ञान विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय



आभार

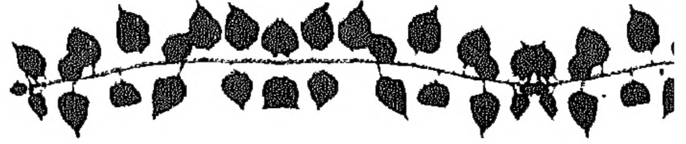
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद जीव विज्ञान, कक्षा XI की पाठ्यपुस्तक निर्माण में योगदान देने वाले सभी व्यक्तियों एवं संगठनों के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करती है। परिषद अरविंद गुप्ते, *प्राचार्य (अवकाश प्राप्त)*, गवर्नमेंट कॉलेजिएट एजूकेशन सर्विस, मध्य प्रदेश.; शैलजा हिन्तालमणि, *एसोसिएट प्रोफेसर* ऑफ जेनेटिक्स, यूनीवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज, बैंगलूर; के.आर. शिवन्ना, *आचार्य (अवकाश प्राप्त)*, वनस्पति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली; आर.एस.बेडवाल, *आचार्य (जंतु विज्ञान)*, जंतु विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर; पी.एस. श्रीवास्तव, *आचार्य*, जैव प्रौद्योगिकी विभाग, हमदर्द विश्वविद्यालय, नई दिल्ली; प्रमिला शिवन्ना, *पूर्व शिक्षक*, डी.ए.वी. स्कूल, दिल्ली के बहुमूल्य सुझावों हेतु आभारी है। इसके साथ ही, परिषद वी.के. भसीन, *आचार्य* एवं *विभागाध्यक्ष* जंतु विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली; पी.पी. बाकरे, *आचार्य* एवं *विभागाध्यक्ष*, जंतु विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर; तथा सावित्री सिंह, *प्राचार्य*, आचार्य नरेंद्र देव कालेज, नई दिल्ली के सहयोग हेतु आभारी है। परिषद वी.के. गुप्ता, *वैज्ञानिक*, केंद्रीय प्राणि उद्यान प्राधिकरण, नई दिल्ली द्वारा प्राणि उद्यानों के चित्र तथा समीर सिंह द्वारा मुख एवं पृष्ठ आवरण के चित्र उपलब्ध कराने के लिए हार्दिक आभार प्रकट करती है। इस पुस्तक में प्रयुक्त छाया चित्र, जो रा.शै.अ.प्र. परिषद, भा.कृ.अं.सं. परिसर तथा आचार्य नरेन्द्र देव कालेज परिसर से सावित्री सिंह द्वारा लिए गए हैं, परिषद उनके लिए विशेष रूप से आभारी है।

पांडुलिपि की समीक्षा में भागीदारी करने वाले सहभागियों एम.के. तिवारी, *पी.जी.टी.* (जीव विज्ञान), केंद्रीय विद्यालय मंदसौर, मध्य प्रदेश; मारिया ग्रैसियस फर्नांडिस, *पी.जी.टी. (जीव विज्ञान)*, जी.वी.एम.एस. हायर सेकेंड्री स्कूल पोंडा-गोवा; ए.के. गांगुली, *पी.जी.टी* (जीव विज्ञान), जवाहर नवोदय विद्यालय रोशनाबाद, हरिद्वार; शिवानी गोस्वामी, *पी.जी.टी (जीव विज्ञान)*, मदर इंटरनेशनल स्कूल, श्री अरविंदो मार्ग, नई दिल्ली; बी.एन. पांडेय, *प्रधानाचार्य*, आर्ड. फैक्टरी. सी.से. स्कूल देहरादून के प्रति परिषद हार्दिक रूप से आभारी है। परिषद हिंदी अनुवाद की समीक्षा के लिए एन.पी. सिंह, *एसो. प्रोफेसर* (जंतु विज्ञान), राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर; एम.पी. त्रिवेदी, *प्रवाचक* (वनस्पति विज्ञान), साइंस कालेज पटना विश्वविद्यालय, पटना, बिहार; एम.पी. शर्मा, *प्रवक्ता* (जंतु विज्ञान), बी.बी.डी. राजकीय कालेज, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर; एन.एस. चौहान, *सहा. शिक्षा अधिकारी* (अवकाश प्राप्त), सी.एस.टी.टी. एम.एच.आर.डी., नई दिल्ली; हरीश कुमार, *अध्यक्ष (अवकाश प्राप्त)*, सी.एस.टी.टी., एम.एच.आर.डी., नई दिल्ली की आभारी है।

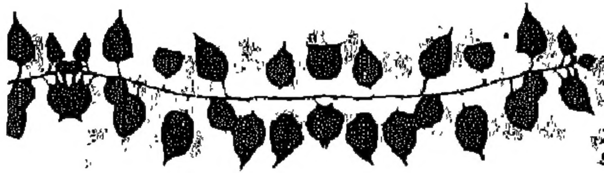
परिषद एम. चंद्रा, *आचार्य* एवं *विभागाध्यक्ष*, डी.ई.एस.एम. तथा हुकुम सिंह, *आचार्य*, डी.ई.एस.एम, रा.शै.अ.प्र. परिषद के बहुमूल्य योगदान हेतु अत्यधिक आभारी है।

इसके साथ ही परिषद कंप्युटर अनुभाग के *प्रभारी* श्री दीपक कपूर; *डी.टी.पी. आपरेटर* मोहम्मद खालिद रज़ा एवं मोहम्मद इस्माइल; *प्रति संपादक* अमरसिंह सचान; *प्रूफरीडर* प्रेमराज मीणा एवं दीप्ति यादव *तथा रेखाचित्रक* ललित कुमार मौर्य एवं श्वेताराव और डी.ई.एस.एम. के ए.पी.सी. कार्यालय तथा डी.ई.सी.एम. एवं रा.शै.अ.प्र. परिषद के प्रशासकीय कर्मचारियों के प्रति हार्दिक रूप से आभार व्यक्त करती है।

इस पुस्तक के निर्माण में प्रकाशन विभाग, रा.शै.अ.प्र. परिषद का प्रयास प्रशंसनीय है।

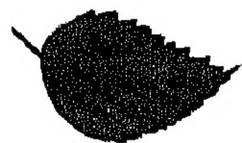


विषय सूची



इकाई चार

इकाई पाँच





इकाई एक

जीव जगत में विविधता

जीव विज्ञान सभी प्रकार के जीवन रचना एवं जैव प्रक्रमों का विज्ञान है। जीव जगत कौतुहल जैव विविधताओं से परिपूर्ण है। आदि मानव आसानीपूर्वक निर्जीव पदार्थ एवं सजीवों के बीच अंतर कर सकता था। आदि मानव ने कुछेक निर्जीव पदार्थों (जैसे वायु, समुद्र, आग आदि) तथा कुछ सजीव प्राणियों एवं पादपों में भेद किया था। इन सभी प्रकार के जीवित एवं जीवहीन स्वरूप में, उन्होंने जो सर्वसामान्य विशिष्टताएं पाई, वे उनके द्वारा भय या दूर भागने के भाव पर आधारित थी। सजीवों का वर्णन, जिसमें मानव भी शामिल था, मानव इतिहास में काफी बाद में प्रारंभ हुआ जो समाज (जीव विज्ञान की दृष्टि से) मानवोद्भव विज्ञान में संलग्न थे। वे जैव वैज्ञानिक ज्ञान में सीमित प्रगति दर्ज कर सके।

जीव स्वरूप के वर्गिकी विज्ञान एवं स्मारकीय विवरण ने विस्तृत पहचान प्रणाली नाम-पद्धति तथा वर्गीकरण पद्धति की आवश्यकता प्रदान की है। इस प्रकार के अध्ययनों का सबसे बड़ा प्रचक्रण सजीवों द्वारा ऊर्ध्वाधर एवं क्षैतिज, दोनों ही समानताओं के भागीदारी को मान्यता देना था। वर्तमान के सभी जीवों के परस्पर संबद्ध और साथ ही पृथ्वी पर आदिकाल वाले सभी जीव के साथ उनके संवादों का रहस्योद्घाटन मानवीय अहंकार और जैव विविधता के संरक्षण के लिए एक सांस्कृतिक आंदोलन के कारण थे। इस इकाई के अनुगामी अध्यायों में आप वर्गीकरण-परिप्रेस्य वैज्ञानिक प्राणियों एवं पादपों के वर्गीकरण सहित वर्णन के बारे में पढ़ेंगे।


एरनस्ट मेयर
(1904 - 2004)

एरनस्ट मेयर का जन्म 5 जुलाई, 1904 में केंपटन, जर्मनी में हुआ था। आप हावर्ड विश्वविद्यालय के विकासपरक जीव वैज्ञानिक थे, जिन्हें '20वीं शती का डार्विन' कहा गया। आप अब तक के 100 महान वैज्ञानिकों में से एक थे। मेयर ने सन् 1953 में हावर्ड विश्वविद्यालय की कला एवं विज्ञान संकाय में नौकरी प्राप्त की और 1975 मे *एलेक्जेंडर अगासीज प्रोफ़ेसर ऑफ ज़ुलोजी एमीरिटस* की पदवी के साथ अवकाश प्राप्त किया। अपने 80 सालों के कार्य जीवन में आपका पक्षी-विज्ञान, वर्गीकरण-विज्ञान, प्राणि-भूगोल, विकास, वर्गिकी तथा जीव विज्ञान के इतिहास एवं दर्शन आदि पर अनुसंधान केंद्रित रहा। आप ने लगभग अकेले ही विकासीय जीव विज्ञान के केंद्रीय प्रश्न जाति विविधता की उत्पत्ति को खड़ा किया, जो कि आज सच है। इसके साथ ही आपने हल ही में स्वीकृत जीव वैज्ञानिक जाति वर्गिकी की परिभाषा की अगुवाई की। मेयर को तीन पुरस्कार दिए गए, जिन्हें व्यापक तौर पर जीव विज्ञान के तीन ताजों की संज्ञा दी जाती है: 1983 में *बालजॉन प्राइज*, 1998 में जीव विज्ञान के लिए *इंटरनेशनल प्राइज* और 1999 में *क्राफूर्ड प्राइज।* मेयर ने 100 वर्ष की आयु में 2004 को स्वर्गवासी हुए।

अध्याय 1

जीव जगत

जीव जगत कैसा निराला है? जीवों के विस्तृत प्रकारों की शृंखला विस्मयकारी है। असाधारण वास स्थान चाहे वे ठंडे पर्वत, पर्णपाती वन, महासागर, अलवणीय (मीठा) जलीय झीलें, मरूस्थल अथवा गरम झरनों जिनमें जीव रहते हैं, वे हमें आश्चर्यचकित कर देते हैं। सरपट दौड़ते घोड़े, प्रवासी पक्षियों, घाटियों में खिलते फूल अथवा आक्रमणकारी शार्क की सुंदरता विस्मय तथा चमत्कार का आह्वान करती है। पारिस्थितिक विरोध, तथा समष्टि कें सदस्यों तथा समष्टि और समुदाय में सहयोग अथवा यहां तक कि कोशिका में आण्विक गतिविधि से पता चलता है कि वास्तव में जीवन क्या है ? इस प्रश्न में दो निर्विवाद प्रश्न हैं। पहला तकनीकी,है जो जीव तथा निर्जीव क्या हैं, इसका उत्तर खोजने का प्रयत्न करता है, तथा दूसरा प्रश्न दार्शनिक है जो यह जानने का प्रयत्न करता है कि जीवन का उद्देश्य क्या है। वैज्ञानिक होने के नाते हम दूसरे प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास नहीं करेंगे। हम इस विषय पर चिंतन करेंगे कि जीव क्या है?

सभी जीव वृद्धि करते हैं। जीवों के भार तथा संख्या में वृद्धि होना, ये दोनों वृद्धि के द्वियुग्मी अभिलक्षण हैं। बहुकोशिक जीव कोशिका विभाजन द्वारा वृद्धि करते हैं। पौधों में यह वृद्धि जीवन पर्यंत कोशिका विभाजन द्वारा संपन्न होती रहती है। प्राणियों में, यह वृद्धि कुछ आयु तक होती है। लेकिन कोशिका विभाजन विशिष्ट ऊतकों में होता है ताकि विलुप्त कोशिकाओं के स्थान पर नई कोशिकायें आ सकें। एककोशिक जीव भी कोशिका विभाजन द्वारा वृद्धि करते हैं। बड़ी सरलता से कोई भी इसे पात्रे संवर्धन में सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) से देखकर कोशिकाओं की संख्या गिन सकता है। अधिकांश उच्चकोटि के प्राणियों तथा पादपों में वृद्धि तथा जनन पारस्परिक विशिष्ट घटनाएं हैं। हमें याद रखना चाहिए कि जीव के भार में वृद्धि होने को भी वृद्धि समझा जाता है। यदि हम भार को वृद्धि का अभिलक्षण मानते हैं तो निर्जीवों के भार में भी वृद्धि होती है। पर्वत, गोलाश्म तथा रेत के टीले भी वृद्धि करते हैं। लेकिन निर्जीवों में इस प्रकार की वृद्धि उनकी सतह पर पदार्थों के एकत्र होने के कारण होती हैं। जीवों में यह वृद्धि अंदर की ओर से होती है। इसलिए वृद्धि को जीवों का एक विशिष्ट गुण नहीं मान सकते हैं। जीवों में यह लक्षण जिन परिस्थितियों में परिलक्षित होता है; उनका विवेचना करके ही यह समझना चाहिए कि यह जीव तंत्र के लक्षण हैं।

इस प्रकार जनन भी जीवों का अभिलक्षण है। वृद्धि के संदर्भ में इस तथ्य की व्याख्या हो जाती है। बहुकोशिक जीवों में जनन का अर्थ अपनी संतति उत्पन्न करना है जिसके अभिलक्षण लगभग उसे अपने माता-पिता से मिलते हैं। निर्विवाद रूप से हम लैंगिक जनन के विषय में चर्चा कर रहे हैं। जीव अलैंगिक जनन भी करते हैं। फेजाई (कवक) लाखों अलैंगिक बीजाणुओं द्वारा गुणन करती है और सरलता से फैल जाती है। निम्न कोटि के जीवों जैसे यीस्ट तथा हाइड्रा में मुकुलन द्वारा जनन होता है। प्लैनेरिया (चपटा कृमि) में वास्तविक पुनर्जनन होता है अर्थात् एक खंडित जीव अपने शरीर के लुप्त अंग को पुनः प्राप्त (जीवित) कर लेता है और इस प्रकार एक नया जीव बन जाता है। फेजाई, तंतुमयी शैवाल, मॉस का प्रथम तंतु सभी विखंडन विधि द्वारा गुणन करते हैं। जब हम एककोशिक जीवों जैसे जीवाणु (बैक्टीरिया), एककोशिक शैवाल अथवा *अमीबा* के विषय में चर्चा करते हैं तब जनन की वृद्धि पर्यायवाची है अर्थात् कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि होती है। हम पहले ही कोशिकाओं की संख्या अथवा भार में वृद्धि होने को वृद्धि के रूप में पारिभाषित कर चुके हैं। अब तक, हमने देखा है कि एककोशिक जीवों में वृद्धि तथा जनन इन दोनों शब्दों के उपयोग के विषय में सुस्पष्ट नहीं है। कुछ ऐसे भी जीव हैं जो जनन नहीं करते (खेसर या खच्चर, बंध्य कामगार मधुमक्खी, अनुर्वर मानव युगल आदि)। इस प्रकार जनन भी जीवों का समग्र विशिष्ट लक्षण नहीं हो सकता। यद्यपि, कोई भी निर्जीव वस्तु जनन अथवा अपनी प्रतिलिपि बनाने में अक्षम है।

जीवों का दूसरा लक्षण उपापचयन है। सभी जीव रसायनों से बने होते हैं। ये रसायन छोटे, बड़े, विभिन्न वर्ग, माप, क्रिया आदि वाले होते हैं जो अनवरत जैव अणुओं में बदलते और उनका निर्माण करते हैं। ये परिवर्तन रासायनिक अथवा उपापचयी क्रियाएं हैं। सभी जीवों, चाहें वे बहुकोशिक हो अथवा एककोशिक हों, में हजारों उपापचयी क्रियाएं

साथ-साथ चलती रहती हैं। सभी पौधों, प्राणियों, कवकों (फेजाई) तथा सूक्ष्म जीवों में उपापचयी क्रियाएं होती हैं। हमारे शरीर में होने वाली सभी रासायनिक क्रियाएं उपापचयी क्रियाएं हैं। किसी भी निर्जीव में उपापचयी क्रियाएं नहीं होती। शरीर के बाहर कोशिका मुक्त तंत्र में उपापचयी क्रियाएं प्रदर्शित हो सकती हैं। जीव के शरीर से बाहर परखनली में की गई उपापचयी क्रियाएं न तो जैव हैं और न ही निर्जीव। अत: उपापचयी क्रियाएं निरापवाद जीवों के विशिष्ट गुण के रूप में पारिभाषित हैं जबकि पात्रे में एकाकी उपापचयी क्रियाएं जैविक नहीं है यद्यपि ये निश्चित ही जीवित क्रियाएं हैं। अत: शरीर का कोशिकीय संगठन जीवन स्वरूप का सुस्पष्ट अभिलक्षण है।

शायद, सभी जीवों का सबसे स्पष्ट परंतु पेंचीदा अभिलक्षण अपने आस-पास या पर्यावरण के उद्दीपनों, जो भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक हो सकती हैं, के प्रति संवेदनशीलता तथा प्रतिक्रिया करना है। हम अपने संवेदी अंगों द्वारा अपने पर्यावरण से अवगत होते हैं। पौधे प्रकाश, पानी, ताप, अन्य जीवों, प्रदूषकों आदि जैसे बाह्य कारकों के प्रति प्रतिक्रिया दिखाते हैं। प्रोकेरिऑट से लेकर जटिलतम यूकेरिऑट तक सभी जीव पर्यावरण संकेतों के प्रति संवदेना एवं प्रतिक्रिया दिखा सकते हैं। पादप तथा प्राणियों दोनों में दीप्ति काल मौसमी प्रजनकों के जनन को प्रभावित करता है। इसलिए सभी जीव अपने पर्यावरण से अवगत रहते हैं। मानव ही केवल ऐसा जीव है जो स्वयं से अवगत अर्थात् स्वचेतन है। इसलिए चेतना जीवों को पारिभाषित करने के लिए अभिलक्षण हो जाती है।

जब हम मानव के विषय में चर्चा करते हैं तब जीवों को पारिभाषित करना और भी कठिन हो जाता है। हम रोगी को अस्पताल में अचेत अवस्था में लेटे रहते हुए देखते हैं जिसके हृदय तथा फुप्फुस को चालू रखने के लिए मशीनें लगाई गई होती हैं। रोगी का मस्तिष्क मृतसम होता है। रोगी में स्वचेतना नहीं होती। ऐसे रोगी जो कभी भी अपने सामान्य जीवन में वापस नहीं आ पाते, तो क्या हम इन्हें जीव अथवा निर्जीव कहेंगे?

उच्चस्तरीय अध्ययन में जीव विज्ञान पृथ्वी पर जैव विकास की कथा है आपको पता लगेगा कि सभी जीव घटनाएं उसमें अंतर्निहित प्रतिक्रियाओं के कारण होती हैं। ऊतकों के गुण कोशिका में स्थित कारकों के कारण नहीं हैं, बल्कि घटक कोशिकाओं की पारस्परिक प्रतिक्रिया के कारण है। इसी प्रकार कोशिकीय अंगकों के लक्षण अंगकों में स्थित आण्विक घटकों के कारण नहीं बल्कि अंगकों में स्थित आण्विक घटकों के आपस में क्रिया करने के कारण हैं। उच्च स्तरीय संगठन उद्गामी गुणधर्म इन प्रतिक्रियाओं के परिणामस्वरूप होते हैं। सभी स्तरों पर संगठनात्मक जटिलता की पदानुक्रम में यह अद्भुत घटना यथार्थ है। अत: हम कह सकते हैं कि जीव स्वप्रतिकृति, विकासशील तथा स्वनियमनकारी पारस्पारिक क्रियाशील तंत्र है जो बाह्य उद्दीपन के प्रति अनुक्रिया की क्षमता रखते हैं। जीव विज्ञान पृथ्वी पर जीवन की कहानी है। वर्तमान, भूत एवं भविष्य के सभी जीव एक दूसरे से सर्वनिष्ठ आनुवंशिक पदार्थ की साझेदारी द्वारा संबद्ध है, परंतु यह पदार्थ सबमें विविध अंशों में होते हैं।

1.2 जीव जगत में विविधता

यदि आप अपने आस-पास देखें तो आप जीवों की बहुत सी किस्में देखेंगे, ये किस्में, गमले में उगने वाले पौधे, कीट, पक्षी, पालतू अथवा अन्य प्राणी व पौधे हो सकती हैं। बहुत से ऐसे जीव भी होते हैं जिन्हें आप आँखों की सहायता से नहीं देख सकते, लेकिन आपके आस-पास ही हैं। यदि आप अपने अवलोकन के क्षेत्र को बढ़ाते हैं तो आपको विविधता की एक बहुत बड़ी श्रृंखला दिखाई पड़ेगी। स्पष्टत: यदि आप किसी सघन वन में जाएं तो आपको जीवों की बहुत बड़ी संख्या तथा उनकी कई किस्में दिखाई पड़ेंगी। प्रत्येक प्रकार के पौधे, जंतु अथवा जीव जो आप देखते हैं किसी एक जाति (स्पीशीज) का प्रतीक हैं। अब तक की ज्ञात तथा वर्णित स्पीशीज की संख्या लगभग 1.7 मिलियन से लेकर 1.8 मिलियन तक हो सकती है। हम इसे **जैविक विविधता** अथवा पृथ्वी पर स्थित जीवों की संख्या तथा प्रकार कहते हैं। हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि जैसे-जैसे हम नए तथा यहां तक कि पुराने क्षेत्रों की खोज करते हैं, हमें नए-नए जीवों का पता लगता रहता है।

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि विश्व में कई मिलियन पौधे तथा प्राणी हैं। हम पौधों तथा प्राणियों को उनके स्थानीय नाम से जानते हैं। ये स्थानीय नाम एक ही देश के बिभिन्न स्थान के अनुसार बदलते रहते हैं। यदि हमने कोई ऐसी विधि नहीं निकाली जिसके द्वारा हम किसी जीव के विषय में चर्चा कर सकें जो शायद इससे भ्रमकारी स्थिति पैदा हो सकती है।

प्रत्येक जीव का एक मानक नाम होता है, जिससे वह उसी नाम से सारे विश्व में जाना जाता है। इस प्रक्रिया को **नाम-पद्धति** कहते हैं। स्पष्टत: नाम-पद्धति तभी संभव है जब जीवों का वर्णन सही हो और हम यह जानते हों कि यह नाम किस जीव का है। इसे **पहचानना** कहते हैं।

अध्ययन को सरल करने के लिए अनेकों वैज्ञानिकों ने प्रत्येक ज्ञात जीव को वैज्ञानिक नाम देने की प्रक्रिया बनाई है। इस प्रक्रिया को विश्व में सभी जीव वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया है। पौधों के लिए वैज्ञानिक नाम का आधार सर्वमान्य नियम तथा कसौटी है, जिनको इंटरनेशनल कोड ऑफ बोटेनीकल नोमेनकलेचर (ICBN) में दिया गया है। आप पूछ सकते हैं कि प्राणियों का नामकरण कैसे किया जाता है। प्राणी वर्गिकीविदों ने इंटरनेशनल कोड ऑफ जूलोजीकल नोमेनकलेचर (ICZN) बनाया है। वैज्ञानिक नाम की यह गारंटी है कि प्रत्येक जीव का एक ही नाम रहे। किसी भी जीव के वर्णन से विश्व में किसी भी भाग में लोग एक ही नाम बता सके। वे यह भी सुनिश्चित करते हैं कि एक ही नाम किसी दूसरे ज्ञात जीव का न हो।

जीव विज्ञानी ज्ञात जीवों के वैज्ञानिक नाम देने के लिए सार्वजनिक मान्य नियमों का पालन करते हैं। प्रत्येक नाम के दो घटक होते हैं : **वंशनाम** तथा **जाति संकेत पद**। इस प्रणाली को जिसमें दो नाम के दो घटक होते हैं, उसे **द्विपदनाम पद्धति** कहते हैं। इस नामकरण प्रणाली को कैरोलस लीनियस ने सुझाया था। इसका उपयोग सारे विश्व के जीवविज्ञानी करते हैं। दो शब्दों वाली नामकरण प्रणाली बहुत सुविधाजनक है। आओ,

आपको आम के उदाहरण द्वारा वैज्ञानिक नाम देने की विधि को समझाएं। आम का वैज्ञानिक नाम *मैंजीफेरा इंडिका* है। तब आप यह देख सकते हैं कि यह नाम कैसे द्विपद है। इस नाम में मैंजीफेरा वंशनाम है जबकि इंडिका एक विशिष्ट स्पीशीज अथवा जाति संकेत पद है। नाम पद्धति के अन्य सार्वजनिक नियम निम्नलिखित हैं :

1. जैविक नाम प्रायः लैटिन भाषा में होते हैं और तिरछे अक्षरों में लिखे जाते हैं। इनका उद्भव चाहे कहीं से भी हुआ हो। इन्हें लैटिनीकरण अथवा इन्हें लैटिन भाषा का व्युत्पन्न समझा जाता है।
2. जैविक नाम में पहला शब्द वंशनाम होता है जबकि दूसरा शब्द जाति संकेत पद होता है।
3. जैविक नाम को जब हाथ से लिखते हैं तब दोनों शब्दों को अलग-अलग रेखांकित अथवा छपाई में तिरछा लिखना चाहिए। यह रेखांकन उनके लैटिन उद्भव को दिखाता है।
4. पहला अक्षर जो वंश नाम को बताता है, वह बड़े अक्षर में होना चाहिए जबकि जाति संकेंत पद में छोटा अक्षर होना चाहिए। *मैंजीफेरा इंडिका* के उदाहरण से इसकी व्याख्या कर सकते हैं।

जाति संकेत पद के बाद अर्थात् जैविक नाम के अंत में लेखक का नाम लिखते हैं और इसे संक्षेप में लिखा जाता है। उदाहरणतः *मैंजीफेरा इंडिका* (लिन)। इसका अर्थ है सबसे पहले स्पीशीज का वर्णन लीनियस ने किया था।

यद्यपि सभी जीवों का अध्ययन करना लगभग असंभव है, इसलिए ऐसी युक्ति बनाने की आवश्यकता है जो इसे संभव कर सके। इस प्रक्रिया को **वर्गीकरण** कहते हैं। वर्गीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें कुछ सरलता से दृश्य गुणों के आधार पर सुविधाजनक वर्ग में वर्गीकृत किया जा सके। उदाहरण के लिए हम पौधों अथवा प्राणियों और कुत्ता, बिल्ली अथवा कीट को सरलता से पहचान लेते हैं। जैसे ही हम इन शब्दों का उपयोग करते है, उसी समय हमारे मस्तिष्क में इन जीव के ऐसे कुछ गुण आ जाते हैं जिससे उनका उस वर्ग से संबंध होता है। जब आप कुत्ते के विषय में सोचते हो तो आपके मस्तिष्क में क्या प्रतिबिंब बनता है। स्पष्टतः आप कुत्ते को ही देखेंगे न कि बिल्ली को। अब, यदि एलशेशियन के विषय में सोचे तो हमें पता लगता है कि हम किसके विषय में चर्चा कर रहे हैं। इसी प्रकार, मान लो हमें 'स्तनधारी' कहना है तो आप ऐसे जंतु के विषय में सोचोगे जिसके बाह्य कान और शरीर पर बाल होते हैं। इसी प्रकार पौधों में यदि हम 'गेहूँ' के विषय में चर्चा करें तो हमारे मस्तिष्क में गेहूँ का पौधा आ जाएगा। इसलिए ये सभी 'कुत्ता', 'बिल्ली', 'स्तनधारी', 'गेहूँ', 'चावल', 'पौधे', 'जंतु' आदि सुविधाजनक वर्ग हैं जिनका उपयोग हम पढ़ने में करते हैं। इन वर्गों की वैज्ञानिक शब्दावली **टैक्सा** है। यहाँ आपको स्वीकार करना चाहिए कि 'टैक्सा' विभिन्न स्तर पर सही वर्गों को बता सकता है। 'पौधे' भी एक टैक्सा हैं। 'गेहूँ' भी एक टैक्सा है। इसी प्रकार 'जंतु', 'स्तनधारी', 'कुत्ता' ये सभी टैक्सा हैं। लेकिन क्या आप जानते हैं कि कुत्ता एक स्तनधारी और स्तनधारी प्राणी है। इसलिए प्राणी, स्तनधारी तथा कुत्ता विभिन्न स्तरों पर टैक्सा को बताता है।

इसलिए, गुणों के आधार पर सभी जीवों को विभिन्न टैक्सा में वर्गीकृत कर सकते हैं। गुण जैसे प्रकार, रचना, कोशिका की रचना, विकासीय प्रक्रम तथा जीव की पारिस्थितिक सूचनाएं आवश्यक हैं और ये आधुनिक वर्गीकरण अध्ययन के आधार हैं।

इसलिए, विशेषीकरण, पहचान (अभिज्ञान), वर्गीकरण तथा नाम पद्धति आदि ऐसे प्रक्रम (प्रणाली) हैं जो **वर्गिकी** (वर्गीकरण विज्ञान) के आधार हैं।

वर्गिकी कोई नई नहीं है। मानव सदैव विभिन्न प्रकार के जीवों के विषय में अधिकाधिक जानने का प्रयत्न करता रहा है, विशेष रूप से उनके विषय में जो उनके लिए अधिक उपयोगी थे। आदिमानव को अपनी मूलभूत आवश्यकताओं जैसे- भोजन, कपड़े तथा आश्रय के लिए नए-नए स्रोत खोजने पड़ते थे। इसलिए विभिन्न जीवों के वर्गीकरण का आधार 'उपयोग' पर आधारित था।

काफी समय से मानव विभिन्न प्रकार के जीवों के विषय में जानने और उनकी विविधता सहित उनके संबंध में रुचि लेता रहा है। अध्ययन की इस शाखा को **वर्गीकरण पद्धति** (सिस्टेमेटिक्स) कहते हैं। 'सिटेमेटिक्स' शब्द लैटिन शब्द 'सिस्टेमा' से आया है जिसका अर्थ है जीवों की नियमित व्यवस्था। लीनियस ने अपने पब्लिकेशन का टाइटल 'सिस्टेमा नेचर' चुना। वर्गीकरण पद्धति में पहचान, नाम पद्धति तथा वर्गीकरण को शामिल करके इसके क्षेत्र को बढ़ा दिया गया है। वर्गीकरण पद्धति में जीवों के विकासीय संबंध का भी ध्यान रखा गया है।

1.3 वर्गिकी संवर्ग

वर्गीकरण एकल सोपान प्रक्रम नहीं है; बल्कि इसमें पदानुक्रम सोपान होते हैं जिसमें प्रत्येक सोपान पद अथवा वर्ग को प्रदर्शित करता है। चूँकि संवर्ग समस्त वर्गिकी व्यवस्था है इसलिए इसे **वर्गिकी संवर्ग** कहते हैं और तभी सारे संवर्ग मिलकर **वर्गिकी पदानुक्रम** बनाते हैं। प्रत्येक संवर्ग वर्गीकरण की एक इकाई को प्रदर्शित करता है। वास्तव में, यह एक पद को दिखाता है और इसे प्रायः **वर्गक** (टैक्सॉन) कहते हैं।

वर्गिकी संवर्ग तथा पदानुक्रम का वर्णन एक उदाहरण द्वारा कर सकते हैं। कीट जीवों के एक वर्ग को दिखाता है जिसमें एक समान गुण जैसे तीन जोड़ी संधिपाद (टाँगें) होती हैं। इसका अर्थ है कि कीट स्वीकारणीय सुस्पष्ट जीव है जिसका वर्गीकरण किया जा सकता है, इसलिए इसे एक पद अथवा संवर्ग का दर्जा दिया गया है। क्या आप ऐसे किसी जीवों के अन्य वर्ग का नाम बता सकते हैं? स्मरण रहे कि वर्ग संवर्ग को दिखाता है। प्रत्येक पद अथवा वर्गक वास्तव में, वर्गीकरण की एक इकाई को बताता है। ये वर्गिकी वर्ग/संवर्ग सुस्पष्ट जैविक है ना कि केवल आकारिकीय समूहन।

सभी ज्ञात जीवों के वर्गिकीय अध्ययन से सामान्य संवर्ग जैसे जगत (किंगडम), संघ (फाइलम), अथवा भाग (पौधों के लिए), वर्ग (क्लास), गण (आर्डर), कुल (फैमिली), वंश (जीनस) तथा जाति (स्पीशीज) का विकास हुआ। पौधों तथा प्राणियों दोनों में स्पीशीज सबसे निचले संवर्ग में आती है। अब आप यह प्रश्न पूछ सकते हैं, कि किसी जीव को विभिन्न संवर्गों में कैसे रखते हैं ? इसके लिए मूलभूत आवश्यकता व्यष्टि

अथवा उसके वर्ग के गुणों का ज्ञान होना है। यह समान प्रकार के जीवों तथा अन्य प्रकार के जीवों में समानता तथा विभिन्नता को पहचानने में सहायता करता है।

1.3.1 स्पीशीज (जाति)

वर्गिकी अध्ययन में जीवों के वर्ग, जिसमें मौलिक समानता होती है, उसे **स्पीशीज** कहते हैं। हम किसी भी स्पीशज को उसमें समीपस्थ संबंधित स्पीशीज से, उनके आकारिकीय विभिन्नता के आधार पर उन्हें एक दूसरे से अलग कर सकते हैं। हम इसके लिए *मैंजीफेरा इंडिका* (आम)' *सोलेनम टयूबीरोसम* (आलू) तथा *पेंथरा लिओ* (शेर) के उदाहरण लेते हैं। इन सभी तीनों नामों में *इंडिका, टयूबीरोसम* तथा लिओ जाति संकेत पद हैं। जबकि पहले शब्द *मैंजीफेरा, सोलेनम,* तथा *पेंथरा* वंश के नाम हैं और यह टैक्सा अथवा संवर्ग का भी निरूपण करते हैं। प्रत्येक वंश में एक अथवा एक से अधिक जाति संकेत पद हो सकते हैं जो विभिन्न जीवों, जिनमें आकारकीय गुण समान हों, को दिखाते हैं। उदाहरणार्थ, पेंथरा में एक अन्य जाति संकेत पद है जिसे *टिगरिस* कहते हैं। *सोलेनम* वंश में *नाइग्रिम, मेलांजेना* भी आते हैं। मानव की जाति सेपियंस है, जो *होमों* वंश में आता है। इसलिए मानव का वैज्ञानिक नाम *होमोसेपियंस* है।

1.3.2 वंश (जीनस)

वंश में संबंधित स्पीशीज का एक वर्ग आता है जिसमें स्पीशीज के गुण अन्य वंश में स्थित स्पीशीज की तुलना में समान होते हैं। हम कह सकते हैं कि वंश समीपस्थ संबंधित स्पीशीज का एक समूह है। उदाहरणार्थ आलू, टमाटर तथा बैंगन; ये तीन अलग-अलग स्पीशीज हैं, लेकिन ये सभी *सोलेनम* वंश में आती हैं। शेर (*पेंथरा लिओ*), चीता (*पेंथर पारडस*) तथा (*पेंथर टिगरिस*) जिनमें बहुत से गुण हैं, वे सभी *पेंथरा* वंश में आते हैं। यह वंश दूसरे वंश फेलिस, जिसमें बिल्ली आती है, से भिन्न है।

1.3.3 कुल

अगला संवर्ग कुल है जिसमें संबंधित वंश आते हैं। वंश स्पीशीज की तुलना में कम समानता प्रदर्शित करते हैं। कुल के वर्गीकरण का आधार पौधों के कायिक तथा जनन गुण हैं। उदाहरणार्थ; पौधों में तीन विभिन्न वंश *सोलेनम, पिटूनिआ* तथा धतूरा को *सोलेनेसी* कुल में रखते हैं। जबकि प्राणी वंश *पेंथरा* जिसमें शेर, बाघ, चीता आते हैं को *फेलिस* (बिल्ली) के साथ *फेलिडी* कुल में रखे जाते हैं। इसी प्रकार, यदि आप बिल्ली तथा कुत्ते के लक्षण को देखो तो आपको दोनों में कुछ समानताएं तथा कुछ विभिन्नताएं दिखाई पड़ेंगी। उन्हें क्रमशः दो विभिन्न कुलों कैनसीडी तथा फेलिडी में रखा गया है।

1.3.4 गण (आर्डर)

आपने पहले देखा है कि संवर्ग जैसे स्पीशीज, वंश तथा कुल समान तीनों लक्षणों पर आधारित है। प्रायः गण तथा अन्य उच्चतर वर्गिकी संवर्ग की पहचान लक्षणों के समूहन के आधार पर करते हैं। गण में उच्चतर वर्ग होने के कारण कुलों के समूह होते हैं।

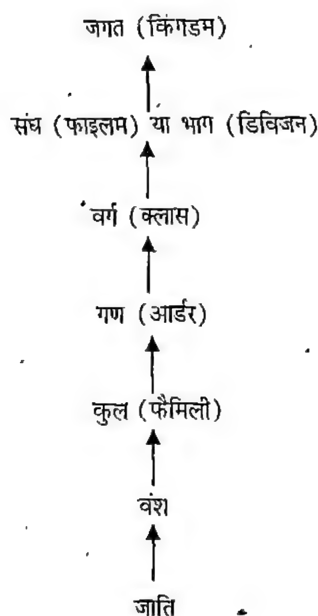
जिनके कुछ लक्षण एक समान होते हैं। इसमें एक जैसे लक्षण कुल में शामिल विभिन्न वंश की अपेक्षा कम होते हैं। पादप कुल जैसे कोनवोलव्युलेसी, सोलेनेसी को पॉलिसोनिएलस गण में रखा गया है। इसका मुख्य आधार पुष्पी लक्षण है। जबकि प्राणी कारनीवोरा गण में फेलिडी तथा कैनसीडी कुलों को रखा गया है।

1.3.5 वर्ग (क्लास)

इस संवर्ग में संबंधित गण आते हैं। उदाहरणार्थ प्राइमेटा गण जिसमें बंदर, गोरिला तथा गिब्बॉन आते हैं, और कारनीवोरा गण जिसमें बाघ, बिल्ली तथा कुत्ता आते हैं, को मैमेलिया वर्ग में रखा गया है। इसके अतिरिक्त मैमेलिया वर्ग में अन्य गण भी आते हैं।

1.3.6 संघ (फाइलम)

वर्ग जिसमें जंतु जैसे मछली, उभयचर, सरीसृप, पक्षी तथा स्तनधारी आते हैं, अगले उच्चतर संवर्ग, जिसे संघ कहते हैं, का निर्माण करते हैं। इन सभी को एक समान गुणों जैसे पृष्ठरज्जु (नोटोकॉर्ड) तथा पृष्ठीय खोखला तंत्रिका तंत्र के होने के आधार पर कॉर्डेटा संघ में रखा गया है। पौधों में इन वर्गों, जिसमें कुछ ही एक समान लक्षण होते हैं, को उच्चतर संवर्ग भाग (डिविजन) में रखा गया है।



चित्र 1.1 आरोही क्रम में पदानुक्रम वर्गिकी संवर्ग

1.3.7 जगत (किंगडम)

जंतु के वर्गिकी तंत्र में विभिन्न संघों के सभी प्राणियों को उच्चतम संवर्ग जगत में रखा गया है। जबकि पादप जगत में विभिन्न भाग (डिविजन) के सभी पौधों को रखा गया है। विभिन्न संघों के सभी प्राणियों को एक अलग जगत एनिमेलिया में रखा गया है जिससे कि उन्हें पौधों से अलग किया जा सके। पौधों को प्लांटी जगत में रखा गया है। भविष्य में हम इन दो वर्गों को जंतु तथा पादप जगत कहेंगे।

इनमें स्पीशीज से लेकर जगत तक विभिन्न वर्गिकी संवर्ग को आरोही क्रम में दिखाया गया है। ये संवर्ग हैं। यद्यपि वर्गिकी विज्ञानियों ने इस पदानुक्रम में उपसंवर्ग भी बताए हैं। इसमें विभिन्न टैक्सा का उचित वैज्ञानिक स्थान देने में सुविधा होती है।

चित्र 1.1 में पदानुक्रम को देखो। क्या आप इस व्यवस्था के आधार का स्मरण कर सकते हो ? उदाहरण के लिए जैसे-जैसे हम स्पीशीज से जगत की ओर ऊपर जाते हैं; वैसे ही समान गुणों में कमी आती जाती है। सबसे नीचे जो टैक्सा होगा उसके सदस्यों में सबसे अधिक समान गुण होंगे। जैसे-जैसे उच्चतर संवर्ग की ओर जाते हैं, उसी स्तर पर अन्य टैक्सा के संबंध निर्धारित करने अधिक कठिन हो जाते हैं। इसलिए वर्गीकरण की समस्या और भी जटिल हो जाती है।

तालिका 1.1 में कुछ सामान्य जीवों जैसे घरेलू मक्खी, मानव, आम तथा गेहूँ के विभिन्न वर्गिकी संवर्गों को दिखाया गया है।

तालिका 1.1 वर्गिकी संवर्ग सहित कुछ जीव

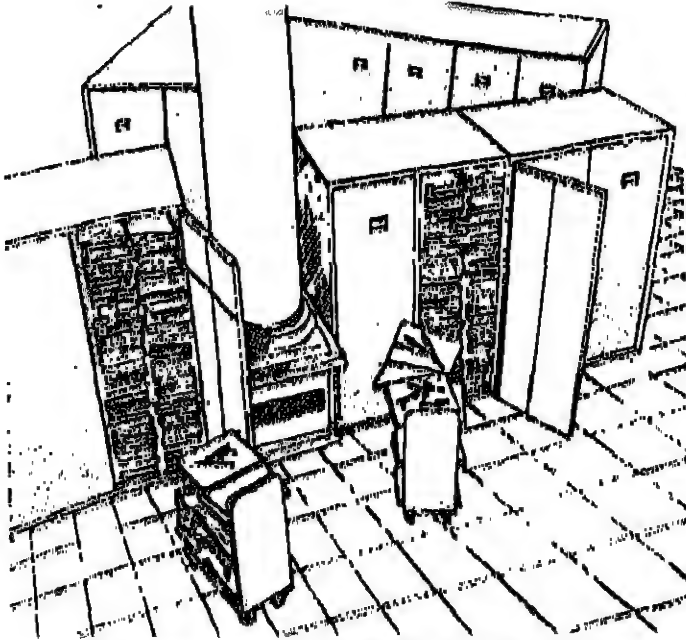
सामान्य नाम	जैविक नाम	वंश	कुल	गण	वर्ग	संघ/भाग
मानव	होमो सेपियन्स	होमो	होमोनिडी	प्राइमेट	मेमेलिया	कॉरडेटा
घरेलू मक्खी	मस्का डोमस्टिका	मस्का	म्यूसीडी	डिप्टेरा	इंसेक्टा	आर्थ्रोपोडा
आम	मेंजीफेरा इंडिका	मेंजीफेरा	एनाकरडिएसी	सेपिन्डेल्स	डाइकोटीलिडनी	एंजियोस्पर्मी
गेहूँ	ट्रीटीकम एइस्टीवम	ट्रीटीकम	पोएसी	पोएलस्	मोनोकोटीलिडनी	एंजियोस्पर्मी

1.4 वर्गिकी सहायता साधन

जीवों की पहचान के लिए एक गहन तथा आधुनिक उपकरणों से संसाधित प्रयोगशाला तथा प्रयोगशाला के बाहर के पर्यावरण के अध्ययन की आवश्यकता होती है। पौधों तथा प्राणियों के वास्तविक नमूने एकत्र करने आवश्यक होते हैं। ये वर्गिकी अध्ययन के मुख्य स्रोत होते हैं। ये अध्ययन के मौलिक तथा वर्गीकरण विज्ञान के प्रशिक्षण के लिए आवश्यक हैं। इनका उपयोग जीवों के वर्गीकरण में किया जाता है। जो भी सूचनाएं एकत्र की जाती हैं। उन्हें नमूने सहित संचयित कर लेते हैं। कुछ मामलों में नमूने को भविष्य में अध्ययन के लिए परिरक्षित कर लेते हैं। जीवविज्ञानियों ने सूचना सहित नमूनों को संचय करने तथा उन्हें परिरक्षित करने की कुछ विधियाँ तथा तकनीक विकसित की हैं। उनमें से कुछ का वर्णन किया गया है जो आपको इन सहायता साधनों को उपयोग करने में सहायता करेंगे।

1.4.1 हरबेरियम

वनस्पति संग्रहालय में पौधों के एकत्र नमूनों को कागज़ की शीट पर सुखाकर, दबाकर परिरक्षित करते हैं। इन शीटों को विश्वव्यापी मान्य वर्गीकरण प्रणाली के अनुसार व्यवस्थित करते हैं। ये नमूने सूचना सहित भविष्य में अध्ययन के लिए वनस्पति संग्रहालय में सुरक्षित रखे जाते हैं। हरबेरियम की शीट पर एक लेबल लगा दिया जाता है। इस लेबल पर पौधे को एकत्र करने की तिथि, स्थान, पौधे का इंग्लिश, स्थानीय तथा वैज्ञानिक नाम, कुल, एकत्र करने वाले का नाम आदि लिखा रहता है। हरबेरियम वर्गिकी अध्ययन के लिए तत्काल संदर्भ तंत्र उपलब्ध कराता है।



चित्र 1.2 वनस्पति संग्रहालय में पौधों के एकत्रित नमूने

1.4.2 वनस्पति उद्यान (बोटेनिकल गार्डन)

इन विशिष्ट उद्यानों में संदर्भ के लिए जीवित पौधों का संग्रहण होता है। इन उद्यानों में पौधों की स्पीशीज को पहचान के लिए उगाया जाता है और प्रत्येक पौधे पर लेबल लगा रहता है, जिस पर वनस्पति/वैज्ञानिक नाम तथा उसके कुल का नाम लिखा रहता है। प्रसिद्ध बोटेनिकल गार्डन क्यू (इंगलैंड), इंडियन बोटेनिकल गार्डन हावड़ा (भारत) में तथा नेशनल बोटेनिकल रिसर्च इंस्टीट्यूट लखनऊ (भारत) में हैं।

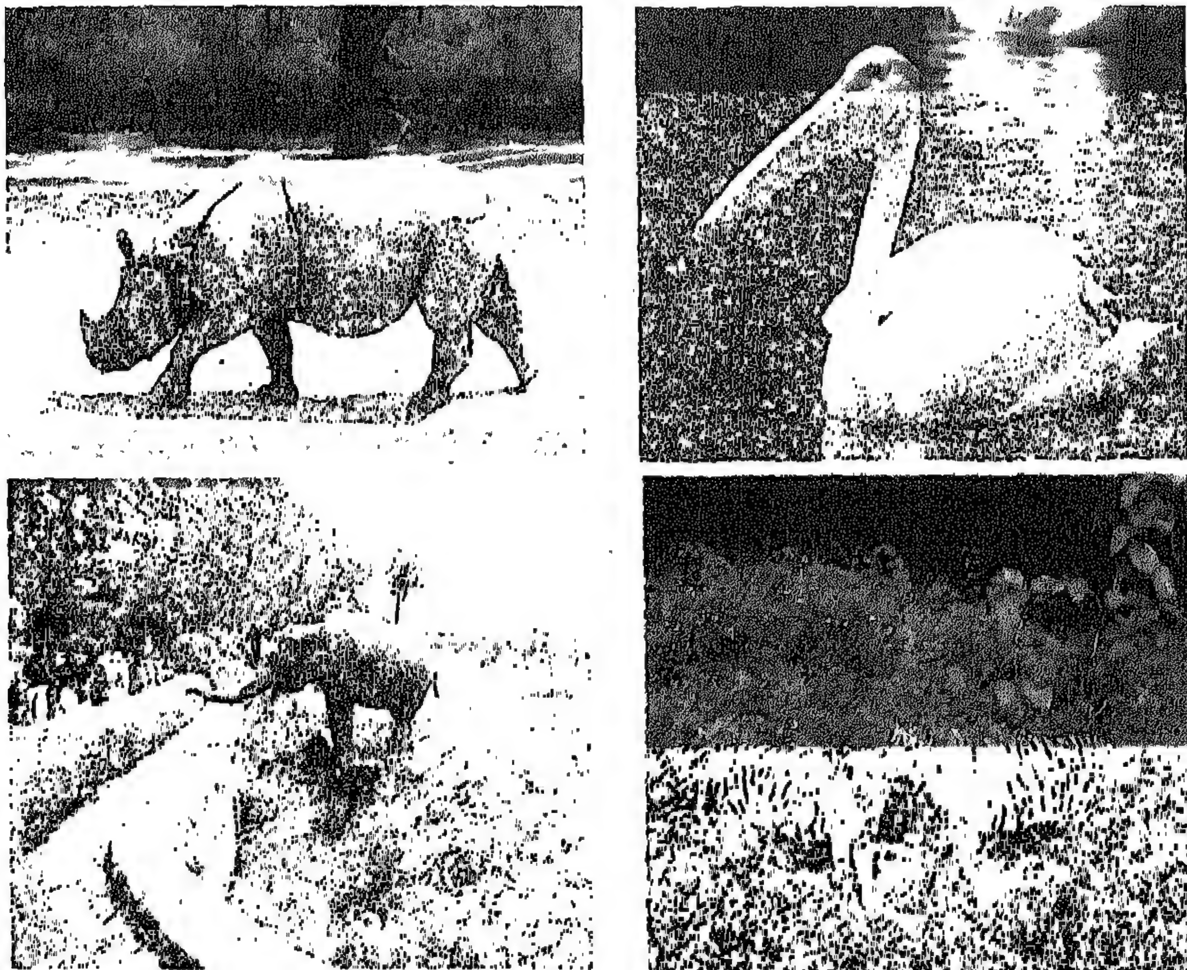
1.4.3 संग्रहालय (म्यूजियम)

वानस्पतिक संग्रहालय प्रायः शैक्षिक संस्थानों जैसे विद्यालय तथा कॉलेजों में स्थापित किए जाते हैं। संग्रहालय में अध्ययन के लिए परिरक्षित पौधों तथा प्राणियों के नमूने होते हैं। नमूने परिरक्षित घोल में डालकर जारों में रखे जाते हैं। पौधे तथा प्राणियों के नमूनों को सुखाकर परिरक्षित करते हैं। कीटों को एकत्र, मारने के बाद कीटों को डिब्बों में पिन लगाकर रखते हैं। बड़े प्राणी जैसे पक्षी तथा स्तनधारी को प्रायः भरकर परिरक्षित करते हैं। संग्रहालय में प्रायः प्राणियों के कंकाल भी रखे जाते हैं।

1.4.4 प्राणि उपवन अथवा चिड़ियाघर (जूलोजिकल पार्क)

इन उपवनों में अधिकांशतः वन्य आवासी जीवित प्राणी रखे जाते हैं। इनसे हमें वन्य जीवों की मानव की देख रेख में आहार-प्रकृति तथा व्यवहार को सीखने का अवसर प्राप्त होता है। जहाँ तक संभव होता है; प्राणी उपवनों में विभिन्न प्राणी उपलब्ध कराए जाते हैं।

चिड़ियाघर में सभी प्राणियों को उनके प्राकृतिक आवासों वाली परिस्थितियों में रखने का प्रयास किया जाता है। इन उद्यानों को प्राय: चिड़ियाघर कहते हैं। इसे देखने के लिए बहुत से लोग तथा बच्चे आते हैं।



चित्र 1.3 भारत के विभिन्न चिड़ियाघरों में वन्य प्राणी

1.4.5 कुंजी अथवा चाबी

यह एक अन्य साधन सामग्री है। जिसका प्रयोग समानताओं तथा असमानताओं पर आधारित होकर पौधों तथा प्राणियों की पहचान में किया जाता है। यह कुंजी विपर्यासी लक्षणों, जो प्राय: जोड़ों (युग्मों) जिन्हें युग्मित कहते हैं, के आधार पर होती है। कुंजी दो विपरीत विकल्पों को चुनने को दिखाती है। इसके परिणामस्वरूप एक को मान्यता तथा दूसरे को अमान्यता प्राप्त होती हैं। कुंजी में प्रत्येक कथन मार्गदर्शन का कार्य करता है। पहचानने के लिए प्रत्येक वर्गिकी संवर्ग जैसे कुल, वंश तथा जाति के लिए अलग वर्गिकी कुंजी की आवश्यकता होती है।

विस्तृत वर्णन को लिखने के लिए नियम-पुस्तिका (मैन्युअल), मोनोग्राफ (पुस्तक जिसमें एक विषय पर विस्तृत जानकारी हो), तथा सूचीपत्र (कैटेलॉग) अन्य माध्यम हैं इसके अतिरिक्त यह सही पहचान में भी सहायता करते हैं। फ्लोरा पुस्तकों में किसी क्षेत्र के पौधों तथा उसके वासस्थानों के विषय में जानकारी होती है। ये उस विशेष क्षेत्र में मिलने वाली पौधों की स्पीशीज की विषय-सूची देती हैं। नियम पुस्तिका से उस क्षेत्र में पाई जाने वाली स्पीशीज को पहचानने में सहायता मिलती है। मोनोग्राफ में किसी एक टैक्सान की पूरी जानकारी होती है।

सारांश

जीव जगत में प्रचुर मात्रा में विविधताएं दिखाई पड़ती हैं। असंख्य पादप तथा प्राणियों की पहचान तथा उनका वर्णन किया गया है; परंतु अब भी इनकी बहुत बड़ी संख्या अज्ञात है। जीवों के एक विशाल परिसर को आकार, रंग, आवास, शरीर क्रियात्मक तथा आकारिकीय लक्षणों के कारण हमें जीवों की व्याख्या करने के लिए बाधित होना पड़ता है। जीवों की विविधता तथा इनकी किस्मों के अध्ययन को सुसाध्य एवं सरल बनाने के लिए जीव विज्ञानियों ने कुछ नियमों तथा सिद्धांतों का प्रतिपादन किया, जिससे जीवों की पहचान, उनका नाम पद्धति तथा वर्गीकरण संभव हो सकें। ज्ञान की इस शाखा को वर्गिकी का नाम दिया गया है। पादपों तथा प्राणियों की विभिन्न स्पीशीज का वर्गिकी अध्ययन कृषि वानिकी और हमारे जैव-संसाधन में भिन्नता के सामान्य ज्ञान में लाभदायक सिद्ध हुए। वर्गिकी के मूलभूत आधार जैसे जीवों की पहचान, उनका नामकरण, तथा वर्गीकरण विश्वव्यापी रूप से अंतर्राष्ट्रीय कोड के अंतर्गत विकसित किया गया है। समरूपता तथा विभिन्नताओं को आधार मानकर प्रत्येक जीव को पहचाना गया है तथा उसे द्विपद नाम दिया गया। सही वैज्ञानिक तंत्र के अनुसार द्विपद नाम पद्धति, जीव वैज्ञानिक नाम जो दो शब्दों से मिलकर बना होता है, दिया जा सकता है। जीव वर्गीकरण तंत्र में अपने स्थान को प्रदर्शित करता है। बहुत से वर्ग/पद होते हैं जिन्हें प्राय: वर्गिकी संवर्ग अथवा टैक्सा कहते हैं। यह सभी वर्ग वर्गिकी पदानुक्रम बनाते हैं।

वर्गिकीविदों ने जीव की पहचान नामकरण तथा वर्गीकरण को सुगम बनाने के लिए विभिन्न वर्गिकी साधन सामग्री विकसित की। ये अध्ययन वास्तविक नमूनों पर किए जाते हैं जिन्हें भिन्न क्षेत्रों से एकत्रित किया जाता है। इन्हें हरबेरियम, म्यूजियम, बोटेनिकल गार्डन, जूलॉजिकल पार्क में संदर्भ के लिए परिरक्षित किया जाता है। हरबेरियम तथा म्यूजियम में नमूनों के एकत्रित करने तथा परिरक्षित करने के लिए विशिष्ट तकनीक की आवश्यकता होती है। वनस्पति उद्यान अथवा चिड़िया घर में पौधों तथा प्राणियों के जीवित नमूने होते हैं। वर्गिकीविदों ने वर्गिकी अध्ययन तथा सूचनाओं को प्रसारित करने के लिए मैनुअल तथा मोनोग्राफों को तैयार किया लक्षणों के आधार पर वर्गिकी कुंजी जीवों को पहचानने में सहायक सिद्ध हुई हैं।

अभ्यास

1. जीवों को वर्गीकृत क्यों करते हैं?
2. वर्गीकरण प्रणाली को बार-बार क्यों बदलते हैं ?
3. जिन लोगों से आप प्रायः मिलते रहते हैं, आप उनको किस आधार पर वर्गीकृत करना पसंद करेंगे ? (संकेत : ड्रेस, मातृभाषा, प्रदेश जिसमें वे रहते हैं, आर्थिक स्तर आदि)।
4. व्यष्टि तथा समष्टि की पहचान से हमें क्या शिक्षा मिलती है?
5. आम का वैज्ञानिक नाम निम्नलिखित हैं। इसमें से कौन सा सही है ?

   मेंजीफेरा इंडिका

   मेंजीफेरा इंडिका
6. टैक्सॉन की परिभाषा दीजिए। विभिन्न पदानुक्रम स्तर पर टैक्सा के कुछ उदाहरण दीजिए।
7. क्या आप वर्गिकी संवर्ग का सही क्रम पहचान सकते हैं?

   (अ) जाति (स्पीशीज) → गण (आर्डर) → संघ (फाइलम) → जगत (किंगडम)

   (ब) वंश (जीनस) → जाति → गण → जगत

   (स) जाति → वंश → गण → संघ
8. जाति शब्द के सभी मानवीय वर्तमान कालिक अर्थों को एकत्र कीजिए। क्या आप अपने शिक्षक से उच्च कोटि के पौधों तथा प्राणियों तथा बैक्टीरिया की स्पीशीज का अर्थ जानने के लिए चर्चा कर सकते हैं?
9. निम्नलिखित शब्दों को समझिए तथा परिभाषित कीजिए-

   (i) संघ (ii) वर्ग (iii) कुल (iv) गण (v) वंश
10. जीव के वर्गीकरण तथा पहचान में कुंजी किस प्रकार सहायक है?
11. पौधों तथा प्राणियों के उचित उदाहरण देते हुए वर्गिकी पदानुक्रम का चित्रण कीजिए।

अध्याय 2

जीव जगत का वर्गीकरण

सभ्यता के प्रारंभ से ही मानव ने सजीव प्राणियों के वर्गीकरण के अनेक प्रयास किए हैं। वर्गीकरण के ये प्रयास वैज्ञानिक मानदंडों की जगह सहज बुद्धि पर आधारित हमारे भोजन, वस्त्र एवं आवास जैसी सामान्य उपयोगिता के वस्तुओं के उपयोग की आवश्यकताओं पर आधारित थे। इन प्रयासों में जीवों के वर्गीकरण के वैज्ञानिक मानदंडों का उपयोग सर्वप्रथम अरस्तू ने किया था। उन्होंने पादपों को सरल आकारिक लक्षणों के आधार पर वृक्ष, झाड़ी एवं शाक में वर्गीकृत किया था। जबकि उन्होंने प्राणियों का वर्गीकरण लाल रक्त की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति के आधार पर किया था।

लीनियस के काल में सभी पादपों और प्राणियों के वर्गीकरण के लिए एक **द्विजगत पद्धति** विकसित की गई थी, जिसमें उन्हें क्रमशः **प्लांटी** (पादप) एवं **एनिमैलिया** (प्राणि) जगत में वर्गीकृत किया गया था। यह पद्धति कुछ काल तक अपनाई जाती रही थी। इस पद्धति के अनुसार यूकैरियोटी (ससीमकेंद्रकी) एवं प्रोकैरियोटी (असीमकेंद्रकी), एक कोशिक एवं बहुकोशिक तथा प्रकाश संश्लेषी (हरित शैवाल) एवं अप्रकाश संश्लेषी (कवक) के बीच विभेद स्थापित करना संभव नहीं था। पादपों एवं प्राणियों पर आधारित यह वर्गीकरण आसान एवं सरलता से समझे जाने के बावजूद बहुत से जीवधारियों को इनमें से किसी भी वर्ग में रखना संभव नहीं था। इसी कारण अत्यंत लंबे समय से चली आ रही वर्गीकरण की द्विजगत पद्धति अपर्याप्त सिद्ध हो रही थी। इसके अतिरिक्त, वर्गीकरण के लिए आकारिकी के साथ-साथ कोशिका संरचना, कोशिका भित्ति के लक्षण, पोषण की विधि, आवास, प्रजनन की विधियाँ एवं विकासीय संबंधों को भी समाहित करने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। अतः समय के साथ-साथ सजीवों के वर्गीकरण की पद्धति में अनेक परिवर्तन आए हैं। पादप एवं प्राणी जगत के वर्गीकरण की इन कठिन पद्धतियों, जिनमें सम्मिलित समूहों/जीवधारियों में होने वाले परिवर्तन शामिल हैं, सदा ही समाविष्ट रहे हैं। इसके अतिरिक्त जीवधारियों के विभिन्न जगत की संख्या एवं उनके लक्षणों की विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा अलग-अलग व्याख्या की गई है।

तालिका - 2.1 पाँच जीव-जगत के लक्षण

लक्षण	पाँच जगत				
	मॉनेरा	**प्रोटिस्टा**	**फंजाई**	**प्लांटी**	**ऐनिमेलिया**
कोशिका प्रकार	प्रोकैरियोटिक	यूकैरियोटिक	यूकैरियोटिक	यूकैरियोटिक	यूकैरियोटिक
कोशिका भित्ति	अकोशिक (बहुशर्कराइड) + एमीनो अम्ल	कुछ में उपस्थित	उपस्थित (सेल्युलोस रहित)	उपस्थित (सेल्युलोस सहित)	अनुपस्थित
केंद्रक झिल्ली)	अनुपस्थित	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित
काय संरचना	कोशिकीय	कोशिकीय	बहुकोशिक/ अदृढ़ ऊतक	ऊतक/अंग	ऊतक/अंग/ अंग तंत्र
पोषण की विधि	स्वपोषी (रसायन संश्लेषी एवं प्रकाशसंश्लेषी) तथा परपोषी (मृतपोषी एवं परजीवी)	स्वपोषी (प्रकाशसंश्लेषी) तथा परपोषी	परपोषी (मृतपोषी एवं परजीवी	स्वपोषी (प्रकाशसंश्लेषी)	परपोषी (प्राणि समभोजी, मृतपोषी इत्यादि)
प्रजनन की विधि	संयुग्मन	युग्मक संलयन एवं संयुग्मन	निषेचन	निषेचन	निषेचन

सन् 1969 में आर.एच. व्हिटेकर द्वारा एक **पाँच जगत वर्गीकरण** की पद्धति प्रस्तावित की गई थी। इस पद्धति के अंतर्गत सम्मिलित किए जाने वाले जगतों के नाम **मॉनेरा, प्रोटिस्टा, फंजाई, प्लांटी** एवं **एनिमैलिया** हैं। कोशिका संरचना, थैलस संरचना, पोषण की प्रक्रिया, प्रजनन एवं जातिवृत्तीय संबंध उनके वर्गीकरण की पद्धति के प्रमुख मानदंड थे। तालिका 2.1 में इन सभी जगतों के विभिन्न लक्षणों का एक तुलनात्मक विवरण दिया गया है।

अब हम पाँच जगत वर्गीकरण से जुड़े मुद्दों एवं धारणाओं पर विचार करेंगे, जिससे वर्गीकरण की यह पद्धति प्रभावित है। इससे पहले की वर्गीकरण पद्धति के अंतर्गत बैक्टीरिया, नील-हरित शैवाल, (फंजाई) मॉस, फर्न, जिम्नोस्पर्म एवं एन्जिओस्पर्म को 'पादपों' के साथ रखा गया था। इस जगत के समस्त जीवों की कोशिकाओं में कोशिका भित्ति का उपस्थित रहना एक समानता थी, जबकि उनके अन्य लक्षण एक दूसरे से एक दम अलग थे। प्रोकैरियोटिक बैक्टीरिया तथा नील-हरित शैवाल को अन्य यूकैरियोटिक जीवों के साथ वर्गीकृत कर दिया गया। इस पद्धति के अनुसार एक कोशिक जीवों को बहुकोशिक जीवों के साथ वर्गीकृत किया गया, जैसे- *क्लेमाइडोमोनास* एवं *स्पाइरोगायरा* शैवाल। इस वर्गीकरण में क्रवकों जैसे परपोषी का, हरित पादपों जैसे स्वपोषी, के बीच भी विभेद नहीं किया गया, जबकि कवकों की कोशिका भित्ति काइटिन की एवं हरित पादपों की सेलुलोस की बनी होती है। इन्हीं लक्षणों को ध्यान में रखते हुए कवकों को

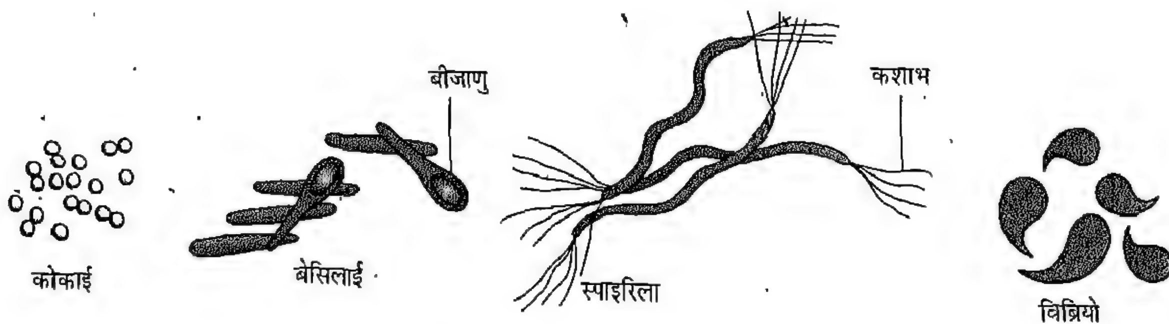
एक अलग जगत 'फंजाई' के अंतर्गत रखा गया है। सभी प्रोकैरियोटिक जीवधारियों के साथ 'मॉनेरा' तथा एककोशिक जीवधारियों को प्रोटिस्टा जगत के अंतर्गत रखा गया है। प्रोटिस्टा जगत के अंतर्गत कोशिका भित्तियुक्त *क्लैमाइडोमोनास* एवं *क्लोरेला* (जिन्हें पहले पादपों के अंतर्गत शैवाल में रखा गया था) *पैरामीशियम* एवं *अमीबा* (जिन्हें पहले प्राणि जगत में रखा गया था)। के साथ रखा गया है, जिनमें कोशिका भित्ति नहीं पाई जाती है। इस प्रकार इस पद्धति में अनेक जीवधारियों को एक साथ रखा गया है, जिन्हें पहले की पद्धतियों में अलग-अलग रखा गया था। ऐसा वर्गीकरण के मानदंडों में परिवर्तन के कारण हुआ है। इस प्रकार के परिवर्तन भविष्य में भी हो सकते हैं, जो लक्षणों तथा विकासीय संबंधों के प्रति हमारी समझ में सुधार पर निर्भर होगी। समय के साथ-साथ वर्गीकरण की एक ऐसी पद्धति विकसित करने का प्रयास किया गया है जो न सिर्फ आकारिक, कायिक एवं प्रजनन संबंधी समानताओं पर आधारित हों, बल्कि जातिवृत्तीय हो और विकासीय संबंधों पर भी आधारित हो।

इस अध्याय में हम व्हिटेकर पद्धति के अंतर्गत मॉनेरा, प्रोटिस्टा एवं फंजाई के लक्षणों का अध्ययन करेंगे। प्लांटी एवं एनिमेलिया जगत, जिन्हें सामान्य भाषा में क्रमशः पादप एवं प्राणि जगत कहते हैं, की चर्चा आगे के दो अध्यायों में अलग-अलग करेंगे।

2.1 मॉनेरा जगत

सभी बैक्टीरिया मॉनेरा जगत के अंतर्गत आते हैं। ये सूक्ष्मजीवियों में सर्वाधिक संख्या में होते हैं और लगभग सभी स्थानों पर पाए जाते हैं। मुट्ठी भर मिट्टी में सैकड़ों प्रकार के बैक्टीरिया देखे गए हैं। ये गर्म जल के झरनों, मरूस्थल, बर्फ एवं गहरे समुद्र जैसे विषम एवं प्रतिकूल वास स्थानों, जहाँ दूसरे जीव मुश्किल से ही जीवित रह पाते हैं, में भी पाए जाते हैं। कई बैक्टीरिया तो अन्य जीवों पर या उनके भीतर परजीवी के रूप में रहते हैं।

बैक्टीरिया को उनके आकार के आधार पर चार समूहों गोलाकार कोकस (बहुवचन कोकाई), छड़ाकार बैसिलस (बहुवचन बैसिलाई) कॉमा-आकार के, विब्रियम (बहुवचन-विब्रियाँ) तथा सर्पिलाकार स्पाइरिलम (बहुवचन स्पाइरिला) में बाँटा गया है (चित्र 2.1)।



चित्र 2.1 विभिन्न आकार के बैक्टीरिया

यद्यपि संरचना में बैक्टीरिया अत्यंत सरल प्रतीत होते हैं; परंतु इनका व्यवहार अत्यंत जटिल होता है। चयपचाय (उपापचय) की दृष्टि से अन्य जीवधारियों की तुलना में बैक्टीरिया में बहुत अधिक विविधता पाई जाती है। उदाहरण स्वरूप वे अपना भोजन अकार्बनिक पदार्थों से संश्लेषित कर सकते हैं। ये प्रकाश संश्लेषी स्वपोषी अथवा रसायन संश्लेषी स्वपोषी होते हैं, अर्थात् वे अपना भोजन स्वयं संश्लेषित नहीं करते हैं; अपितु भोजन के लिए अन्य जीवधारियों अथवा मृत कार्बनिक पदार्थों पर निर्भर रहते हैं।

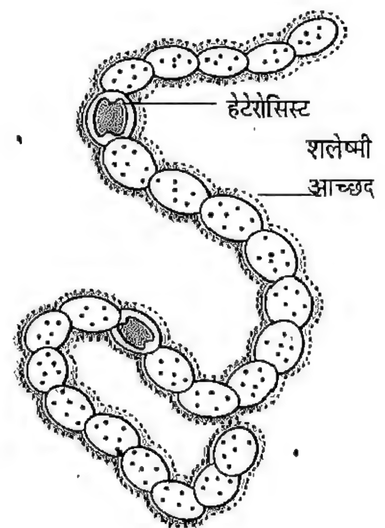
2.1.1 आद्य बैक्टीरिया

ये विशिष्ट प्रकार के बैक्टीरिया होते हैं, ये बैक्टीरिया अत्यंत कठिन वास स्थानों, जैसे-अत्यंत लवणीय क्षेत्र (हैलोफी), गर्म झरने (थर्मोएसिडोफिलस) एवं कच्छ क्षेत्र (मैथेनोजेन) में पाए जाते हैं। आद्य बैक्टीरिया तथा अन्य बैक्टीरिया की कोशिका भित्ति की संरचना एक दूसरे से भिन्न होती है। यही लक्षण उन्हें प्रतिकूल अवस्थाओं में जीवित रखने के लिए उत्तरदायी हैं। मैथेनोजेन अनेक रूमिनेंट पशुओं (जैसे गाय एवं भैंस) के आंत्र में पाए जाते हैं तथा इनके गोबर से मिथेन (जैव गैस) का उत्पादन करते हैं।

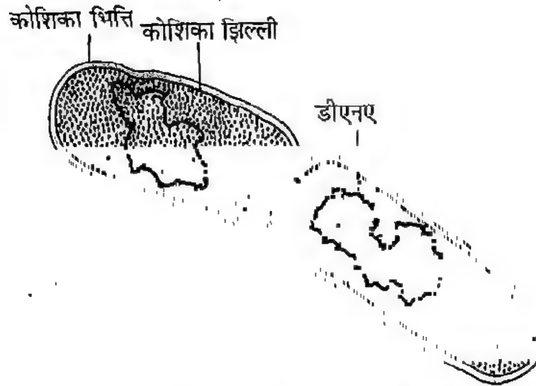
2.1.2 यूबैक्टीरिया

हजारों **यूबैक्टीरिया** अथवा वास्तविक बैक्टीरिया की पहचान एक कठोर कोशिका भित्ति एवं एक कशाभ (चल बैक्टीरिया) द्वारा की जाती है। **सायनो बैक्टीरिया** (जिन्हें नील-हरित शैवाल भी कहते हैं) में हरित पादपों की तरह क्लोरोफिल-ए पाया जाता है तथा ये **प्रकाश संश्लेषी स्वपोषी** होते हैं (चित्र 2.2)। सायनो बैक्टीरिया एककोशिक, क्लोनीय अथवा तंतुमय समुद्री अथवा स्थलीय शैवाल हैं। इनकी क्लोनी प्राय: जेलीनुमा आवरण से ढकी रहती हैं जो प्रदूषित जल में बहुत फलते-फूलते हैं। **बैक्टीरिया** जैसे *नॉस्टॉक* एवं *एनाबिना* पर्यावरण के नाइट्रोजन को टेटरोसिस्ट नामक विशिष्ट कोशिकाओं द्वारा स्थिर कर सकते हैं। रसायन संश्लेषी बैक्टीरिया नाइट्रेट, नाइट्राइट एवं अमोनिया जैसे विभिन्न अकार्बनिक पदार्थों को ऑक्सीकृत कर उनसे मुक्त ऊर्जा का उपयोग एटीपी उत्पादन के लिए करते हैं। ये नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, आयरन एवं सल्फर जैसे पोषकों के पुनर्चक्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

परपोषी बैक्टीरिया प्रकृति में बहुलता से पाए जाते हैं और इनमें अधिकतर महत्वपूर्ण अपघटक होते हैं। इन परपोषी बैक्टीरिया में से अनेक का मनुष्य के जीवन संबंधी गतिविधियों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। ये दूध से दही बनाने में, प्रतिजैविकों के उत्पादन में, लेग्युम पादप की जड़ों में नाइट्रोजन स्थिरिकरण में सहायता करते हैं। कुछ बैक्टीरिया रोगजनक होते हैं जो मनुष्यों, फसलों, फार्म एवं पालतू पशुओं को हानि पहुँचाते हैं। विभिन्न बैक्टीरिया के कारण हैजा, टायफॉयड, टिटनेस, साइट्रस, कैंकर जैसी बीमारियां होती हैं।



चित्र 2.2 एक तंतुमयी शैवाल-नॉस्टॉक



चित्र 2.3 एक विभक्त होता हुआ बैक्टीरिया

बैक्टीरिया प्रमुख रूप से कोशिका विभाजन द्वारा प्रजनन करते हैं। कभी-कभी, विपरीत परिस्थितियों में ये बीजाणु बनाते हैं। ये लैंगिक प्रजनन भी करते हैं, जिनमें एक बैक्टीरिया से दूसरे बैक्टीरिया में डीएनए का पुरातन स्थानांतरण होता है।

माइकोप्लाज्मा ऐसे जीवधारी हैं, जिनमें कोशिका भित्ति बिल्कुल नहीं पाई जाती है। ये सबसे छोटी जीवित कोशिकाएं हैं, जो ऑक्सीजन के बिना भी जीवित रह सकती हैं। अनेक माइकोप्लाज्मा प्राणियों और पादपों के लिए रोगजनक होती हैं।

2.2 प्रोटिस्टा जगत

सभी एककोशिक यूकैरियोटिक को **प्रोटिस्टा** के अंतर्गत रखा गया है, परंतु इस जगत की सीमाएं ठीक तरह से निर्धारित नहीं हो पाई हैं। एक जीव वैज्ञानिक के लिए जो 'प्रकाशसंश्लेषी प्रोटिस्टा' है, वही दूसरे के लिए 'एक पादप' हो सकता है। क्राइसोफाइट, डायनोफ्लैजिलेट, युग्लीनॉइड, अवपंक कवक एवं प्रोटोजोआ सभी को इस पुस्तक में प्रोटिस्टा के अंतर्गत रखा गया है। प्राथमिक रूप से प्रोटिस्टा के सदस्य जलीय होते हैं। यूकैरियोटिक होने के कारण इनकी कोशिका में एक सुसंगठित केंद्रक एवं अन्य झिल्लीबद्ध कोशिकांग पाए जाते हैं। कुछ प्रोटिस्टा में कशाभ एवं पक्ष्माभ भी पाए जाते हैं। ये अलैंगिक, तथा कोशिका संलयन एवं युग्मनज (जाइगोट) बनने की विधि द्वारा लैंगिक प्रजनन करते हैं।

2.2.1 क्राइसोफाइट

इस समूह के अंतर्गत डाइएटम तथा सुनहरे शैवाल (डेस्मिड) आते हैं। ये स्वच्छ जल एवं लवणीय (समुद्री) पर्यावरण दोनों में पाए जाते हैं। ये अत्यंत सूक्ष्म होते हैं तथा जलधारा के साथ निश्चेष्ट रूप से बहते हैं। डाइएटम में कोशिका भित्ति साबुनदानी की तरह इसी के अनुरूप दो अतिछादित कवच बनाती है। इन भित्तियों में सिलिका होती है, जिस कारण ये नष्ट नहीं होते हैं। इस प्रकार मृत डाइएटम अपने परिवेश (वास स्थान) में कोशिका भित्ति के अवशेष बहुत बड़ी संख्या में छोड़ जाते हैं। करोड़ों वर्षों में जमा हुए इस अवशेष को 'डाइएटमी मृदा' कहते हैं। कणमय होने के कारण इस मृदा का उपयोग पॉलिश करने, तेलों तथा सिरप के निस्यंदन में होता है। ये समुद्र के मुख्य उत्पादक हैं।

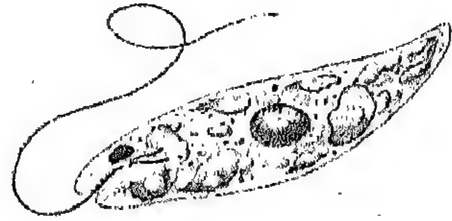
2.2.2 डायनोफ्लैजिलेट

ये जीवधारी मुख्यतः समुद्री एवं प्रकाशसंश्लेषी होते हैं। इनमें उपस्थित प्रमुख वर्णकों के आधार पीले, हरे, भूरे, नीले अथवा लाल दिखते हैं। इनकी कोशिका भित्ति के बाह्य सतह

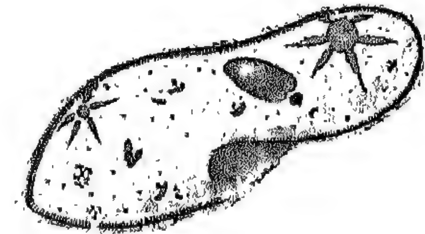
पर सेल्युलोस की कड़ी पट्टिकाएं होती हैं। अधिकतर डायनोफ्लैजिलेट में दो कशाभ होते हैं, जिसमें एक लंबवत् तथा दूसरा अनुप्रस्थ रूप से भित्ति पट्टिकाओं के बीच की खांच में उपस्थित होता है। प्राय: लाल डायनोफ्लैसिलेट की संख्या में विस्फोट होता है, जिससे समुद्र का जल लाल (लाल तरंगें) दिखने लगता है। इतनी बड़ी संख्या के जीव से निकले जीव-विष के कारण मछली एवं अन्य समुद्री जीव मर जाते हैं। उदाहरण: *गोनियालैक्स* ।

2.2.3 यूग्लीनॉइड

इनमें से अधिकांशत: स्वच्छ जल में पाए जाने वाले जीवधारी हैं, जो स्थिर जल में पाए जाते हैं। इनमें कोशिका भित्ति की जगह एक प्रोटीनयुक्त पदार्थ की पर्त पेलिकिल होती है, जो इनकी संरचना को लचीला बनाती है। इनमें दो कशांभ होते हैं जिसमें एक छोटा तथा दूसरा लंबा होता है। यद्यपि सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में ये प्रकाशसंश्लेषी होते हैं, लेकिन सूर्य के प्रकाश के नहीं होने पर अन्य सूक्ष्म जीवधारियों का शिकार कर परपोषी की तरह व्यवहार करते हैं। आश्चर्यजनक रूप से युग्लीनॉइड में पाए जाने वाले वर्णक उच्च पादपों में उपस्थित वर्णकों के समान होते हैं। उदाहरण: *युग्लीना* (चित्र 2.4 अ)।



(अ)



(ब)

चित्र 2.4 प्रोटोजोऑन – (अ) यूग्लीना (ब) पैरामीशियम

2.2.4 अवपंक कवक

अवपंक कवक मृतपोषी प्रोटिस्टा हैं। ये सड़ती हुई टहनियों तथा पत्तों के साथ गति करते हुए जैविक पदार्थों का भक्षण करते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में ये समूह (प्लाज्मोडियम) बनाते हैं, जो कई फीट तक की लंबाई का हो सकता है। प्रतिकूल परिस्थितियों में ये बिखरकर सिरों पर बीजाणुयुक्त फलनकाय बनाते हैं। इन बीजाणुओं का परिक्षेपण वायु के साथ होता है।

2.2.5 प्रोटोजोआ

सभी प्रोटोजोआ परपोषी होते हैं, जो परभक्षी अथवा परजीवी के रूप में रहते हैं। ये प्राणियों के पुरातन संबंधी हैं। प्रोटोजोआ को चार प्रमुख समूहों में बाँटा जा सकता है।

अमीबीय प्रोटोजोआ: ये जीवधारी स्वच्छ जल, समुद्री जल तथा नम मृदा में पाए जाते हैं। ये अपने कूटपादों की सहायता से अपने शिकार को पकड़ते हैं। इनके समुद्री प्रकारों की सतह पर सिलिका के कवच होते हैं। इनमें से कुछ जैसे *एंटअमीबी* परजीवी होते हैं।

कशाभी प्रोटोजोआ: इस समूह के सदस्य स्वच्छंद अथवा परजीवी होते हैं, इनके शरीर पर कशाभ पाया जाता है। परजीवी कशाभी प्रोटोजोआ बीमारी के कारण हैं, जिनसे निद्रालु व्याधि नामक बीमारी होती है। उदाहरण: *ट्रिपैनोसोमा* ।

पक्ष्माभी प्रोटोजोआ: ये जलीय तथा अत्यंत सक्रिय गति करने वाले जीवधारी हैं, क्योंकि इनके शरीर पर हजारों की संख्या में पक्ष्माभ पाए जाते हैं। इनमें एक गुहा (ग्रसिका) होती है जो कोशिका की सतह के बाहर की तरफ खुलती है। पक्ष्माभों की लयबद्ध गति के कारण जल से पूरित भोजन गलेट की तरफ भेज दिया जाता है। उदाहरण-*पैरामीशियम*।

स्पोरोजोआ: इस समूह में वे विविध जीवधारी आते हैं जिनके जीवन चक्र में संक्रमण करने योग्य बीजाणु जैसी अवस्था पाई जाती है। इसमें सबसे कुख्यात प्लाज्मोडियम (मलेरिया परजीवी) प्रजाति है, जिसके कारण मानव की जनसंख्या पर आघात पहुँचाने वाला प्रभाव पड़ा है।

2.3 कवक (फंजाई) जगत

परपोषी जीवों में फंजाई (कवक) का जीव जगत में विशेष अद्‌भुत स्थान है। इनकी आकारिकी तथा वास स्थानों में बहुत भिन्नता होती है। रोटी अथवा संतरे का सड़ना फंजाई के कारण होता है। सामान्य छत्रक (मशरूम) तथा कुकुरमुत्ता (टोडस्टूल) भी फंजाई हैं। सरसों की पत्तियों पर स्थित सफेद धब्बे परजीवी फंजाई के कारण होते हैं। कुछ एककोशिक फंजाई जैसे यीस्ट का उपयोग रोटी तथा बीयर बनाने के लिए किया जाता है। अन्य फंजाई पौधों तथा जंतुओं के रोग के कारण होते हैं। उदाहरण के लिए गेहूँ में किट्ट रोग पक्सिनिया के कारण होता है। कुछ फंगल जैसे *पेनिसिलियम* से प्रतिजैविक (एंटिबायोटिक) का निर्माण होता है। फंजाई विश्वव्यापी हैं और ये हवा, जल, मिट्टी में तथा जंतु एवं पौधों पर पाए जाते हैं। ये गरम तथा नम स्थानों पर सरलता से उग जाते हैं। क्या आपने कभी सोचा है कि हम अपने भोजन को रेफ्रिजरेटर में क्यों रखते हैं? हाँ, इससे हम अपने भोजन को बैक्टीरिया अथवा फंजाई के कारण खराब होने से बचाते हैं।

फंजाई तंतुमयी है, लेकिन यीस्ट जो एककोशिक है इसका अपवाद है। ये लंबी, पतली धागे की तरह की संरचनाएं होती हैं, जिन्हें कवक तंतु कहते हैं। कवक तंतु के जाल को कवक जाल (माइसीलियम) कहते हैं। कुछ कवक तंतु सतत नलिकाकार होते हैं, जिनमें बहुकेंद्रकित कोशिका द्रव्य (साइटोप्लाज्म) भरा होता है, जिन्हें संकोशिकी कवक तंतु कहते हैं। अन्य कवक तंतुओं में पटीय होते हैं। फंजाई की कोशिका भित्ति काइटिन तथा पॉलिसैकेराइड की बनी होती हैं।

अधिकांश फंजाई परपोषित होती हैं। वे मृत बस्ट्रेट्स से घुलनशील कार्बनिक पदार्थों को अवशोषित कर लेती हैं, अत: इन्हें **मृतजीवी** कहते हैं। जो फंजाई सजीव पौधों तथा जंतुओं पर निर्भर करती हैं, उन्हें **परजीवी** कहते हैं। ये शैवाल तथा लाइकेन के साथ तथा उच्चवर्गीय पौधों के साथ कवक मूल बना कर भी रह सकते हैं, ऐसी फंजाई **सहजीवी** कहलाती है।

फंजाई में जनन कायिक-खंडन, विखंडन, तथा मुकुलन विधि द्वारा होता है। अलैंगिक जनन बीजाणु, जिसे कोनिडिया कहते है अथवा धानी-बीजाणु अथवा चलबीजाणु, द्वारा

होता है। लैंगिक जनन निषिक्तांड (ऊस्पोरा), ऐंस्कस बीजाणु तथा बेसिडियम बीजाणु द्वारा होता है। विभिन्न बीजाणु सुस्पष्ट संरचनाओं में उत्पन्न होते हैं जिन्हें फलनकाय कहते हैं। लैंगिक चक्र में निम्नलिखित तीन सोपान होते हैं:

(i) दो चल अथवा अचल युग्मकों के प्रोटोप्लाज्म का संलयन होना। इस क्रिया को **प्लैज्मोगैमी** कहते हैं।

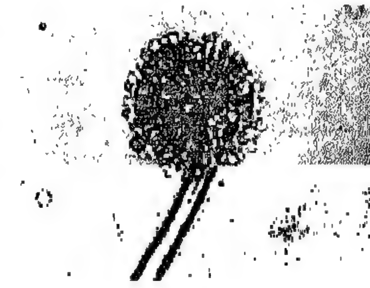
(ii) दो केंद्रकों का संलयन होना जिसे **केंद्र संलयन** कहते हैं।

(iii) युग्मनज में मिऑसिस के कारण अगुणित बीजाणु बनना लैंगिक जनन में संयोज्य संगम के दौरान दो अगुणित कवक तंतु पास-पास आते हैं और संलयित हो जाते हैं। कुछ फंजाई में दो गुणित कोशिकाओं में संलयन के तुरंत बाद एक द्विगुणित (2n) कोशिका बन जाती है, यद्यपि अन्य फंजाई (ऐस्कोमाइसिटीज) में एक मध्यवर्ती द्विकेंद्रकी अवस्था (n+n) अर्थात् एक कोशिका में दो केंद्रक बनते हैं; ऐसी परिस्थिति को **केंद्रक युग्म** कहते हैं तथा इस अवस्था को फंगस की **द्विकेंद्रक प्रावस्था** कहते हैं। बाद में पैतृक केंद्रक संलयन हो जाते हैं और कोशिका द्विगुणित बन जाती है। फंजाई फलनकाय बनाती है, जिसमें न्यूनीकरण विभाजन होता है जिसके कारण अगुणित बीजाणु बनते हैं।

कवक जाल की आकारिकी, बीजाणु बनने तथा फलन काय बनने की विधि जगत को विभिन्न वर्गों में विभक्त करने का आधार बनते हैं।



(अ)



(ब)



(स)

चित्र 2.5 फंजाई: (अ) म्यूकर (ब) ऐश्पर्जिलस (स) एगेरिकस

2.3.1 फाइकोमाइसिटीज

फाइकोमाइसिटीज जलीय आवासों, गली-सड़ी लकड़ी, नम तथा सीलन भरे स्थानों अथवा पौधों पर अविकल्पी परजीवी के रूप में पाए जाते हैं। कवक जाल अपटीय तथा बहुकेंद्रकित होता है। अलैंगिक जनन चल बीजाणु अथवा अचल बीजाणु द्वारा होता है। ये बीजाणु धानी में अंतर्जातीय उत्पन्न होते हैं। दो युग्मकों के संलयन से युग्माणु बनते हैं। इन युग्मकों की आकारिकी एक जैसी (समयुग्मकता) अथवा भिन्न (असमयुग्मकी अथवा विषमयुग्मकी) हो सकती है। इसके सामान्य उदाहरण हैं *म्यूकर*, *राइजोपस* (रोटी के कवक पहले ही बता चुके हैं) तथा *ऐलबूगो* (सरसों पर परजीवी फंजाई) हैं।

2.3.2 ऐस्कोमाइसिटीज

इसे सामान्यत: थैली फंजाई भी कहते हैं। ऐस्कोमाइसिटीज एककोशिक जैसे यीस्ट (*सकैरोमाइसीज*) अथवा बहुकोशिक जैसे *पेनिसिलियम*, होती है। ये मृतजीवी, अपघटक, परजीवी अथवा शमलरागी (पशुविष्टा

पर उगनेवाली) होते हैं। कवक जालशाखित तथा पटीय होता है। अलैंगिक बीजाणु कोनिडिया होते हैं जो विशिष्ट कवकजाल जिसे कोनिडिमधर कहते हैं, पर बहिर्जात रूप से उत्पन्न होते हैं। कोनिडिया अंकुरित होकर कवक जाल बनाते हैं। लैंगिक बीजाणु को ऐस्कस बीजाणु कहते हैं। ये बीजाणु थैलीसम ऐस्कस में अंतर्जातीय रूप से उत्पन्न होते हैं। ये ऐसाई (एक वचन ऐस्कस) विभिन्न प्रकार की फलनकाय में लगी रहती हैं, जिन्हें ऐस्कोकार्प कहते हैं। इसके कुछ उदाहरण हैं *ऐस्पर्जिलस*, (चित्र 2.5 ब) *क्लेवीसेप* तथा *न्यूरोस्पोरा* हैं। *न्यूरोस्पोरा* का उपयोग जैवरासायनिक तथा आनुवंशिक प्रयोगों में बहुत किया जाता है। इसी कारण यह पादप जगत के ड्रोसोफिला के समान प्रसिद्ध है। इस वर्ग में आने वाले मॉरिल तथा बफल खाने योग्य होते हैं और इन्हें सुस्वादु भोजन समझा जाता है।

2.3.3 बेसिडियोमाइसिटीज

बेसिडियोमाइसिटीज के ज्ञात सामान्य प्रकार - मशरूम, ब्रेक्टफंजाई अथवा पफबॉल हैं। ये मिट्टी में, लट्ठे तथा वृक्ष के ठूँठों पर तथा सजीव पादपों के अंदर परजीवी के रूप में उगते हैं जैसे किट्ट तथा कंड (स्मट)। कवकजाल शाखित तथा पटीय होता है। इसमें अलैंगिक बीजाणु प्राय: नहीं होते हैं, लेकिन कायिक जनन खंडन विधि द्वारा बहुत सामान्य है। इसमें लैंगिक अंग नहीं होते, लेकिन इसमें प्लाज्मोगैमी विभिन्न स्ट्रेनो वाली दो कायिक कोशिकाओं अथवा जीन प्रारुप के संलयन से होती हैं। इसमें बनने वाली संरचना द्विकेंद्रकी होती है, जिससे अंतत: बेसिडियम बनते हैं। बेसिडियम में केंद्रक संलयन (कैरियोगैमी) तथा मिऑसिस होता है जिसके कारण चार बेसिडियम बीजाणु बनते हैं। बेसिडियमबीजाणु बेसिडियम पर बहिर्जातीय उत्पन्न होते हैं। बेसिडियम फलनकाय में लगे रहते हैं जिसे बेसिडियो कार्प कहते हैं, इसके कुछ सामान्य उदाहरण *ऐगैरिकस* (मशरूम) (चित्र 2.5 स), *आस्टीलैगो* (कंड) तथा *पक्सिनिया* (किट्ट फंगस) हैं।

2.3.4 डयूटिरोमाइसिटीज

इसे प्राय: अपूर्ण कवक भी कहते हैं; क्योंकि इसकी केवल अलैंगिक अथवा कायिक प्रवस्था ही ज्ञात हो पाई है। जब इस फंजाई की लैंगिक प्रवस्था की खोज हो जाती है, तब उसे उसके उचित वर्ग में रख दिया जाता है। यह भी संभव है कि अलैंगिक तथा कायिक प्रवस्थाओं को एक नाम दे दिया गया हो (और उन्हें डयूटिरोमासिटीज में रख दिया गया हो) और लैंगिक प्रवस्था को दूसरे वर्ग में। बाद में जब उनके अनुबंधों (कड़ी) का पता लगा और फंजाई की उचित पहचान हो गई। तब उन्हें डयूटिरोमासिटीज से निकाल लिया गया। एक बार जब डयूटिरोमासिटीज के सदस्यों की उचित (लैंगिक) प्रवस्था का पता लग जाए तब उन्हें एस्कोमाइसिटीज और बेसिडियोमाइसिटीज में सम्मिलित कर लेते हैं। डयूटिरोमाइसिटीज केवल अलैंगिक बीजाणुओं, जिन्हें कोनिडिया कहते हैं, से जनन करते हैं। इसके कवक जाल पटीय तथा शाखित होते हैं। इसके कुछ सदस्य मृतजीवी अथवा परजीवी होते हैं। लेकिन उनके अधिकांश सदस्य अपशिष्ट के अपघटक होते हैं और खनिज के चक्रण में सहायता करते हैं। इसके कुछ उदाहरण *आल्टरनेरिया, कोलीटोट्राइकम* तथा *ट्राईकोडर्मा* हैं।

2.4 पादप जगत (प्लांटी किंगडम)

पादप जगत में वे सभी जीव आते हैं जो यूकैरिऑटिक हैं और जिनमें क्लोरोफिल होते हैं। ऐसे जीवों को पादप कहते हैं। इनमें से कुछ पादप जैसे कीटभक्षी पौधे तथा परजीवी आंशिक रूप से विषमपोषी होते हैं। *ब्लेडरवर्ट* तथा वीनस फ्लाईट्रेप कीटभक्षी पौधों के और अमरबेल (*क्सकूटा*) परजीवी का उदाहरण हैं। पादप कोशिका में कोशिका भित्ति होती है जो सेल्यूलोज की बनी होती है और इसकी संरचना के बारे में विस्तृत विवरण अध्याय 3 में पढ़ेंगे। प्लांटी जगत में शैवाल, ब्रायोफाइट, टैरिडोफाइट, जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म आते हैं।

पादप के जीवन चक्र में दो सुस्पष्ट अवस्थाएँ द्विगुणित बीजाणु-उद्भिद् तथा अगुणित युग्मकोद्भिद् होती हैं। इन दोनों में पीढ़ी एकांतरण होता है। विभिन्न प्रकार के पादप वर्गों में अगुणित तथा द्विगुणित प्रवस्थाओं की लंबाई, (और ये प्रवस्थाएँ मुक्तजीवी हैं अथवा दूसरों पर निर्भर करती हैं) के अनुसार विभिन्न होती हैं। युग्मनज (2n) में मिऑसिस विभाजन के द्वारा अगुणित (n) बीजाणु बनते हैं। ये बीजाणु अंकुरित होकर युग्मकोद्भिद् बनाते हैं। युग्मक (नर तथा मादा) युग्मकोद्भिद् पर बनते हैं जो संलयन होकर पुनः द्विगुणित युग्मनज बनाते हैं। युग्मनज से बीजाणु-उद्भिद् विकसित होता है। इस प्रक्रम को **संतति एकांतरण** कहते हैं। आप इस जगत का विस्तृत विवरण अध्याय 3 में पढ़ेंगे।

2.5 जंतु जगत (एनिमेलिया किंगडम)

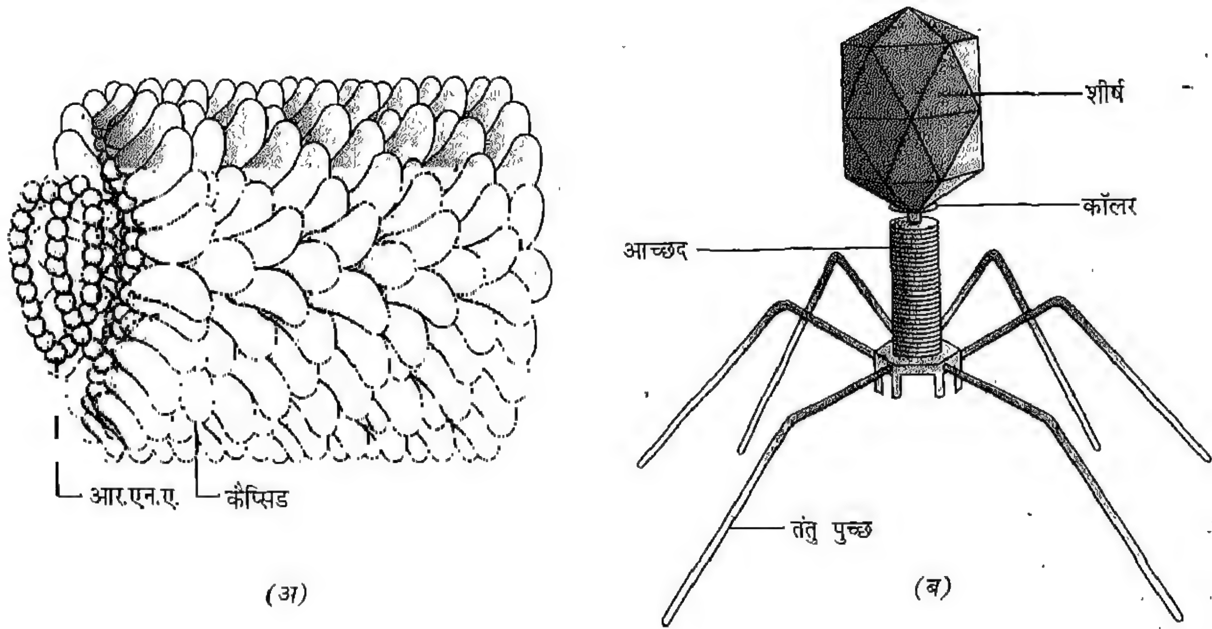
इस जगत के जीव विषमपोषी यूकैरिऑटिक हैं जो बहुकोशिक हैं और उनकी कोशिका में कोशिका भित्ति नहीं होती। ये भोजन के लिए परोक्ष तथा अपरोक्ष रूप से पौधों पर निर्भर रहते हैं। ये अपने भोजन को एक आंतरिक गुहिका में पचाते हैं और भोजन को ग्लाइकोजन अथवा वसा के रूप में संग्रहण करते हैं। इनमें प्राणि समपोषण, अर्थात् भोजन, का अंतर्ग्रहण करना होता हैं। उनमें वृद्धि का एक निर्दिष्ट पैटर्न होता है और वे एक पूर्ण वयस्क जीव बन जाते हैं; जिसकी सुस्पष्ट आकृति तथा माप होती है। उच्चकोटि के जीवों में विस्तृत संवेदी तथा तंत्रिका प्रेरक क्रियाविधि विकसित होती है। इनमें से अधिकांश चलन करने में सक्षम होते हैं।

लैंगिक जनन नर तथा मादा के संगम से होता है और बाद में उसमें भ्रूण का विकास होता है। संघ के विभिन्न मुख्य अभिलक्षणों का विस्तृत वर्णन अध्याय 4 में किया गया है।

2.6 विषाणु (वाइरस), विरोइड तथा लाइकेन

विटेकर द्वारा सुझाए पाँच जगत वर्गीकरण में अकोशिक जीवों जैसे वाइरस तथा विरोइड तथा लाइकेन का उल्लेख नहीं किया गया है। इनका संक्षिप्त परिचय नीचे दिया गया है।

हम सभी कभी न कभी जुकाम अथवा फ्लु से ग्रस्त होते हैं। क्या आप जानते हैं कि इसका वाइरस कैसे प्रभावित करता हैं? वाइरस का नाम वर्गीकरण में नहीं है, क्योंकि ये



चित्र 2.6 (अ) टोबैको मोजैक वाइरस (टीएमवी) (ब) जीवाणु भोजी

वास्तविक 'जीवन' नहीं है- यदि हम यह मानते हैं कि सजीवों की कोशिका संरचना होती है। वाइरस अकोशिक जीव हैं जिनकी संरचना सजीव कोशिका के बाहर रवेदार होती है। एक बार जब ये कोशिका को संक्रमित कर देते हैं, तब ये मेजबान कोशिका की मशीनरी का उपयोग अपनी प्रतिकृति बनाने में करते हैं और मेजबान को मार देते हैं। *क्या आप वाइरस को सजीव अथवा निर्जीव कहेंगे?*

वाइरस का अर्थ है विष अथवा विषैला तरल। पास्चर डी. जे. इवानोवस्की (1892) ने तंबाकू के मोजैक रोग के रोगाणुओं को पहचाना था, जिन्हें वाइरस नाम दिया गया। इनका माप बैक्टीरिया से भी छोटा था, क्योंकि ये बैक्टीरिया प्रूफ फिल्टर से भी निकल गए थे। एम. डब्ल्यु बेजेरिनेक (1898) ने पाया कि संक्रमित तंबाकू के पौधों का रस स्वस्थ तंबाकू के पौधे को भी संक्रमित करने में सक्षम है। उन्होंने इस रस (तरल) को *'कंटेजियम वाइनम फ्लुयइडम'* (संक्रामक जीवित तरल) कहा। डब्ल्यु. एम. स्टानले (1935) ने बताया कि वाइरस को रवेदार बनाया जा सकता है और इस रवे में मुख्यतः प्रोटीन होता है। वे अपनी विशिष्ट मेजबान कोशिका के बाहर निष्क्रिय होते हैं। वाइरस अविकल्पी परजीवी हैं।

वाइरस में प्रोटीन के अतिरिक्त आनुवंशिक पदार्थ भी होता है, जो आरएनए (RNA) अथवा डीएनए (DNA) हो सकता है। किसी भी वाइरस में आरएनए तथा डीएनए दोनों नहीं होते। वाइरस केंद्रक प्रोटीन (न्यूक्लियो प्रोटीन) और इसका आनुवंशिक पदार्थ संक्रामक होता है। प्रायः सभी पादप वाइरस में एक लड़ी वाला आरएनए होता है, और सभी जंतु वाइरस में एक अथवा दोहरी लड़ी वाला आरएनए अथवा डीएनए होता है। बैक्टीरियल वाइरस अथवा जीवाणुभोजी (बैक्टीरियोफेज-आवरण वाइरस जो बैक्टीरिया पर संक्रमण करता है) प्रायः दोहरी लड़ी

वाले डीएनए वाइरस होते हैं। प्रोटीन के आवरण (अस्तर) को कैप्सिड कहते हैं और यह छोटी-छोटी उप-इकाइयों जिन्हें पेटिकोशक (कैप्सोमीयर) कहते हैं, से मिलकर बनता है। कैप्सिड न्यूक्लिक एसिड को संरक्षित करता है ये पेटिकांशक कुंडलिनी अथवा बहुफलक ज्यामिती रूप में लगे रहते हैं। वाइरस से मम्पस, चेचक, हर्पीज तथा इंफ्लूएंजा नामक रोग हो जाते हैं। मनुष्यों में एड्स (AIDS) भी वाइरस के कारण होता है। पौधों में मोजैक बनना, पत्तियों का मुड़ना तथा कुंचन, पीला होना तथा शिरा स्पष्टता, बौना तथा अवरुद्ध वृद्धि होना इसके लक्षण हैं।

विरोइड

सन 1971 में टी.ओ. डाइनर ने एक नया संक्रामक कारक खोजा जो वाइरस से भी छोटा तथा जिसके कारण 'पोटेटो स्पिंडल ट्यूबर' नामक रोग होता था। विरोइडो में आरएनए तथा प्रोटीन आवरण (अस्तर), जो वाइरस में पाए जाते हैं उनका अभाव होता है। इसलिए यह विरोइड के नाम से जाने जाते हैं। विरोइड के आरएनए का आण्विक भार कम था।

लाइकेन

लाइकेन शैवाल तथा कवक के सहजीवी सहवास अर्थात् पारस्परिक उपयोगी सहवास हैं। शैवाल घटक को **शैवालांश** तथा कवक के घटक को **माइकोवायंट** (कवकांश) कहते हैं, जो क्रमशः स्वपोषी तथा परपोषित होते हैं। शैवाल कवक (फंजाई) के लिए भोजन संश्लेषित करता है और कवक शैवाल के लिए आश्रय देता है तथा खनिज एवं जल का अवशोषण करता है। इनका सहवास इतना घनिष्ठ होता है कि यदि प्रकृति में लाइकेन को देख ले तो यह अनुमान लगाना असंभव है कि इसमें दो विभिन्न जीव हैं। लाइकेन प्रदूषण के बहुत अच्छे संकेतक हैं - वे प्रदूषित क्षेत्रों में नहीं उगते।

सारांश

सरल आकारिक लक्षणों पर आधारित पादपों और प्राणियों के वर्गीकरण को सर्वप्रथम अरस्तू ने प्रस्तावित किया था। बाद में लीनियस द्वारा सभी जीवधारियों को 'प्लांटी' तथा 'ऐनिमेलिया' जगत में वर्गीकृत किया गया। व्हिटैकर ने इसके बाद एक वृहत् पाँच जगत वर्गीकरण की पद्धति का प्रस्ताव किया। ये पाँच जगत मॉनेरा, *प्रोटिस्टा*, फंजाई, *प्लांटी और ऐनिमेलिया* हैं। पाँच *जगत वर्गीकरण के प्रमुख* मानदंड, *कोशिका* संरचना, दैहिक संगठन, पोषण एवं प्रजनन की विधि तथा जातिवृत्तीय संबंध हैं।

पाँच जगत वर्गीकरण के अंतर्गत बैक्टीरिया को मॉनेरा जगत में रखा गया है जो विश्वव्यापी है। इनमें उपापचय संबंधी विविधता अत्यंत वृहत् है। बैक्टीरिया में पोषण की विधि स्वपोषी अथवा परपोषी होती है। प्रोटिस्टा जगत में क्राइसोफाइट, डायनोफ्लैजिलेट, युग्लीनॉइड, अवपंक कवक एवं प्रोटोजोआ जैसे एक कोशिक युकैरियोटिक जीवधारी सम्मिलित किए गए हैं। प्रोटिस्टा जीवधारियों की कोशिका में संगठित केंद्रक तथा झिल्लीबद्ध कोशिकांग पाए जाते हैं। इनमें प्रजनन अलैंगिक तथा लैंगिक दोनों प्रकार का होता है।

फंजाई (कवक) जगत की संरचना तथा आवास में बहुत विभिन्नता होती है। अधिकांश कवक में मृतजीवी प्रकार का पोषण होता है। उनमें लैंगिक तथा अलैंगिक जनन होता है। इस जगत के अंतर्गत चार वर्ग फाइकोमाइसिटीज, एस्कोमाइसिटीज, बेसिडिओमाइसिटीज तथा डयूटिरोमाइसिटीज आते हैं। प्लांटी (पादप-जगत) में सभी यूकैरियोटिक, क्लोरोफिलयुक्त जीव आते हैं। शैवाल, ब्रायोफाइट, टैरिजोफाइट, जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म इस वर्ग में आते हैं। पौधों के जीवन चक्र में पीढ़ी *युग्मकोद्‌भिद्* और *बीजाणु-उद्‌भिद्* में एकांतरण होता है। परपोषित यूकैरिऑटिक बहुकोशिक जीवों, जिनकी कोशिका में कोशिका भित्ति नहीं होती, उन्हें एनिमेलिया किंगडम में शामिल किया गया है। इन जीवों में पोषण प्राणिसम होता है। इनमें प्राय: लैंगिक जनन होता है। कुछ अकोशिक जीव जैसे वाइरस तथा विरोइड एवं लाइकेन को वर्गीकरण के पाँच जगत प्रणाली नहीं रखा गया है।

अभ्यास

1. वर्गीकरण की पद्धतियों में समय के साथ आए परिवर्तनों की व्याख्या कीजिए।
2. निम्नलिखित के बारे में आर्थिक दृष्टि से दो महत्वपूर्ण उपयोगों को लिखें:
   (क) परपोषी बैक्टीरिया
   (ख) आद्य बैक्टीरिया
3. डाइएटम की कोशिका भित्ति के क्या लक्षण हैं?
4. 'शैवाल पुष्पन' (Algal Bloom) तथा 'लाल तरंगें' (red-tides) क्या दर्शाती हैं।
5. वाइरस से विरोइड कैसे भिन्न होते हैं?
6. प्रोटोजोआ के चार प्रमुख समूहों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
7. पादप स्वपोषी है। क्या आप ऐसे कुछ पादपों को बता सकते हैं, जो आंशिक रूप से परपोषित हैं?
8. शैवालांश तथा कवकांश शब्दों से क्या पता लगता है?
9. कवक (फंजाई) जगत के वर्गों का तुलनात्मक विवरण निम्नलिखित बिंदुओं पर करो:
   (क) पोषण की विधि
   (ख) जनन की विधि
10. युग्लीनॉइड के विशिष्ट चारित्रिक लक्षण कौन-कौन से हैं?
11. संरचना तथा आनुवंशिक पदार्थ की प्रकृति के संदर्भ में वाइरस का संक्षिप्त विवरण दो। वाइरस से होने वाले चार रोगों के नाम भी लिखें।
12. अपनी कक्षा में इस शीर्षक क्या वाइरस सजीव है अथवा निर्जीव, पर चर्चा करें?

अध्याय 3

वनस्पति जगत

3.1 *शैवाल*

3.2 *ब्रायोफ़ाइट*

3.3 *टेरिडोफाइट*

3.4 *जिम्नोस्पर्म*

3.5 *एंजियोस्पर्म*

3.6 *पादप जीवन चक्र एवं संतति एकांतरण*

पिछले अध्याय में हमने विटेकर (1969) द्वारा सुझाए सजीवों के प्रमुख वर्ग के विषय में पढ़ा था। इसमें उन्होंने पाँच किंगडम मोनेरा, प्रोटिस्टा, फंजाई, एनिमेलिया तथा प्लांटी सुझाए थे। इस अध्याय में हम प्लांटी जगत, जिसे वनस्पति जगत भी कहते हैं, के बारे में तथा वर्गीकरण के विषय में विस्तार से पढ़ेंगे।

हमें यहाँ पर इस बात पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि वनस्पति जगत के विषय में समयानुसार परिवर्तन आया है। फंजाई (कवक) तथा मोनेरा तथा प्रोटिस्टा वर्ग के सदस्य, जिनमें कोशिका भित्ति होती है, अब प्लांटी वर्ग से निकाल दिए गए हैं। यद्यपि वे पहले दिए गए वर्गीकरण के अनुसार एक ही जगत में होते थे। इसलिए सायनोबैक्टीरिया, जिन्हें नील हरित शैवाल कहते थे अब शैवाल नहीं है। इस अध्याय में हम प्लांटी के अंतर्गत शैवाल, ब्रायोफाइट, टैरिडोफाइट, जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म के विषय में पढ़ेंगे।

आओ, इस तंत्र को प्रभावित करने वाले बिंदुओं को समझने के लिए एंजियोस्पर्म के वर्गीकरण को देखें। पहले दिए वर्गीकरण में हम आकारिकी के गुणों जैसे प्रकृति, रंग, पत्तियों की संख्या तथा आकृति के आधार आदि पर वर्गीकरण करते थे। वे मुख्यतः कायिक गुणों अथवा पुमंग की रचना के आधार पर हैं तथा (लीनियस के अनुसार) ऐसे वर्गीकरण **कृत्रिम** थे, क्योंकि उन्होंने बहुत ही समीप वाली संबंधित स्पीशीज को अलग कर दिया था। इसका कारण था कि वे बहुत ही कम गुणों पर आधारित थे। कृत्रिम वर्गीकरण में कायिक तथा लैंगिक गुणों को समान मान्यता दी गई थी। यह अब स्वीकार नहीं है, क्योंकि हम जानते हैं कि कायिक गुणों में प्रायः पर्यावरण के अनुसार परिवर्तन हो जाता है। इसके विपरीत, **प्राकृतिक वर्गीकरण** जीवों में प्राकृतिक संबंध तथा बाह्य गुणों के साथ-साथ भीतरी गुणों, जैसे-परा-रचना, शारीर, भ्रूण विज्ञान तथा पादप रसायन के आधार पर विकसित हुआ है। पुष्पी पादपों के इस वर्गीकरण को जॉर्ज बेंथम तथा जोसेफ़ डॉल्टन हूकर ने सुझाया था।

वर्तमान में हम **जातिवृत्तीय वर्गीकरण तंत्र**, जो विभिन्न जीवों में विकासीय संबंध पर आधारित है, को स्वीकार करते हैं। इससे यह पता लगता है कि समान टैक्सा के जीव के पूर्वज एक ही थे। अब, हम वर्गीकरण की कठिनाइयों को हल करने के लिए विभिन्न सूचनाओं तथा अन्य स्रोतों का उपयोग करते हैं। यह तब और भी कठिन हो जाता है, उसके पक्ष में कोई भी जीवाश्मी प्रमाण उपलब्ध न हो। **संख्यात्मक वर्गिकी** जिसे अब सरलता से कंप्यूटरीकृत किया जा सकता है, सभी अवलोकनीय गुणों पर आधारित है। सजीवों के सभी गुणों को एक नंबर तथा एक कोड दिया गया है और इसके बाद इसे प्रोसेस किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक गुण को समान महत्व दिया गया है और उसी समय सैकड़ों गुणों को ध्यान में रख सकते हैं। आज कल **वर्गिकीविद्** भ्रांतियों को दूर करने के लिए कोशिका वर्गिकी के कोशिका विज्ञानीय सूचनाओं जैसे **क्रोमोसोम** की संख्या, रचना, व्यवहार तथा रसायन वर्गिकी जो पादपों के रसायनिक कारकों का उपयोग करते हैं।

3.1 शैवाल

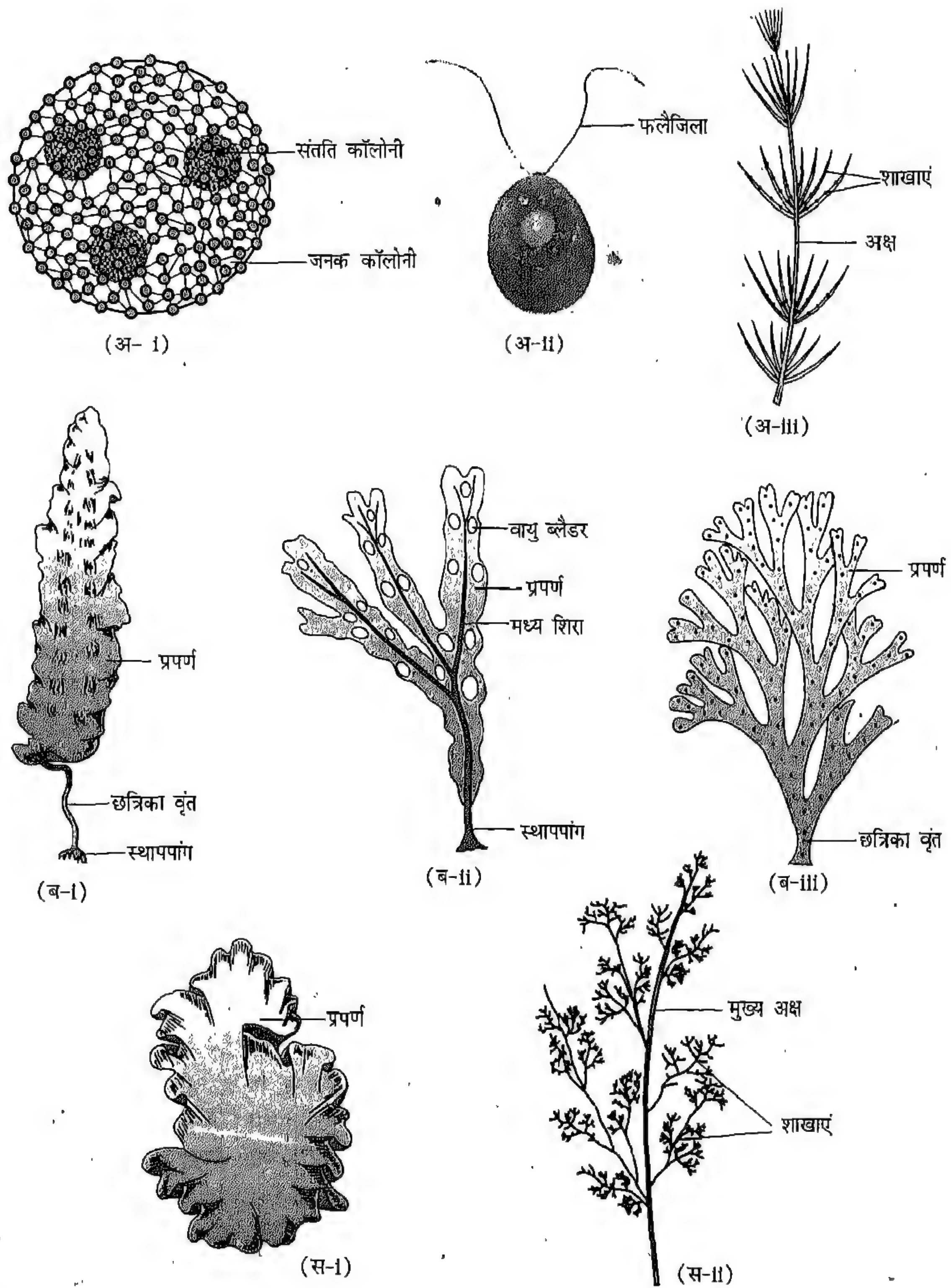
शैवाल क्लोरोफिलयुक्त, सरल, थैलॉयड, स्वपोषी तथा मुख्यत: जलीय (अलवणीय जल तथा समुद्री दोनों का) जीव है। वे अन्य आवास जैसे नमयुक्त पत्थरों, मिट्‌टी तथा लकड़ी में भी पाए जाते हैं। उनमें से कुछ कवक (लाइकेन में) तथा प्राणियों के संगठन में भी पाए जाते हैं (जैसे स्लाथ रीछ)।

शैवाल के माप तथा आकार में बहुत विभिन्नता होती है। (चित्र 3.1) इनका माप सूक्ष्मदर्शी एक कोशिक जैसे *क्लैमाइडोमोनॉस*, से लेकर कॉलोनिय जैसे *वॉल्वॉक्स* तथा तंतुमयी जैसे *यूलोथ्रिक्स*, *स्पाइरोगायरा* तक हो सकता है। इनमें से कुछ, शैवाल जैसे केल्प, बहुत विशालकाय होते हैं।

शैवाल कायिक, अलैंगिक तथा लैंगिक जनन करते हैं। कायिक जनन विखंडन विधि द्वारा होता है। इसके प्रत्येक खंड से थैलस बन जाता है। अलैंगिक जनन विभिन्न प्रकार के बीजाणुओं द्वारा होता है। सामान्यत: ये बीजाणु **जूस्पोर** होते हैं। इनमें कशाभिक (फ्लैजिला) होता है और ये चलायमान होते हैं। अंकुरण के बाद इनसे पौधे बन जाते हैं। लैंगिक जनन में दो युग्मक संगलित होते हैं। ये युग्मक कशाभिक युक्त (फ्लैजिला युक्त) तथा माप में समान हो सकते हैं (जैसे *क्लैमाइडोमोनॉस*) अथवा फ्लैजिला विहीन लेकिन समान माप वाले हो सकते हैं (जैसे *स्पाइरोगायरा*)। ऐसे जनन को **समयुग्मकी** कहते हैं। जब विभिन्न माप वाले दो युग्मक संगलित होते हैं तब उसे **असमयुग्मकी** कहते हैं (जैसे *क्लैमाइडोमोनॉस*) की कुछ स्पीशीज विषमयुग्मकी लैंगिक जनन में एक बड़े अचल (स्थैनिक) मादा युग्मक से एक छोटा चलायमान **नरयुग्मक** संगलित होता है। जैसे *वॉलवॉक्स*, *फ्यूक्स*।

शैवाल वर्ग तथा उनके महत्वपूर्ण गुणों का सारांश तालिका में दिया गया है।

मनुष्य के लिए शैवाल बहुत उपयोगी हैं। पृथ्वी पर प्रकाश-संश्लेषण के दौरान कुल स्थिरीकृत कार्बनडाइऑक्साइड का लगभग आधा भाग शैवाल स्थिर करते हैं। प्रकाश-संशलेषी



चित्र 3.1 शैवाल	(अ)	हरित शैवाल	(i) वॉलबाक्स	(ii) क्लैमाइडोमोनॉस	(iii) कारा
	(ब)	भूरे शैवाल	(i) लैमिनेरिया	(ii) फ्यूकस	(iii) डिक्टाइओटा
	(स)	लाल शैवाल	(i) पौरफाइरा	(ii) पॉलीसाइफोनिया	

तालिका 3.1 शैवाल के डिवीजन अनुभाग तथा उनके प्रमुख अभिलक्षण

डिविजन	सामान्य नाम	प्रमुख वर्णक	संचित भोजन	कोशिका भित्ति	फ्लेजिला की संख्या तथा उनकी निवेशन की स्थिति	आवास
क्लोरोफाइसी	हरे शैवाल	क्लोरोफ़िल a, b	स्टार्च	सेल्यूलोज	2-8, समान, शीर्ष	अलवणजल, लवणीय जल, खारा जल
फीयोफाइसी	भूरे शैवाल	क्लोरोफ़िल a, c, फ्यूकोजैंथिन	मैनीटोल लैमिनेरिन	सेल्यूलोज तथा एलजिन	2, असमान, पार्श्वीय	अलवणजल, (बहुत कम) खारा जल, लवणीयजल
रोडोफाइसी	लाल शैवाल	क्लोरोफ़िल a,d, फाइकोऐरीथ्रिन	फ्लोरिडिऑन स्टार्च	सेल्यूलोज	अनुपस्थित	अलवण जल, (कुछ) खारा जल, लवण जल (अधिकांश)

जीव होने के कारण शैवाल अपने आस-पास के पर्यावरण में घुलित ऑक्सीजन का स्तर बढ़ा देते हैं। ये ऊर्जा के प्राथमिक उत्पादक होने के कारण बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि ये जलीय प्राणियों के खाद्य चक्रों का आधार हैं। *पोरफायरा, लैमिनेरिया* तथा *सरगासम* की बहुत सी स्पीशीज (प्रजातियाँ), जो समुद्र की 70 स्पीशीज (प्रजातियाँ) में से है, भोजन के रूप में उपयोग की जाती है। कुछ समुद्री **भूरे** तथा **लाल शैवाल** बहुत ही अधिक **कैरागीन** (लाल शैवाल से) का उत्पादन करते हैं। जिनका व्यवसायिक उपयोग होता है। *जिलेडियम* तथा *ग्रेसिलेरिआ* से एगार प्राप्त होता है जिसका उपयोग सूक्ष्म जीवियों के संवर्धन में तथा आइसक्रीम और जैली बनाने में किया जाता है। *क्लोरैला* तथा *स्पिरुलाइना* एक कोशिक शैवाल हैं। इनमें प्रोटीन प्रचुर मात्रा में होता है। यहाँ तक कि इसका उपयोग अंतरिक्ष यात्री भी भोजन के रूप में करते हैं। शैवाल तीन प्रमुख भागों में विभक्त किया जाता है: **क्लोरोफाइसी, फीयोफाइसी** तथा **रोडोफाइसी।**

3.1.1 क्लोरोफाइसी

क्लोरोफाइसी के सदस्यों को प्राय: **हरा शैवाल** कहते हैं। ये एक कोशिक, कॉलोनीमय अथवा तंतुमयी हो सकते हैं। क्लोरोफिल a तथा b के प्रभावी होने के कारण इनका रंग हरी घास की तरह होता है। वर्णक सुस्पष्ट क्लोरोप्लास्ट में होते हैं। क्लोरोप्लास्ट डिस्क, प्लेट की तरह, जालिकाकार, कप के आकार, सर्पिल अथवा रिबन के आकार के हो सकते हैं। इसके अधिकांश सदस्यों के क्लोरोप्लास्ट में एक अथवा एक से अधिक पाइरीनॉइड होते हैं। पाइरीनॉइड स्टार्च होते हैं। कुछ शैवाल तेलबुदंक के रूप में भोजन संचित करते हैं। हरे शैवाल में प्राय: एक कठोर कोशिका भित्ति होती है। जिसकी भीतरी सतह सेल्यूलोज की तथा बाहरी सतह पेक्टोज की बनी होती है।

कायिक जनन प्राय: तंतु के टूटने से अथवा विभिन्न प्रकार के बीजाणु (स्पोर) के बनने से होता है। अलैंगिक जनन फ्लैजिलायुक्त जूस्पोर से होता है। जूस्पोर जूस्पोरेंजिया

(चल बीजाणुधानी) में बनते हैं। लैंगिक जनन में लैंगिक कोशिकाओं के बनने में बहुत विभिन्नता दिखाई पड़ती है। ये समयुगमकी, असमयुगमकी अथवा विषमयुमकी हो सकते हैं इसके सामान्य सदस्य *क्लैमाइडोमोनास, वॉलवॉक्स, यूलोथ्रिक्स, स्पाइरोगायरा* तथा *कारा* (चित्र 3.1 अ) हैं।

3.1.2 फीयोफाइसी

फीयोफाइसी अथवा **भूरे शैवाल** मुख्यत: समुद्री आवास में पाए जाते हैं। उनके माप तथा आकार में बहुत विभिन्नताएं होती हैं। ये सरल शाखित, तंतुमयी (*एक्टोकार्पस*) से लेकर सघन शाखित जैसे केल्प तक हो सकते हैं। केल्प की ऊँचाई 100 मीटर तक हो सकती है। इनमें क्लोरोफ़िल a, c, कैरोटिनॉइड तथा जैंथोफिल होता है। इनका रंग जैतूनी हरे से लेकर भूरे के विभिन्न शेड तक हो सकता है। ये शेड जैंथोफिल वर्णक, फ्युकोजैंथिन की मात्रा पर निर्भर करते हैं। इनमें जटिल कार्बोहाइड्रेट के रूप में भोजन संचित होता है। यह भोजन लैमिनेरिन अथवा मैनीटोल के रूप में हो सकता है। कायिक कोशिका में सेल्यूलोज से बनी कोशिका भित्ति होती है जिसके बाहर की ओर एल्जिन का जिलैटिनी अस्तर होता है। प्रोटोप्लास्ट में लवक के अतिरिक्त केंद्र में रसधानी तथा केंद्रक होते हैं। पौधा प्राय: संलग्नक द्वारा अध:स्तर (स्बस्ट्रेटम) से जुड़ा रहता है और इसमें एक वृंत तथा पत्ती की तरह का प्रकाश-संश्लेषी अंग होता है। इसमें कायिक जनन विखंडन विधि द्वारा होता है। अलैंगिक जनन नाशपाती के आकार वाले दो फ्लैजिला युक्त जूस्पोर द्वारा होता है। इसके फ्लैजिला असमान होते हैं तथा वे पार्श्वीय रूप से जुड़े होते हैं।

इसमें लैंगिक जनन समयुग्मकी, असमयुग्मकी अथवा विषययुग्मकी हो सकता है। युग्मकों का संगम जल में अथवा अंडधानी (विषमयुग्मकी स्पीशीज) (प्रजाति) में हो सकता है। युग्मक पाइरीफोर्म (नाशपाती आकार) की होती हैं और इसके पार्श्व में दो फ्लेजिला होते हैं। इसके सामान्य सदस्य- *एक्टोकार्पस, डिक्टयोटा, लैमिनेरिया, सरगासम* तथा *फ्यूकस* हैं (चित्र 3.1 स)।

3.1.3 रोडोफाइसी

रोडोफाइसी *लाल शैवाल* हैं। इनका लाल रंग लाल वर्णक, आर-फाइकोएरिथ्रिन के कारण है। अधिकांश लाल शैवाल समुद्र में पाए जाते हैं और इनकी बहुलता समुद्र के गरम क्षेत्र में अधिक होती है। ये पानी की सतह पर, जहाँ अधिक प्रकाश होता है, वहाँ भी पाए जाते हैं और समुद्र की गहराई में भी और जहाँ प्रकाश कम होता है, वहाँ भी पाए जाते हैं।

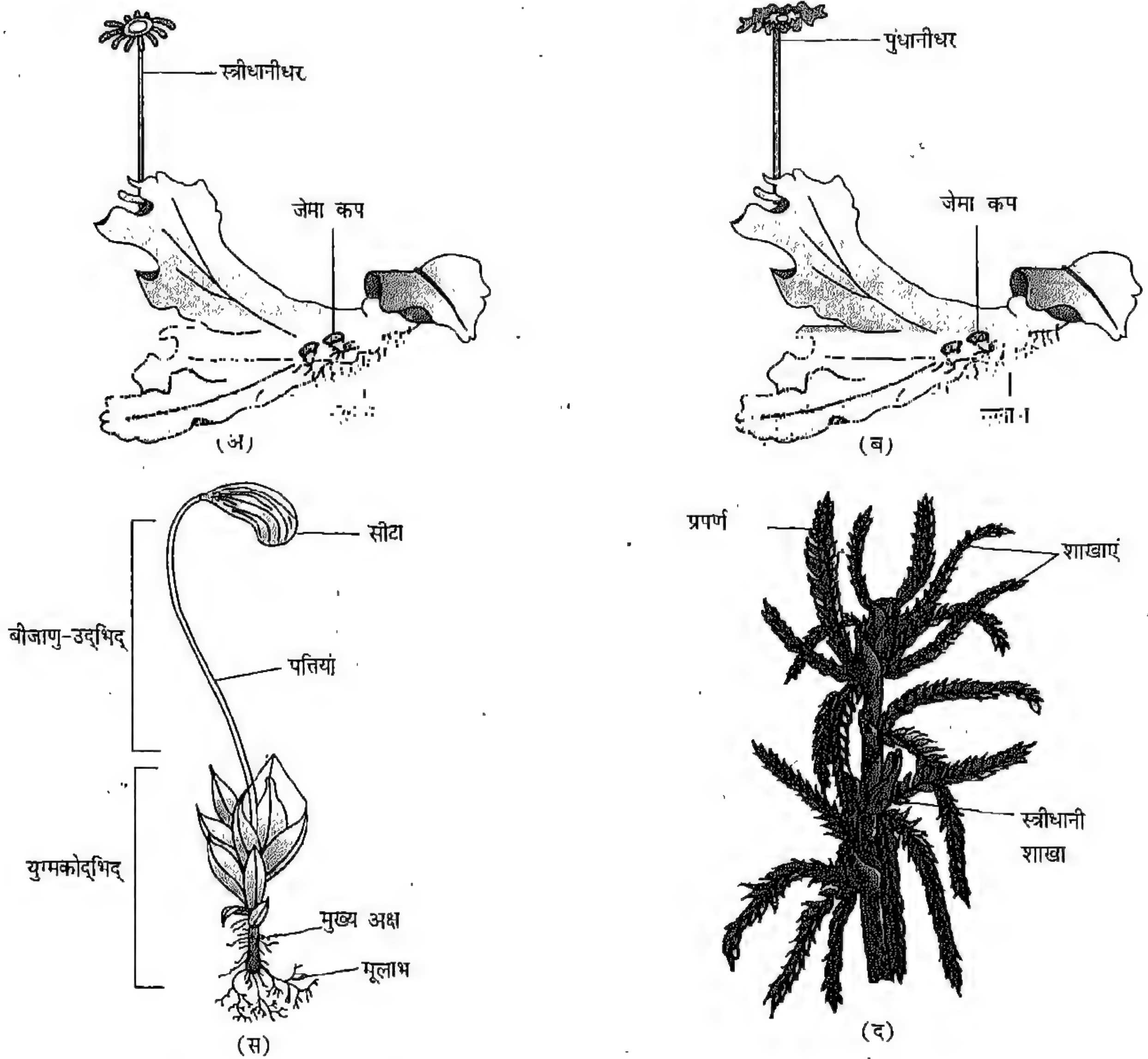
लाल शैवाल का लाल थैलस अधिकांशत: बहुकोशिक होता है और इनमें से कुछ की संरचना बड़ी जटिल होती है भोजन फ्लोरिडियन स्टार्च के रूप में संचित होता है। इस स्टार्च की रचना एमाइलो प्रोटीन तथा ग्लाइकोजन की तरह होती है।

इसमें कायिक जनन विखंडन, अलैंगिक जनन अचल स्पोर (बीजाणु) और लैंगिक जनन अचल युग्मकों द्वारा होता है। लैंगिक जनन विषमयुग्मकी होता है और इसके पश्चात

निषेचनोत्तर विकास होता है। इसके सामान्य सदस्य- *पोलीसाइफोनिया, ग्रेसिलेरिया, पोरफायरा* तथा *जिलेडियम* हैं।

3.2 ब्रायोफाइट

ब्रायोफाइट में मॉस तथा लिवरवर्ट आते हैं जो प्रायः पहाड़ियों में नम तथा छायादार क्षेत्रों में पाए जाते हैं (चित्र 3.2)। ब्रायोफाइट को पादप जगत के जलस्थलचर भी कहते हैं;



चित्र 3.2 ब्रायोफाइट (अ) लिवरवर्ट-मारकैंशिया (अ) मादा थैलस (ब) नर थैलस
मॉस - (स) फ्यूनेरिया, युग्मकोद्भिद् तथा बीजाणुद्गमिद् (द) स्फैगनम युग्मकोद्भिद्

क्योंकि ये भूमि पर भी जीवित रह सकते हैं, किंतु लैंगिक जनन के लिए जल पर निर्भर करते हैं। ये प्रायः नम, सीलन (आर्द्र), तथा छायादार स्थानों पर पाए जाते हैं। ये अनुक्रमण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इनकी पादपकाय शैवाल की अपेक्षा अधिक विभेदित होती है। यह थैलस की तरह होता है और शयान अथवा सीधा होता है और एक कोशिक तथा बहुकोशिक मूलाभ द्वारा स्बस्ट्रेटम से जुड़ा रहता है। इनमें वास्तविक मूल, तना अथवा पत्तियाँ नहीं होती। इनमें मूलसम, पत्तीसम अथवा तनासम संरचना होती है। ब्रायोफाइट की मुख्यकाय अगुणित होती है। ये युग्मक उत्पन्न करते हैं, इसलिए इन्हें **युग्मकोभिद्** कहते हैं। ब्रायोफाइट में लैंगिक अंग बहुकोशिक होते हैं। नर लैंगिक अंग को **पुंधानी** कहते हैं। ये द्विकशाभिक पुमंग उत्पन्न करते हैं। मादा जनन अंग को **स्त्रीधानी** कहते हैं। यह फ्लास्क के आकार का होता है जिसमें एक अंड होता है। पुमंग को पानी में छोड़ दिया जाता है। ये स्त्रीधानी के संपर्क में आते हैं और अंडे से संगलित हो जाते हैं, जिसके कारण युग्मनज बनता है। युग्मनज में तुरंत न्यूनीकरण विभाजन नहीं होता और इससे एक बहुकोशिक बीजाणु-उद्भिद् (स्पोरोफाइट) बन जाता है। स्पोरोफाइट मुक्तजीवी नहीं है, बल्कि यह प्रकाश संश्लेषी युग्मकोद्भिद् से जुड़ा रहता है और इससे अपना पोषण प्राप्त करता रहता है। **स्पोरोफाइट** की कुछ कोशिकाओं में न्यूनीकरण विभाजन होता है, जिससे अंगुणित बीजाणु अंकुरित हो कर युग्मकोद्भिद् में विकसित हो जाते हैं।

ब्रायोफाइट का बहुत कम आर्थिक महत्त्व है। लेकिन कुछ मॉस शाकाहारी स्तनधारियों, पक्षियों तथा अन्य प्राणियों को भोजन प्रदान करते हैं। *स्फेगनम* की कुछ स्पीशीज (जाति) पीट प्रदान करती हैं जिसका उपयोग ईंधन के रूप में करते हैं। इसका उपयोग पैकिंग में और सजीव पदार्थों को स्थानांतरित करने में भी करते हैं। इसका कारण यह है कि इनमें पानी को रोकने की क्षमता बहुत अधिक होती है। लाइकेन समेत मॉस सर्वप्रथम ऐसे सजीव हैं, जो चट्टानों पर उगते हैं। इनका परिस्थितिक दृष्टि से बहुत महत्व हैं। इन्होंने चट्टानों को अपघटित किया और अन्य उच्च कोटि के पौधों को उगने के अनुरूप बनाया। चूंकि मॉस मिट्टी पर एक सघन परत बना देते हैं, इसलिए वर्षा की बौछारें मृदा को अधिक हानि नहीं पहुँचा पाती और इस प्रकार ये मृदा अपक्षरण को रोकते हैं। ब्रायोफाइट को **लिवरवर्ट** तथा **मॉस** में विभक्त कर सकते हैं (चित्र 3.2)।

3.2.1 लिवरवर्ट

लिवरवर्ट प्रायः नमी छायादार स्थानों जैसे नदियों के किनारे, दल-दले स्थानों, गीली मिट्टी, पेड़ों की छालों आदि पर उगते हैं। लिवरवर्ट की पादपकाय थैलासाभ (*मारकेंशिया*) होती हैं। थैलस पृष्ठाधर होते हैं तथा अधःस्तर बिल्कुल चिपके रहते हैं। इसके पत्तीदार सदस्यों में पत्तियों की तरह की छोटी-छोटी संरचनाएँ होती हैं जो तने की तरह की रचना पर दो कतारों में होती हैं।

लिवरवर्ट में अलैंगिक जनन थैलस के विखंडन अथवा विशिष्ट संरचना जेमा द्वारा होता है। जेमा हरी बहुकोशिक अलैंगिक कलियाँ हैं। ये छोटे-छोटे पात्रों, जिन्हें **जेमा कप** कहते हैं, में स्थित होती हैं। ये अपने पैतृक पादप से अलग हो जाती हैं और इससे एक नया पादप उग आता है। लैंगिक जनन के दौरान नर तथा मादा लैंगिक अंग या तो उसी

थैलस पर अथवा दूसरे थैलस पर बनते हैं। स्पोरोफाइट में एक पाद, सीटा तथा कैप्स्यूल (*मारकेंशिया*) होता है। मिऑसिस के बाद कैप्सूल में स्पोर बनते हैं। स्पोर से अंकुरण होने के कारण मुक्तजीवी युग्मकोद्भिद् बनते हैं।

3.2.2 मॉस

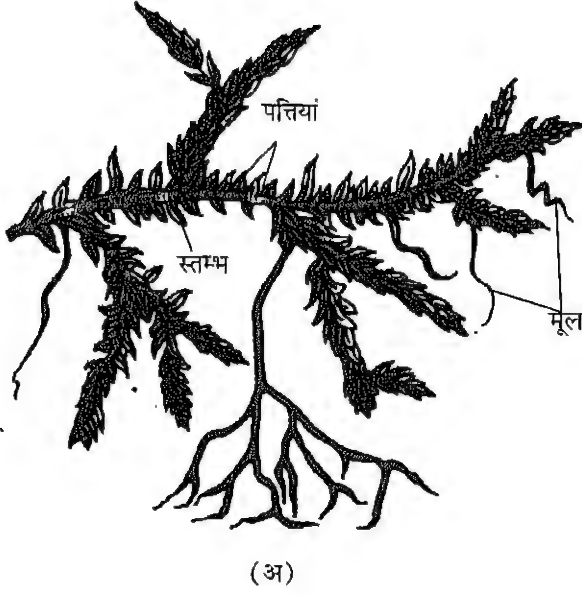
जीवन चक्र की प्रभावी अवस्था युग्मकोद्भिद् होती है, जिसकी दो अवस्थाएँ होती हैं। पहली अवस्था प्रथम तंतु है जो स्पोर से बनता है। यह विसर्पी, हरा, शाखित तथा प्रायः तंतुमयी होता है। इसकी दूसरी अवस्था पत्ती की तरह की होती है जो प्रथम तंतु से **पार्श्वीय कली** के रूप में उत्पन्न होती है। इसमें एक सीधा, पतला तना सा होता है। जिस पर सर्पिल रूप में पत्तियां लगी रहती हैं। ये बहुकोशिक तथा शाखित मूलाभ द्वारा मिट्टी से जुड़ी रहती हैं। इस अवस्था में लैंगिक अंग विकसित होते हैं।

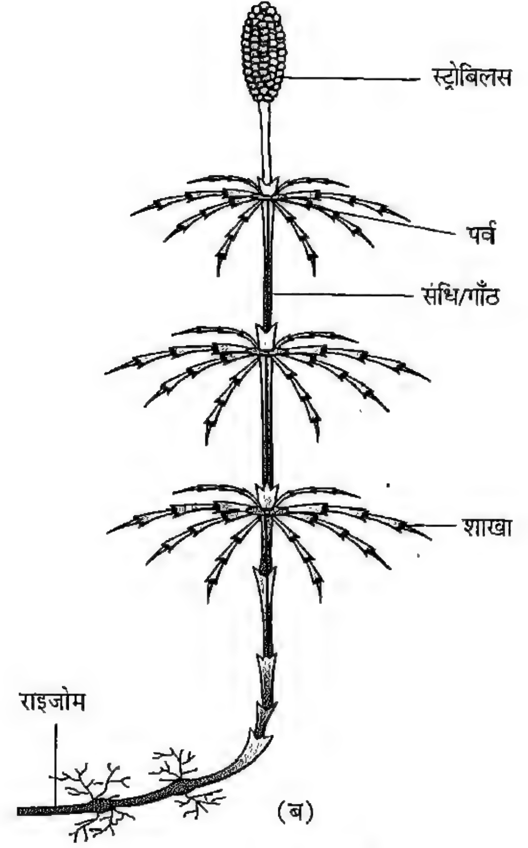
मॉस में कायिक जनन द्वितीयक प्रथम तंतु के विखंडन तथा मुकुलन द्वारा होता है। लैंगिक जनन में लैंगिक अंग पुंधानी तथा स्त्रीधानी पत्तीदार प्ररोह की चोटी पर स्थित होते हैं। निषेचन के बाद, युग्मनज से स्पोरोफाइट विकसित होता है जो पाद, सीटा तथा कैप्स्यूल में विभेदित रहता है। मॉस में स्पोरोफाइट लिवरवर्ट की अपेक्षा अधिक विकसित होता है। कैप्स्यूल में स्पोर होते हैं। मिऑसिस के बाद स्पोर बनते हैं। मॉस में स्पोर विकिरण की बहुत विस्तृत प्रणाली होती हैं। इसके सामान्य सदस्य- *फ्यूनेरिया, पोलिट्राइकम* तथा *स्फेगनम* (चित्र 3.2) होते हैं।

3.3 टैरिडोफाइट

टैरिडोफाइट का सजावट में बहुत अधिक आर्थिक महत्व है। फूल वाले अधिकांश फर्न का उपयोग सजाने में करते हैं और सजावटी पौधे के रूप में उगाते हैं। विकास की दृष्टि से ये स्थल पर उगने वाले सर्वप्रथम पौधे हैं, जिनमें संवहन ऊतक-जाइलम तथा फ्लोएम होते हैं। आप इन ऊतकों के विषय में विस्तार से अध्याय 6 में पढ़ेंगे। जीवाश्मी रिकार्ड के अनुसार टैरिडोफाइट 350 मिलियन वर्ष पूर्व प्रभावी वनस्पति थे और वे तने रूपी थे। टैरिडोफाइट के अंतर्गत हॉर्सटेल तथा फर्न आते हैं। टैरिडोफाइट ठंडे, गीले, छायादार स्थानों पर पाए जाते हैं। यद्यपि कुछ रेतीली मिट्टी में भी अच्छी तरह उगते हैं।

आपको याद होगा कि ब्रायोफाइट के जीवन में युग्मकोद्भिद् प्रभावी अवस्था होती है (चित्र 3.3)। लेकिन टेरिडोफाइट में मुख्य पादपकाय स्पोरोफाइट है, जिसमें वास्तविक मूल, तना तथा पत्तियाँ होती हैं। इन अंगों में सुस्पष्ट संवहन ऊतक होते हैं। टैरिडोफाइट में पत्तियाँ छोटी, लघुपर्ण उदाहरणतः *सिलैजिनैला* अथवा बड़ी, बृहत्पर्ण हो सकती हैं; जैसे फर्न। स्पोरोफाइट में बीजाणुधानी होती हैं; जो पत्ती की तरह के बीजाणुपर्ण पर लगी रहती हैं। कुछ टैरिडोफाइट में बीजाणुपर्ण सघन होकर एक सुस्पष्ट रचना बनाते हैं जिन्हें **शंकु** कहते हैं। उदाहरणतः *सिलैजिनेला, इक्वीसीटम* । बीजाणुधानी के स्थित बीजाणुमातृ कोशिका में मिऑसिस के कारण बीजाणु बनते हैं। बीजाणु अंकुरित होने पर एक अस्पष्ट, छोटा बहुकोशिक, मुक्तजीवी, अधिकांशतः प्रकाशसंश्लेषी थैलाभ युग्मकोद्भिद् बनाते हैं; जिसे प्रोथैलस कहते हैं। इन युग्मकोद्भिदों को उगने के लिए ठंडा, गीला, छायादार स्थान






(स)


(द)

चित्र 3.3 टैरिडोफाइट (अ) सेलैजिनैला (ब) इक्वीस्टिम (स) फर्न (द) सैलबीनिया

चाहिए। इसकी विशिष्ट, सीमित आवश्यकताएँ और निषेचन के लिए पानी की आवश्यकता कम होने के कारण जीवित टैरिडोफाइट का फैलाव भी सीमित है और कम भौगोलिक क्षेत्रों तक सीमित हैं। युग्मकोद्भिद् के नर तथा मादा अंग होते हैं; जिन्हें क्रमशः **पुंधानी** तथा **स्त्रीधानी** कहते हैं। पुंधानी से पुमणु के निकलने के बाद उसे स्त्रीधानी के मुँह तक पहुँचने के लिए पानी की आवश्यकता होती हैं। स्त्रीधानी में स्थित अंडे से नर युग्मक संगलन हो जाता है और युग्मनज बनता है। उसके बाद युग्मनज से बहुकोशिक, सुस्पष्ट स्पोरोफाइट बन जाता है जो टैरिडोफाइट की प्रभावी अवस्था है। यद्यपि अधिकांश टैरिडोफाइट में, जहाँ स्पोर एक ही प्रकार के होते हैं, उन पौधों को समबीजाणुक कहते हैं। *सिलैजिनेला, साल्वीनिया* में दो प्रकार के - बृहद् (बड़े) तथा लघु (छोटे) स्पोर बनते हैं; जिन्हें **विषमबीजाणु** कहते हैं। बड़े बृहद् बीजाणु (मादा) तथा छोटे लघु बीजाणु (नर) से क्रमशः मादा तथा नर युग्मकोद्भिद् बन जाते हैं ऐसे पौधों में मादा युग्मकोद्भिद् अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पैतृक स्पोरोफाइट से जुड़ा रहता है। मादा युग्मकोद्भिद् में युग्मनज का विकास होता है; जिससे एक नया शैशव भ्रूण बनता है। यह घटना बहुत महत्त्वपूर्ण समझी जाती है जो **बीजी प्रकृति** की ओर ले जाती है।

टैरिडोफाइट के चार वर्ग (क्लास) होते हैं: साइलोपसीडा *(साइलोटम)*, लाइकोपसीडा *(सिलैजिनेला* तथा *लाइकोपोडियम)*, स्फानोपसीडा *(इक्वीसीटम)* तथा टीरोपसीडा *(ड्रायोप्टैरीस, टैरिस तथा एडिएंटम)।*

3.4 जिम्नोस्पर्म

जिम्नोस्पर्म (*जिम्नोस* - अनावृत, *स्पर्म* - बीज) ऐसे पौधे हैं; जिनमें बीजांड अंडाशय भित्ति से ढके हुए नहीं होते और ये निषेचन से पूर्व तथा बाद में भी अनावृत ही रहते हैं। जिम्नोस्पर्म में मध्यम अथवा लंबे वृक्ष तथा झाड़ियाँ होती हैं (चित्र 3.4)। जिम्नोस्पर्म का *सिकुआ* वृक्ष सबसे लंबा है। इनकी मूल प्रायः मूसला मूल होती हैं। इसके कुछ जीनस की मूल कवक से सहयोग कर लेती हैं, जिसे **कवक मूल** कहते हैं, उदाहरण-*पाइनस*। जबकि कुछ अन्यों की छोटी विशिष्ट मूल नाइट्रोजन स्थिर करने वाले सायनो बैक्टीरिया के साथ सहयोग कर लेती हैं जिसे **प्रवाल मूल** कहते हैं उदाहरणतः *साइकैस*। इसके तने अशाखीय (*साइकैस*) अथवा शाखित (*पाइनस, सीड्रस*) होते हैं। इनकी पत्तियां सरल तथा संयुक्त होती हैं। *साइकैस* में पिच्छाकार पत्तियाँ कुछ वर्षों तक रहती हैं। जिम्नोस्पर्म में पत्तियाँ अधिक ताप, नमी, तथा वायु को सहन कर सकती हैं। शंक्वाकार पौधों में पत्तियाँ सुई की तरह होती हैं। इनकी पत्तियों का सतही क्षेत्रफल कम, मोटी क्यूटिकल तथा गर्तिकरंध्र होते हैं। इन गुणों के कारण पानी की हानि कम होती है।

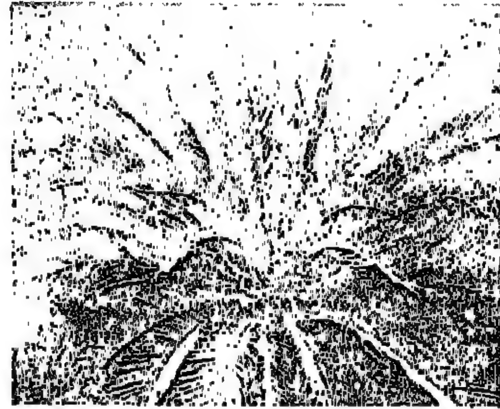
जिम्नोस्पर्म विषम बीजाणु होते हैं; वे अगुणित लघुबीजाणु तथा वृहद् बीजाणु बनाते हैं। बीजाणुधानी में दो प्रकार के बीजाणु उत्पन्न होते हैं। बीजाणुधानी बीजाणुपर्ण पर होते हैं। बीजाणुपर्ण सर्पिल की तरह तने पर लगे रहते हैं। ये शलथ अथवा सघन शंकु बनाते हैं। शंकु जिन पर लघुबीजाणुपर्ण तथा लघुबीजाणुधानी होती हैं; उन्हें लघुबीजाणुधानिक अथवा नरशंकु कहते हैं। प्रत्येक लघुबीजाणु से नर युग्मकोद्भिद् संतति उत्पन्न होती है, जो बहुत

ही न्यूनीकृत होती है और यह कुछ ही कोशिकाओं में सीमित रहती हैं। इस न्यूनीकृत नर युग्मकोद्भिद् को परागकण कहते हैं। परागकणों का विकास लघुबीजाणुधानी में होता है। जिस शंकु पर गुरु बीजाणुपर्ण तथा गुरु बीजाणुधानी होती है; उन्हें गुरु बीजाणुधानिक अथवा मादा शंकु कहते हैं। दो प्रकार के नर अथवा मादा शंकु एक ही वृक्ष (पाइनस) अथवा विभिन्न वृक्षों पर (साइकैस) पर स्थित हो सकते हैं। गुरु बीजाणु मातृ कोशिका बीजांड काय की एक कोशिका से विभेदित हो जाता है। बीजांडकाय एक अस्तर द्वारा सुरक्षित रहता है और इस सघन रचना को बीजांड कहते हैं। बीजांड गुरु बीजाणुपर्ण पर होते हैं, जो एक गुच्छा बनाकर मादा शंकु बनाते हैं। गुरु बीजाणु मातृ कोशिका में मिऑसिस द्वारा चार गुरु बीजाणु बन जाते हैं। गुरु बीजाणुधानी (बीजांडकाय) स्थित अकेला गुरुबीजाणु मादा युग्मकोद्भिद् में विकसित होता है। इसमें दो अथवा दो से अधिक स्त्रीधानी अथवा मादा जनन अंग होते हैं। बहुकोशिक मादा युग्मकोद्भिद् भी गुरु बीजाणुधानी में ही रह जाता है।

जिम्नोस्पर्म में दोनों ही नर तथा मादा युग्मकोद्भिद् ब्रायोफाइट तथा टैरिडोफाइट की तरह स्वतंत्र नहीं होते। वे स्पोरोफाइट पर बीजाणुधानी में ही रहते हैं। बीजाणुधानी से परागकण बाहर निकलते हैं। ये गुरु बीजाणुपर्ण पर स्थित बीजांड के छिद्र तक हवा द्वारा ले जाए जाते हैं। परागकण से एक परागनली बनती है जिसमें नर युग्मक होता हैं। यह परागनली स्त्रीधानी की ओर जाती है और वहाँ पर शुक्राणु छोड़ देती है। निषेचन के बाद युग्मनज बनता है, जिससे भ्रूण विकसित होता है और बीजांड से बीज बनते हैं। ये बीज ढके हुए नहीं होते।

3.5 एंजियोस्पर्म

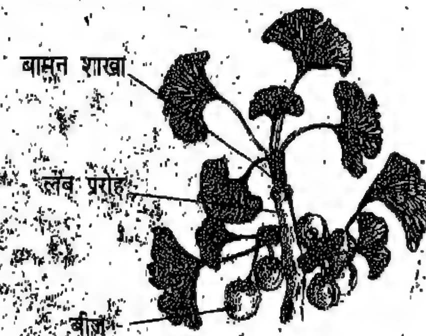
पुष्पी पादपों अथवा एंजियोस्पर्म में परागकण तथा बीजांड विशिष्ट रचना के रूप में विकसित होते हैं जिसे **पुष्प** कहते हैं। जबकि जिम्नोस्पर्म में बीजांड अनावृत होते हैं। एंजियोस्पर्म पुष्पी पादप हैं, जिसमें बीज फलों के भीतर होते हैं। यह पादपों में सबसे बड़ा वर्ग है। उनके वासस्थान भी बहुत व्यापक हैं। इनका माप सूक्ष्मदर्शी जीवों वुल्फिया से लेकर सबसे ऊंचे वृक्ष यूकेलिप्टस (100 मीटर से अधिक ऊंचाई) तक होता है। इनसे हमें भोजन, चारा, ईंधन, औषधियाँ तथा अन्य दूसरे आर्थिक महत्त्व के उत्पाद प्राप्त होते हैं। ये दो वर्गों *द्विबीजपत्री* तथा *एकबीजपत्री* में विभक्त होते हैं। द्विबीजपत्री पौधों के बीजों में



(अ)



(ब)



(स)

चित्र 3.4 जिम्नोस्पर्म (अ) साइकस (ब) पाइनस (द) गिंकगो

दो बीज पत्र होते हैं, जबकि एकबीपत्री में एक बीज पत्र होता है। पुष्प में नर लैंगिक अंग पुंकेसर (लघुबीजाणु पत्र) हैं।

प्रत्येक पुंकेसर में एक पतला तंतु होता है जिसकी चोटी पर परागकोश होता है। मिऑसिस के बाद परागकोश से परागकण बनते हैं। पुष्प में मादा लैंगिक अंग स्त्रीकेसर अथवा अंडप होते हैं। स्त्रीकेसर में अंडाशय होता है जिसके अंदर एक या एक से अधिक बीजांड होते हैं। बीजांड के अंदर बहुत ही न्यूनीकृत मादा युग्मकोद्भिद् होता है जिसे **भ्रूणकोश** कहते हैं। भ्रूणकोश बनने से पहले उसमें मिऑसिस होता है। इसलिए भ्रूणकोश की प्रत्येक कोशिका अगुणित होती है। प्रत्येक भ्रूणकोश में तीन कोशिकीय **अंड समुच्चय**- एक **अंड कोशिका** तथा दो **सहायक कोशिकाएं**, तीन **प्रतिव्यासांत कोशिकाएं** तथा दो **ध्रुवीय कोशिकाएं** होती हैं। दो ध्रुवीय कोशिकाएँ आपस में जुड़ जाती है जिससे द्विगुणित द्वितीयक केंद्रक बनता है। परागकण परागकोश से निकलने के बाद हवा अथवा अन्य एजेंसियों द्वारा स्त्री केसर के वर्तिकाग्र पर स्थानांतरित कर दिए जाते हैं। इस स्थानांतरण को **परागण** कहते हैं। परागकण वर्तिकाग्र पर अंकुरित होते हैं, जिससे परागनली बनती है। परागनली वर्तिकाग्र तथा वर्तिका के ऊतकों के बीच से होती हुई बीजांड तक पहुँचती है। परागनली भ्रूणकोश के अंदर जाती है; जहाँ पर फटकर यह दो नर युग्मको को छोड़ देती है। इनमें से एक नर युग्मक अंड कोशिका से संगलित हो जाता है जिससे एक युग्मनज बनता है। दूसरा नर युग्मक द्विगुणित द्वितीयक केंद्रक से संगलित करता है जिससे त्रिगुणित प्राथमिक भ्रूणपोष केंद्रक बनता है। चूँकि इसमें दो संगलन होते हैं, इसलिए इसे **द्विनिषेचन** कहते हैं। द्विनिषेचन एंजियोस्पर्म का अद्वितीय गुण है। युग्मनज



(अ)



(ब)

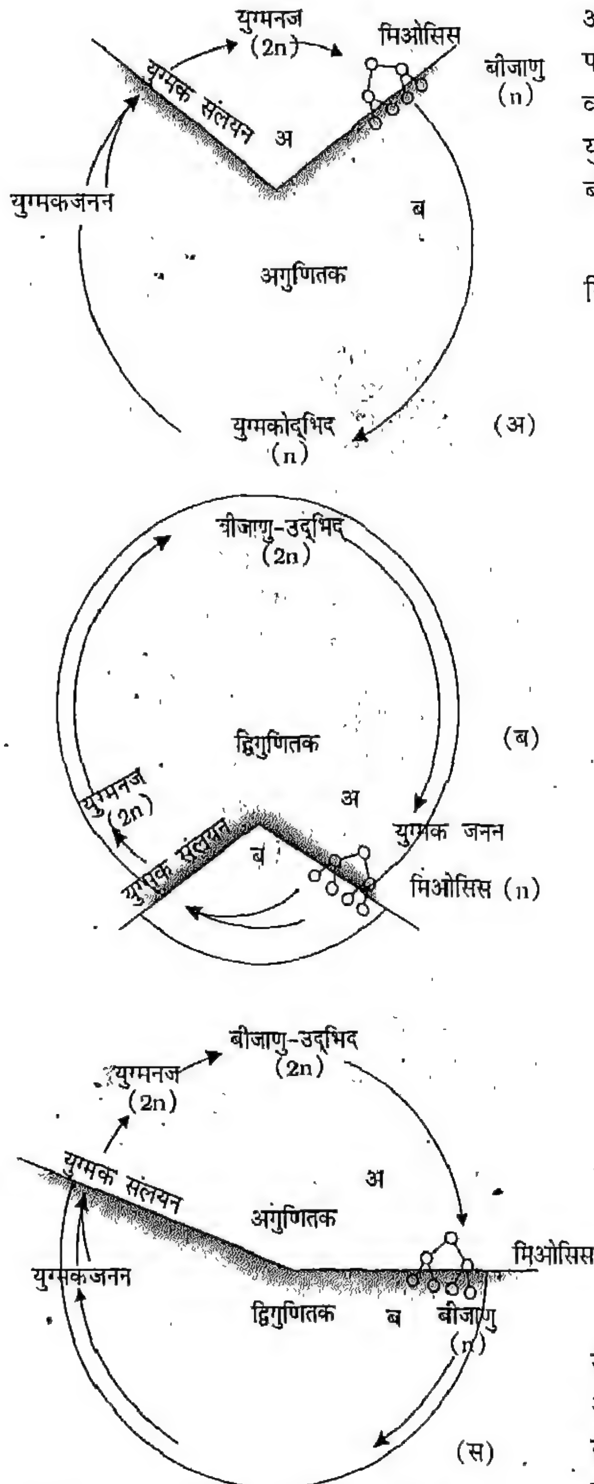
चित्र 3.5 ऐंजिओस्पर्म (अ) द्विबीजपत्री (ब) एकबीजपत्री

भ्रूण (जिससे एक अथवा दो बीजपत्र हो सकते हैं) में विकसित हो जाता है और प्राथमिक भ्रूणपोष केंद्रक भ्रूणपोष में विकसित हो जाता है। भ्रूणपोष विकासशील भ्रूण को पोषण प्रदान करता है। इन घटनाओं के दौरान बीजांड से बीज बन जाते हैं तथा अंडाशय से फल बन जाता है। निषेचन के बाद सहाय कोशिकाएँ तथा प्रतिव्यासांत कोशिकाएँ लुप्त हो जाती है। एंजियोस्पर्म के जीवन चक्र को चित्र 3.6 में दिखाया गया है।

चित्र 3.6 ऐन्जियोस्पर्म का जीवन चक्र

3.6 पादप जीवन चक्र तथा संतति या पीढ़ी-एकांतरण

पादप में अगुणित तथा द्विगुणित कोशिकाएँ माइटोसिस द्वारा विभक्त होती हैं। इसके कारण विभिन्न काय, अगुणित तथा द्विगुणित बनते हैं। अगुणित पादपकाय माइटोसिस द्वारा युग्मक बनाते हैं। इसमें पादप काय युग्मकोद्भिद् होता है। निषेचन के बाद युग्मनज भी माइटोसिस द्वारा विभक्त होता है जिसके कारण द्विगुणित स्पोरोफाइट पादपकाय बनाता है। इस



चित्र 3.7 जीवन चक्र पैटर्न (अ) अगुणितक (ब) द्विगुणितक (स) अगुणितक -द्विगुणितक

पादपकाय में मिऑसिस द्वारा अगुणित बीजाणु बनते हैं। ये अगुणित बीजाणु माइटोसिस विभाजन द्वारा पुनः अगुणित पादपकाय बनाते हैं। इस प्रकार किसी भी लैंगिक जनन करने वाले पौधों के जीवन चक्र के दौरान युग्मकों, जो अगुणित युग्मकोद्भिद् बनाते हैं; और बीजाणु, जो द्विगुणित स्पोरोफाइट बनाते हैं, के बीच संतति या पीढ़ी-एकांतरण होता है।

यद्यपि विभिन्न पादप वर्गों तथा उनकी व्यष्टियों में निम्नलिखित पैटर्न प्रदर्शित पाया जाता है।

1. बीजाणु उद्भिद् (स्पोरोफिटिक) संतति में केवल एक कोशिका वाला युग्मनज होता है। उसमें कोई मुक्तजीवी स्पोरोफाइट नहीं होता। युग्मनज में मिओसिस विभाजन होता है जिससे अगुणित बीजाणु बनते हैं। अगुणित बीजाणु में माइटोटिक विभाजन द्वारा युग्मकोद्भिद् (गैमिटोफाइट) बनते हैं। ऐसे पौधों में प्रभावी, प्रकाश संश्लेषी अवस्था मुक्तजीवी युग्मकोद्भिद् होते हैं। इस प्रकार के जीवन चक्र को **अगुणितक** कहते हैं। बहुत से शैवाल जैसे *वाल्वॉक्स, स्पाइरोगायरा,* तथा *क्लैमाइडोमोनॉस* की कुछ स्पीशीज में इस प्रकार का पैटर्न होता है (चित्र 3.7अ)
2. कुछ ऐसे उदाहरण भी हैं, जहाँ पादप में द्विगुणित बीजाणुद्भिद् प्रभावी, प्रकाश संश्लेषी, मुक्त होता है। युग्मकोद्भिद् एक कोशिकीय अथवा कुछ कोशिकीय अगुणित होते हैं। जीवन-चक्र की इस अवस्था को **द्विगुणितक** कहते हैं। सभी बीज वाले पौधों अर्थात् जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म में यह पैटर्न होता है (चित्र 3.7 ब)।
3. ब्रायोफाइट तथा टैरिडोफाइट में मिश्रित अवस्था अर्थात् दोनों प्रकार की अवस्थाएँ देखने को मिलती हैं। दोनों ही अवस्थाएँ बहुकोशिकीय तथा मुक्त जीवी होती हैं। लेकिन उनकी प्रभावी अवस्था में भिन्नता होती है।

एक प्रभावी, मुक्त, प्रकाश संश्लेषी थैलसाभ अथवा सीधी अवस्था **अगुणितक** युग्मकोद्भिद् में होती है। और यह अल्पआयु बहुकोशिकीय बीजाणुद्भिद् जो पूर्ण अथवा आंशिकरूप से जुड़े रहने तथा पोषण के लिए युग्मकोद्भिद् पर निर्भर करते हैं, पीढ़ी एकांतरण करता है। सभी ब्रायोफाइट में ऐसा ही पैटर्न होता है (चित्र 3.7 स)

द्विगुणित बीजाणुउद्भिद् प्रभावी, मुक्त, प्रकाशसंश्लेषी, संवहनी पादपकाय होता है। यह बहुकोशिक, मृतजीवी, स्वपोषी मुक्त लेकिन अल्पायु अगुणित युग्मकोद्भिद् से पीढ़ी एकांतरण करता है। ऐसे पैटर्न को अगुणितक जीवन चक्र कहते हैं (चित्र 3.7 स)।

इसके कुछ अपवाद है- अधिकांश शैवाल में अगुणितक पैटर्न होता है, उनमें से कुछ जैसे *एक्टोकार्पस, पॉलिसाइफोनिआ,* कैल्प में अगुणितक-द्विगुणितक पैटर्न होते हैं। फाइकस एक शैवाल है जिसमें द्विगुणितक पैटर्न होता है।

सारांश

पादप जगत में शैवाल, ब्रायोफाइट, टैरिडोफाइट, जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म आते हैं। शैवाल में क्लोरोफिल होता है। वे सरल, थैलासाभ, स्वपोषी तथा मुख्यत: जलीय जीव हैं। वर्णक के प्रकार तथा भोजन संग्रह के प्रकार के आधार पर शैवाल को तीन वर्गों (क्लास) में विभक्त किए गए हैं, ये हैं - क्लोरोफाइसी, फीयोफाइसी तथा रोडोफाइसी। शैवाल प्राय: विखंडन द्वारा कायिक प्रवर्धन करते हैं। अलैंगिक जनन में विभिन्न प्रकार के बीजाणु द्वारा तथा लैंगिक जनन लैंगिक कोशिकाओं द्वारा करते हैं। लैंगिक कोशिकाएँ समयुग्मकी, असमयुग्मकी तथा विषमयुग्मकी हो सकती हैं।

ब्रायोफाइट ऐसे पौधे हैं जो मिट्टी में उगते है लेकिन उनका लैंगिक जनन पानी पर निर्भर करता है। शैवाल की अपेक्षा उनकी पादपकाय अधिक विभेदित होती है। यह थैलस की तरह होता है। और शयान अथवा सीधा हो सकता है। ये मूलाभ द्वारा स्बस्ट्रेटम से जुड़े रहते हैं। इनमें मूल की तरह, तने की तरह तथा पत्तियों की तरह की रचनाएँ होती है। ब्रायोफाइट लिबरवर्ट तथा मॉस में विभक्त होते हैं। लिवरवर्ट थैलसाभ तथा पृष्ठाधर होते हैं। मॉस सीधे, पतले तने वाले होते हैं जिस पर पत्तियाँ सर्पिल ढंग से लगी रहती हैं। ब्रायोफाइट की मुख्यकाय युग्मकोद्भिद् होती है जो युग्मकों को उत्पन्न करते हैं। इसमें नर लैंगिक अंग होते है जिसे पुंधानी कहते हैं। मादा लैंगिक अंग को स्त्रीधानी कहते हैं। नर तथा मादा युग्मक इससे पैदा होते हैं जो संगलित हो कर युग्मनज बनाते हैं। युग्मनज से बहुकोशिक रचना बनती है, जिसे बीजाणु-उद्भिद् कहते हैं। इससे अगुणित बीजाणु बनते हैं। बीजाणुओं से युग्मकोद्भिद् बनते हैं।

टैरिडोफाइट में मुख्य पौधा बीजाणु-उद्भिद् होता है। इसमें वास्तविक मूल, तना तथा पत्तियाँ होती हैं। इसमें सुविकसित संवहन ऊतक होते हैं। बीजाणु-उद्भिद् में बीजाणुधानी होती है। जिसमें मिऑसिस द्वारा बीजाणु बनते हैं। बीजाणु अंकुरित होकर युग्मकोद्भिद् बनाते हैं। इन्हें वृद्धि के लिए ठंडे, नम स्थानों की आवश्यकता होती है। युग्मकोद्भिद् में नर तथा मादा लैंगिक अंग होते हैं; जिन्हें क्रमश: पुंधानी तथा स्त्रीधानी कहते हैं। नरयुग्मक के मादा युग्मक तक जाने के लिए पानी की आवश्यकता होती है। निषेचन के बाद युम्मनज बनता है। युग्मनज से बीजाणु-उद्भिद् बनता है।

जिम्नोस्पर्म वे पौधे होते हैं, जिनमें बीजांड किसी अंडाशय भित्ति से ढका नहीं होता। निषेचन के बाद बीज अनावृत रहते हैं और इसीलिए इन्हें अनावृत बीजी पौधे कहते हैं। जिम्नोस्पर्म लघु बीजाणु तथा गुरु बीजाणु उत्पन्न करते हैं, जो लघु बीजाणुधानी तथा गुरु बीजाणुधानी (बीजांड) में बनते हैं। ये धानियाँ बीजाणु पर्ण में होती

हैं। बीजाणु पर्ण - लघु बीजाणुपर्ण तथा गुरु बीजाणुपर्ण अक्ष पर सर्पिल रूप में लगी रहती हैं। जिनसे क्रमशः नर शंकु तथा मादा शंकु बनते हैं। परागकण अंकुरित होते हैं और पराग नली बनती है; जिससे नर युग्मक अंडाशय में निकल जाता हैं। यहां पर यह स्त्रीधानी में स्थित अंडकोशिका से संगलन हो जाता है। निषेचन के बाद, युग्मनज भ्रूण में तथा बीजांड बीज में विकसित हो जाता हैं।

एंजियोस्पर्म में नर लैंगिक अंग (पुंकेसर) तथा मादा लैंगिक अंग (स्त्रीकेसर) फूल में उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक पुंकेसर में एक तंतु तथा एक परागकोश होता है। परागकोश में मिऑसिस के बाद परागकण (नर युग्मकोद्भिद्) बनते हैं। स्त्रीकेसर में एक अंडाशय होता है; जिसमें बहुत से बीजांड होते हैं। बीजांड में मादा युग्मक अथवा भ्रूणकोष होता है; जिसमें अंड कोशिका होती है। पराग नली भ्रूणकोष में जाती है जहाँ पर वह दो नर युग्मकों को छोड़ देती है। एक नर युग्मक अंड कोशिका से संगलन हो जाता है और दूसरा द्विगुणित द्वितीयक केंद्रक (त्रिसंलयन) से संगलन करता है। इस दो संगलन के प्रक्रम को द्विनिषेचन कहते हैं। यह प्रक्रम एंजियोस्पर्म के लिए अद्भुत है। एंजियोस्पर्म द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री में विभक्त होता है। लैंगिक जनन करने वाले पौधों, जिसमें अगुणित युग्मकों तथा द्विगुणित बीजाणु-उद्भिद् उत्पन्न करने वाले बीजाणुओं के जीवन चक्र में पीढ़ी एकांतरण होता है। लेकिन विभिन्न पौधों के वर्गों तथा पौधों में जीवन चक्र अगुणितक, द्विगुणितक तथा मिश्रित प्रकार के पैटर्न हो सकते हैं।

अभ्यास

1. शैवाल के वर्गीकरण का क्या आधार है?
2. लिवरवर्ट, मॉस, फर्न, जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म के जीवन-चक्र में कहाँ और कब निम्नीकरण विभाजन होता है?
3. पौधे के तीन वर्गों के नाम लिखो, जिनमें स्त्रीधानी होती है। इनमें से किसी एक के जीवन-चक्र का संक्षिप्त वर्णन करो।
4. निम्नलिखित की सूत्रगुणता बताओ: मॉस के प्रथम तंतुक कोशिका; द्विबीजपत्री के प्राथमिक भ्रूणपोष का केंद्रक, मॉस की पत्तियों की कोशिका; फर्न के प्रोथैलस की कोशिकाएं, मारकेंशिया की जेमा कोशिका; एकबीजपत्री की मैरिस्टेम कोशिका, लिवरवर्ट के अंडाशय तथा फर्न के युग्मनज।
5. शैवाल तथा जिम्नोस्पर्म के आर्थिक महत्त्व पर टिप्पणी लिखो।
6. जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म दोनों में बीज होते हैं, फिर भी उनका वर्गीकरण अलग-अलग क्यों हैं?
7. विषम बीजाणुता क्या है? इसकी सार्थकता पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो। इसके दो उदाहरण दो।
8. उदाहरण सहित निम्नलिखित शब्दावली का संक्षिप्त वर्णन करो:
   (i) प्रथम तंतु (ii) पुंधानी (iii) स्त्रीधानी (iv) द्विगुणितक (v) बीजाणुपर्ण (v) समयुग्मकी

9. निम्नलिखित में अंतर करो:
   (i) लाल शैवाल तथा भूरे शैवाल
   (ii) लिवरवर्ट तथा मॉस
   (iii) विषम बीजाणुक तथा सम बीजाणुक टेरिडोफाइट
   (iv) युग्मक संलयन तथा त्रिसंलयन

10. एकबीजपत्री को द्विबीजपत्री से किस प्रकार विभेदित करोगे?

11. स्तंभ I में दिए गए पादपों की स्तंभ II में दिए गए पादप वर्गों से मिलान करो।

स्तंभ **I** (पादप)	स्तंभ **II** (वर्ग)
(अ) *क्लैमाइडोमोनॉस*	(i) मॉस
(ब) *साइकस*	(ii) टैरिडोफाइट
(स) *सिलैंजिनैल्ण*	(iii) शैवाल
(द) *स्फ़ैगनम*	(iv) जिम्नोस्पर्म

12. जिम्नोस्पर्म के महत्वपूर्ण अभिलक्षणों का वर्णन करो।

अध्याय 4

प्राणि जगत

4.1 वर्गीकरण का आधार

4.2 प्राणियों का वर्गीकरण

जब आप अपने चारों ओर देखते हैं तो आप प्राणियों को विभिन्न संरचना एवं स्वरूपों में पाते हैं। अब तक लगभग दस लाख से अधिक प्राणियों का वर्णन किया जा चुका है, अतः वर्गीकरण का महत्व अधिक हो जाता है। इससे नई खोजी गई प्रजातियों को वर्गीकरण में उचित स्थान पर रखने में सहायता मिलती है।

4.1 वर्गीकरण का आधार

प्राणियों की संरचना एवं आकार में भिन्नता होते हुए भी उनकी कोशिका व्यवस्था, शारीरिक सममिति, प्रगुहा की प्रकृति, पाचन-तंत्र, परिसंचरण-तंत्र व जनन-तंत्र की रचना में कुछ आधारभूत समानताएं पाई जाती हैं। इन विशेषताओं को वर्गीकरण के आधार के रूप में प्रयुक्त किया गया है। इनमें से कुछ का वर्णन यहाँ किया गया है।

4.1.1 संगठन के स्तर

यद्यपि प्राणि जगत के सभी सदस्य बहुकोशिक हैं, लेकिन सभी एक ही प्रकार की कोशिका के संगठन को प्रदर्शित नहीं करते हैं। उदाहरण के लिए, स्पंज में कोशिका बिखरे हुए समूहों में हैं। अर्थात् वे **कोशिकीय स्तर** का संगठन दर्शाती हैं। कोशिकाओं के बीच श्रम का कुछ विभाजन होता है। सिलेंटरेट कोशिकाओं की व्यवस्था अधिक होती हैं। उसमें कोशिकाएं अपना कार्य संगठित होकर ऊतक के रूप में करती हैं। इसलिए इसे **ऊतक स्तर** का संगठन कहा जाता है। इससे **उच्च स्तर** का संगठन जो प्लेटीहेल्मिंथीज के सदस्य तथा अन्य उच्च संघों में पाया जाता है जिसमें ऊतक संगठित होकर अंग का निर्माण करता है और प्रत्येक अंग एक विशेष कार्य करता है। प्राणी में जैसे, ऐनेलिड, आर्थोपोड, मोलस्क, एकाइनोडर्म तथा रज्जुकी के अंग मिलकर तंत्र के रूप में शारीरिक

कार्य करते हैं। प्रत्येक तंत्र एक विशिष्ट कार्य करता है। इस तरह की संरचना अंगतंत्र के **स्तर का संगठन** कहा जाता है। विभिन्न प्राणि समूहों में अंगतंत्र विभिन्न प्रकार की जटिलताएं प्रदर्शित करते हैं। उदाहरण के लिए पाचन भी अपूर्ण व पूर्ण होता है। अपूर्ण पाचन तंत्र में एक ही बाह्य द्वार होता है, जो मुख तथा गुदा दोनों का कार्य करता है, जैसे प्लेटीहेल्मिंथीज। पूर्ण पाचन-तंत्र में दो बाह्य द्वार होते हैं मुख तथा गुदा। इसी प्रकार परिसंचरण-तंत्र भी दो प्रकार का है खुला तथा बंद।

(i) **खुले परिसंचरण**-तंत्र में रक्त का बहाव हृदय से सीधे बाहर भेजा जाता है तथा कोशिका एवं ऊतक इसमें डूबे रहते हैं।।

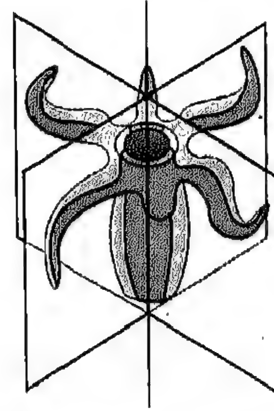
(ii) **बंद परिसंचरण-तंत्र**– रक्त का संचार हृदय से भिन्न-भिन्न व्यास की वाहिकाओं के द्वारा होता है। (उदाहरण– धमनी, शिरा तथा कोशिकाएं)

4.1.2 सममिति

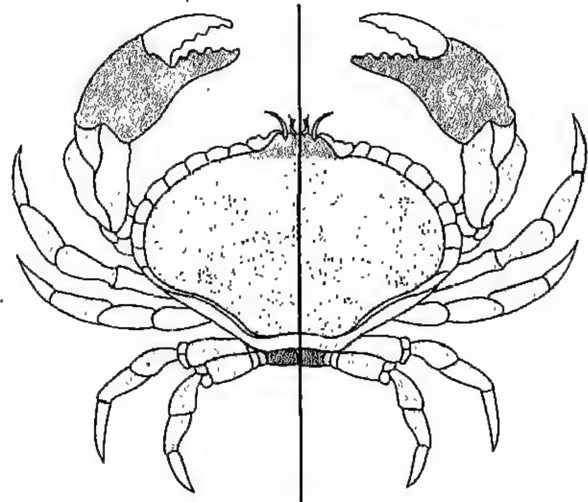
प्राणी को सममिति के आधार पर भी श्रेणीबद्ध किया जा सकता है। स्पंज मुख्यत: **असममिति** होते हैं; अर्थात् किसी भी केंद्रीय अक्ष से गुजरने वाली रेखा इन्हें दो बराबर भागों विभाजित नहीं करती। जब किसी भी केंद्रीय अक्ष से गुजरने वाली रेखा प्राणि के शरीर को दो समरूप भागों में विभाजित करती है तो इसे **अरीय सममिति** कहते हैं। सीलेंटरेट, टीनोफोर, तथा एकाइनोडर्म में इसी प्रकार की सममिति होती है (चित्र 4.1 अ)। किंतु ऐनेलिड, आर्थोपोड, आदि में एक ही अक्ष से गुजरने वाली रेखा द्वारा शरीर दो समरूप दाएं व बाएं भाग में बाँटा जा सकता है। इसे **द्विपार्श्व सममिति** कहते हैं। (चित्र 4.1 ब)

4.1.3 द्विकोरिक तथा त्रिकोरकी संगठन

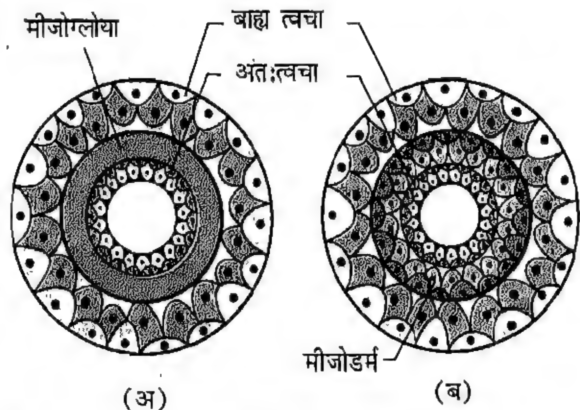
जिन प्राणियों में कोशिकाएं दो भ्रूणीय स्तरों में व्यवस्थित होती हैं यथा- **बाह्य एक्टोडर्म** (बाह्य त्वचा) तथा **आंतरिक एंडोडर्म** (अंत: त्वचा) वे **द्विकोरिक** कहलाते हैं। जैसे सिलेन्टरेट (चित्र 4.2 अ) वे प्राणी जिनके विकसित भ्रूण में तृतीय भ्रूणीय स्तर **मीजोडर्म** होता है, **त्रिकोरकी** कहलाते हैं (जैसे प्लेटीहेल्मिंथीज से रज्जुकी तक चित्र. 4.2 ब)।



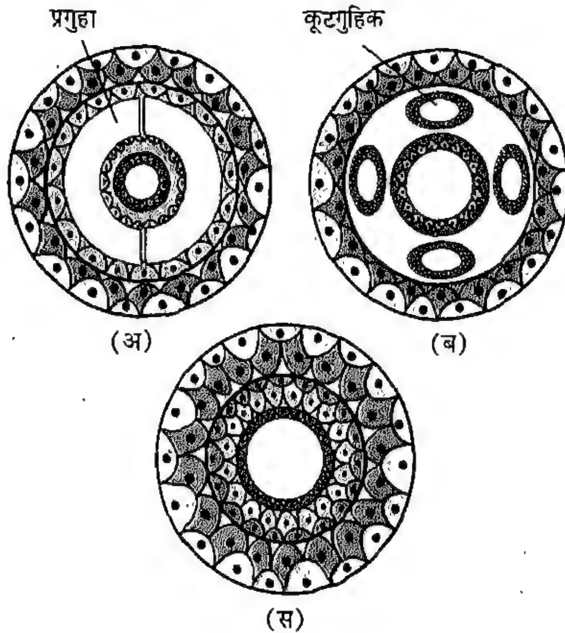
चित्र 4.1 (अ) अरीय सममिति



चित्र 4.1 (ब) द्विपार्श्व सममिति



चित्र 4.2 भ्रूणीय स्तर का प्रदर्शन (अ) द्विकोरिक (ब) त्रिकोरिक



चित्र 4.3 (अ) प्रगुहीय (ब) कूटगुहिक
(स) अगुहीय का अनुप्रस्थ रेखाचित्र

4.1.4 प्रगुहा (सीलोम)

शरीर भित्ति तथा आहार नाल के बीच में गुहा की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति वर्गीकरण का महत्वपूर्ण आधार है। मीजोडर्म (मध्य त्वचा) से आच्छादित शरीर गुहा को देहगुहा (प्रगुहा) कहते हैं। तथा इससे युक्त प्राणी को **प्रगुही** प्राणी कहते हैं। उदाहरण– ऐनेलिड, मोलस्क, आर्थोपोड, एकाइनोडर्म, हेमीकॉर्डेट तथा कॉर्डेट। कुछ प्राणियों में यह गुहा मीसोडर्म से आच्छादित नहीं होती, बल्कि मध्य त्वचा (मीसोडर्म) बाह्य त्वचा एवं अंतः त्वचा के बीच बिखरी हुई थैली के रूप में पाई जाती है, उन्हें **कूटगुहिक** कहते हैं जैसे– ऐस्केल्मिंथीज। जिन प्राणियों में शरीर गुहा नहीं पाई जाती है उन्हें **अगुहीय** कहते हैं, जैसे– प्लेटीहेल्मिंथीज (चित्र 4.3 स)।

4.1.5 खंडीभवन (सैगमेंटेशन)

कुछ प्राणियों में शरीर बाह्य तथा आंतरिक दोनों ओर श्रेणीबद्ध खंडों में विभाजित रहता है, जिनमें कुछेक अंगों की क्रमिक पुनरावृति होती है। उस प्रक्रिया को **खंडीभवन** कहते हैं। उदाहरण के लिए के केंचुए में शरीर का विखंडी खंडीभवन होता है और यह **विखंडावस्था** कहलाती है।

4.1.6 पृष्ठरज्जु

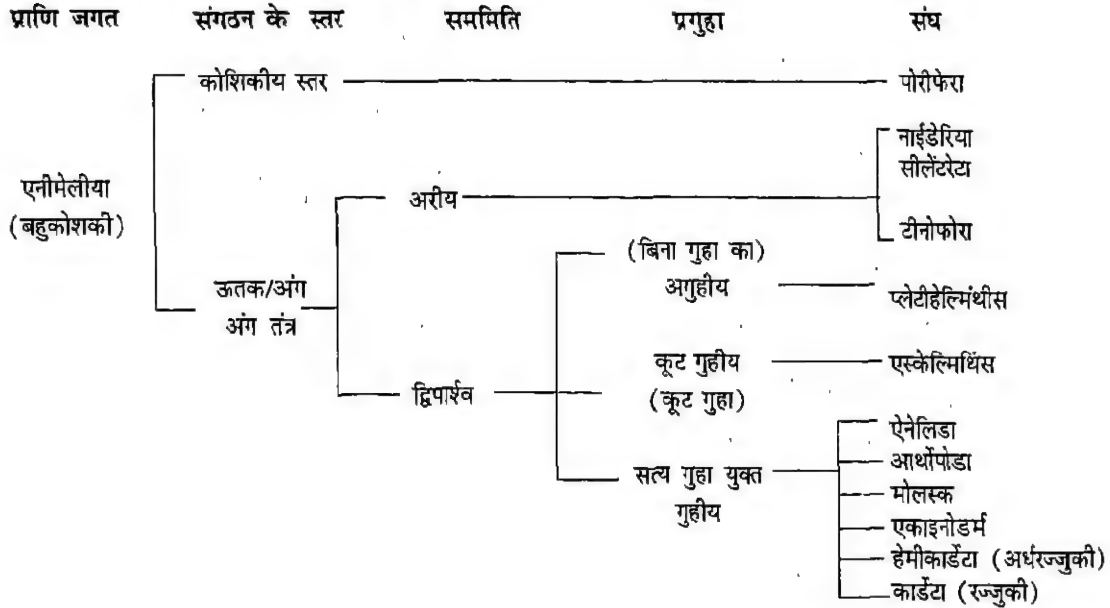
शलाका रूपी पृष्ठरज्जु (नोटोकोर्ड) मध्यत्वचा (मीसोडर्म) से उत्पन्न होती है जो भ्रूणीय परिवर्धन विकास के समय पृष्ठ सतह में बनती होती है। पृष्ठरज्जु युक्त प्राणी को रज्जुकी (कॉर्डेट) कहते हैं तथा पृष्ठरज्जु रहित प्राणी को अरज्जुकी (नोनकॉर्डेट) कहते हैं।

4.2 प्राणियों का वर्गीकरण

प्राणियों का विस्तृत वर्गीकरण उपर्युक्त वर्णित मौलिक लक्षणों के आधार पर किया गया है, जिसका वर्णन इस अध्याय के शेष भाग में किया गया है (चित्र 4.4)।

4.2.1 संघ पोरीफेरा (Porifera)

इस संघ के प्राणियों को सामान्यतः स्पंज कहते हैं। सामान्यतः लवणीय एवं असममिति होते हैं। ये सब आद्यबहुकोशिक प्राणी हैं (चित्र 4.5), जिनका शरीर संगठन कोशिकीय स्तर का है। स्पंजों में जल परिवहन तथा नाल-तंत्र पाया जाता है। जल सूक्ष्म रंध्र **ऑस्टिया** द्वारा शरीर की केंद्रीय **स्पंज गुहा** (स्पंजोशील) में प्रवेश करता है तथा बड़े रंध्र **ऑस्कुलम** द्वारा बाहर निकलता है। जल परिवहन का यह रास्ता भोजन जमा करने,

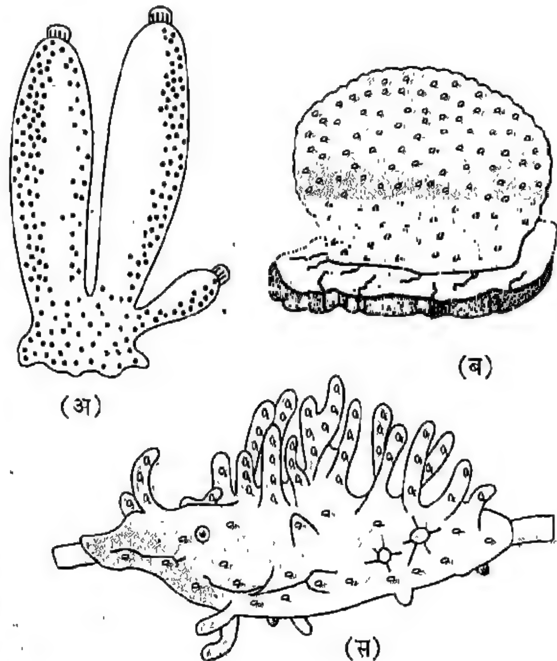


चित्र 4.4 मौलिक लक्षणों के आधार पर प्राणि जगत का विस्तृत वर्गीकरण

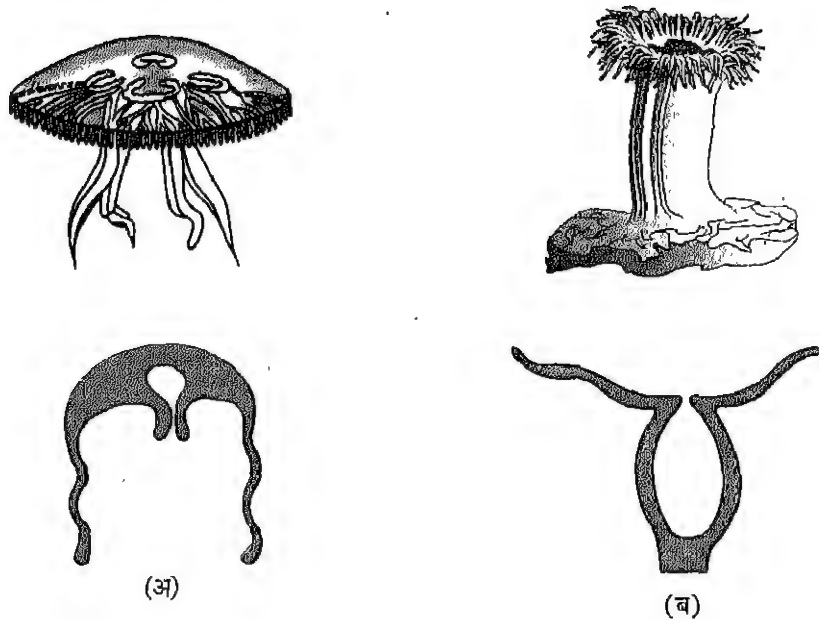
श्वसन तथा अपशिष्ट पदार्थों को उत्सर्जित करने में सहायक होता है। **कोएनोसाइट** या कॉलर कोशिकाएं **स्पंजगुहा** तथा **नाल-तंत्र** को स्तरित करती हैं। कोशिकाओं में पाचन होता है (अंतराकोशिक)। कंकाल शरीर को आधार प्रदान करता है। जो कंटिकाओं तथा स्पंजिन तंतुओं का बना होता है। स्पंज प्राणी में नर तथा मादा पृथक् नहीं होते। वे उभयलिंगाश्रयी होते हैं। अंडे तथा शुक्राणु दोनों एक द्वारा ही बनाए जाते हैं। उनमें अलैंगिक जनन विखंडन द्वारा तथा लैंगिक जनन युग्मकों द्वारा होता है। निषेचन आंतरिक होता तथा परिवर्धन अप्रत्यक्ष होता है, जिसमें वयस्क से भिन्न आकृति की लार्वा अवस्था पाई जाती है। उदाहरण साइकन (साइफा), **स्पांजिला** (स्वच्छ जलीय स्पंज) तथा **यूस्पंजिया** (बाथस्पंज)।

4.2.2 संघ सिलेन्ट्रेटा (नाइडेरिया)

ये जलीय अधिकांशतः समुद्री स्थावर अथवा मुक्त तैरने वाले सममिति प्राणी हैं (चित्र 4.6)। नाइडेरिया नाम इनकी दंश कोशिका, नाइडोब्लास्ट या निमेटोब्लास्ट से बना है। यह कोशिकाएं स्पर्शकों तथा शरीर में अन्य स्थानों पर पाई जाती हैं। दंशकोरक (नाइडोब्लास्ट) स्थिरक, रक्षा तथा शिकार

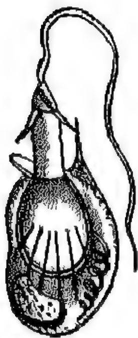


चित्र 4.5 पोरीफेरा के उदाहरण: (अ) *साइकन* (साइफा) (ब) *यूस्पांजिया* (स) *स्पांजिला*



चित्र 4.6 सिलेन्ट्रेटा के उदाहरण: (अ) ओरेलिया (मेडुसा) (ब) एडमसिया (पालिप) से अपनी काया का बाह्य रूप

पकड़ने में सहायक हैं (चित्र 4.7)। नाइडेरिया में ऊतक स्तर संगठन होता है और ये द्विकोश्की होते हैं। इन प्राणियों में केंद्रीय जठर संवहनी (गैस्ट्रोवेंस्क्यूलर) गुहा पाई जाती है, जो **अधोमुख** (हाईपोस्टोम) पर स्थित मुख द्वारा खुलती है। इनमें अंत:कोशिकी एवं अंतराकोशिक दोनों प्रकार का है। इनके कुछ सदस्यों (जैसे प्रवाल/**कोरल**) में कैल्सियम कार्बोनेट से बना कंकाल पाया जाता है। इनका शरीर दो आकारों **पालिप** तथा **मेडुसा** से बनता है। पॉलिप स्थावर तथा बेलनाकार होता है। जैसे– हाइड्रा। मेडुसा छत्री के आकार का तथा मुक्त प्लावी होता है। जैसे– *ओरेलिया* या जेली फिश। वे नाइडेरिया जिन में दोनों पॉलिप तथा मेडुसा दोनों रूप में पाए जाते हैं, उनमें पीढ़ी एकांतरण (मेटाजनेसिस) होता है जैसे *ओबेलिया* में। पॉलिप अलैंगिक जनन के द्वारा मेडुसा उत्पन्न करता है तथा मेडुसा लैंगिक जनन के द्वारा पॉलिप उत्पन्न करता है। उदाहरण– *फाइसेलिया* (पुर्तगाली युद्ध मानव) *एडमसिया* (समुद्र ऐनीमोन) *पेनेट्युला* (समुद्री पिच्छ) *गोरगोनिया* (समुद्री व्यंजन) तक्ष तथा *मेन्डरीना* (ब्रेन कोरल)।



चित्र 4.7 नाइडोब्लास्ट का आरेखीय दृश्य

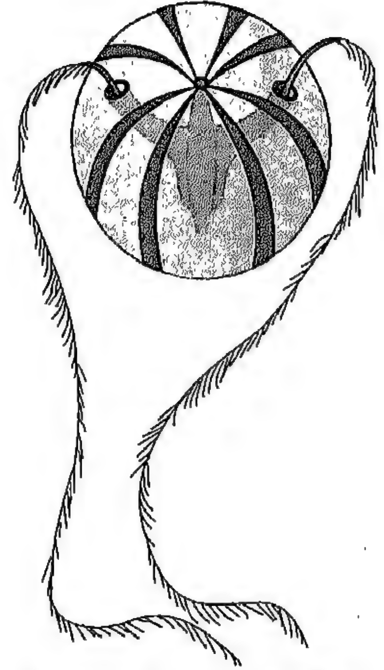
4.2.3 संघ टीनोफोर

टीनोफोर (कंकतधर) को सामान्यत: **समुद्री अखरोट** (सी वालनट) या **कंकाल जैली** (कॉम्ब जैली) कहते हैं। ये सभी समुद्रवासी अरीय सममिति, द्विकोरिक जीव होते हैं तथा इनमें ऊतक श्रेणी का शरीर संगठन होता है। शरीर में आठ बाह्य पक्ष्माभी कंकत पट्टिका होती है, जो चलन में सहायता करती है (चित्र 4.8)। पाचन अंत:कोशिक तथा अंतरा: कोशिक दोनों प्रकार का होता है। **जीवसंदीप्ति** (प्राणी के द्वारा प्रकाश उत्सर्जन करना)

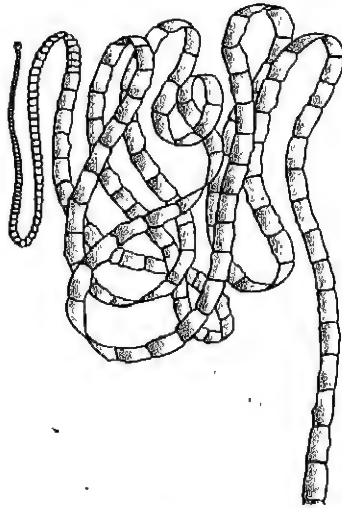
टीनोफोर की मुख्य विशेषता है। नर एवं मादा अलग नहीं होते हैं। जनन केवल लैंगिक होता है। निषेचन बाह्य होता है तथा अप्रत्यक्ष परिवर्धन होता है, जिसमें लार्वा अवस्था नहीं होती (उदाहरण-प्लूरोब्रेकिआ तथा टीनोप्लाना)।

4.2.4 संघ प्लेटीहैल्मिंथीज (चपटे कृमि)

इस संघ के प्राणी पृष्ठाधर रूप से चपटे होते हैं। इसलिए इन्हें सामान्यत: चपटे कृमि कहा जाता है। इस समूह के अधिकांश प्राणी मनुष्य तथा अन्य प्राणियों में अंत: परजीवी के रूप में पाए जाते हैं। चपटे कृमि द्विपार्शव सममिति, त्रिकोरकी तथा अप्रगुही होते हैं। इनमें अंग स्तर का शरीर संगठन होता है। परजीवी प्राणी में अंकुश तथा चूषक पाए जाते हैं (चित्र 4.9)। कुछ चपटेकृमि खाद्य पदार्थ को परपोषी से सीधे अपने शरीर की सतह से अवशोषित करते हैं। ज्वाला कोशिकाएं परासरण नियंत्रण तथा उत्सर्जन में सहायता करती हैं। नर मांदा अलग नहीं होते हैं। निषेचन आंतरिक होता है तथा परिवर्धन में बहुत सी लार्वा अवस्थाएं पाई जाती हैं। प्लैनेरिया में पुनरुद्भवन की असीम क्षमता होती है। उदाहरण– टीनिया (फीताकृमि), फेसियोला (पर्णकृमि)



चित्र 4.8 टीनोप्लाना (प्लूरोब्रेकिआ) का उदाहरण



(अ)

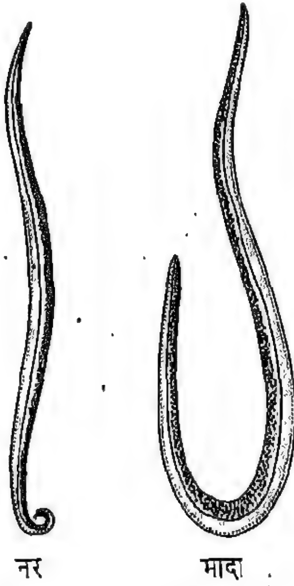


(ब)

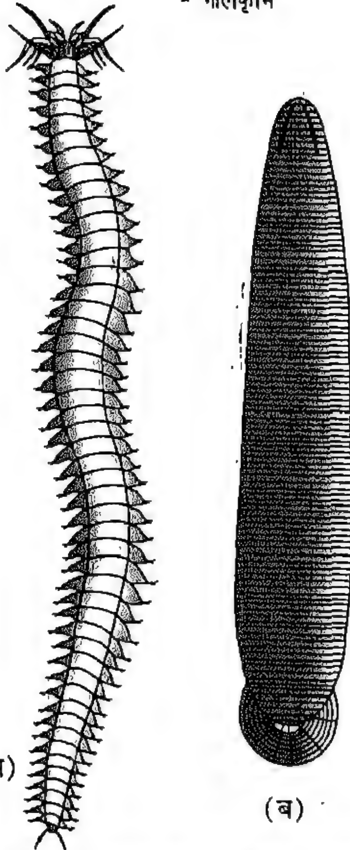
चित्र 4.9 प्लेटीहैल्मिंथीज के उदाहरण (क) पीताकृमि (टीनिया) (ब) पर्णकृमि (फैसियोला)

4.2.5 संघ ऐस्केलमिंथीज (गोल कृमि)

ऐस्केलमिंथीज प्राणी अनुप्रस्थ काट में गोलाकार होते हैं, अत: इन्हें **गोलकृमि** कहते हैं। ये मुक्तजीवी, जलीय अथवा स्थलीय तथा पौधे एवं प्राणियों में परजीवी भी होते हैं। ये **द्विपार्शव** सममिति, त्रिकोरकी, तथा कूटप्रगुही प्राणी होते हैं। इनका शरीर संगठन, **अंगतंत्र**



चित्र 4.10 ऐस्कलमिंथीज - गोलकृमि



चित्र 4.11 ऐनेलिडा के उदाहरण (अ) नेरीस (ब) हीरुडिनेरिया (रक्तचूषक जोंक)

स्तर का है। आहार नाल पूर्ण होती है, जिसमें सुपरिवर्धित पेशीय ग्रसनी होती है। उत्सर्जन नाल शरीर से अपशिष्ट पदार्थों को उत्सर्जन रंध्र के द्वारा बाहर निकालती है (चित्र 4.10)। नर तथा मादा (एकलिंगाश्रयी) होते हैं। प्राय: मादा नर से बड़ी होती है। निषेचन आंतरिक होता है तथा (परिवर्धन प्रत्यक्ष (शिशु वयस्क के समान ही दिखते हैं) अथवा अप्रत्यक्ष (लार्वा अवस्था द्वारा) होता है। उदाहरण– *एस्केरिस* (गोलकृमि), *वुचेरेरिया* (फाइलेरियाकृमि) *एनसाइलोस्टोमा* (अंकुशकृमि)

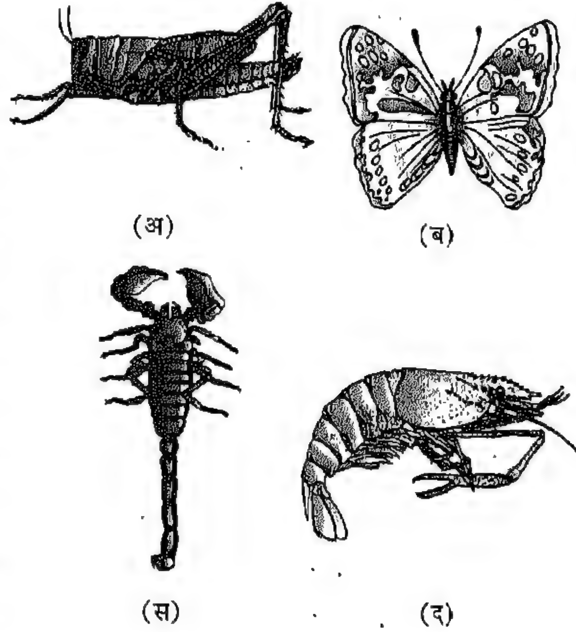
4.2.6 संघ ऐनेलिडा

ये प्राणी जलीय (लवणीय तथा अलवण जल) अथवा स्थलीय, स्वतंत्र जीव तथा कभी-कभी परजीवी होते हैं। ये अंगतंत्र स्तर के संगठन को प्रदर्शित करते हैं तथा द्विपार्शव सममिति होते हैं। ये त्रिकोरकी क्रमिक पुनरावृत्ति, विखंडित खंडित तथा गुहीय प्राणी होते हैं। इनकी शरीर सतह स्पष्टत: **खंड** अथवा **विखंडों** में बँटा होता है। (लैटिन *एनुलस* अर्थात् सूक्ष्म वलय) इसलिए इस संघ को एनेलिडा कहते हैं (चित्र 4.11)। इन प्राणियों में अनुदैर्ध्य तथा वृत्ताकार दोनों प्रकार की पेशियां पाई जाती हैं जो चलन में सहायता करती हैं। जलीय एनेलिडा जैसे *नेरिस* में पार्श्वपाद (उपांग) **पैरापोडिया** पाए जाते हैं जो तैरने में सहायता करते हैं। इसमें बंद परिसंचरण-तंत्र उपस्थित होता है। **वृक्कक** (एक वचन **नेफ्रिडियम**) परासरण नियमन तथा उत्सर्जन में सहायक हैं। तंत्रिका-तंत्र में एक जोड़ी गुच्छिकाएं (एक वचन-गैंग्लियोन) होती है, जो पार्श्व तंत्रिकाओं द्वारा दोहरी अधर तंत्रिका रज्जु से जुड़ी होती हैं (चित्र 4.11)। नेरीस, एक जलीय एनेलिड है, जिसमें नर तथा मादा अलग होते हैं (एकलिंगाश्रयी) लेकिन केंचुए तथा जोंक में नर तथा मादा पृथक् नहीं होते, (उभयलिंगाश्रयी) हैं। जनन लैंगिक विधि द्वारा होता है। उदाहरण– *नेरीस* फेरेटिमा (केंचुआ) तथा *हीरुडिनेरिया* (रक्तचूषक जोंक)

4.2.7 आर्थोपोडा

आर्थोपोडा प्राणि जगत का सबसे बड़ा संघ है, जिसमें कीट भी सम्मिलित हैं। लगभग दो तिहाई जाति पृथ्वी पर आर्थोपोडा

ही हैं (चित्र 4.12)। इसमें अंग-तंत्र स्तर का शरीर संगठन होता है। तथा ये द्विपार्श्व सममिति, त्रिकोरकी, विखंडित तथा प्रगुही प्राणी हैं। आर्थोपोड का शरीर काईटीनी वहिकंकाल से ढका रहता है। **शरीर सिर, वक्ष** तथा **उदर** में विभाजित होते हैं। (आर्थोस मतलब संधि, पोडा मतलब उपांग) इसमें **संधियुक्त पाद** होता है। श्वसन अंग क्लोम, पुस्त-क्लोम, पुस्त फुप्फुस अथवा श्वसनिकाओं के द्वारा होता है। परिसंचरण-तंत्र खुला होता है। संवेदी अंग जैसे- शृंगिकाएं, नेत्र (सामान्य तथा संयुक्त), संतुलनपुटी (स्टेटोसिस्ट) उपस्थित होते हैं। उत्सर्जन **मैलपिगी नलिका** के द्वारा होता है। नर-मादा पृथक होते हैं तथा अधिकांशतः अंडप्रजक होते हैं। परिवर्धन प्रत्यक्ष अथवा लार्वा अवस्था द्वारा (अप्रत्यक्ष) होता है। आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण कीट हैः *ऐपिस* (मधुमक्खी) व बांबिक्स (रेशम कीट), *लैसिफर* (लाख कीट); रोग वाहक कीट, एनाफलीज, *क्यूलेक्स* तथा *एडीज* (मच्छर); यूथपीड़क टिड्डी (*लोकस्टा*); तथा जीवित जीवाश्म *लिमूलस* (राज कर्कट किंग क्रेब) आदि।



चित्र 4.12 आर्थोपोडा के उदाहरणः (अ) टिड्डी (ब) तितली (स) बिच्छू (द) झींगा (प्रॉन)

4.2.8 संघ मोलस्का (कोमल शरीर वाले प्राणी)

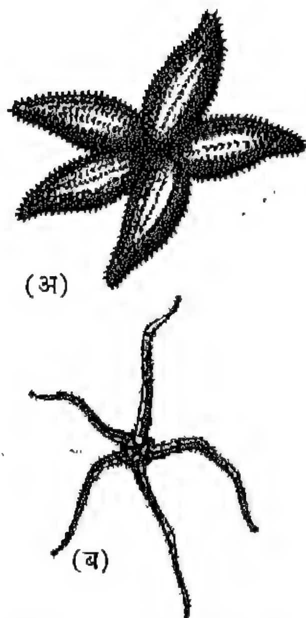
मोलस्का **दूसरा सबसे बड़ा** प्राणी संघ है (चित्र 4.13)। ये प्राणी स्थलीय अथवा जलीय (लवणीय एवं अलवणीय) तथा अंगतंत्र स्तर के संगठन वाले होते हैं। ये द्विपार्श्व सममिति त्रिकोरकी तथा प्रगुही प्राणी हैं। शरीर कोमल परंतु कठोर कैल्सियम के कवच से ढका रहता है। इसका शरीर अखंडित जिसमें **सिर, पेशीय पाद** तथा **एक अंतरंग ककुद** होता है। त्वचा की नरम तथा स्पंजी परत ककुद के ऊपर प्रावार बनाती है। ककुद तथा प्रावार के बीच के स्थान को प्रावार गुहा कहते हैं, जिसमें पख के समान क्लोम पाए जाते हैं, जो श्वसन एवं उत्सर्जन दोनों में सहायक हैं। सिर पर संवेदी स्पर्शक पाए जाते हैं। मुख में भोजन के लिए रेती के समान घिसने का अंग होता है। इसे **रेतीजिह्वा** (रेडुला) कहते हैं। सामान्यतः नर



चित्र 4.13 मोलस्कों के उदाहरणः (अ) पाइला (सेबघोंघा (ब) ऑक्टोपस

मादा पृथक् होते हैं तथा अंडप्रजक होते हैं। परिवर्धन सामान्यतः लार्वा के द्वारा होता है।

उदाहरण– *पाइला* (सेब घोंघा), *पिंकटाडा* (मुक्ता शुक्ति), *सीपिया* (कटलफिश), *लोलिगो* (स्क्विड), *ऑक्टोपस* (बेताल मछली), *एप्लाइसिया* (समुद्री खरगोश), *डेन्टेलियम* (रद कवचर), *कीटोप्लयूरा* (काइटन)



चित्र 4.14 एकाइनोडर्मेटा के उदाहरण: (अ) तारामीन (ब) भंगुरतारा

4.2.9 संघ एकाइनोडर्मेटा (शूलयुक्त प्राणी)

इस संघ के प्राणियों में कैल्सियम युक्त अंतः कंकाल पाया जाता है। इसलिए इनका नाम एकाइनोडर्मेटा (शूलयुक्त शरीर) (चित्र 4.14) है। सभी समुद्रवासी हैं तथा अंग-तंत्र स्तर का संगठन होता है। वयस्क एकाइनोडर्म अरीय रूप से सममिति होते हैं, जबकि लार्वा द्विपार्श्व रूप से सममिति होते हैं। ये सब त्रिकोरकी तथा प्रगुही प्राणी होते हैं। पाचन-तंत्र पूर्ण होता है तथा सामान्यतः मुख अधर तल पर एवं मलद्वार पृष्ठ तल पर होता है। **जल संवहन-तंत्र** इस संघ की विशिष्टता है, जो चलन (गमन) तथा भोजन पकड़ने में तथा श्वसन में सहायक है। स्पष्ट उत्सर्जन-तंत्र का अभाव होता है। नर एवं मादा पृथक् होते हैं तथा लैंगिक जनन पाया जाता है। निषेचन सामान्यतः बाह्य होता है। परिवर्धन अप्रत्यक्ष एवं मुक्त प्लावी लार्वा अवस्था द्वारा होता है।

उदाहरण एस्टेरियस (तारा मीन) *एकाइनस* (समुद्री-अर्चिन) *एंटीडोन* (समुद्री लिली) *कुकुमेरिया* (समुद्री ककर्टी) तथा *ओफीयूरा* (भंगुर तारा)

4.2.10 संघ हेमीकार्डेटा

इन्हें हेमीकॉर्डेटा पहले कशेरुकी संघ में एक उप संघ के रूप में रखा गया था; लेकिन अब इसे अरज्जुकियों में एक अलग संघ के रूप में रखा गया है।

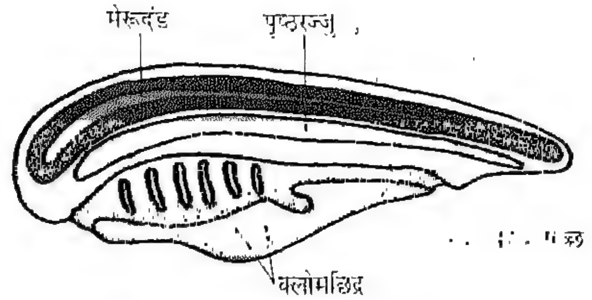
इस संघ के प्राणी **कृमि के समान** तथा समुद्री जीव हैं जिनका संगठन अंगतंत्र स्तर का होता है। ये सब द्विपार्श्व रूप से सममिति, त्रिकोरकी तथा प्रगुही प्राणी हैं। इनका शरीर बेलनाकार है तथा **शुंड**, तथा **कॉलर** लंबे **वक्ष** में विभाजित होता है (चित्र 4.15)। परिसंचरण-तंत्र बंद प्रकार का होता है। श्वसन क्लोम द्वारा होता है तथा शुंड ग्रंथि इसके उत्सर्जी अंग है। नर एवं मादा अलग होते हैं। निषेचन बाह्य होता है। परिवर्धन लार्वा (टॉनेरिया लार्वा) के द्वारा (अप्रत्यक्ष) होता है।

उदाहरण– *बैलैनोग्लोसस* तथा *सैकोग्लोसस*

चित्र 4.15 बेलैनोग्लोसस

4.2.11 संघ– कॉर्डेटा (रज्जुकी)

कशेरुकी संघ के प्राणियों में तीन मूलभूत लक्षण –**पृष्ठ रज्जु, पृष्ठ खोखली तंत्रिका-रज्जु** तथा युग्मित ग्रसनी **क्लोम छिद्र** पाए जाते हैं। ये सब द्विपार्श्वत: सममित त्रिकोरकी तथा प्रगुही प्राणी हैं। इनमें अंग तंत्र स्तर का संगठन पाया जाता है। इसमें गुदा-पश्च पुच्छ तथा बंद परिसंचरण-तंत्र होता है (चित्र 4.16)। सारणी 4.1 अरज्जुकी एवं रज्जुकी में विशिष्ट लक्षणों की तुलना।



चित्र 4.16 रज्जुकी की विशिष्टताएं

सारणी 4.1 अरज्जुकी एवं रज्जुकी में विशिष्ट लक्षणों की तुलना।

	रज्जुकी	अरज्जुकी
1	पृष्ठ रज्जु उपस्थित होता है।	पृष्ठ रज्जु अनुपस्थित होता है।
2	केंद्रीय तंत्रिका-तंत्र, पृष्ठीय एवं खोखला तथा एकल होता है	केंद्रीय तंत्रिका-तंत्र अधरतल में, ठोस एवं दोहरा होता है।
3	ग्रसनी में क्लोम छिद्र पाए जाते हैं।	क्लोम छिद्र अनुपस्थित होते हैं।
4	हृदय अधर भाग में होता है।	हृदय पृष्ठ भाग में होता है (अगर उपस्थित है)
5	एक गुदा-पश्च पुच्छ उपस्थित होती है।	गुदा-पश्चपुच्छ अनुपस्थित होती है।

संघ कॉर्डेटा तीन उपसंघों में विभाजित किया गया है– **यूरोकॉर्डेटा या ट्यूनिकेटा, सेफैलोकॉर्डेटा** तथा **वर्टीब्रेटा।**

उपसंघ यूरोकॉर्डेटा तथा सेफैलोकॉर्डेटा को सामान्यत: प्रोटोकॉर्डेटा कहते हैं (चित्र 4.17)। ये सभी समुद्री प्राणी हैं। यूरोकॉर्डेटा में पृष्ठरज्जु केवल लार्वा की पूंछ में पाई जाती है, जबकि सेफेलोकॉर्डेटा में पृष्ठ रज्जु सिर से पूंछ तक फैली रहती है जो जीवन के अंत तक बनी रहती है।

उदाहरण– यूरोकॉर्डेटा– *एसिडिया, सैल्पा, डोलिओलम*

सेफैलोकॉर्डेटा– *ब्रैंकिओस्टोमा* (एम्फीऑक्सस या लैंसलेट)

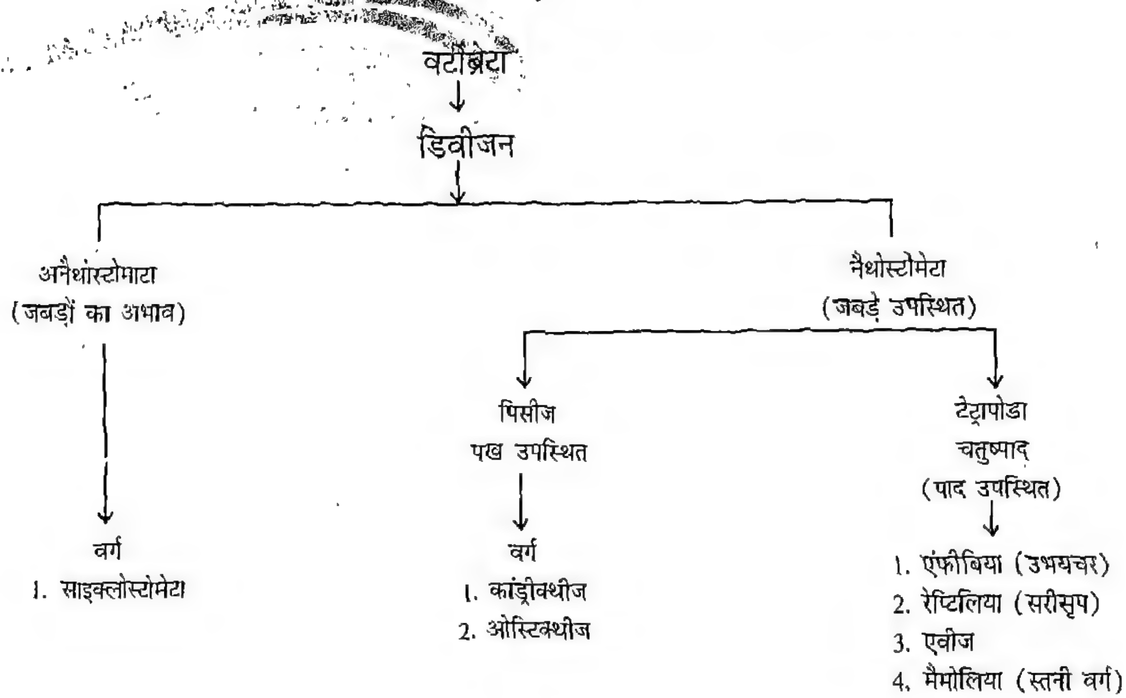


चित्र 4.17 एसिडिया

कशेरुकी संघ के प्राणियों में पृष्ठ रज्जु भ्रूणीय अवस्था में पाई जाती है। वयस्क अवस्था में पृष्ठरज्जु अस्थिल अथवा **उपास्थिल मेरुदंड** में परिवर्तित हो जाती है। कशेरुकी रज्जुकी भी हैं, किन्तु सभी रज्जुकी, कशेरुकी नहीं होते। रज्जुकी के मुख्य लक्षण के अतिरिक्त कशेरुकी में दो-तीन अथवा चार प्रकोष्ठ वाला पेशीय अधर हृदय होता है। वृक्क उत्सर्जन तथा जल संतुलन का कार्य करते हैं तथा पख

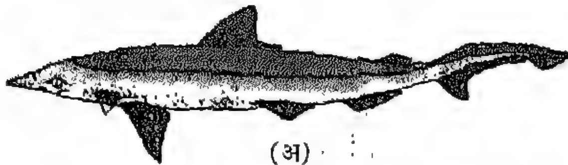
(फिन) या पाद के रूप में दो जोड़ी युग्मित उपांग होते हैं।

उपसंघ वर्टीब्रेटा को पुन: निम्न उपवर्ग में विभाजित किया गया है–

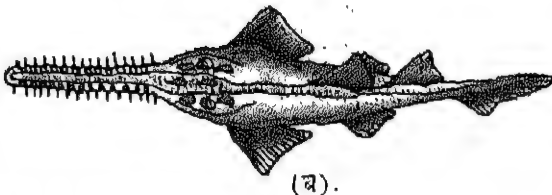




चित्र 4.18 जबड़ा रहित कशेरुकी-पेट्रोमाइजॉन



(अ)



(ब).

चित्र 4.19 कॉन्ड्रीक्थीज मछलियों के उदाहरण:
(अ) स्कॉलियोडोन (कुत्तामछली)
(ब) प्रीस्टिस (आरामछली)

4.2.11.1 वर्ग– साइक्लोस्टोमेटा

साइक्लोस्टोमेटा वर्ग के सभी प्राणी कुछ मछलियों के बाह्य परजीवी होते हैं। इसका शरीर लंबा होता है, जिसमें श्वसन के लिए 6-15 जोड़ी **क्लोमछिद्र** होते हैं। साइक्लोस्टोम में बिना जबड़ों का चूषक तथा वृत्ताकार मुख होता है (चित्र 4.18)। इसके शरीर में शल्क तथा युग्मित पखों का अभाव होता है। कपाल तथा मेरुदंड उपास्थिल होता है। परिसंचरण-तंत्र बंद प्रकार का है। साइक्लोस्टोम समुद्री होते हैं; किंतु जनन के लिए अलवणीय जल में प्रवास करते हैं। जनन के कुछ दिन के बाद वे मर जाते हैं। इसके लार्वा कायांतरण के बाद समुद्र में लौट जाते हैं।

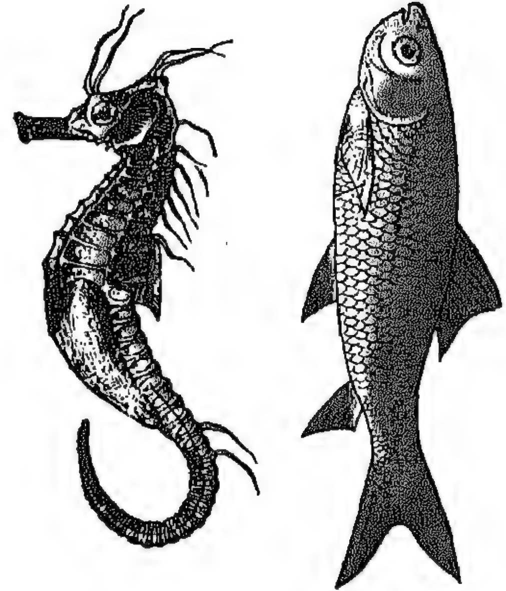
उदाहरण– *पेट्रोमाइजॉन* (लैम्प्रे) तथा *मिक्सीन* (हैग फीश)

4.2.11.2 वर्ग कोंड्रीक्थीज

ये धारारेखीय शरीर के समुद्री प्राणी हैं तथा इसका अंत कंकाल उपास्थिल है। (चित्र 4.19) मुख अधर पर स्थित होता है। **पृष्ठ रज्जु चिरस्थाई** होती है। क्लोम-छिद्र अलग

अलग होते हैं तथा **प्रच्छद** (ऑपरकुलम) से ढके नहीं होते। त्वचा दृढ़ एवं सूक्ष्म **पट्टाभ शल्कयुक्त** होती है। पट्टाभ दांत पट्टाभ शल्क के रूप में रूपांतिरत और पीछे की ओर मुड़े दंत होते हैं। इनके जबड़े बहुत शक्तिशाली होते हैं। ये सब मछलियां हैं। वायु कोष की अनुपस्थिति के कारण ये डूबने से बचने के लिए लगातार तैरते रहते हैं। हृदय दो प्रकोष्ठ वाला होता है, जिसमें एक अलिंद तथा एक निलय होता है। इनमें से कुछ में **विद्युत अंग** होते हैं (*टॉरपीडो*) तथा कुछ में **विष दंश** (*ट्रायगोन*) होते हैं। ये सब **असमतापी** (पोइकिलोथर्मिक) हैं, अर्थात् इनमें शरीर का ताप नियंत्रित करने की क्षमता नहीं होती है। नर तथा मादा अलग होते हैं। नर में श्रोणि पख में आलिंगक (क्लेस्पर) पाए जाते हैं। निषेचन आंतरिक होता है तथा अधिकांश जरायुज होते हैं।

उदाहरण– *स्कॉलियोडोन* (कुत्ता मछली) *प्रीस्टिस* (आरा मछली) *कारकेरोडोन* (विशाल सफेद शार्क) *ट्राइगोन* (व्हेल शार्क)



(अ) (ब)

चित्र 4.20 अस्थिल मछलियों के उदाहरण: समुद्री घोड़ा (ब) कतला

4.2.11.3 वर्ग ओस्टिकथीज

इस वर्ग की मछलियां लवणीय तथा अलवणीय दोनों प्रकार के जल में पाई जाती हैं। इनका अंत: कंकाल अस्थिल होता है (चित्र 4.20)। इनका शरीर धारारेखित होता है। मुख अधिकांशत: अग्र सिरे के अंत में होता है। इनमें चार जोड़ी क्लोम छिद्र दोनों ओर **प्रच्छद** (ऑपरकुलम) से ढके रहते हैं। त्वचा साइक्लोयड, टीनोयोड शल्क से ढकी रहती है। इनमें **वायु कोष** उपस्थित होता है। जो उत्पलावन में सहायक है। हृदय दो प्रकोष्ठ का होता है (एक अलिंद तथा एक निलय) ये सभी असमतापी होते हैं। नर तथा मादा अलग अलग होते हैं। ये अधिकांशत: अंडज होते हैं। निषेचन प्राय: बाह्य होता है। परिवर्धन प्रत्यक्ष होता है।

उदाहरण: समुद्री-*एक्सोसिटस* (उड़न मछली) *हिपोकेम्पस* (समुद्री घोड़ा) *अलवणीयलेबिओ* (रोहु), *कत्ला*, *कलेरियस* (मांगुर) एक्वोरियम *बेटा* (फाइटिंग फिश), *पेट्रोफ्इसम* (एंगज मछली)



(अ)

(ब)

चित्र 4.21 उभयचर के उदाहरण: (अ) सैलामेंडर (ब) मेंढक

4.2.11.4 वर्ग एंफिबिया (उभयचर)

जैसा कि नाम से इंगित है, (ग्रीक एम्फी-दो + बायोस-जीवन) कि उभयचर जल तथा स्थल दोनों में रह सकते हैं (चित्र 4.21)। इनमें अधिकांश में दो जोड़ी पैर होते हैं। शरीर **सिर** तथा **धड़** में विभाजित होता है। कुछ में पूंछ उपस्थित होती है। उभयचर की त्वचा नम (शल्क रहित) होती है, नेत्र पलक वाले होते हैं। बाह्य

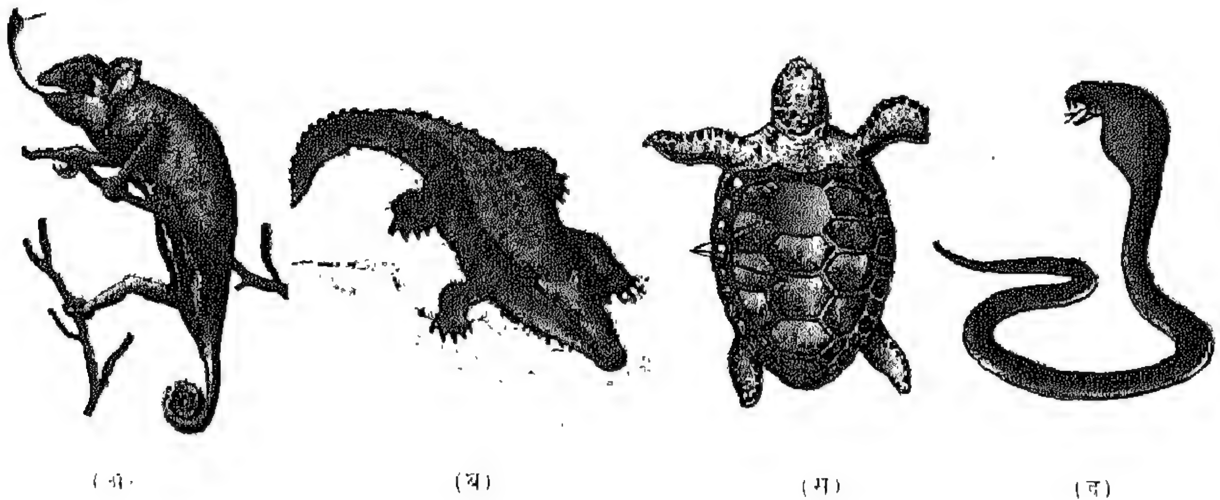
कर्ण की जगह **कर्णपटल** पाया जाता है। आहार नाल, मूत्राशय तथा जनन पथ एक कोष्ठ में खुलते हैं जिसे **अवस्कर** कहते हैं और जो बाहर खुलता है। श्वसन क्लोम, फुप्फुस तथा त्वचा के द्वारा होता है। हृदय तीन प्रकोष्ठ का बना होता है। (दो अलिंद तथा एक निलय)। ये असमतापी प्राणी है। नर तथा मादा अलग आलग होते हैं। निषेचन बाह्य होता है। ये अंडोत्सर्जन करते हैं तथा विकास परिवर्धन प्रत्यक्ष अथवा लार्वा के द्वारा होता है।

उदाहरण- *बूफो* (टोड), *राना टिग्रीना* (मेंढक), *हायला* (वृक्ष मेंढक) *सैलेमेन्ड्रा* (सैलामेंडर) *इक्थियोफिस* (पादरहित उभयचर)

4.2.11.5 वर्ग सरीसृप

सरीसृप नाम प्राणियों के रेंगने या सरकने के द्वारा गमन के कारण है (*लैटिन* शब्द *रेपेरे* अथवा *रेपटम* रेंगना या सरकना)। ये सब अधिकांशत: स्थलीय प्राणी हैं, जिनका शरीर शुष्क शल्क युक्त त्वचा से ढका रहता है। इसमें किरेटिन द्वारा निर्मित बाह्य त्वचीय **शल्क** या **प्रशल्क** पाए जाते हैं (चित्र 4.22)। इनमें बाह्य कर्ण छिद्र नहीं पाए जाते हैं। कर्णपटल बाह्य कान का प्रतिनिधित्व करता है। दो जोड़ी पाद उपस्थित हो सकते हैं। हृदय सामान्यत: तीन प्रकोष्ठ का होता है। लेकिन मगरमच्छ में चार प्रकोष्ठ का होता है। सरीसृप असमतापी होते हैं। सर्प तथा छिपकली अपनी शल्क को त्वचीय केंचुल के रूप में छोड़ते हैं। लिंग अलग-अलग होते हैं। निषेचन आंतरिक होता है। ये सब अंडज हैं तथा परिवर्धन प्रत्यक्ष होता है।

उदाहरण *किलोन* (टर्टल), *टेस्ट्यूडो* (टोरटॉइज), *केमलियॉन* (वृक्ष छिपकली) *केलोटस* (बगीचे की छिपकली) *ऐलीगेटर* (ऐलीगेटर), *क्रोकोडाइलस* (घड़ियाल), *हैमीडेक्टायलस* (घरेलू छिपकली) जहरीले सर्प *नाजा* (कोबरा), *बंगैरस* (क्रेत), *वाइपर*

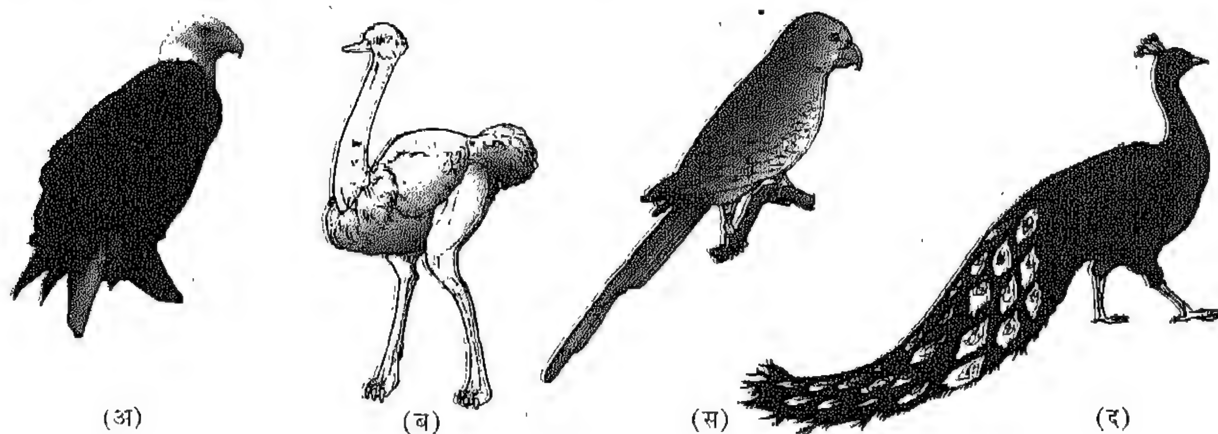


चित्र 4.22 सरीसृप: (अ) वृक्ष छिपकली (ब) घड़ियाल (स) कछुआ (किलोन) (द) नाग (साँप)।

4.2.11.6 वर्ग एवीज (पक्षी)

एवीज का मुख्य लक्षण शरीर के ऊपर **पंखों** की उपस्थिति तथा उड़ने की क्षमता है (कुछ नहीं उड़ने वाले पक्षी जैसे ऑस्ट्रिच-शुतुरमुर्ग को छोड़कर)। इनमें **चोंच** पाई जाती है (चित्र 4.23)। अग्रपाद रूपांतरित होकर **पख** बनाते हैं। पश्चपाद में सामान्यत: **शल्क** होते हैं जो रूपांतरित होकर चलने, तैरने तथा पेड़ों की शाखाओं को पकड़ने में सहायता करते हैं। त्वचा शुष्क होती है, पूंछ में तेल ग्रंथि को छोड़कर कोई और त्वचा ग्रंथि नहीं पाई जाती। अंत:कंकाल की लंबी अस्थियाँ खोखली होती हैं तथा **वायुकोष** युक्त होती हैं। इनके पाचन पथ में सहायक संरचना क्रॉप तथा पेषणी होती हैं। हृदय पूर्ण चार प्रकोष्ठ का बना होता है। यह **समतापी** (होमियोथर्मस) होते हैं, अर्थात् इनके शरीर का ताप नियत बना रहता है। श्वसन फुप्फुस के द्वारा होता है। वायु कोष फुप्फुस से जुड़कर सहायक श्वसन अंग का निर्माण करता है।

उदाहरण *कार्वस* (कौआ), *कोलुम्बा* (कपोत), *सिटिकुला* (तोता), *स्ट्रयिओ* (ऑस्ट्रिच), *पैवो* (मोर), *एटीनोडायटीज* (पेंग्विन), *सूडोगायपस* (गिद्ध)

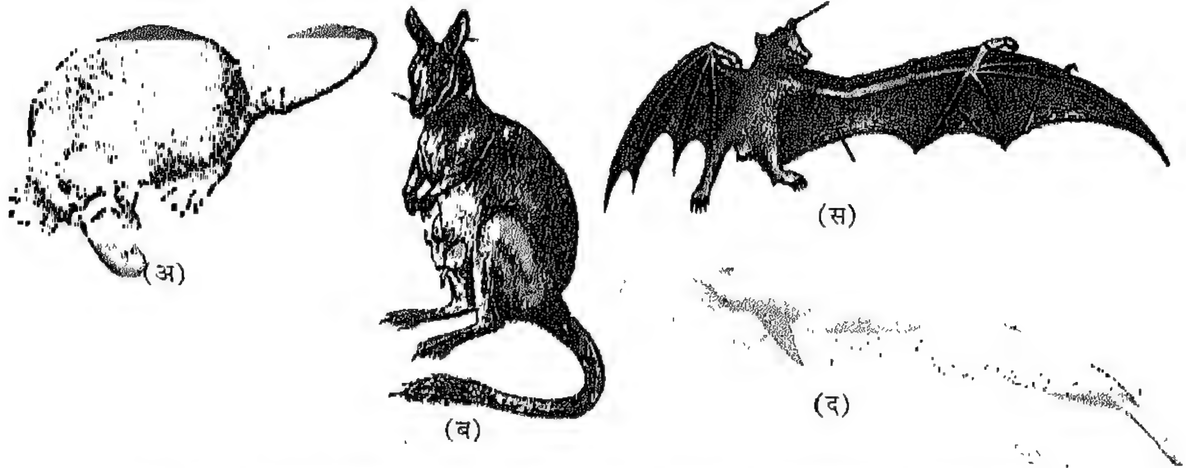


चित्र 4.23 कुछ पक्षी: (अ) चील (ब) शुतुरमुर्ग (स) तोता (द) मोर

4.2.11.7 वर्ग स्तनधारी

इस वर्ग के प्राणी सभी प्रकार के वातावरण में पाए जाते हैं जैसे ध्रुवीय ठंडे भाग, रेगिस्तान, जंगल घास के मैदान तथा अंधेरी गुफाओं में। इनमें से कुछ में उड़ने तथा पानी में रहने का अनुकूलन होता है। स्तनधारियों का सबसे मुख्य लक्षण दूध उत्पन्न करने वाली ग्रंथि (**स्तन ग्रंथि**) है जिनसे बच्चे पोषण प्राप्त करते हैं। इनमें दो जोड़ी पाद होते हैं, जो चलने-दौड़ने, वृक्ष पर चढ़ने के लिए, बिल में रहने, तैरने अथवा उड़ने के लिए अनुकूलित होते हैं (चित्र 4.24)। इनकी त्वचा पर **रोम** पाए जाते हैं। बाह्य **कर्णपल्लव** पाए जाते हैं। जबड़े में विभिन्न प्रकार के दाँत, जो मसूड़ों की गर्तिका में लगे होते हैं। हृदय चार प्रकोष्ठ का होता है। श्वसन की क्रिया पेशीय डायफ्राम के द्वारा होती है। लिंग अलग होते हैं तथा निषेचन आंतरिक होता है। कुछ को छोड़कर सभी स्तनधारी बच्चे को जन्म देते हैं (जरायुज) तथा परिवर्धन प्रत्यक्ष होता है।

उदाहरण– अंडज-*औरनिथोरिंकस*, (प्लैटीपस या डकबिल) जरायुज– *मैक्रोपस* (कंगारु), *टैरोपस* (प्लाइंग फौक्स), *केमिलस* (ऊँट), *मकाका* (बंदर), *रैट्स* (चूहा), *केनिस* (कुत्ता), *फेसिस* (बिल्ली), *एलिफस* (हाथी), *इक्वुस* (घोड़ा), *डेलिफिनस* (सामान्य डॉलफिन), *वैलेनिप्टेरा* (ब्लू व्हेल), *पैंथरा टाइग्रिस* (बाघ), *पैंथरा लियो* (शेर)



चित्र 4.24 कुछ स्तनधारी : (अ) डकबिल (ब) कंगारू (स) चमगादड़ (द) ब्लूव्हेल

सारणी 4.2 प्राणि-जगत के विभिन्न संघों के प्रमुख लक्षण

संघ	संगठन की स्तर	सममिति	गुहा	खंडीभवन	पाचन तंत्र	परिसंचरण तंत्र	श्वसन तंत्र	विशेष लक्षण
पोरिफेरा	कोशिक	अनेक प्रकार की	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अनुपस्थित	शरीर में छिद्र तथा नाल तंत्र
सिलेन्ट्रेटा या नाइडेरिया	ऊतक	अरीय	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अपूर्ण	अनुपस्थित	अनुपस्थित	निडोब्लस्ट (दंश) कोशिका उपस्थित
टीनोफोरा	ऊतक	अरीय	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अपूर्ण	अनुपस्थित	अनुपस्थित	कंकत चलन के लिए पट्टिकाएं
प्लेटीहेल्मि - न्थीज	अंग तथा अंगतंत्र	द्विपार्श्व	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अपूर्ण	अनुपस्थित	अनुपस्थित	चपटा शरीर, चूषक
ऐस्केलमि- -थीज	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	कूट प्रगुही	अनुपस्थित	पूर्ण	अनुपस्थित	अनुपस्थित	प्रायः कृमिरूप, लंबे
ऐनेलिडा	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	प्रगुही	उपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	शरीर वलयों की तरह खंडित
आर्थ्रोपोडा	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	प्रगुही	उपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	बाह्य कंकाल काइटिनी संधिपाद

मोलस्का	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	प्रगुही	अनुपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	बाह्य कंकाल कवच प्राय: उपस्थित
एकाइनोडर्मेटा	अंगतंत्र	अरीय	प्रगुही	अनुपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	जल संवहनतंत्र, अरीय सममित
हेमीकॉर्डेटा	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	प्रगुही	अनुपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	कृमि के समान, शुंड, कॉलर तथा धड़ उपस्थित
कॉर्डेटा (रज्जुकी)	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	प्रगुही	उपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	पृष्ठ-रज्जु, खोखली पृष्ठ तंत्रिका रज्जु, क्लोम छिद्र तथा पाद, अथवा पख

सारांश

मूलभूत लक्षण जैसे संगठन के स्तर, सममिति, कोशिका संगठन, गुहा, खंडीभवन; पृष्ठरज्जु आदि प्राणि जगत के वर्गीकरण के आधार हैं। इन लक्षणों के अलावा कई ऐसे भी लक्षण हैं जो संघ या वर्ग के विशिष्ट लक्षण होते हैं।

पॉरीफेरा, जिसमें बहुकोशकीय प्राणी होते हैं, का कोशिकीय स्तर का संगठन तथा कशाभी कीपकोशिका (कोएनोसाइट) मुख्य लक्षण है। सीलेंटरेटा में स्पर्शक एवं दंशकोरक (निडोब्लास्ट) पाए जाते हैं। ये सामान्यतया: जलीय, स्थिर या स्वतंत्र तैरने वाले होते हैं। टीनोफोर लवणीय तथा कंकत पट्टिका वाले जीव होते हैं। प्लेटीहेल्मिंथीज (चपटे कृमि) प्राणियों का शरीर चपटी तथा द्विपार्श्व सममिति वाला होता है। परजीवी प्लेटीहेल्मिंथ में स्पष्ट चूषक और अंकुश होते हैं। ऐस्के लमिंथीज कूटप्रगुही वाले गोलाकृति प्राणी होते हैं।

ऐनेलिड प्राणी विखंडत: खंडित होते हैं, जिनमें प्रगुहा होती है, में बाह्य एवं अंत खंड एकीकृत एवं गुदा होते हैं। आर्थोपोडा प्राणि जगत का बड़ा समूह होता है जिसमें संधियुक्त पाद होता है। मोलस्का का कोमल शरीर के ल्सियमी कवच से ढका होता है तथा बाहरी कंकाल काइटिन का होता है। ऐकाइनोडर्म की त्वचा कांटेदार होती है। इन प्राणियों का मुख्य लक्षण जल संवहन तंत्र होता है। हेमीकॉर्डेटा कृमि की तरह लवणीय प्राणी होते हैं। इन प्राणियों का शरीर बेलनाकार होता है जिसमें शुंड, कालर एवं वक्ष होते हैं।

संघ कॉर्डेटा के प्राणियों में पृष्ठरज्जु (नोटोकार्ड) या तो प्रारंभिक भ्रूणीय अवस्था में अथवा जीवन की किसी अवस्था में पाया जाता है। इसके दूसरे सामान्य लक्षण पृष्ठीय, खोखली तंत्रिका-रज्जु तथा क्लोम छिद्र होते हैं। कुछ कशेरुकी (प्राणियों में जबड़े का अभाव अग्नेथा) तथा अन्य में जबड़े (नैथोस्टोमेटा) मिलते हैं। साइक्लोस्टोमेटा ऐग्नेथा का प्रतिनिधित्व करता है। ये अत्यंत प्राचीन कॉर्डेटा होते हैं तथा मछलियों के बाह्य परजीवी होते हैं।

नैथोस्टोमेटा को दो अधिवर्ग में विभाजित किया गया है– पिसीज तथा टेट्रापोडा। वर्ग कोंड्रिक्थीज तथा ऑस्टिक्थीज का चलन पख द्वारा होता हैं तथा ये पिसीज के अंतर्गत हैं। कोंड्रिक्थीज लवणीय मछलियों में वहिकंकाल उपास्थिल होता है। उभयचर (एंफिबिया), सरीसृप (रेप्टीलिया), पक्षिवर्ग (एवीज) तथा स्तनधारी (मैमेलिया) वर्गो में दो जोड़े पाद होते हैं तथा ये टेट्रापोडा के अंतर्गत रखे गए हैं। उभयचर थल

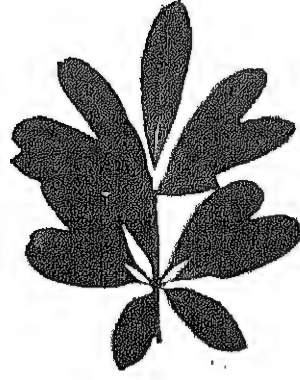
एव जल दोनों में पाए जाते है। सरीसृप की त्वचा सूखी एव करेटिनित होती है। सांपों में पाद अनुपस्थित रहते हैं। मछलियाँ, उभयचर तथा सरीसृप असमतापी (अनियततापी) हैं। पक्षी समतापी जीव होते हैं तथा शरीर पर पंख होते हैं जो उड़ने में सहायता करते हैं। ये पंख रूपांतरित अग्रपाद हैं। पश्चपाद चलने, तैरने, टिकने पक्षिसाद या आलिंगन के लिए अनुकूलित होते हैं। स्तनधारियों के विशिष्ट लक्षणों में स्तन ग्रंथि एवं त्वचा पर बाल प्रमुख हैं। ये सामान्यतया जरायुज (बच्चे देने वाले) होते हैं।

अभ्यास

1. यदि मूलभूत लक्षण ज्ञात न हों तो प्राणियों के वर्गीकरण में आप क्या परेशानियाँ महसूस करेंगे?
2. यदि आपको एक नमूना (स्पेसिमेन) दे दिया जाए तो वर्गीकरण हेतु आप क्या कदम अपनाएंगे?
3. देहगुहा एवं प्रगुहा का अध्ययन प्राणियों के वर्गीकरण में किस प्रकार सहायक होता है?
4. अंत: कोशिकीय एवं बाह्य कोशिकीय पाचन में विभेद करें।
5. प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष परिवर्धन में क्या अंतर है?
6. परजीवी प्लेटिहेल्मिंथीज के विशेष लक्षण बताएं।
7. आर्थोपोडा प्राणि-समूह का सबसे बड़ा वर्ग है, इस कथन के प्रमुख कारण बताएं।
8. जल संवहन-तंत्र किस वर्ग के मुख्य लक्षण हैं?
   (अ) पोरीफेरा (ब) टीनोफोरा (स) एकाइनोडर्मेटा (द) कॉर्डेटा
9. सभी कशेरुकी (वर्टिब्रेट्स) रज्जुकी (कॉर्डेटस) है, लेकिन सभी रज्जुकी कशेरुकी नहीं हैं। इस कथन को सिद्ध करें।
10. मछलियों में वायु-आशय (एयर ब्लेडर) की उपस्थिति का क्या महत्व है?
11. पक्षियों में उड़ने हेतु क्या क्या रूपांतरण हैं?
12. अंडजनक तथा जरायुज द्वारा उत्पन्न अंडे या बच्चे संख्या में बराबर होते हैं? यदि हाँ तो क्यों? यदि नहीं तो क्यों?
13. निम्नलिखित में से शारीरिक खंडीभवन किसमें पहले देखा गया?
    (अ) प्लेटिहेल्मिंथीज (ब) एस्केलमिंथीज (स) ऐनेलिडा (द) आर्थ्रोपोडा
14. निम्न का मिलान करें-

(i) प्रच्छद	(अ) टीनेफोरा
(ii) पार्श्वपाद	(ब) मोलस्का
(iii) शल्क	(स) पोरीफोरा
(iv) कंकत पट्टिका (काम्बप्लेट)	(द) रेप्टेलिया
(v) रेडूला	(ई) ऐनेलिडा
(vi) बाल	(फ) साइक्लोस्टोमेटा एवं कॉन्ड्रीक्थीज
(vii) कीपकोशिका (कोएनोसाइट)	(ग) मैमेलिया
(viii) क्लोमछिद्र	(घ) ऑस्टिक्थीज

15. मनुष्यों पर पाए जाने वाले कुछ परजीवों के नाम लिखें।



इकाई दो

पादप एवं प्राणियों में संरचनात्मक संगठन

पृथ्वी पर जीवन के विविध स्वरूपों का वर्णन केवल अवलोकन के आधार पर किया गया, जोकि पहले खुली आँखों से बिना किसी यांत्रिक मदद से था और बाद में आवर्धक लेंस और सूक्ष्मदर्शी यंत्र द्वारा किया गया। इस वर्णन में व्यापक तौर पर बाह्य एवं आंतरिक संरचनात्मक विशिष्टता को ध्यान में रखा गया। इसके अतिरिक्त अवलोकनीय तथा इंद्रियगोचर (अवबोधक) जीवन प्रतिभासों को भी वर्णन के एक भाग के रूप में आलेखित किया गया। प्रायोगिक जीव विज्ञान और अधिक स्पष्ट रूप में शरीर क्रिया विज्ञान या शरीर विज्ञान के पूर्णतः स्थापित होने से पहले प्रकृति विज्ञानियों ने केवल जीव विज्ञान के एक हिस्से का वर्णन किया था। यद्यपि, पर्याप्त समय तक जीव विज्ञान भी प्राकृतिक इतिहास के रूप में रहा। विस्तृत विवरण की दृष्टि से यह वर्णन आश्चर्यपूर्ण था। हालांकि यह एक छात्र की प्रारंभिक प्रतिक्रिया में निरस किस्म की हो सकती है, लेकिन यह ध्यान में रखने कि विस्तृत विवरण को बाद के दिनों में न्युनकारी जीव विज्ञान द्वारा प्रयुक्त किया गया योग्य है जो वैज्ञानिकों का ध्यान जीव प्रक्रमों पर जीवन के स्वरूप एवं संरचना से कहीं अधिक खींचा। अतः यह वर्णन शरीर विज्ञान या विकासीय जीव विज्ञान के शोधप्रश्नों के गठन में बहुत ही सार्थक एवं मददगार साबित हुए। इस इकाई के अनुगामी अध्यायों में पादपों एवं प्राणियों के संरचनात्मक संगठन के बारे में बताया जाएगा जिसमें शरीर क्रिया वैज्ञानिक एवं व्यवहारिक प्रत्याभासों का संरचनात्मक आधार भी शामिल होगा। सुविधा की दृष्टि से आकारिकी एवं शारीर विशिष्टताओं का वर्णन पादपों एवं प्राणियों के लिए अलग-अलग किया गया है।


कैथेराइन एसाव
(1898 - 1997)

कैथेराइन एसाव का जन्म 1898 में यूक्रेन में हुआ था। आपने रूस और जर्मनी में कृषि विज्ञान पर अध्ययन किया और संयुक्त राज्य अमेरिका से 1931 में डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की थी। आपने अपने प्रारंभिक प्रकाशनों में यह बताया था कि कर्ली टाप वाइरस पौधे में आहार-चालन या फलोएम ऊतक द्वारा फैलता है। डा॰ एसाव की 1954 में प्रकाशित *पादप शरीर (प्लांट एनोटोमी)* ने एक परिवर्तनात्मक एवं विकासात्मक उपागम को अपनाया जिससे पादप संरचना के बारे में समझ व्यापक हुई, तथा पूरे विश्वभर में अथाह प्रभाव छोड़ा। अर्थात् सीधे सीधे इस विशेष विज्ञान में पुनर्जागरण ला दिया।

सन् 1960 में, कैथेराइन एसाव की *एनाटॉमी ऑफ सीड प्लांटस* (बीज पादपों का शारीर) प्रकाशित हुई। इसे वेबेस्टर ऑफ प्लांट बॉयलोजी एवं इनसाइक्लोपीडिया (विश्व कोश) के रूप में संदर्भित किया गया था। सन् 1957 में, आपको नेशनल ऐकेडिमीक ऑफ साइंसेज के लिए चुना गया और आप इस सम्मान को पाने वाली 6वीं महिला बनीं। इस सम्मानीय पुरस्कार के अतिरिक्त आपने यू.एस.ए. के राष्ट्रपति जार्ज बुश से 1989 में नेशनल मेडल आफ साइंस भी प्राप्त किया।

जब 1997 मे केथेराइन एसाव मृत्यु की गोद में समा गए तब मिसूरी बॉटेनकल गार्डेन, एनाटॉमी एवं मार्फोलाजी के निदेशक पीटर रैवेन ने याद करते हुए कहा था, 'वह 99 वर्षों की आयु तक पादप जीवविज्ञान के क्षेत्र में' 'परिपूर्ण प्रभुत्व' युक्त बनी रहीं।

अध्याय 5

पुष्पी पादपों की आकारिकी

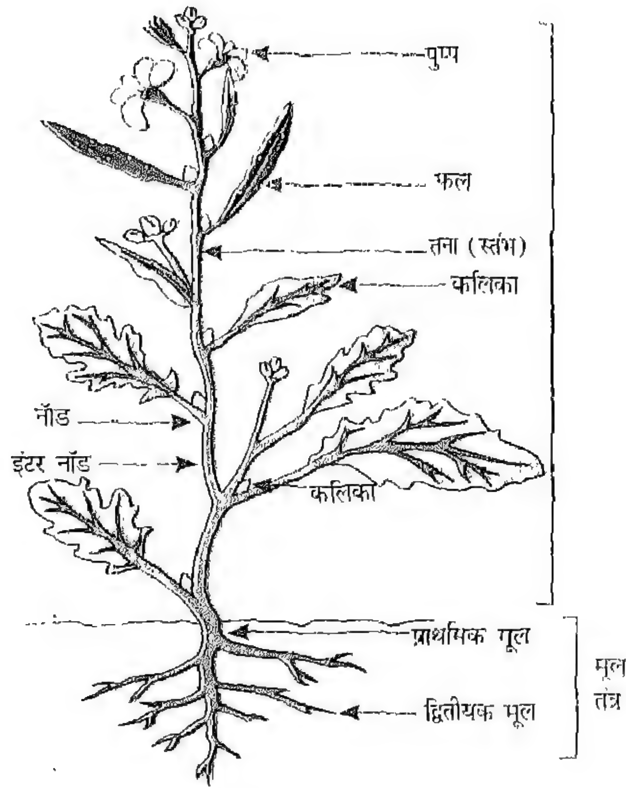
यद्यपि एंजियोस्पर्म की **आकारिकी** अथवा बाह्य संरचना में बहुत विविधता पाई जाती है फिर भी इन उच्च पादपों का विशाल समूह हमें अपनी ओर आकर्षित करता है। इन उच्च पादपों में मूल, स्तंभ, पत्तियाँ, पुष्प तथा फलों की उपस्थिति इसका मुख्य अभिलक्षण है।

अध्याय 2 तथा 3 में हमने पौधों के वर्गीकरण के विषय में अध्ययन किया है जो आकारिकी तथा अन्य अभिलक्षणों पर आधारित थे। वर्गीकरण तथा उच्च पादपों को भली-भांति समझने के लिए (अथवा सभी जीवों के लिए) हमें संबंधित मानक वैज्ञानिक शब्दावली तथा मानक परिभाषाओं के ज्ञान की आवश्यकता होती है। हमें विभिन्न पादपों की विविधता, जो पौधों में पर्यावरण के अनुकूलन का परिणाम है जैसे विभिन्न आवासों के प्रति अनुकूलन, संरक्षण, चढ़ना तथा संचयन, आदि के विषय में भी ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता होती है।

यदि आप किसी खरपतवार को उखाड़ें तो आप देखेंगे कि उन सभी में मूल, तना तथा पत्तियाँ होती हैं। उनमें फूल तथा फल भी लगे हो सकते हैं। पुष्पी पादप का भूमिगत भाग मूल तंत्र जबकि ऊपरी भाग प्ररोह तंत्र होता है (चित्र 5.1)।

5.1 मूल

अधिकांश द्विबीजपत्री पादपों में मूलांकुर के लंबे होने से **प्राथमिक मूल** बनती है जो मिट्टी में उगती है। इसमें पार्श्वयी मूल होती हैं जिन्हें **द्वितीयक** तथा **तृतीयक मूल** कहते हैं। प्राथमिक मूल तथा इसकी शाखाएँ मिलकर **मूसला मूलतंत्र** बनाती हैं। इसका उदाहरण सरसों का पौधा है (चित्र 5.2 अ)। एकबीजपत्री पौधों में प्राथमिक मूल अल्पायु होती है और इसके स्थान पर अनेक मूल निकल जाती हैं। ये मूल तने के आधार से निकलती हैं। इन्हें **झकड़ा मूलतंत्र** कहते हैं। इसका उदाहरण गेहूँ का पौधा है (चित्र 5.2 ब)। कुछ

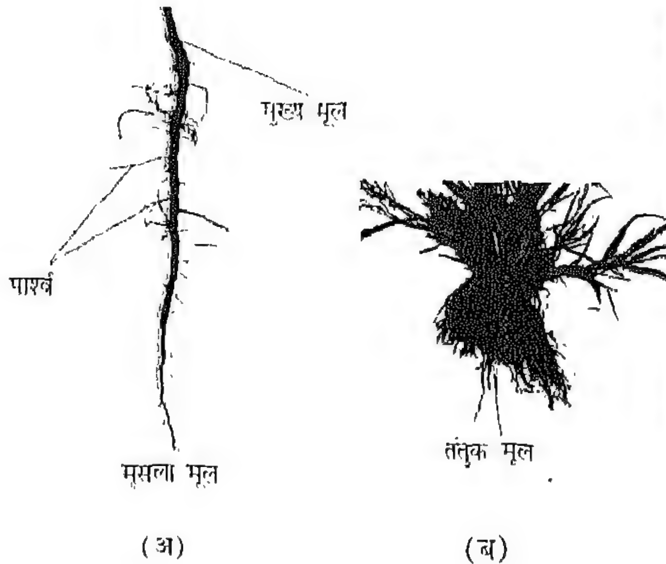


चित्र 5.1 पुष्पी पादप के भाग

पौधों जैसे घास तथा बरगद में मूल मूलांकुर की बजाय पौधे के अन्य भाग से निकलती हैं। इन्हें **अपस्थानिक मूल** कहते हैं (चित्र 5.2 स)। मूल तंत्र का प्रमुख कार्य मिट्टी से पानी तथा खनिज लवण का अवशोषण, पौधे को मिट्टी में जकड़ कर रखना, खाद्य पदार्थों का संचय करना तथा पादप नियमकों का संश्लेषण करना है।

5.1.1 मूल के क्षेत्र

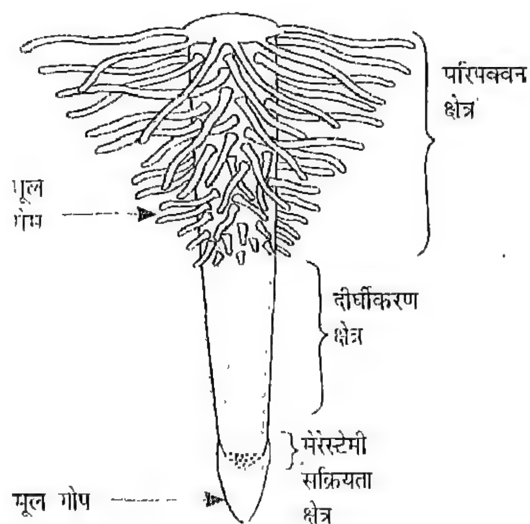
मूल का शीर्ष अंगुलित्त जैसे **मूल गोप** से ढका रहता है (चित्र 5.3)। यह कोमल शीर्ष की तब रक्षा करता है जब मूल मिट्टी में अपना रास्ता बना रही होती है। मूल गोप से कुछ मिलीमीटर ऊपर **मेरिस्टेमी क्रियाओं का क्षेत्र** होता है। इस क्षेत्र की कोशिकाएँ बहुत छोटी, पतली भित्ति वाली होती हैं तथा उनमें सघन प्रोटोप्लाज्म होता है। उनमें बार-बार विभाजन होता है। इस क्षेत्र में समीपस्थ स्थित कोशिकाएं शीघ्रता से लंबाई में बढ़ती हैं और मूल को लंबाई में बढ़ाती हैं। इस क्षेत्र को **दीर्घीकरण क्षेत्र** कहते हैं। दीर्घीकरण क्षेत्र की कोशिकाओं में





चित्र 5.2 विभिन्न प्रकार की जड़ें (अ) मूसला मूल (ब) तंतुक मूल (स) अपस्थानिक मूल

विविधता तथा परिपक्वता आती है। इसलिए दीर्घीकरण के समीप स्थित क्षेत्र को **परिपक्व क्षेत्र** कहते हैं। इस क्षेत्र से बहुत पतली तथा कोमल धागे की तरह. की संरचनाएँ निकलती हैं जिन्हें **मूलरोम** कहते हैं। ये मूल रोम मिट्टी से पानी तथा खनिज लवणों का अवशोषण करते हैं।



चित्र 5.3 मूल शीर्ष के क्षेत्र

5.1.2 मूल के रूपांतरण

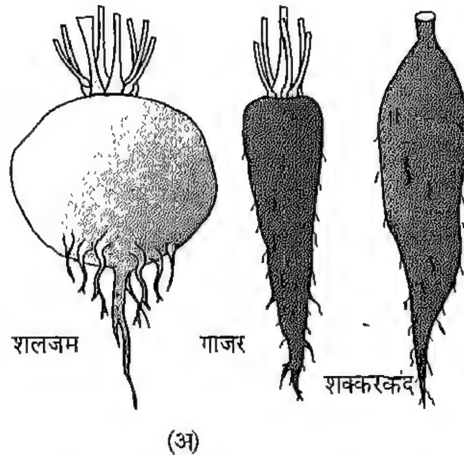
कुछ पादपों की मूल, पानी तथा खनिज लवण के अवशोषण तथा संवाहन के अतिरिक्त भी अन्य कार्यों को करने के लिए अपने आकार तथा संरचना में रूपांतरण कर लेती हैं। वे भोजन संचय करने के लिए, सहारे के लिए, श्वसन के लिए अपने आप को रूपांतरित कर लेती हैं (चित्र 5.4 तथा 5.5)। गाजर तथा शलजम की मूसला मूल तथा शकरकंद की अपस्थानिक मूल भोजन को संग्रहित करने के कारण फूल जाती हैं। क्या आप इसी प्रकार के कुछ अन्य उदाहरण दे सकते हैं? क्या आपको कभी देख कर यह आश्चर्य हुआ है कि बरगद से लटकती हुई संरचनाएँ क्या उसे सहारा देती हैं? इन्हें **प्रोप** रुट (सहारा देनी वाली मूल) कहते हैं। इसी प्रकार मक्का तथा गन्ने के तने में भी सहारा देने वाली मूल तने की निचली गाँठों से निकलती हैं। इन्हें **अवस्तभ मूल** कहते हैं। कुछ पौधों जैसे *राइजोफोरा*, जो अनूप क्षेत्रों में उगते हैं, में बहुत सी मूल भूमि से ऊपर वायु में निकलती हैं। ऐसी मूल को **श्वसन मूल** कहते हैं। ये श्वसन के लिए ऑक्सीजन प्राप्त करने में सहायक होती हैं।


चित्र 5.4 बरगद के वृक्ष को सहारे देने के लिए मूल में रूपांतरण

5.2 तना

ऐसे कौन से अभिलक्षण हैं जो तने तथा मूल में विभेद स्थापित करते हैं? तना अक्ष का ऊपरी भाग है जिस पर शाखाएँ, पत्तियाँ, फूल तथा फल होते हैं। यह अंकुरित बीज के भ्रूण के प्रांकुर से विकसित होता है। तने पर **गाँठ** तथा **पोरियाँ** होती हैं। तने के उस क्षेत्र को जहां पर पत्तियाँ निकलती है गांठ कहते हैं। ये गांठें अंतस्थ अथवा कक्षीय हो सकती हैं। जब तना शैशव अवस्था में होता है, तब वह प्राय: हरा होता है और बाद में वह काष्ठीय तथा गहरा भूरा हो जाता है।







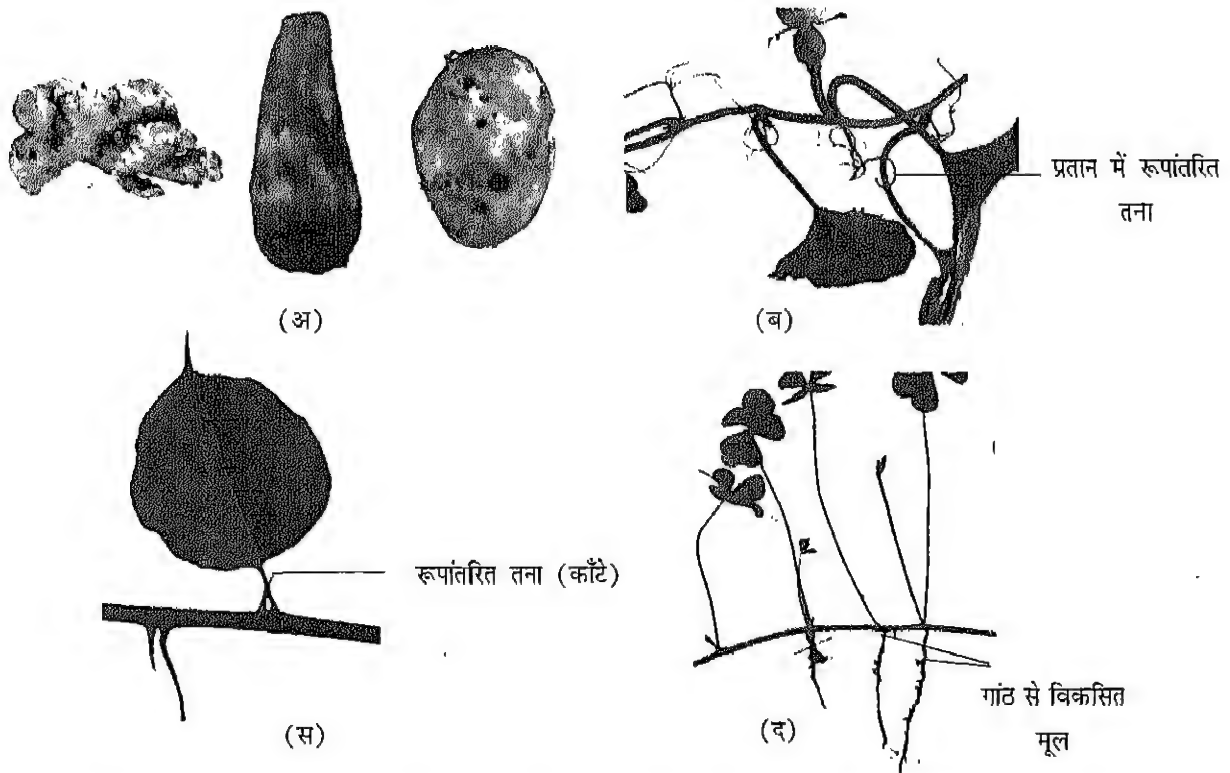
चित्र 5.5 राइजोफोरा में (अ) संग्रहण (ब) श्वसन के लिए मूल का रूपांतरण

तने का प्रमुख कार्य शाखाओं को फैलाना, पत्ती, फूल तथा फल को संभाले रखना है। यह पानी, खनिज लवण तथा प्रकाश संश्लेषी पदार्थों का संवहन करता है। कुछ तने भोजन संग्रह करने, सहारा तथा सुरक्षा देने और कायिक प्रवर्धन करने के भी कार्य संपन्न करते हैं।

5.2.1 तने का रूपांतरण

तने सदैव आशा के अनुसार प्ररूपी नहीं होते; वे विभिन्न कार्यों को संपन्न करने के लिए अपने आप को रूपांतरित कर लेते हैं (चित्र 5.6)। आलू, अदरक, हल्दी, जमीकंद, अरबी के भूमिगत तने भोजन संचय के लिए रूपांतरित हो जाते हैं। वृद्धि के लिए प्रतिकूल परिस्थितियों के समय ये चिरकालिक अंग की तरह कार्य करते हैं।

तने के **प्रतान** जो कक्षीय कली से निकलते हैं, पतले तथा कुंडलित होते हैं और पौधे को ऊपर चढ़ने में सहायता करते हैं, जैसे कद्दुवर्गीय सब्जी (घीया, खीरा, तरबूज आदि) तथा अंगूर लता (वाइन) तने की कक्षीय कलियाँ काष्ठीय, सीधे तथा **नुकीले कांटों** में रूपांतरित हो सकती हैं। कांटे बहुत से पौधों में होते हैं जैसे *सिट्रस*, *बोगेनविलिया*। ये पशुओं से पौधों को बचाते हैं। शुष्क क्षेत्रों के पौधे **चपटे तने** (ओपंशिया, केक्ट्स) अथवा गूदेदार सिलिंडिराकार (यूफॉरबिया) रचनाओं में रूपांतरित हो जाते हैं इनके तनों में क्लोरोफिल होता है और प्रकाश-संश्लेषण करते हैं। कुछ पौधों को भूमिगत तने जैसे घास तथा स्ट्रॉबैरी, आदि नई कर्म स्थिति (निश) में फैल जाते हैं और जब पुराने पौधे मर जाते हैं तब नये पौधे बनते हैं। पोदीना तथा चमेली जैसे पौधों में प्रमुख अक्ष के आधार से एक पार्श्व शाखा निकलती है और कुछ समय तक वायवीय वृद्धि करने के बाद मुड़कर जमीन को छूते हैं। *पिस्टिया* तथा *आइकोरनिया* जैसे कलीय पादपों में एक पार्श्वीय शाखा निकलती है जिसकी पोरियां छोटी होती हैं और जिसके प्रत्येक गांठ पर पत्तियों का झुंड तथा फूल का गुच्छा तथा *क्राइसेनिथमम* (गुलदाउदी) में



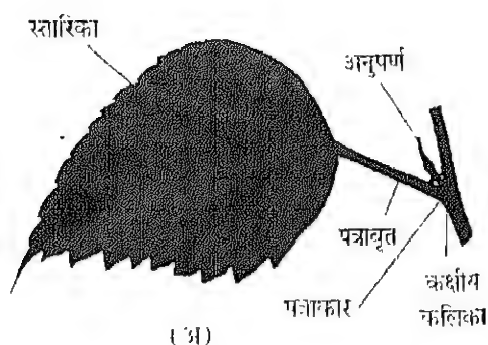
चित्र 5.6 (अ) संग्रहण (ब) सहारा (स) संरक्षण (द) कायिक प्रबर्धन तथा फैलने के लिए तने का रूपांतरण

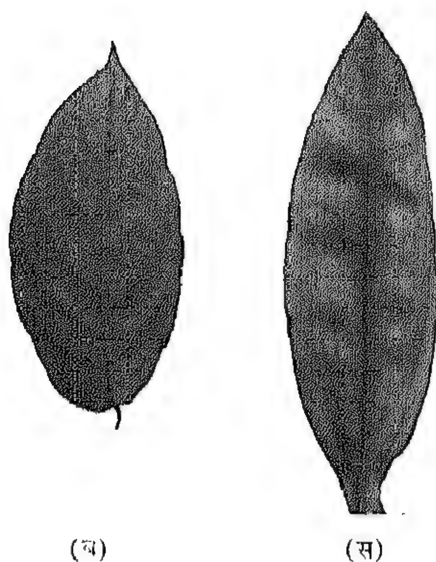
पार्श्वीय शाखाएँ आधार तथा भूमिगत प्रमुख तने से निकलती हैं और मिट्टी के नीचे क्षैतिज रूप से वृद्धि करती हैं और उसके बाद बाहर निकल आती हैं और पत्तियों युक्त प्ररोह बनाती हैं।

5.3 पत्ती

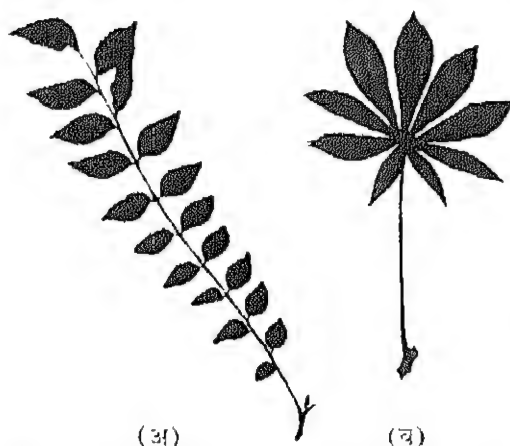
पत्ती पार्श्वीय, चपटी संरचना होती है जो तने पर लगी रहती है। यह गाँठ पर होती है और इसके कक्ष में कली होती है। **कक्षीय कली** बाद में शाखा में विकसित हो जाती हैं। पत्तियाँ प्ररोह के शीर्षस्थ मेरिस्टेम से निकलती हैं। ये पत्तियाँ अग्राभिसारी रूप में लगी रहती हैं। ये पौधों के बहुत ही महत्त्वपूर्ण कायिक अंग हैं, क्योंकि ये भोजन का निर्माण करती हैं।

एक प्ररूपी पत्ती के तीन भाग होते हैं- पर्णधार, पर्णवृंत तथा स्तरिका (चित्र 5.7 अ)। पत्ती **पर्णाधार** की सहायता से तने से जुड़ी रहती है और इसके आधार पर दो पार्श्व छोटी पत्तियाँ निकल सकती हैं जिन्हें अनुपर्ण कहते हैं। एकबीजपत्री में पर्णधार चादर की तरह फैलकर तने को पूरा अथवा आंशिक रूप से ढक लेता है। कुछ लेग्यूमी तथा कुछ अन्य पौधों में पर्णाधार फूल जाता है। ऐसे पर्णाधार को **पर्णवृंततल्प** (पल्वाइनस) कहते हैं। **पर्णवृंत** पत्ती को इस तरह सजाता है जिससे कि इसे अधिकतम सूर्य का प्रकाश मिल





चित्र 5.7 पत्ती की संरचना (अ) पत्ती के भाग (ब) जालिका शिराविन्यास (स) समानांतर शिराविन्यास



चित्र 5.8 संयुक्त पत्तियां (अ) पिच्छाकारी संयुक्त पत्ती (ब) हस्ताकार संयुक्त पत्ती

सके। लंबा पतला, लचीला पर्णवृंत स्तरिका को हवा में हिलाता रहता है ताकि ताजी हवा पत्ती को मिलती रहे। **स्तरिका** पत्ती का हरा तथा फैला हुआ भाग है जिसमें शिराएं तथा शिरिकाएँ होती हैं। इसके बीच में एक सुस्पष्ट शिरा होती है जिसे **मध्यशिरा** कहते हैं। शिराएँ पत्ती को दृढ़ता प्रदान करती है और पानी, खनिज तथा भोजन के स्थानांतरण के लिए नलिकाओं की तरह कार्य करती हैं। विभिन्न पौधों में स्तरिका की आकृति उसके सिरे, चोटी, सतह तथा कटाव में विभिन्नता होती है।

5.3.1 शिराविन्यास

पत्ती पर शिरा तथा शिरिकाओं के विन्यास को **शिराविन्यास** कहते हैं। जब शिरिकाएँ स्तरिका पर एक जाल-सा बनाती हैं तब उसे **जालिका शिराविन्यास** कहते हैं (चित्र 5.7 ब)। यह प्राय: द्विबीजपत्री पौधों में मिलता है। जब शिरिकाएँ समानांतर होती हैं उसे **समानांतर शिराविन्यास** कहते हैं (चित्र 5.7 स)। यह प्राय: एक बीजपत्री पौधों में मिलता है।

5.3.2 पत्ती के प्रकार

जब पत्ती की स्तरिका अछिन्न होती है अथवा कटी हुई लेकिन कटाव मध्यशिरा तक नहीं पहुँच पाता, तब वह **सरल पत्ती** कहलाती है। जब स्तरिका का कटाव मध्य शिरा तक पहुँचे और बहुत पत्रकों में टूट जाए तो ऐसी पत्ती को **संयुक्त पत्ती** कहते हैं। सरल तथा संयुक्त पत्तियों, दोनों में **पर्णवृत** के कक्ष में कली होती है। लेकिन संयुक्त पत्ती के पत्रकों के कक्ष में कली नहीं होती।

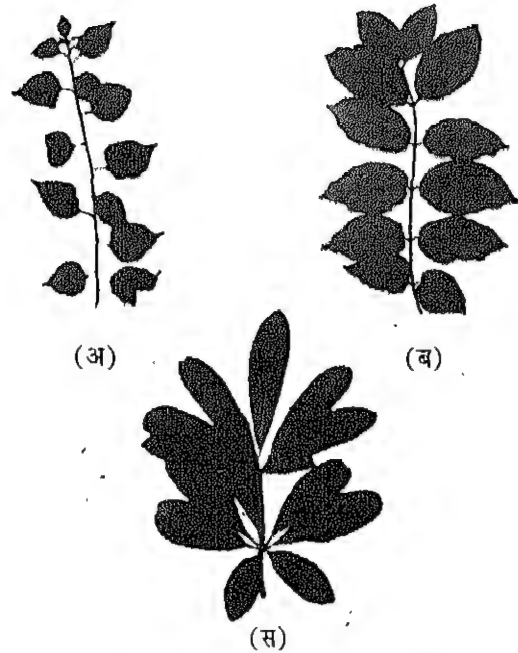
संयुक्त पत्तियाँ दो प्रकार की होती हैं। (चित्र 5.8) **पिच्छाकार संयुक्त पत्तियों** में बहुत से पत्रक एक ही **अक्ष** (एक्सिस) जो मध्यशिरा के रूप में होती है, पर स्थित होते हैं। इसका उदाहरण नीम है।

हस्ताकार संयुक्त पत्तियों में पत्रक एक ही बिंदु अर्थात् पर्णवृंत की चोटी से जुड़े रहते हैं। उदाहरणत: सिल्क कॉटन वृक्ष।

5.3.3 पर्णविन्यास

तने अथवा शाखा पर पत्तियों के विन्यस्त रहने के क्रम को पर्णविन्यास कहते हैं। यह प्राय: **तीन प्रकार का होता है– एकांतर, सम्मुख तथा चक्करदार।** (चित्र 5.9) **एकांतर** प्रकार के पर्णविन्यास **में एक** अकेली पत्ती प्रत्येक गांठ पर एकांतर रूप में लगी रहती

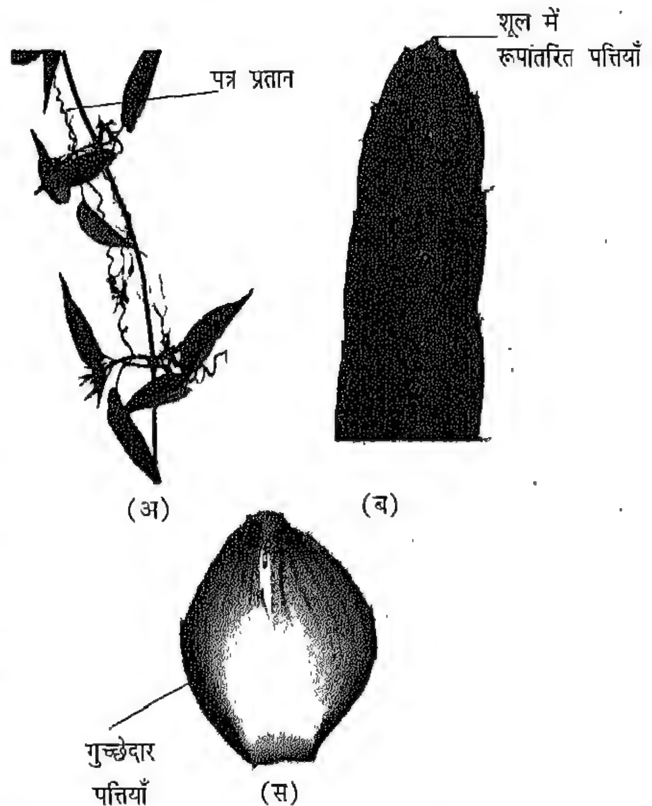
है। उदाहरणतः गुड़हल, सरसों, सूर्यमुखी। सम्मुख प्रकार के पर्णविन्यास में प्रत्येक गांठ पर एक जोड़ी पत्ती निकलती है और एक दूसरे के **सम्मुख** होती है। इसका उदाहरण है केलोट्रोपिस (आक), और अमरूद। यदि एक ही गांठ पर दो से अधिक पत्तियाँ निकलती हैं और वे उसके चारों ओर एक चक्कर सा बनाती हैं तो उसे **चक्करदार** पर्णविन्यास कहते हैं जैसे *एल्सटोनिआ* (डेविल ट्री)।



चित्र 5.9: विभिन्न प्रकार का शिराविन्यास (अ) एकांतरण (ब) सम्मुख (स) चक्करदार

5.3.4 पत्ती के रूपांतरण

पत्ती को भोजन बनाने के अतिरिक्त अन्य कार्यों के लिए रूपांतरित होना पड़ता है। वे ऊपर चढ़ने के लिए **प्रतान** में जैसे मटर और रक्षा के लिए **शूल** (कांटों) में जैसे केक्टस में परिवर्तित हो जाते हैं (चित्र 5.10 अ, ब)। प्याज तथा लहसुन की गूदेदार पत्तियों में भोजन संचयित रहता है (चित्र 5.10 स)। कुछ पौधों जैसे आस्ट्रेलियन अकेसिया में पत्तियाँ छोटी तथा अल्पायु होती हैं। इन पौधों में पर्णवृंत फैलकर हरा हो जाता है और भोजन बनाने का कार्य करता है। कुछ कीटाहारी पादपों में पत्ती घड़े के आकार में रूपांतरित होती हैं। उदाहरणतः घटपर्णी, वीनस फ्लाई ट्रेप हैं।



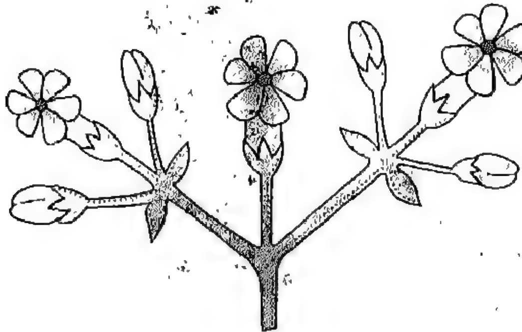
चित्र 5.10 पत्ती का रूपांतरण (अ) सहारे के लिए प्रतान (ब) रक्षा के लिए: शूल (स) संचयन के लिए: गूदेदार पत्तियां

5.4 पुष्पक्रम

फूल एक रुपांतरित प्ररोह है जहां पर प्ररोह का शीर्ष मेरिस्टेम पुष्पी मेरिस्टेम में परिवर्तित हो जाता है। पोरियाँ लंबाई में नहीं बढ़ती और अक्ष दबकर रह जाती है। गांठों पर क्रमानुसार पत्तियों की बजाय पुष्पी उपांग निकलते हैं। जब प्ररोह शीर्ष फूल में परिवर्तित होता है, तब वह सदैव अकेला होता है। पुष्पी अक्ष पर फूलों के लगने के क्रम को **पुष्पक्रम** कहते हैं। शीर्ष का फूल में परिवर्तित होना है अथवा सतत रूप से वृद्धि करने के आधार पर पुष्पक्रम को दो प्रकार असीमाक्षी तथा ससीमाक्षी में बांटा गया है। **असीमाक्षी** प्रकार के पुष्पक्रम के प्रमुख अक्ष में सतह वृद्धि होती रहती है और फूल पार्श्व में अग्राभिसारी क्रम में लगे रहते हैं (चित्र 5.11)।



चित्र 5.11 असीमाक्षी पुष्पक्रम



चित्र 5.12 ससीमाक्षी पुष्पक्रम

ससीमाक्षी पुष्पक्रम में प्रमुख अक्ष के शीर्ष पर फूल लगता है, इसलिए इसमें सीमित वृद्धि होती है। फूल तलाभिसारी क्रम में लगे रहते हैं जैसा कि चित्र 5.12 में दिखाया गया है।

5.5 पुष्प

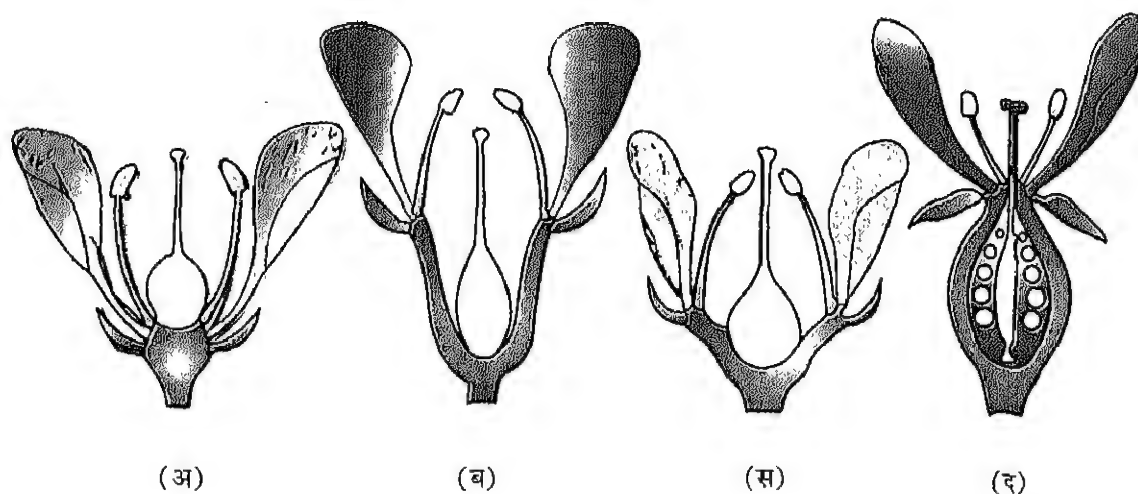
एंजियोस्पर्म में पुष्प (फूल) एक बहुत महत्वपूर्ण ध्यानकर्षी रचना है। यह एक रूपांतरित प्ररोह है जो लैंगिक जनन के लिए होता है। एक प्ररूपी फूल में विभिन्न प्रकार के विन्यास होते हैं जो क्रमानुसार फूले हुए पुष्पावृंत जिसे **पुष्पासन** कहते हैं, पर लगे रहते हैं। ये हैं-केलिक्स, कोरोला, पुमंग तथा जायांग।

केलिक्स तथा कोरोला सहायक अंग है जबकि पुमंग तथा जायांग लैंगिक अंग हैं। कुछ फूलों जैसे प्याज में केल्किस तथा कोरोला में कोई अंतर नहीं होता। इन्हें परिदलपुंज (पेरिऐंथ) कहते हैं। जब फूल में पुंकेसर तथा पुमंग दोनों ही होते हैं तब उसे द्विलिंगी अथवा **उभयलिंगी** कहते हैं। यदि किसी फूल में केवल एक पुंकेसर अथवा अंडप हो तो उसे **एकलिंगी** कहते हैं।

सममिति में फूल **त्रिज्यसममिति** (नियमित) अथवा **एकव्याससममित** (द्विपार्श्विक) हो सकते हैं। जब किसी फूल को दो बराबर भागों में विभक्त किया जा सके तब उसे **त्रिज्यसममिति** कहते हैं। इसके उदाहरण हैं सरसों, **धतूरा**, मिर्च। लेकिन जब फूल को केवल एक विशेष ऊर्ध्वाधर समतल से दो समान भागों में विभक्त किया जाए तो उसे **एकव्याससममित** कहते हैं। इसके उदाहरण हैं- मटर, गुलमोहर, सेम, *केसिया* आदि। जब कोई फूल बीच से किसी भी ऊर्ध्वाधर समतल से दो समान भागों में विभक्त न हो सके तो उसे **असममिति** अथवा **अनियमित** कहते हैं। जैसे कि *केना* ।

एक पुष्प **त्रितयी, चतुष्टयी, पंचतयी** हो सकता है यदि उसमें उनके उपांगों की संख्या 3,4 अथवा 5 के गुणक में हो सकती है। जिस पुष्प में सहपत्र होते हैं (पुष्पवृंत के आधार पर छोटी-छोटी पत्तियाँ होती हैं) उन्हें **सहपत्री** कहते हैं और जिसमें सहपत्र नहीं होते, उन्हें **सहपत्रहीन** कहते हैं।

पुष्पवृंत पर केल्किस, केरोला, पुमंग तथा अंडाशय की सापेक्ष स्थिति के आधार पर पुष्प को अधोजायांगता (हाइपोगाइनस), परिजायांगता (पेरीगाइनस), तथा अधिजायांता



चित्र 5.13 पुष्पासन पर पुष्पीय भागों की स्थिति (अ) अधोजायांगता (ब तथा स) परिजायंगता (द) अधिजायंगता

(ऐपीगाइनस) (चित्र 5.13)। **अधोजायांगता** में जायांग सर्वोच्च स्थान पर स्थित होता है और अन्य अंग नीचे होते हैं। ऐसे फूलों में अंडाशय **ऊर्ध्ववर्ती** होते हैं। इसके सामान्य उदाहरण सरसों, गुड़हल तथा बैंगन हैं। **परिजायांगता** में अंडाशय मध्य में होता है और अन्य भाग पुष्पासन के किनारे पर स्थित होते हैं तथा ये लगभग समान ऊँचाई तक होते हैं। इसमें अंडाशय **आधा अधोवर्ती** होता है। इसके सामान्य उदाहरण हैं- पल्म, गुलाब, आड़ू हैं। **अधिजायांगता** में पुष्पासन के किनारे ऊपर की ओर वृद्धि करते हैं तथा वे अंडाशय को पूरी तरह घेर लेते हैं और इससे संलग्न हो जाते हैं। फूल के अन्य भाग अंडाशय के ऊपर उगते हैं। इसलिए अंडाशय **अधोवर्ती** होता है। इसके उदाहरण हैं सूरजमुखी के अरपुष्पक, अमरूद तथा घीया।

5.5.1 पुष्प के भाग

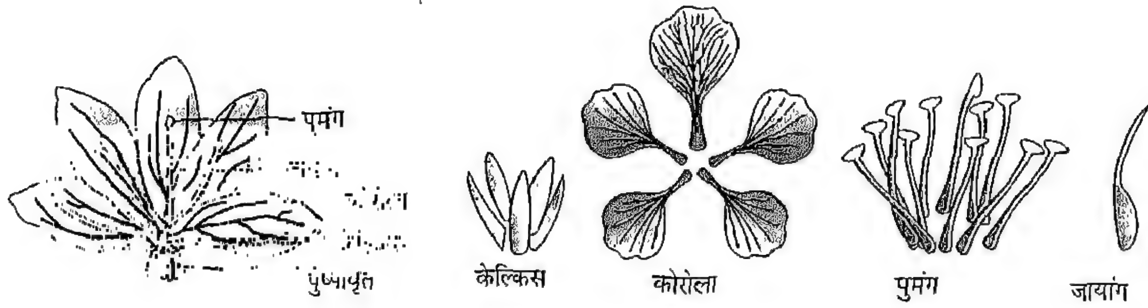
प्रत्येक पुष्प में चार चक्र होते हैं जैसे केल्किस, कोरोला, पुमंग तथा जायांग (चित्र 5.14)।

5.5.1.1 केल्किस

केल्किस पुष्प का सबसे बाहरी चक्र है और इसकी इकाई को बाह्य दल कहते हैं। प्राय: बाह्य दल हरी पत्तियों की तरह होते हैं और कली की अवस्था में फूल की रक्षा करते हैं। **केल्किस संयुक्त बाह्य दली** (जुड़े हुए बाह्य दल) अथवा **पृथक बाह्य दली** (मुक्त बाह्य दल) होते हैं।

5.5.1.2 कोरोला

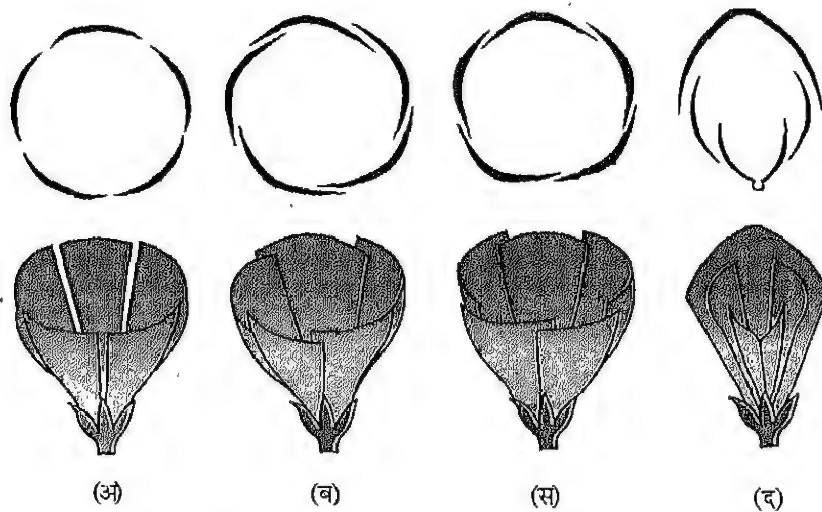
कोरोला, दल (पंखुड़ी) का बना होता है। दल प्राय: चमकीले रंगदार होते हैं। ये परागण के लिए कीटों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। केल्किस की तरह कोरोला भी **संयुक्त दली** अथवा **पृथक्दलीय** हो सकता है। पौधों में कोरोला की आकृति तथा रंग



चित्र 5.14 पुष्प के भाग

भिन्न-भिन्न होता हैं। जहाँ तक आकृति का संबंध है, वह नलिकाकार, घंटाकार, कीप के आकार का तथा चक्राकार हो सकती है।

पुष्पदल विन्यास पुष्पकली में उसी चक्र की अन्य इकाइयों के सापेक्ष बाह्य दल अथवा दल के लगे रहने के क्रम को पुष्प दल विन्यास कहते हैं। पुष्प दल विन्यास के प्रमुख प्रकार कोर स्पर्शी, व्यावर्तित, कोरछादी, वैकजीलेरी होते हैं (चित्र 5.15)। जब चक्र के बाह्यदल अथवा दल एक दूसरे के किनारों को केवल स्पर्श करते हों उसे **कोरस्पर्शी** कहते हैं; जैसे *केलोट्रॉपिस* । यदि किसी दल अथवा बाह्य दल का किनारा अगले दल पर तथा दूसरे तीसरे आदि पर अतिव्याप्त हो तो उसे **व्यावर्तित** कहते हैं। इसके उदाहरण: गुडहल, भिंडी तथा कपास हैं। यदि बाह्य दल अथवा दल दूसरे पर अतिव्याप्त हो तो उसकी कोई विशेष दिशा नहीं होती। इस प्रकार की स्थिति को **कोरछादी** कहते हैं। इसके उदाहरण – *केसिया*, गुलमोहर हैं। मटर, सेम में पाँच दल होते हैं। इनमें से सबसे बड़ा (मानक) दो पार्श्वी को (पंख) और ये दो सबसे छोटे अग्र दलों (कूटक) को अतिव्यापित करते हैं। इस प्रकार के पुष्पदल विन्यास को **वैक्जीलरी** अथवा पैपिलिओनेसियस कहते हैं।



चित्र 5.15 पुष्पदल विन्यास के विभिन्न प्रकार (अ) कोरस्पर्शी (ब) व्यावर्तित (स) कोरछादी (द) वैक्जीलेरी

5.5.1.3 पुमंग

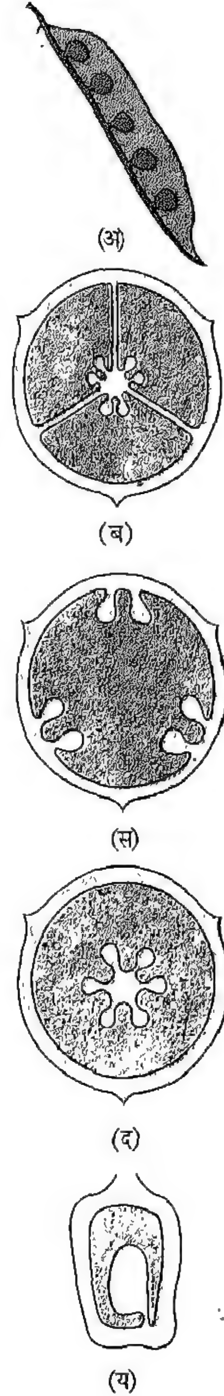
पुमंग पुंकेसरों से मिलकर बनता है। प्रत्येक पुंकेसर जो फूल के नर जनन अंग हैं, में एक तंतु तथा एक परागकोश होता है। प्रत्येक परागकोश प्राय: द्विपालक होता है और प्रत्येक पालि में दो कोष्ठक, परागकोष होते हैं। पराग कोष में परागकण होते हैं। बंध्य पुंकेसर जनन करने में असमर्थ होते हैं और वह **स्टेमिनाएड** कहलाते हैं।

पुंकेसर फूल के अन्य भागों जैसे दल अथवा आपस में ही जुड़े हो सकते हैं। जब पुंकेसर दल से जुड़े होते हैं, तो उसे **दललग्न (ऐपीपेटलस)** कहते हैं जैसे बैंगन में। यदि ये परिदल पुंज से जुड़े हों तो उसे **परिदल लग्न (ऐपीफिलस)** कहते हैं जैसे लिली में। फूल में पुंकेसर मुक्त (बहु पुंकेसरी) अथवा जुड़े हो सकते हैं। पुंकेसर एक गुच्छे अथवा बंडल (**एकसंघी**) जैसे गुड़हल में है; अथवा दो बंडल (**द्विसंघी**) जैसे मटर में अथवा दो से अधिक बंडल (**बहुसंघी**) जैसे सिट्रस में हो सकते हैं। उसी फूल के तंतु की लंबाई में भिन्नता हो सकती है जैसे सेल्विया तथा सरसों में।

5.5.1.4 जायांग

जायांग फूल के मादा जनन अंग होते हैं। ये एक अथवा अधिक अंडप से मिलकर बनते हैं। अंडप के तीन भाग होते हैं- वर्तिका, वर्तिकाग्र तथा अंडाशय। **अंडाशय** का आधारी भाग फूला हुआ होता है जिस पर एक लम्बी नली होती है जिसे वर्तिका कहते हैं। वर्त्तिका अंडाशय को वर्त्तिकाग्र से जोड़ती है। **वर्त्तिकाग्र** प्राय: **वर्त्तिका** की **चोटी** पर होती है और परागकण को ग्रहण करती है। प्रत्येक अंडाशय में एक अथवा अधिक बीजांड होते हैं जो चपटे, गद्देदार **बीजांडासन** से जुड़े रहते हैं। जब एक से अधिक अंडप होते हैं तब वे पृथक (मुक्त) हो सकते हैं, (जैसे कि गुलाब और कमल में) इन्हें **वियुक्तांडपी** (एपोकार्पस) कहते हैं। जब अंडप जुड़े होते हैं, जैसे मटर तथा टमाटर, तब उन्हें **युक्तांडपी** (सिनकार्पस) कहते हैं। निषेचन के बाद बीजांड से बीज तथा अंडाशय से फल बन जाते हैं।

बीजांडन्यास : अंडाशय में बीजांड के लगे रहने का क्रम को बीजांडन्यास (प्लैसेनटेशन) कहते हैं। बीजांडन्यास सीमांत, स्तंभीय, भित्तीय, आधारी, केंद्रीय तथा मुक्त स्तंभीय प्रकार का होता है (चित्र 5.16)। **सीमांत** में बीजांडासन अंडाशय के अधर सीवन के साथ-साथ कटक बनाता है और बीजांड कटक पर स्थित रहते हैं जो दो कतारें बनाती हैं जैसे कि मटर में। जब बीजांडासन अक्षीय होता है और बीजांड बहुकोष्ठकी अंडाशय पर लगे होते हैं तब ऐसे बीजांडन्यास को **स्तंभीय** कहते हैं। इसका उदाहरण हैं गुड़हल, टमाटर तथा नींबू। **भित्तीय** बीजांडन्यास में बीजांड अंडाशय की भीतरी भित्ति पर अथवा परिधीय भाग में लगे रहते हैं। अंडाशय एक कोष्ठक होता है लेकिन आभासी पट बनने के कारण दो कोष्ठक में विभक्त हो जाता है। इसके उदाहरण हैं क्रुसीफर (सरसों) तथा *आर्जेमोन* हैं। जब बीजांड केंद्रीय कक्ष में होते हैं और यह पुटीय नहीं होते जैसे



चित्र 5.16 बीजांडन्यास के प्रकार
(अ) सीमांत
(ब) स्तंभीय (स) भित्तीय
(द) मुक्तस्तंभीय
(य) आधारी

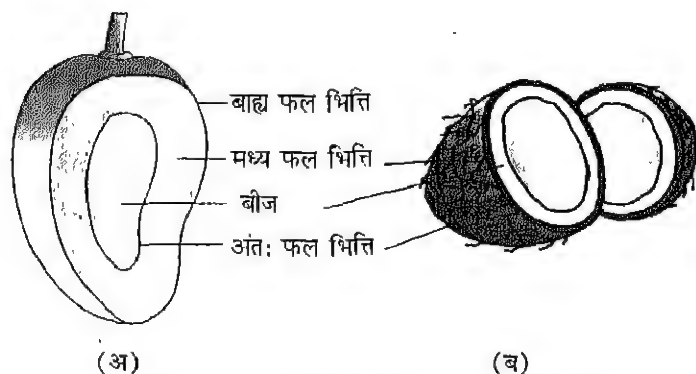
कि *डायएँथस* तथा *प्रिमरोज*, तब इस प्रकार के बीजांडन्यास को **मुक्तस्तंभीय** कहते हैं। **आधारी** बीजांडन्यास में बीजांडासन अंडाशय के आधार पर होता है और इसमें केवल एक बीजांड होता है। इसके उदाहरण सूरजमुखी, गेंदा है।

5.6 फल

फल पुष्पी पादपों का एक प्रमुख अभिलक्षण है। यह एक परिपक्व अंडाशय होता है जो निषेचन के बाद विकसित होता है। यदि फल बिना निषेचन के विकसित हो तो उसे **अनिषेकी (पारथेंनोकर्पिक)** फल कहते हैं।

प्राय: फल में एक भित्ति अथवा फल भित्ति तथा बीज होते हैं। फल भित्ति शुष्क अथवा गूदेदार हो सकती है। जब फल भित्ति मोटी तथा गूदेदार होती है तब उसमें एक बाहरी भित्ति होती जिसे **बाह्यफल** भित्ति कहते हैं। इसके मध्य में **मध्यफल** भित्ति तथा भीतरी ओर **अंत:फल** भित्ति होती है।

आम तथा नारियल में फल के प्रकार को अष्ठिल (ड्रूप) कहते हैं (चित्र 5.17)। ये फल एकांडपी ऊर्ध्वर्ती अंडाशय से विकसित होते हैं और इनमें एक बीज होता है। आम में फल भित्ति बाह्यफल भित्ति, गूदेदार एवं खाने योग्य मध्यफल भित्ति तथा भीतरी कठोर पथरीली अंत:फल भित्ति के सुस्पष्ट रूप से विभेदित होती है। नारियल में मध्यफल भित्ति तंतुमयी होती है।



चित्र 5.17 फल के भाग (अ) आम (ब) नारियल

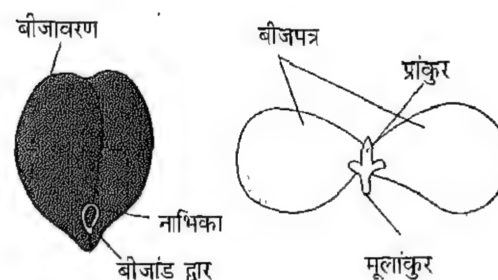
5.7 बीज

निषेचन के बाद बीजांड से बीज बन जाते हैं। बीज में प्राय: एक बीजावरण तथा भ्रूण होता है। भ्रूण में एक मूलांकुर, एक भ्रूणीय अक्ष तथा एक (गेहूं, मक्का) अथवा दो (चना, मटर) बीजपत्र होते हैं।

5.7.1 द्विबीजपत्री बीज की संरचना

बीज की बाहरी परत को **बीजावरण** कहते हैं। बीजावरण की दो सतहें होती हैं– बाहरी को **बीजचोल** और भीतरी स्तह को **टेगमेन** कहते हैं। बीज पर एक क्षत चिह्न की तरह

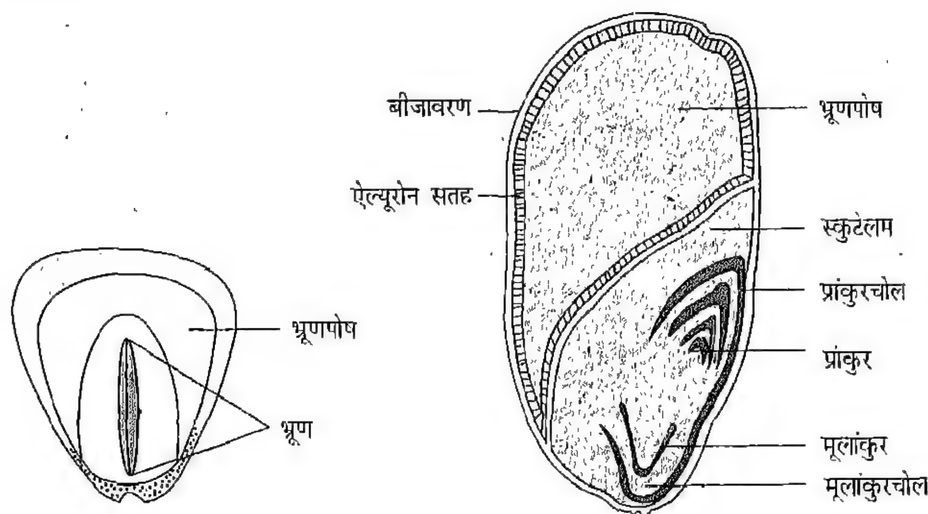
का ऊर्ध्व होता है जिसके द्वारा बीज फल से जुड़ा रहता है। इसे नाभिका कहते हैं। प्रत्येक बीज में नाभिका के ऊपर छिद्र होता है जिसे **बीजांडद्वार** कहते हैं। बीजावरण हटाने के बाद आप बीज पत्रों के बीच भ्रूण को देख सकते हैं। भ्रूण में एक भ्रूणीय अक्ष और दो गूदेदार बीज पत्र होते हैं। बीज पत्रों में भोज्य पदार्थ संचित रहता है। अक्ष के निचले नुकीले भाग को मूलांकुर तथा ऊपरी पत्तीदार भाग को प्रांकुर कहते है (चित्र 5.18)। **भ्रूणपोष** भोजन संग्रह करने वाला ऊतक है जो द्विनिषेचन के परिणामस्वरूप बनते हैं। चना, सेम तथा मटर में भ्रूणपोष पतला होता है। इसलिए ये अभ्रूणपोषी हैं जबकि अरंड में यह गूदेदार होता है (भ्रूण पोषी है)।



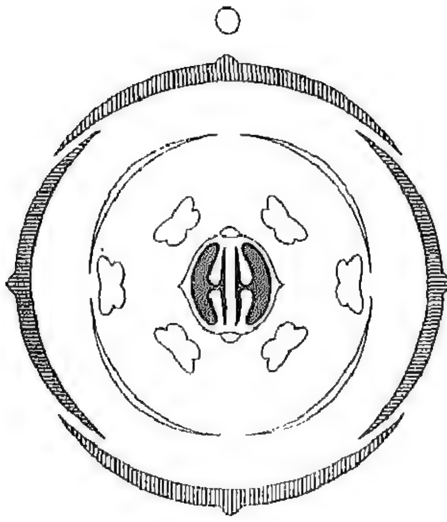
चित्र 5.18 द्विबीजपत्री बीज की संरचना

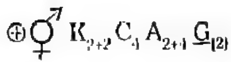
5.7.2 एकबीजपत्री बीज की संरचना

प्राय: एकबीजपत्री बीज भ्रूणपोषी होते हैं लेकिन उनमें से कुछ अभ्रूणपोषी होते हैं। उदाहरणत: आर्किड। अनाज के बीजों जैसे मक्का में बीजावरण झिल्लीदार, तथा फल भित्ति से संगलित होता है। भ्रूणपोष स्थूलीय होता है और भोजन का संग्रहण करता है। भ्रूणपोष की बाहरी भित्ति भ्रूण से एक प्रोटीनी सतह द्वारा अलग होती है जिसे **एल्यूरोन सतह** कहते हैं। भ्रूण आकार में छोटा होता है और यह भ्रूणपोष के एक सिरे पर खाँचे में स्थित होता है। इसमें एक बड़ा तथा ढालाकार बीजपत्र होता है जिसे **स्कुटेलम** कहते हैं। इसमें एक छोटा अक्ष होता है जिसमें **प्रांकुर** तथा **मूलांकुर** होते हैं। प्रांकुर तथा मूलांकुर एक चादर से ढके होते हैं, जिसे क्रमश: **प्रांकुरचोल** तथा **मूलांकुरचोल** कहते हैं। (चित्र 5.19)



चित्र 5.19 एकबीजपत्री बीज की संरचना





चित्र 5.20 (अ) पुष्पीसूत्र
(ब) पुष्पी चित्र

5.8 एक प्ररूपी पुष्पीपादप (एंजियोस्पर्म) का अर्द्धतकनीकी विवरण

पुष्पीपादप को वर्णित करने के लिए बहुत से आकारिकी अभिलक्षणों का उपयोग किया जाता है। पुष्पीपादपों का वर्णन संक्षिप्त, सरल तथा वैज्ञानिक भाषा में क्रमवार होना चाहिए। पौधे के वर्णन में उसकी प्रकृति, कायिक अभिलक्षण मूल, तना तथा पत्तियाँ और उसके बाद पुष्पी अभिलक्षण, पुष्प विन्यास, फूल के भाग का वर्णन आता है। पौध के विभिन्न भागों के वर्णन के बाद पुष्पी भाग के पुष्पी चित्र तथा पुष्पी सूत्र बताने पड़ते हैं। पुष्पी सूत्र को कुछ संकेतों द्वारा इंगित किया जाता है। पुष्पी सूत्र में सहपत्र को **Br** से, केल्किस को **K** से, कोरोला को **C** से, परिदल पुंज को **P** से, पुमंग को **A** से तथा जायांग को **G** से लिखते हैं। ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय को **G** और अधोवर्ती अंडाशय को **G** से लिखते हैं। नर फूल के लिए ♂ मादा के लिए ♀ तथा द्विलिंगी के लिए ⚥ चिह्नों से इंगित करते हैं। त्रिज्य सममिति को '⊕' तथा एक व्यास सममित को '%' इंगित करते हैं। युक्त दलों की संख्या को ब्रेकेट से बंद करते हैं और आसंजन को पुष्पी चिह्नों के ऊपर रेखा खींचते हैं। पुष्पीचित्र से फूल के भागों की संख्या, उनके विन्यस्त क्रम और उनके संबंध (चित्र 5.20) के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। मातृ अक्ष की स्थिति फूल के सापेक्ष होती है जिसे डॉट द्वारा पुष्पी चित्र के ऊपर इंगित करते हैं। केल्किस, कोरोला, पुमंग तथा जायांग क्रमवार चक्कर में दिखाए जाते हैं। कैल्किस सबसे बाहर की ओर तथा जायांग सबसे भीतर होता है। यह सासंजन तथा आसंजन को चक्कर के भागों तथा चक्कर के बीचों को इंगित करता है। नीचे सरसों के पौधे (कुटुंबः ब्रेसिकेसी) के पुष्पी चित्र तथा पुष्पी सूत्र नीचे दिखाए गए हैं (चित्र 5.20)।

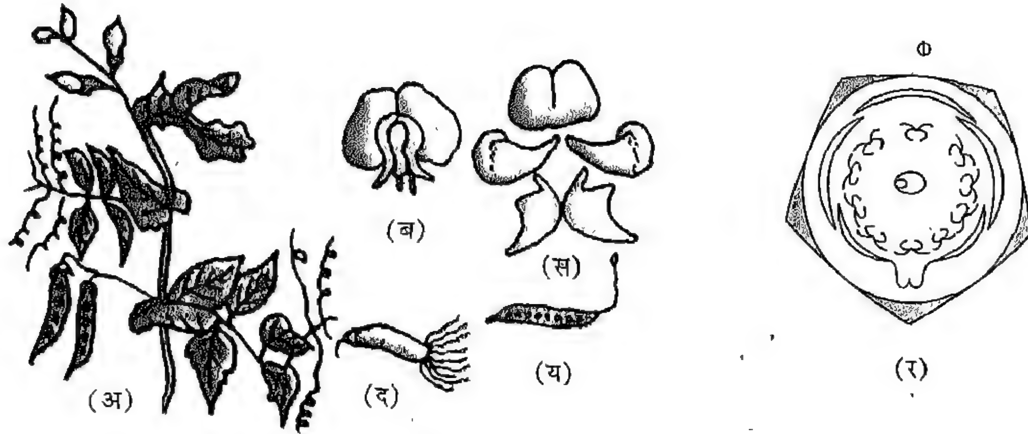
5.9 कुछ महत्वपूर्ण कुलों का वर्णन

5.9.1 फाबेसी

इस कुल को पहले पैपिलिओनोइडी कहते थे। यह लेग्युमिनोसी कुल का उपकुल था। यह सारे विश्व में पाई जाती हैं। (चित्र 5.21)

कायिक अभिलक्षण

वृक्ष, झाड़ी, शाक, मूल ग्रंथियों सहित मूल
तनाः सीधा अथवा प्रतान
पत्तियाँः सरल, अथवा संयुक्त पिच्छाकर, एकांतर, पर्णाधार तल्पयुक्त, अनुपर्णी, जालिका शिराविन्यास



चित्र 5.21 पाइसम स्टाइवम (मटर) पौधा (अ) पुष्पीपादप की शाखा (ब) पुष्प (स) दल (द) जननांग (य) अंडप की अनुदैर्घ्यकाट (र) पुष्पीचित्र

पुष्पी अभिलक्षण

पुष्पविन्यासः असीमाक्षी

फूलः उभयलिंगी, एकव्याससममित

केल्किसः बाह्यदल पाँच, संयुक्तबाह्यदली, कोरछादी, पुष्पदल विन्यास

कोरोलाः दल पाँच, विमुक्त दली, पैपिलिओनेसियस पश्च बड़ा तथा सबसे बाहरी (स्टैंड्रड मानक), अगले दो पार्श्वीय (पंख–विंग) तथा दो अग्र तथा सबसे भीतर वाले जुड़कर एक नौतल बनाते हैं, पुष्प दल विन्यास वैकसीलेरी

पुमंगः 10 पुंकेसर, द्विसंधी, परागकोश द्विकोष्ठी

जायांगः अंडाशय एक अंडपी, ऊर्ध्ववर्ती, अनेकों बीजांड सहित एक कोष्ठीय, वर्त्तिका एकल

फलः लेग्यूम

बीजः एक से अधिक, अभ्रूणपोषीय

पुष्पी सूत्रः $\oplus$ ⚥ $K_{(5)}\ C_{1+2+(2)}\ A_{(9)+1}\ \underline{G}_1$

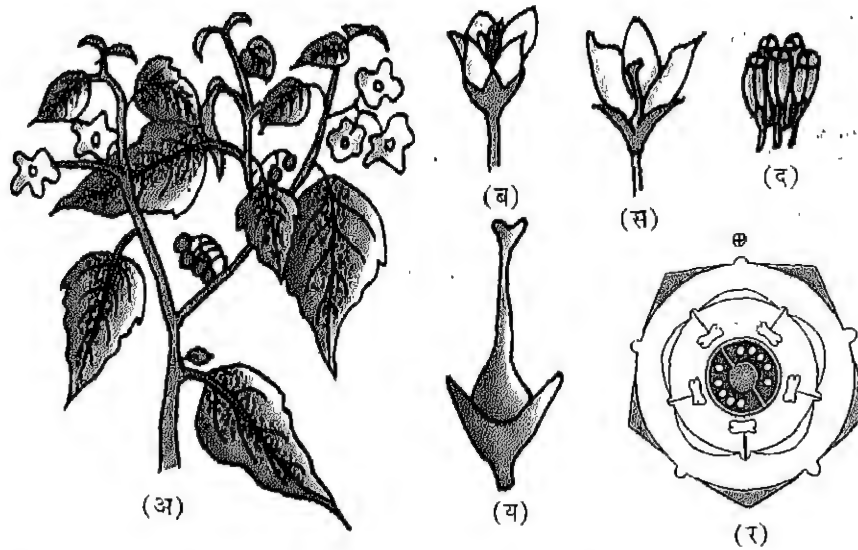
चित्र 5.21 *पाइसम स्टाइवम* (मटर) (अ) पुष्पी पादप की शाखा (ब) फूल (स) दल (द) लैंगिक अंग (इ) अंडप की अनुदैर्घ्यकाट (एफ) पुष्पी चित्र

आर्थिक महत्व

इस कुल के सदस्यों में अनेकों प्रकार की दाल (चना, अरहर, सेम, मूंग, सोयाबीन), खाद्य तेल (सोयाबीन, मूंगफली); रंग (नील); तंतु (सनई), चारा (संसवेनिया ट्राईफोलियम), सजावटी फूल (ल्यूपिन, स्वीअपी); औषधि (मुलैठी) के स्रोत हैं।

5.9.2 सोलैनेसी

यह एक बड़ा कुल है। प्रायः इसे आलू कुल भी कहते हैं। ये उष्णकटिबंधीय, उपोष्ण तथा शीतोष्ण में फैले रहते हैं। (चित्र 5.22)



चित्र 5.22 सोलैनम नाइग्रम कोई को पौधा (अ) पुष्पीशाखा (ब) पुष्प (स) पुष्प की अनुदैर्घ्यकाट (द) पुंकेसर (य) अंडप (र) पुष्पी चित्र

कायिक अभिलक्षण

इसके पौधे प्रायः शाकीय, झाड़ियाँ तथा छोटे वृक्ष वाले होते हैं
तनाः शाकीय, कभी-कभी काष्ठीय; वायवीय, सीधा, सिलिंडिराकर, शाखित, ठोस अथवा खोखला, रोमयुक्त अथवा अरोमिल, भूमिगत जैसे आलू (*सोलैनम टयूबीरोसम*),
पत्तियाँ: एकांतर, सरल, कर्मी संयुक्त पिच्छाकार अनुपर्णी, जालिका विन्यास
पुष्पी अभिलक्षणः
पुष्पक्रमः एकल, कक्षीय, ससीमाक्षी जैसे *सोलैनम* में;
फूलः उभयलिंगी, त्रिज्यसममिति
केल्किसः पाँच बाह्य दल, संयुक्त, दीर्घस्थायी, कोरस्पर्शी पुष्प दल विन्यास
कोरोलाः पाँच दल, संयुक्त, कोरस्पर्शी पुष्पदल विन्यास
पुमंगः पाँच पुंकेसर, दललग्न
जायांगः द्विअंडपी, युक्तांडपी, अंडाशय ऊर्ध्वावर्ती, द्विकोष्ठी, बीजांडासन फूला हुआ जिसमें बहुत से बीजांड
फलः संपुट अथवा सरस
बीजः भ्रूणपोषी, अनेक

पुष्पी सूत्र : $\oplus$ ⚥ $K_{(5)}\ \overset{\frown}{C_{(5)}\ A_5}\ \underline{G}_{(2)}$

आर्थिक महत्व

इस कुल के अधिकांश सदस्य भोजन (टमाटर, बैंगन, आलू), मसाले (मिर्च), औषधि (बेलाडोना, *अश्वगंधा*); धूमक (तंबाकू), सजावटी पौधे (पिटुनिआ) के स्रोत हैं।

5.9.3 लिलिएसी

इसे प्रायः लिली कुल कहते हैं। यह एकबीजपत्री हैं और सारे विश्व में पाए जाते है (चित्र 5.23)।

कायिक अभिलक्षणः दीर्घकालिक शाक सहित भूमिगत शल्ककंद/ कॉर्म/ प्रकंद
पत्तियाँः अधिकांश आधारी एकांतर, लंबे, अननुपर्णी समानांतर शिराविन्यास

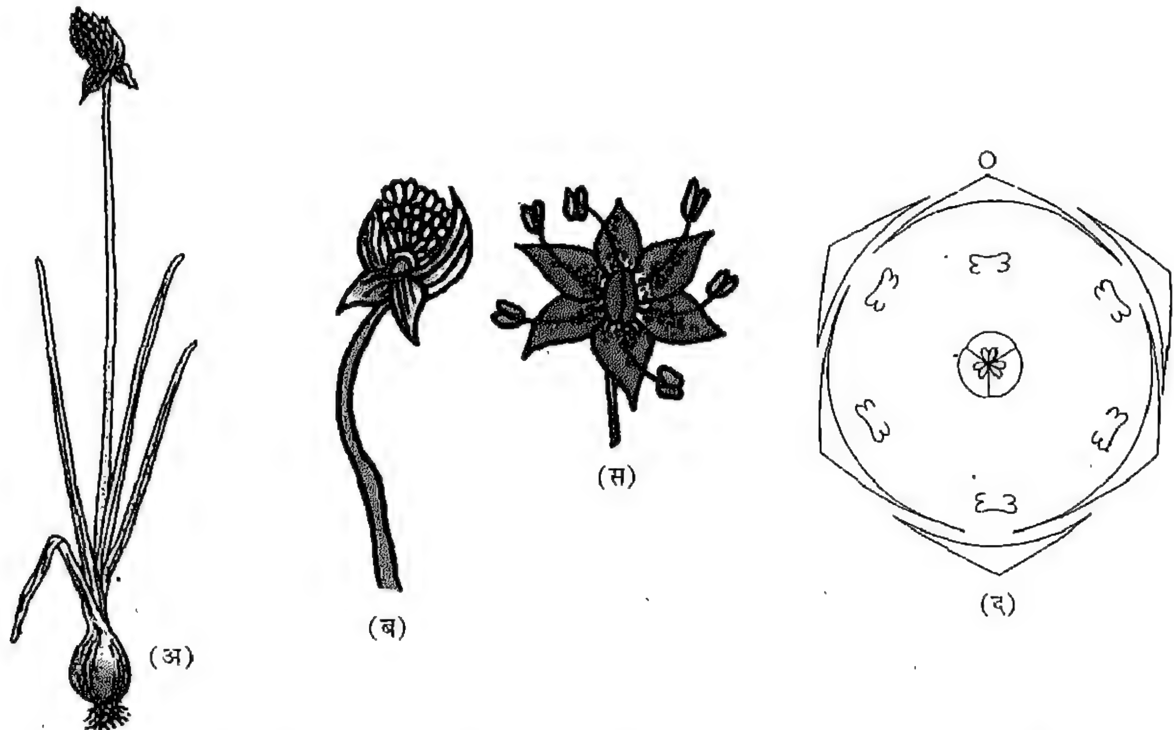
पुष्पी अभिलक्षण

पुष्पक्रमः एकल / ससीमाक्ष, प्रायः पुष्प छत्र
फूलः त्रिज्यासममिति, द्विलिंगी
परिदल पुंजः परिदल छः (3+3) प्रायः नली में जुड़े हुए, कोरस्पर्शी पुष्पदल विन्यास
पुमंगः छः पुंकेसर (3+3)
जायांगः त्रिअंडपी, युक्ताडंपी, अंडाशय ऊर्ध्ववर्ती, त्रिकोष्ठकी जिसमें अनेकों बीज, स्तंभीय बीजांडासन
फलः संपुट, कभी-कभी सरस
बीजः भ्रूणपोषीय

पुष्पी सूत्रः $\oplus ⚥ P_{3+3} A_{3+3} \underline{G}_{(3)}$

आर्थिक महत्व

इस कुल के अधिकांश पौधे सजावटी (टयुलिप, *ग्लोरिओसा*), औषधि के स्रोत (एलो), सब्जियाँ (एस्पेरेगस), तथा कॉल्चिसिन (*कॉल्चिकम ऑटुमनेल*) देने वाले होते हैं।



चित्र 5.23 एलियमसीपी (प्याज) का पौधों (अ) एक पौधा (ब) पुष्पक्रम (स) एक पुष्प (द) पुष्पी चित्र

सारांश

यदि हम समस्त पादप जगत पर दृष्टि डालें तो पुष्पीय पादप सर्वाधिक विकसित होते हैं। ये आकार, माप, संरचना, पोषण की विधि, जीवन काल, प्रकृति तथा आवास में अत्यधिक विविधता प्रदर्शित करते हैं। इनमें मूल तथा प्ररोह तंत्र भली भाँति विकसित होते हैं। इनमें मूल तंत्र मूसला अथवा झकड़ा मूल पाई जाती हैं। समान्यता द्विबीजपत्री पादपों में मूसला जबकि एक बीजपत्री पादपों में झकड़ा मूल होती हैं। कुछ पादपों में मूल भोजन के संग्रहण तथा यांत्रिक सहारे तथा श्वसन के लिए रूपांतरित हो जाती हैं। प्ररोह तंत्र तना, पत्ती, पुष्प तथा फलों में बँटा रहता है। तने के आकारिकीय अभिलक्षण जैसे गाँठों तथा पोरियों की उपस्थिति, बहुकोशिक रोम, तथा घनात्मक प्रकाशानुवर्ती प्रकृति आदि की उपस्थिति से तने तथा मूल में अंतर को आसानी से समझा जा सकता है। तने भी विभिन्न कार्यो जैसे खाद्य संचयन, कायिक प्रवर्धन तथा विभिन्न परिस्थितियों में संरक्षण के लिए अपने आप को रूपांतरित कर लेते हैं। पत्ती तने की पार्श्वीय उर्द्धव पर गांठ से बर्हिजाति रूप में विकसित होती है। यह रंग में हरी होती है ताकि प्रकाश संश्लेषण को क्रिया संपन्न हो सके। पत्तियां आकार, माप, किनारे, शीर्ष, तथा पत्ती की स्तरिका के कटाव में सुस्पष्ट विविधताएं प्रदर्शित करती हैं। पादपों के अन्य भागों की भांति पत्तियां भी अन्य भागों जैसे प्रतान, चढ़ने के लिए तथा शूल संरक्षण के लिए अपने आप को रूपांतरित कर लेती हैं।

पुष्प एक प्रकार के प्ररोह का रूपांतरित रूप है जो लैंगिक जनन संपन्न करता है। पुष्प विभिन्न प्रकार के पुष्पक्रम में विन्यस्त रहते हैं। यह संरचना, ज्यामिति, अन्य भागों के सापेक्ष अंडाशय की स्थिति, दलों बाह्य दलों, अंडाशय आदि का क्रमबद्ध विन्यास में भी विविधता प्रदर्शित करता है। निषेचन के पश्चात् अंडाशय से फल तथा बीजांड से बीजों का निर्माण होता है। बीज एकबीजपत्री अथवा द्विबीजपत्रीय हो सकते हैं वे आकार, माप तथा जीवन क्षमता काल में विविध रूप के होते हैं। पुष्पीय अभिलक्षण पुष्पीय पादपों के वर्गीकरण तथा पहचान के आधार माने जाते हैं। इसका वर्णन कुलों के अर्द्ध तकनीकी विवरण से चित्रों सहित किया जा सकता है। अत: एक पुष्पी पादप का वर्णन वैज्ञानिक शब्दावली का उपयोग करते हुए निर्दिष्ट क्रम में कर सकते हैं। पुष्पीय अभिलक्षण संक्षिप्त रूप पुष्पीय चित्रों, पुष्पीय अंगों द्वारा निरूपित कर सकते हैं।

अभ्यास

1. मूल के रूपांतरण से आप क्या समझते हैं? निम्नलिखित में किस प्रकार का रूपांतरण पाया जाता है।
   (अ) बरगद (ब) शलजम (स) मैंग्रोव वृक्ष
2. बाह्य लक्षणों के आधार पर निम्नलिखित कथनों की पुष्टि करें
   (I) पौधे के सभी भूमिगत भाग सदैव मूल नहीं होते
   (II) फूल एक रूपांतरित प्ररोह है
3. एक पिच्छाकार संयुक्त पत्ती हस्ताकार संयुक्त पत्ती से किस प्रकार भिन्न है?
4. विभिन्न प्रकार के पर्णविन्यास का उदाहरण सहित वर्णन करो।

5. निम्नलिखित की परिभाषा लिखो।
   (अ) पुष्प दल विन्यास (ब) बीजांडासन (स) त्रिज्या सममिति (द) एकव्यास सममित
   (इ) ऊर्ध्ववर्ती (एफ) परिजायांगी पुष्प (जी) दललग्न पुंकेसर

6. निम्नलिखित में अंतर लिखो।
   (अ) असीमाक्षी तथा ससीमाक्षी पुष्पक्रम
   (ब) झकड़ा जड़ (मूल) तथा अपस्थानिक मूल
   (स) वियुक्तांडपी तथा युक्तांडपी अंडाशय

7. निम्नलिखित के चिंह्नित चित्र बनाओ
   (अ) चने के बीज तथा (ब) मक्के के बीज का अनुदैर्घ्यकाट

8. उचित उदाहरण सहित तने के रूपांतरों का वर्णन करो

9. फाबसी तथा सोलैनेसी कुल के एक-एक पुष्प को उदाहरण के रूप में लो तथा उनका अर्द्धतकनीकी विवरण प्रस्तुत करो। अध्ययन के पश्चात उनके पुष्पीय चित्र भी बनाओ।

10. पुष्पी पादपों में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के बीजांडासन्यासों का वर्णन करो।

11. पुष्प क्या है? एक प्ररूपी एंजियोस्पर्म पुष्प के भागों का वर्णन करो।

12. पत्तियों के विभिन्न रूपांतरण पौधे की केसे सहायता करते हैं?

13. पुष्पक्रम की परिभाषा करो। पुष्पी पादपों में विभिन्न प्रकार के पुष्पक्रमों के आधार का वर्णन करो।

14. ऐसे फूल का सूत्र लिखो जो त्रिज्या सममित, उभयलिंगी, अधोजायांगी, 5 सयुंक्त बाह्य दली, 5 मुक्त दली, पाँच मुक्त पुंकेसरी, द्वि युक्तांडपी, तथा ऊर्ध्ववती अंडाशय हो।

15. पुष्पासन पर स्थिति कें अनुसार लगे पुष्पी भागों का वर्णन करो।

अध्याय 6

पुष्पी पादपों का शारीर

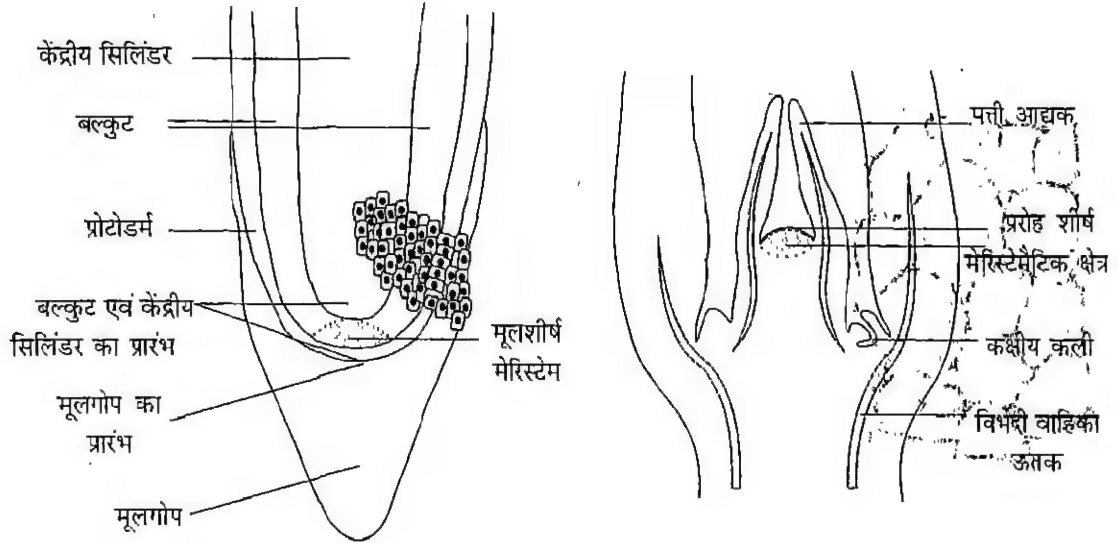
आप बड़े प्राणियों पादप तथा जंतु (प्राणी)-दोनों में रचनात्मक समानता तथा बाह्य आकारिकी में विभिन्नता देख सकते हैं। इस प्रकार जब हम भीतरी रचना का अध्ययन करते हैं, तब हमें बहुत सी समानताओं तथा विभिन्नताओं का पता लगता है। इस अध्याय में हम उच्च पौधों में भीतरी रचनात्मक तथा कार्यात्मक संरचनाओं के विषय में पढ़ेंगे। पौधों की भीतरी संरचना के अध्ययन को शारीर कहते हैं। पौधों में कोशिका आधार भूत इकाई है। कोशिकाएँ ऊतकों में और ऊतक अंगों में संगठित होते हैं। पौधे के विभिन्न अंगों की भीतरी संरचना में अंतर होता है। एंजियोस्पर्म में ही एकबीजपत्री की शारीरीकी द्विबीजपत्री से भिन्न होती है। भीतरी संरचना पर्यावरण के प्रति अनुकूलन को भी दर्शाती है।

6.1 ऊतक

ऊतक कोशिकाओं का एक ऐसा वर्ग है जिसका उद्‌भव एक ही होता है और उनके कार्य भी प्रायः समान होते हैं। पौधे विभिन्न प्रकार के ऊतक होते हैं। ऊतक को दो प्रमुख वर्गविभज्योतकी (मेरिस्टमी) तथा स्थायी ऊतक होते हैं। इनके वर्गीकरण का आधार कोशिकाओं का विभक्त होना अथवा न होना है।

6.1.1 मेरिस्टमी ऊतक

पौधों में वृद्धि मुख्यतः सक्रिय कोशिका विभाजन वाले विशिष्ट क्षेत्रों तक ही सीमित होती है। इस क्षेत्र को **मेरिस्टम** कहते हैं (*ग्रीक* भाषा में *मेरिस्टो* - विभाजित)। पौधे में विभिन्न प्रकार के मेरिस्टेम होते हैं। जो मेरिस्टेम मूल तथा तने के शीर्ष पर होते हैं। वह प्राथमिक ऊतक बनाते हैं, उन्हें **शीर्षस्थ मेरिस्टेम** कहते हैं (चित्र 6.1)। मूल शीर्षस्थ मेरिस्टेम मूल



चित्र 6.1 शीर्षस्थ मेरिस्टेम (ब) मूल (ब) प्ररोह

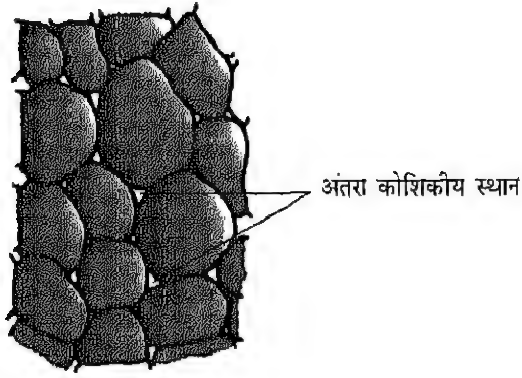
की चोटी पर तथा तने की शीर्षस्थ मेरिस्टेम तने की चोटी पर स्थित होते है। पत्तियों के बनने तथा तने की लंबाई के समय कुछ कोशिकाएँ प्ररोह शीर्षस्थ मेरिस्टेम के पीछे छूट जाती हैं। इन्हें **कक्षीय कली** कहते हैं ऐसी कलियाँ पत्तियों के कक्ष में स्थित होती हैं। इन कलियों से शाखा अथवा फूल बनते हैं। जब मेरिस्टेम स्थायी ऊतकों के बीच होता है तब उसे **अंतर्वेशी मेरिस्टेम** कहते हैं। ये घास में होते हैं और शाकाहारियों द्वारा खाए भाग को पुनर्जीवित करते हैं। शीर्षस्थ मेरिस्टेम तथा अंतर्वेशी मेरिस्टेम दोनों ही **प्राथमिक मेरिस्टेम** हैं, क्योंकि वे पौधे की प्रारंभिक,अवस्था में ही आ जाते हैं प्राथमिक या पूर्ववर्ती पादपकाय बनाने में सहायता करते हैं।

मेरिस्टेम जो बहुत से पौधों की मूल तथा प्ररोह के परिपक्व क्षेत्रों में होते हैं, विशेषत रूप से, ये काष्ठीय कक्ष बनाते हैं और प्राथमिक मेरिस्टेम के बाद उत्पन्न होते हैं, उन्हें **द्वितीयक** अथवा **पार्श्वीय मेरिस्टेम** कहते हैं। ये सिलिंडिराकार मेरिस्टेम होते हैं पूलीय कैंबियम, अंतरापूलीय कैंबियम तथा कॉर्क कैंबियम पार्श्वीय कैंबियम के उदाहरण हैं।

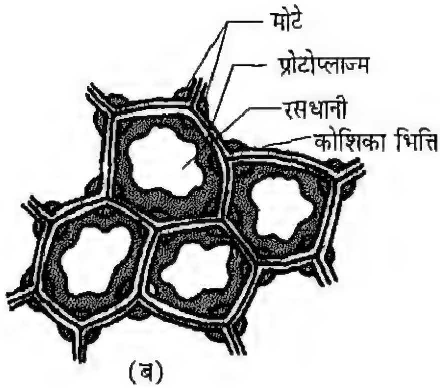
प्राथमिक तथा द्वितीयक दोनों मेरिस्टेमों में कोशिका विभाजन के बाद, नई-नई कोशिकाएँ बनती हैं जो रचनात्मक एवं क्रियात्मक रूप से विशिष्ट होती हैं और उनमें विभाजन की क्षमता नहीं होती। ऐसी कोशिकाओं को स्थायी अथवा **परिपक्व कोशिकाएं** कहते हैं। ये कोशिकाएं स्थायी ऊतक बनाती हैं। पौधे की प्रारंभिक काय बनने के समय शीर्षस्थ मेरिस्टेम के विशिष्ट क्षेत्रों से त्वचीय ऊतक, भरण ऊतक तथा संवहन ऊतक बनते हैं।

6.1.2 स्थायी ऊतक

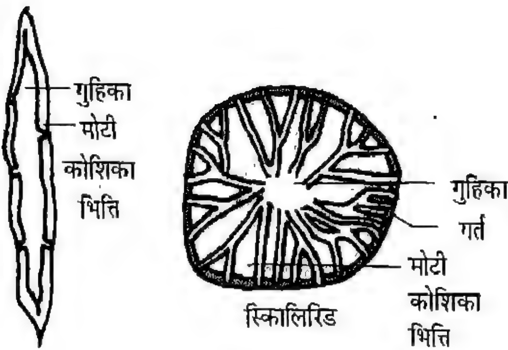
स्थायी ऊतक की कोशिकाएं प्राय: और अधिक विभक्त नहीं होती। स्थायी ऊतक जिनसे कोशिका की रचना होती है तथा उनके कार्य एक समान होते हैं, उन्हें **सरल ऊतक** कहते हैं। स्थायी ऊतक जिनमें विभिन्न प्रकार की कोशिकाएं होती हैं उन्हें **जटिल ऊतक** कहते हैं।



(अ)



(ब)



(स)

चित्र 6.2 सरल ऊतक (अ) पैरेंकाइमा (ब) कोलेंकाइमा (स) स्कलेरंकाइमा

6.1.2.1 सरल ऊतक

सरल ऊतकों में केवल एक ही प्रकार की कोशिकाएं होती हैं। पौधों में विभिन्न प्रकार के सरल ऊतक पाए जाते हैं। जैसे पैरेंकाइमा, कॉलेंकाइमा तथा स्कलरेंकाइमा (दृढ़ोतक) (चित्र 6.2)। **पैरेंकाइमा** अंगों के अंदर के मुख्य घटक हैं। पैरेंकाइमा की कोशिकाएं समव्यासीय (आइसोडायामिट्रिक्) होती हैं। उनका आकार गोलाकार, अंडाकार, बहुकोणीय अथवा लंबाकार हो सकता है। उनकी भित्ति पतली होती है और वे सेल्यूलोज की बनी होती हैं। ये काफी सटी हो सकती हैं अथवा उनके बीच थोड़ा अंतराकोशिकीय स्थान हो सकता है। पैरेंकाइमा बहुत से कार्य जैसे प्रकाश-संश्लेषण, संचय, स्राव संपन्न करते हैं।

कॉलेंकाइमा द्विबीजपत्री पौधों की बाह्यत्वचा के नीचे होते हैं। यह या तो एक समान सतह में होते हैं अथवा चकती में होते हैं। इनकी कोशिकाओं की भित्ति पतली होती है लेकिन इनके कोनों पर सेल्यूलोज, हैमीसेल्यूलोज तथा पैक्टिन जमा होती है, इसलिए इनके कोने मोटे होते हैं। कॉलेंकाइमा की कोशिकाओं का आकार, अंडाकर, गोलाकार अथवा बहुकोणीय हो सकता है। इनमें प्राय: क्लोरोप्लास्ट होता है। इनकी कोशिकाओं में जब क्लोरोप्लास्ट स्थित होता है, तब वे भोजन का स्वांगीकरणी भी कर सकते हैं। इनमें अंतराकोशिकीय स्थान नहीं होता । ये पौधों के वृद्धि हो रहे भागों जैसे शैशव तना तथा पत्ती का वृंत को यांत्रिक सहारा प्रदान करती हैं।

स्क्लेरेंकाइमा में लंबी, संकरी कोशिकाएं होती हैं। इन कोशिकाओं की भित्ति मोटी तथा लिग्निनी होती है। इसकी भित्ति पर कुछ अथवा अधिक गर्त स्थित होते हैं। अधिकांशत: ये मृत होते हैं और उनमें प्रोटोप्लास्ट नहीं होता। आकार, रचना, उद्‌भव तथा विकास में विभिन्नता होने के आधार पर स्कलेरेंकाइमा तंतुमयी अथवा स्किलिरीड हो सकते हैं। तंतु मोटी भित्ति वाले, लंबे तथा नुकीले मृत कोशिकाएं के होते हैं। ये प्राय: पौधों के विभिन्न भागों में समूह के रूप में पाए जाते हैं। **स्किलिरिड** का आकार गोलाकार, अंडाकार अथवा सिलिंडराकार होता है। ये बहुत अधिक मोटे तथा मृत स्कलेरेंकाइमी कोशिकाओं से बने होते हैं, जिनकी गुहिका बहुत से संकरी होती है। ये प्राय: गिरीदार फलों की फल भित्ति की कोशिकाओं, फलों जैसे अमरुद,

नाशपाती तथा चीकू के गूदे; तथा लैग्यूमों के बीज आवरण तथा चाय की पत्ती में पाए जाते हैं। स्कलेरेंकाइमा पौधों को यांत्रिक सहारा देते हैं। स्थायी

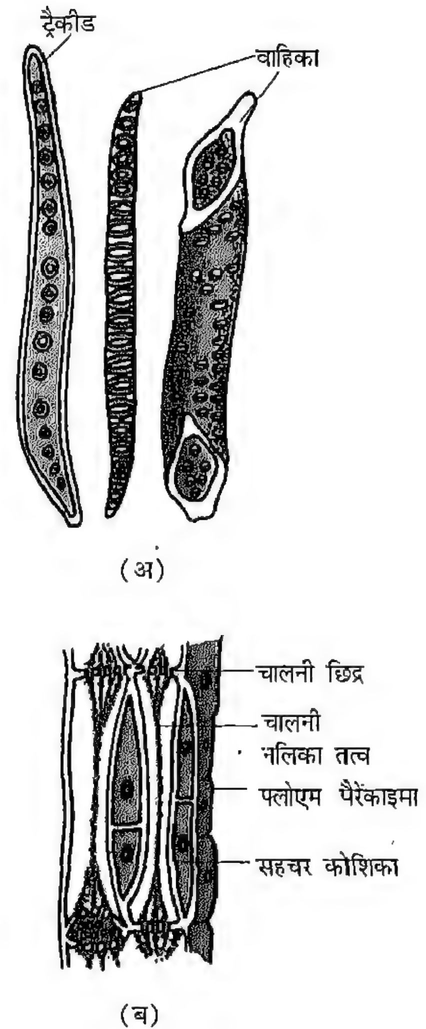
6.1.2.2 जटिल ऊतक

जटिल ऊतक में एक से अधिक प्रकार की कोशिकाएं होती हैं, ये मिलकर एक इकाई की तरह कार्य करती है। जाइलम तथा फ्लोएम जटिल ऊतक के उदाहरण हैं (चित्र 6.3)।

जाइलम मूल से पानी तथा खनिज लवण को तने तथा पत्तियों तक पहुँचाने के लिए एक संवहन ऊतक की तरह कार्य करता है। यह पौधे के अंगों को यांत्रिक सहारा भी देता है। ये चार तत्वों **वाहिनिकी (ट्रैकीड)**, वाहिका, जाइलम तंतु तथा जाइलम पैरेंकाइमा से मिलकर बना है। वाहिनिकी लंबी अथवा नलिकाकार कोशिका है। इसकी कोशिका की भित्ति मोटी तथा लिग्निनी होती है और गुहिका शुंडाकार होती है। ये मृत तथा प्रोटोप्लाज्म विहीन होती है। इसकी कोशिका की भीतरी भित्ति की सतह मोटी होती है जिनकी आकृति विभिन्न होती है। पुष्पी पादपों में वाहिनिकी तथा वाहिका पानी के स्थानांतरण के लिए मुख्य अवयव हैं।

वाहिका लंबी, सिलिंडराकार नली है। इसमें बहुत सी कोशिकाएँ होती है जिन्हें वाहिका अवयव कहते हैं। प्रत्येक की भित्ति लिग्निनी होती है और उसमें बड़ी केंद्र गुहिका होती है। वाहिका में प्रोटोप्लाज्म नहीं होता। ये लंबवत एक दूसरे के साथ एक छिद्रित पाइप की भांति जुड़े रहते हैं। वाहिका का होना एंजियोंस्पर्म का एक प्रमुख गुण है। **जाइलम तंतु** की भित्ति मोटी होती है तथा इसकी केंद्रीय गुहिका विलुप्त होती है। ये पटीय तथा अपटीय हो सकती हैं। **जाइलम पैरेंकाइमा** कोशिकाएं जीवित होती हैं तथा इनकी भित्ति पतली होती है और सेल्युलोज की बनी होती हैं। इनमें स्टार्च तथा वसा तथा अन्य पदार्थ जैसे टैनीन भोजन के रूप में संचित रहता है। पानी का त्रिज्य संवहन रेपैरेंकाइमा कोशिकाओं द्वारा होता है।

प्राथमिक जाइलम दो प्रकार का होता है- आदिदारु (प्रोटोजाइलम) तथा मेटाजाइलम सबसे पहले बनने वाले जाइलम को **प्रोटोजाइलम** तथा बाद में बनने वाले को **मेटाजाइलम** कहते हैं। तने में प्रोटोजाइलम केंद्र (पिथ) की ओर तथा मेटाजाइलम परिधि की ओर होते हैं। इस प्रकार के जाइलम को **मध्यादिदारुक** कहते हैं। मूल में प्रोटोजाइलम परिधि की ओर होते हैं और मेटाजाइलम केंद्र (पिथ) की ओर होते हैं। इस प्रकार के जाइलम को **बाह्य आदिदारुक** कहते हैं।



चित्र 6.3 (अ) जाइलम
(ब) फ्लोएम ऊतक

फ्लोएम प्राय: भोजन को पत्तियों से पौधे के अन्य भागों में पहुंचाते हैं। एंजियोस्पर्म में स्थित फ्लोएम में चालनी नलिकाएं, तत्व, सहचर कोशिकाएं, फ्लोएम पैरेंकाइमा तथा फ्लोएम तंतु होते हैं। जिम्नोस्पर्म में एलब्यूमिनी कोशिकाएँ होती है। **चालनी नलिका** तत्व लंबे, नलिका की तरह की संरचना, लंबवत तथा सहचर कोशिकाओं से जुड़ी हुई होती हैं। इनकी अंत:भित्ति चालनी की तरह छिद्रित होती है जो चालनी प्लेट बनाती है। एक परिपक्व चालनी तत्व में परिधीय साइटोप्लाज्म तथा बड़ी रसधानी होती है, लेकिन इसमें केंद्रक नहीं होता। चालनी नली के कार्य को सहचर के केंद्रक नियंत्रित करते हैं। **सहचर कोशिकाएं** विशिष्ट पैरेंकाइमी कोशिकाएं हैं। ये चालनी नली के तत्वों से सटी रहती हैं। चालनी नली तत्व तथा सहचर कोशिकाएं गर्त क्षेत्र से जुड़ी रहती हैं। ये क्षेत्र अनुदैर्घ्य भित्तियों के बीच में होते हैं। सहचर कोशिकाएं चालनी नली में दाब ग्रेडिएंट (विभव) को बनाए रखती है। **फ्लोएम पैरेंकाइमा** में लंबी शुंडीय सिलिंडराकार कोशिकाएं होती हैं जिनमें सघन साइटोप्लाज्म तथा केंद्रक होता है। कोशिका भित्ति सेल्यूलोज की बनी होती है और उसमें गर्त होते हैं। इनके द्वारा कोशिकाओं के बीच प्लैज्मोडेस्मेटा जोड़ होता है। फ्लोएम पैरेंकाइमा खाद्य पदार्थ तथा अन्य पदार्थों जैसे रेजिन, लेटेक्स तथा म्युसिलेज संचित करता है। एक बीजपत्री पौधों में फ्लोएम पैरेंकाइमा नहीं होते। **फ्लोएम तंतु** (बास्ट रेशा) *स्कलेरेंकाइमी कोशिकाओं के बने होते हैं। ये प्राय: प्राथमिक फ्लोएम में नहीं पाए जाते;* लेकिन ये द्वितीयक फ्लोएम में रहते हैं। ये काफी लंबे, अशाखित तथा नुकीले होते हैं इनके सिरे सुई की तरह के होते हैं। फ्लोएम तंतु की कोशिका भित्ति काफी मोटी होती है। परिपक्वता पर इन तंतु में प्रोटोप्लाज्म समाप्त हो जाता है और वे मृत हो जाते हैं। पटसन, सन तथा भांग जैसे पौधों के फ्लोएम तंतु का बहुत आर्थिक महत्व है। सबसे पहले बनने वाले फ्लोएम में संकरी चालनी नली होती हैं। ऐसे फ्लोएम को **प्राक्फ्लोएम (प्रोटोफ्लोएम)** कहते हैं। बाद में बनने वाले फ्लोएम में बड़ी चालनी नली होती हैं और उसे **अनुफ्लोएम (मेटाफ्लोएम)** कहते हैं।

6.2 ऊतक तंत्र

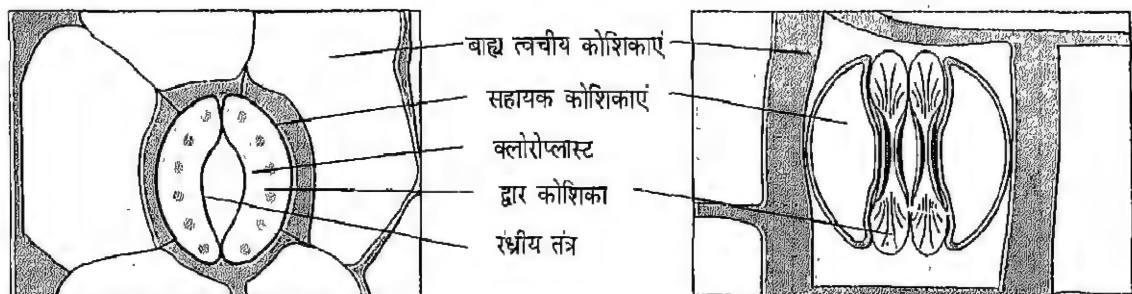
हम अब तक विभिन्न प्रकार के ऊतकों तथा उनमें स्थित कोशिकाओं के प्रकार के आधार पर चर्चा कर रहे थे। आओ, अब हम देखें कि पौधे के विभिन्न स्थानों पर स्थित ऊतक कैसे एक दूसरे से भिन्न होते हैं। उनकी रचना तथा कार्य भी उनकी स्थिति के अनुसार होते हैं। रचना तथा स्थिति के आधार पर ऊतक तंत्र तीन प्रकार का होता है। ये तंत्र हैं- *बाह्यत्वचीय ऊतक तंत्र, भरण अथवा मौलिक ऊतक तंत्र, संवहनी ऊतक तंत्र।*

6.2.1 बाह्य त्वचीय ऊतक तंत्र

बाह्यत्वचीय ऊतक तंत्र पौधे का सबसे बाहरी आवरण है। इसके अंतर्गत बाह्य त्वचीय कोशिकाएं रंध्र तथा बाह्यत्वचीय उपांग - मूलरोम आते हैं। **बाह्यत्वचा** पौधों के भागों की बाहरी त्वचा है। इसकी कोशिकाएं लंबी तथा एक दूसरे से सटी हुई होती हैं और एक अखंड सतह बनाती है। बाह्यत्वचा प्राय: एकल सतह वाली होती है। बाह्यत्वचीय

कोशिकाएं पैरेंकाइमी होती है जिनमें बहुत कम मात्रा में साइटोप्लाज्म होता है जो कोशिका भित्ति के साथ होता है। इसमें एक बड़ी रसधानी होती है। बाह्यत्वचा की बाहरी सतह मोम की मोटी परत से ढकी होती है, जिसे **क्यूटिकल** कहते हैं। क्यूटिकल पानी की हानि को रोकती है। मूल में क्यूटिकल नहीं होती।

रंध्र ऐसी रचनाएँ हैं, जो पत्तियों की बाह्यत्वचा पर होते हैं। रंध्र वाष्पोत्सर्जन तथा गैसों के विनिमय को नियमित करते हैं। प्रत्येक रंध्र में दो सेम के आकार की दो कोशिकाएं होती हैं जिन्हें **द्वारकोशिकाएं** कहते हैं। घास में द्वार कोशिकाएं डंबलाकार होती हैं। द्वारकोशिका की बाहरी भित्ति पतली तथा आंतरिक भित्ति मोटी होती है। द्वार कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट होता है और यह रंध्र के खुलने तथा बंद होने के क्रम को नियमित करता है। कभी-कभी कुछ बाह्यत्वचीय कोशिकाएं जो रंध्र के आस-पास होती हैं। उनकी आकृति, माप तथा पदार्थों में विशिष्टता आ जाती है। इन कोशिकाओं को **सहायक कोशिकाएं** कहते हैं। रंध्रीय छिद्र, द्वारकोशिका तथा सहायक कोशिकाएं मिलकर **रंध्री तंत्र** का निर्माण करती हैं (चित्र 6.4)।

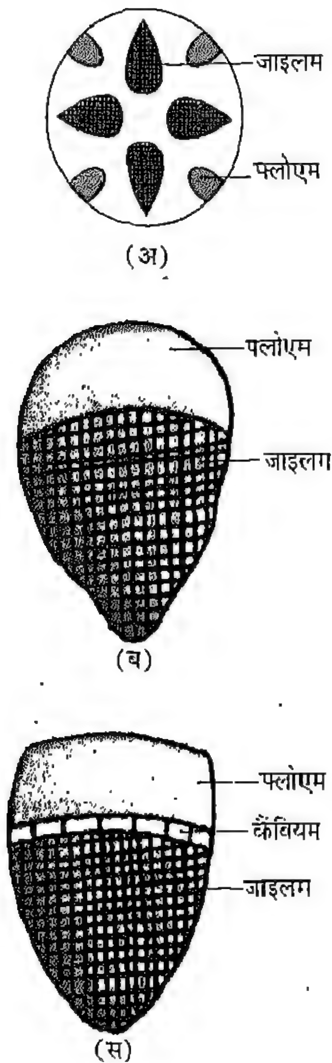


चित्र 6.4 रंध्री तंत्र (अ) सेम के आकार वाली द्वार कोशिका सहित रंध्र (ब) डंबलाकार द्वार कोशिका सहित रंध्र

बाह्यत्वचा की कोशिकाओं पर अनेक रोम होते हैं। इन्हें मूलरोम कहते हैं ये बाह्यत्वचा की कोशिकाओं का एककोशिकीय दीर्घीकरण स्वरूप होती है जो जल एवं खनिजतत्वों के अवशोषण में सहायक होती हैं। तने पर पाए जाने वाले ये बाह्य त्वचीय रोम **त्वचारोम** (ट्राइकोम्स) कहलाते हैं प्ररोह तंत्र में यह त्वचारोम बहुकोशिकीय होते हैं। ये शाखित या अशाखित तथा कोमल या नरम हो सकते हैं ये स्रावी हो सकते हैं ये वाष्पोतसर्जन से होने वाले जल की हानि रोकते हैं।

6.2.2 भरण ऊतक तंत्र

बाह्यत्वचा तथा संवहन बंडल के अतिरिक्त सभी ऊतक **भरण ऊतक** बनाते हैं। इसमें सरल ऊतक जैसे पैरेंकाइमा, कॉलेंकाइमा तथा स्कलेरंकाइमा होते हैं। प्राथमिक तने में पैरेंकाइमी कोशिकाएं प्रायः वल्कुट, (कॉर्टेक्स) परिरंभ, पिथ तथा मज्जाकिरण में होती हैं। पत्तियों में भरण ऊतक पतली भित्ति वाले तथा क्लोरोप्लास्ट युक्त होते हैं और इसे **पर्णमध्योतक** (मेजोफिल) कहते हैं।



चित्र 6.5 विभिन्न प्रकार के संवहन बंडल (अ) अरीय (ब) संयुक्त बंद (स) संयुक्त खुला

6.2.3 संवहनी ऊतक तंत्र

संवहनी तंत्र में जटिल ऊतक, जाइलम तथा फ्लोएम होते हैं। जाइलम तथा फ्लोएम दोनों मिलकर संवहन बंडल बनाते हैं (चित्र 6.5)। द्विबीजपत्री में जाइलम तथा फ्लोएम के बीच **कैंबियम** होता है। ऐसे संवहनी बंडलों जिनमें कैंबियम होता है और वे लगातार द्वितीयक जाइलम तथा फ्लोएम बनाते रहते हैं उन्हें **खुला संवहन बंडल** कहते हैं। एकबीजपत्री पादपों में कैंबियम नहीं होता। चूंकि वे द्वितीयक ऊतक नहीं बनाते इसलिए उन्हें **बंद संवहन बंडल** कहते हैं।

जब जाइलम तथा फ्लोएम एकांतर तरीके से भिन्न त्रिज्या पर होते हैं, तब ऐसे बंडल को **अरीय** कहते है जैसे मूल में। संयुक्त बंडल में जाइलम तथा फ्लोएम एक ही त्रिज्या पर स्थित होते हैं जैसे तने तथा पत्तियों में। **संयुक्त संवहन** बंडल में प्रायः फ्लोएम जाइलम के बाहर की ओर स्थित होता है।

6.3 द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पादपों का शारीर

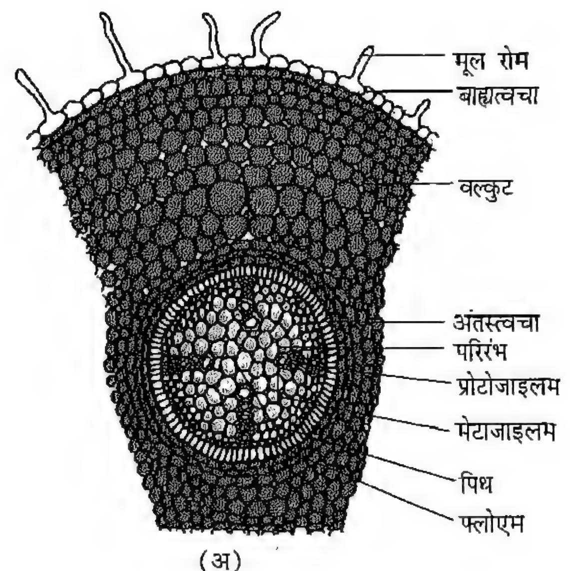
मूल, तने तथा पत्तियों में ऊतक की संरचना का भलीभाँति अध्ययन करने के लिए पौधे के इन भागों की परिपक्व अनुप्रस्थ काट का अध्ययन करना चाहिए।

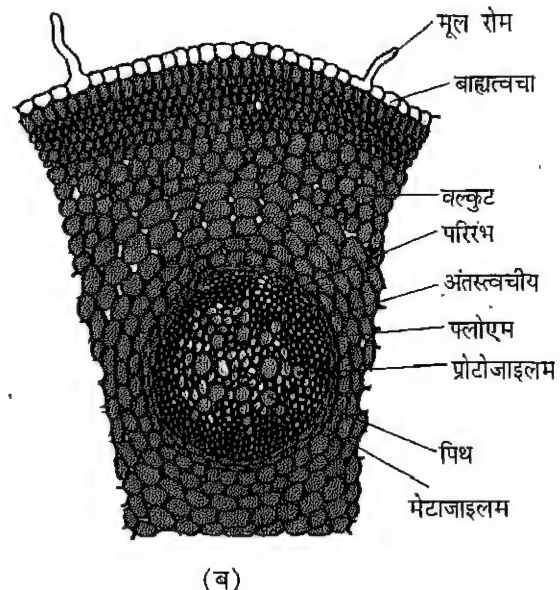
6.3.1 द्विबीजपत्री मूल

चित्र 6.6 (अ) को देखो। इसमें सूरजमुखी मूल की अनुप्रस्थ काट को दिखाया गया है। भीतरी ऊतकों के विन्यास को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया गया है।

सबसे बाहरी भित्ति **बाह्यत्वचा** है। इसमें नलिकाकार सजीव घटक होते हैं। इनमें से कुछ कोशिकाएँ बाहर की ओर निकली होती हैं जो एक **कोशिकीय मूल रोम** बनाती हैं। वल्कुट में पतली भित्ति वाली पैरेंकाइमी कोशिकाओं की कई परतें होती हैं। इनके बीच में **अंतराकोशिकीय** स्थान होता है। वल्कुट की सबसे भीतरी परत अंतस्त्वचा होती है। इसमें नालाकार की कोशिकाओं की एकल सतह होती है। इन कोशिकाओं में अंतरा कोशिकीय स्थान नहीं

होता। अंतस्त्वचा की कोशिकाओं की स्पर्श रेखीय तथा अरीय भित्तियों पर **कैस्पेरी पट्टियों** के रूप में जल अपारगम्य, मोमी पदार्थ सूबेरिन होता है। अंतस्त्वचा से भीतर की ओर मोटी भित्ति पैरेंकाइमी कोशिकाएँ होती हैं जिसे **परिरंभ** कहते हैं। इन कोशिकाओं में द्वितीयक वृद्धि के दौरान संवहन कैंबियम तथा पार्श्वीय मूल प्रेरित होती है। पिथ छोटी अथवा अस्पष्ट होती है। पैरेंकाइमी कोशिकाएँ जो जाइलम तथा फ्लोएम बंडल के बीच में हैं उन्हें **कंजकटिव ऊतक** कहते हैं। दो से चार तक जाइलम तथा फ्लोएम के खंड होते हैं। इसके बाद जाइलम तथा फ्लोएम के बीच एक कैंबियम छल्ला बनता हैं अंतस्त्वचा के अंदर की ओर सारे ऊतक जैसे परिरंभ, संवहन ऊतक तथा पिथ मिलकर **रंभ** (स्टेल) बनाते हैं।





चित्र 6.6 अनुप्रस्थकाट (अ) द्विबीजपत्री मूल (प्राथमिक) (ब) एकबीजपत्री मूल

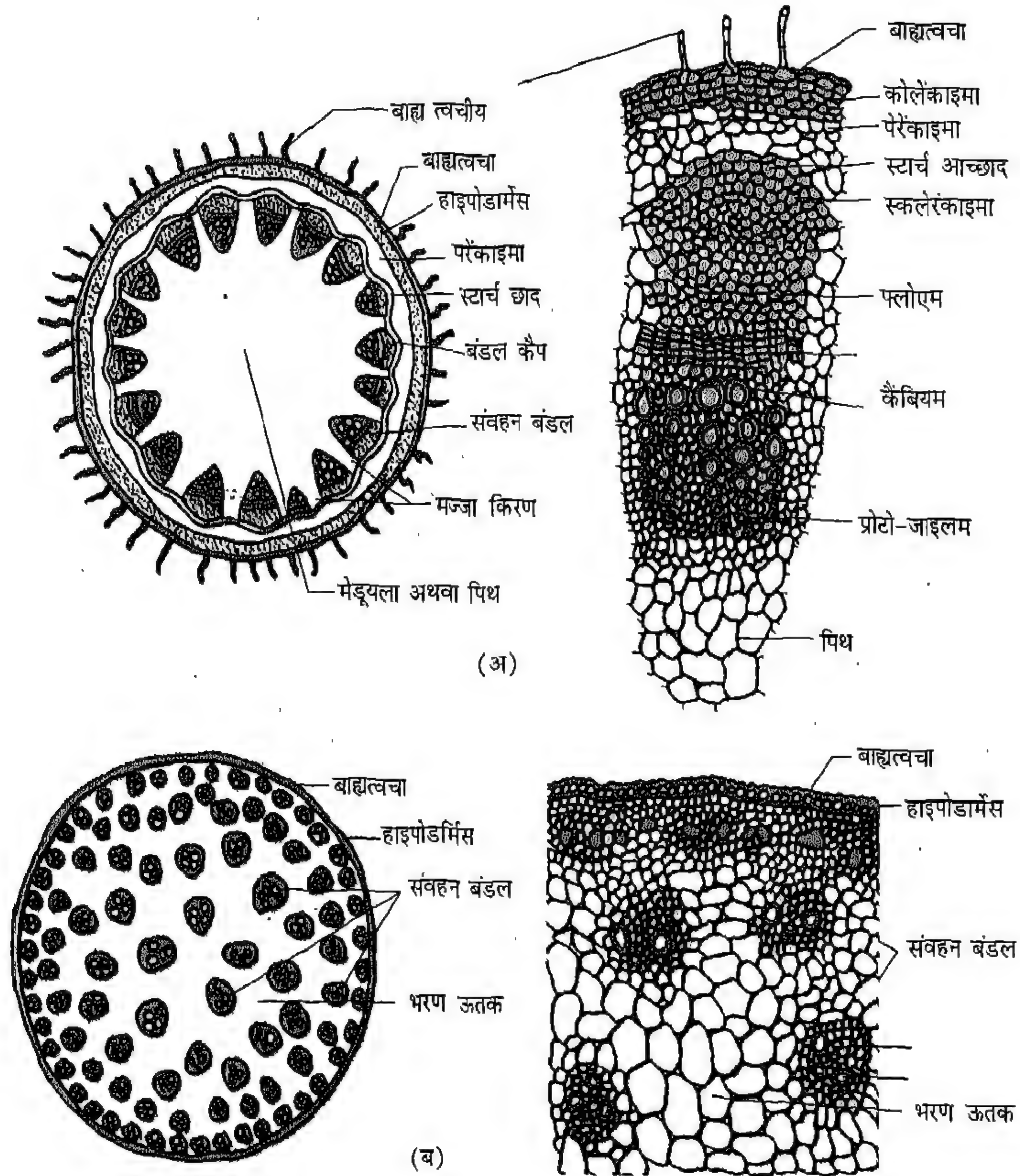
6.3.2 एकबीजपत्री मूल

एक बीजपत्री मूल का शारीर बहुत अधिक द्विबीजपत्री मूल के शारीर के समान होता है (चित्र 6.6 ब)। इसमें बाह्यत्वचा, वल्कुट, अंतस्त्वचा, परिरंभ, संवहन बंडल तथा पिथ होते हैं। एक बीजपत्री में इनकी संख्या प्राय: छ: से अधिक (बहु-आदिदारुक) होती है जबकि द्विबीजपत्री में कुछ ही जाइलम बंडल होते हैं। पिथ बड़ी तथा बहुत विकसित होती है तथा एकबीजपत्री मूल में कैंबियम नहीं होता। इसलिए इसमें द्वितीयक वृद्धि नहीं होती है।

6.3.3 द्विबीजपत्री तना

एक प्ररुप शैशव द्विबीजपत्री तने की अनुप्रस्थ काट में निम्नलिखित संरचनाएँ होती हैं। **बाह्यत्वचा** तने की सबसे बाहरी रक्षी सतह है (चित्र 6.7 अ)। यह क्यूटीकल पतली परत से ढकी होती है। इस पर कुछ बहुकोशकीय, एक पंक्तिक त्वचारोम तथा कुछ रंध्र होते हैं। बाह्यत्वचा तथा परिरंभ के बीच कोशिकाओं की बहुत सी सतहें होती है, जिसे वल्कुट कहते है। इसके तीन क्षेत्र होते हैं। **बाहरी अधस्त्वचा** (हाइपोडर्मिस) ये

कॉलेंकाइमा कोशिकाओं की कुछ परतें होती हैं जो बाह्यत्वचा के नीचे होती हैं। ये शैशव तने को यांत्रिक सहारा देती हैं। वल्कुट सतहें अधस्त्वचा के नीचे होती हैं। इसमें गोलाकार पतली भित्ति वाले पैरेंकाइमा कोशिकाओं की कुछ परतें होती हैं। उसमें सुस्पष्ट अंतरा कोशिकीय स्थान होता है। **अंतस्त्वचा** वल्कुट की सबसे भीतरी सतह होती है और इसमें नाल आकार की कोशिकाओं की एक सतह होती है। इन कोशिकाओं में स्टार्च प्रचुर मात्रा



चित्र 6.7 तने की अनुप्रस्थ काट (अ) द्विबीजपत्री (ब) एकबीजपत्री

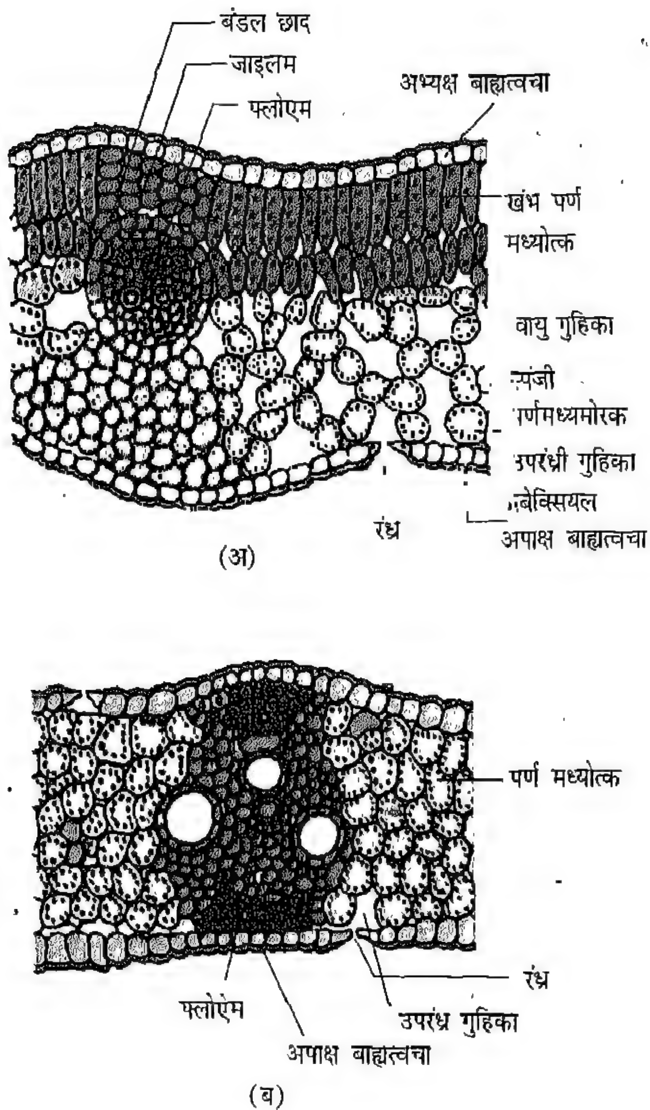
में होता है, इसलिए इसे **स्टार्च आच्छद** भी कहते हैं। परिरंभ अंतस्त्वचा के नीचे और फ्लोएम के ऊपर होती है। इसमें स्कलेरंकाइमा की कोशिकाएँ अर्द्धचंद्राकार समूह में होती है। संवहन बंडलों के बीच अरीय रूप में विन्यस्त पैरेंकाइमा कोशिकाओं की कुछ सतहें होती हैं जो मज्जाकिरण बनाते हैं। बहुसंख्य **संवहन बंडल** एक छल्ले में होते हैं। संवहन बंडलों का छल्ले में बना होना द्विबीजपत्री तने का गुण है। प्रत्येक संवहन बंडल संयुक्त मध्यादिदारुक तथा खुले होते हैं। तने में **पिथ** केंद्र में होती हैं इसमें गोलाकार, पैरेंकाइमी कोशिकाएँ होती हैं। इन कोशिकाओं के बीच में अंतरा कोशिकीय स्थान होता है।

6.3.4 एकबीजपत्री तना

एकबीजपत्री तने की शारीरिक रचना द्विबीजपत्री तने से कुछ भिन्न है, लेकिन ऊतकों के विन्यस्त रहने के क्रम में कोई अंतर नहीं हैं। चित्र 6.7 अ में आप देखेंगे कि एकबीजपत्री तने की बाह्यत्वचा पर त्वचारोम नहीं होते। एकबीजपत्री तने में अधस्त्वचा स्कलेरंकाइमा कोशिकाओं की बनी होती है। वल्कुट में कई सतहें होती हैं, इसमें बहुत से बिखरे हुए संवहन बंडल होते हैं। इसके संवहन बंडल के चारों ओर स्कलेंकाइमी बंडल आच्छद होता है (चित्र 6.7 ब)। संवहन बंडल संयुक्त तथा बंद होते हैं। परिधीय संवहन बंडल प्राय: छोटे और केंद्र में बड़े होते हैं। संवहन बंडल में फ्लोएम पैरेंकाइमा नहीं होते और इसमें जल रखने वाली गुहिकाएँ होतीं हैं।

6.3.5 पृष्ठाधार (द्विबीजपत्री) पत्ती

पृष्ठाधर पत्ती के फलक की लंबवत् काट तीन प्रमुख भागों जैसे बाह्यत्वचा, पर्ण मध्योतक तथा संवहन तंत्र दिखाते हैं। **बाह्यत्वचा** जो ऊपरी सतह (अभ्यक्ष बाह्यत्वचा) तथा निचली सतह (अपाक्ष बाह्यत्वचा) को घेरे रहती हैं उस पर क्यूटीकल होती है। निचली बाह्यत्वचा पर ऊपरी सतह की अपेक्षा रंध्र बहुत अधिक संख्या में होते हैं। ऊपरी सतह पर रंध्र नहीं भी हो सकते हैं। ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा के बीच स्थित सभी ऊतकों को **पर्णमध्योतक** कहते हैं। पर्णमध्योतक जिसमें क्लोरोप्लास्ट होते हैं और प्रकाश संश्लेषण करते हैं, पैरेंकाइमा कोशिकाओं से बनते हैं। और इसमें दो प्रकार की कोशिकाएं होती है– **(i) खंभ पैरेंकाइमा** तथा **(ii) स्पंजी पैरेंकाइमा** है। खंभ पैरेंकाइमा ऊपरी बाह्यत्वचा के बिल्कुल नीचे होते हैं और इनकी कोशिकाएँ लंबी होती हैं। ये लंबवत समानांतर होती हैं। स्पंजी पैरेंकाइमा खंभ कोशिकाओं से नीचे होती हैं और निचली बाह्यत्वचा तक जाती है। इस क्षेत्र की कोशिकाएँ अंडाकर अथवा गोल होती हैं। इन कोशिकाओं के बीच बहुत खाली स्थान तथा वायु गुहिकाएँ होती हैं। **संवहन तंत्र** में संवहन बंडल होते हैं। इन बंडल शिराओं तथा मध्यशिरा संवहन बंडल का माप शिराओं के माप पर आधारित होता है। शिराओं की मोटाई द्विबीजपत्री पत्तियों की जालिका शिराविन्यास में भिन्न होती है। संवहन बंडल संयुक्त बहि:फ्लोएमी तथा मध्यादिदारुक होते हैं। प्रत्येक संवहन बंडल के चारों ओर मोटी भित्ति वाली कोशिकाओं की एक परत होती है जो सघन होती हैं। इसे **बंडल**



चित्र 6.8 पत्ती की अनुप्रस्थ काट (अ) द्विबीज (ब) एकबीजपत्री

आच्छद कहते हैं। चित्र 6.8 (अ) देखो और संवहन बंडल में जाइलम के स्थान को देखो।

6.3.6 समद्धि पार्श्व (एकबीजपत्री) पत्ती

एक समृद्धि पार्श्व पत्ती का शारीर तथा पृष्ठाधार पत्ती का शारीर अधिकांश समान ही है; लेकिन उनमें कुछ भिन्नता भी देख सकते हैं इसमें ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा पर एक समान क्यूटीकल होती है और उसमें दोनों सतह पर रंध्रों की संख्या लगभग समान होती है चित्र 6.8(ब)।

घास में ऊपरी बाह्यत्वचा कुछ कोशिकाएँ लंबी, खाली तथा रंगहीन होती हैं। इन कोशिकाओं को **आवर्ध त्वक्कोशिका** कहते हैं। जब कोशिकाएँ स्फीत होती हैं, तब ये कोशिकाएँ मुड़ी हुई पत्तियों को खुलने में सहायता करती हैं। वाष्पोत्सर्जन की अधिक दर होने पर ये पत्तियाँ वाष्पोत्सर्जन की दर कम करने के लिए मुड़ जाती हैं। एक बीजपत्री की पत्तियों में शिरा विन्यास समानांतर होता है इसका पता तब लगता है जब हम पत्ती की लंबवत काट देखते हैं जिसमें संवहन बंडल का माप भी एक समान होता है।

6.4 द्वितीयक वृद्धि

मूल तथा तना लंबाई में शीर्षस्थ विभज्या की सहायता से बढ़ते हैं। इसे प्राथमिक वृद्धि कहते हैं। अधिकांश द्विबीजपत्रियों में प्राथमिक वृद्धि के अतिरिक्त उनकी मोटाई भी बढ़ती है। इस वृद्धि को **द्वितीयक वृद्धि** कहते हैं। यह एकबीजपत्री मूल तथा तने में नहीं होता। जिम्नोस्पर्म के तने तथा मूल में भी द्वितीयक वृद्धि होती है। जो ऊतक द्वितीयक वृद्धि में भाग लेते हैं उन्हें **पार्श्वीय मेरिस्टेम, संवहन कैंबियम** तथा **कार्क कैंबियम** कहते हैं।

6.4.1 संवहन कैंबियम

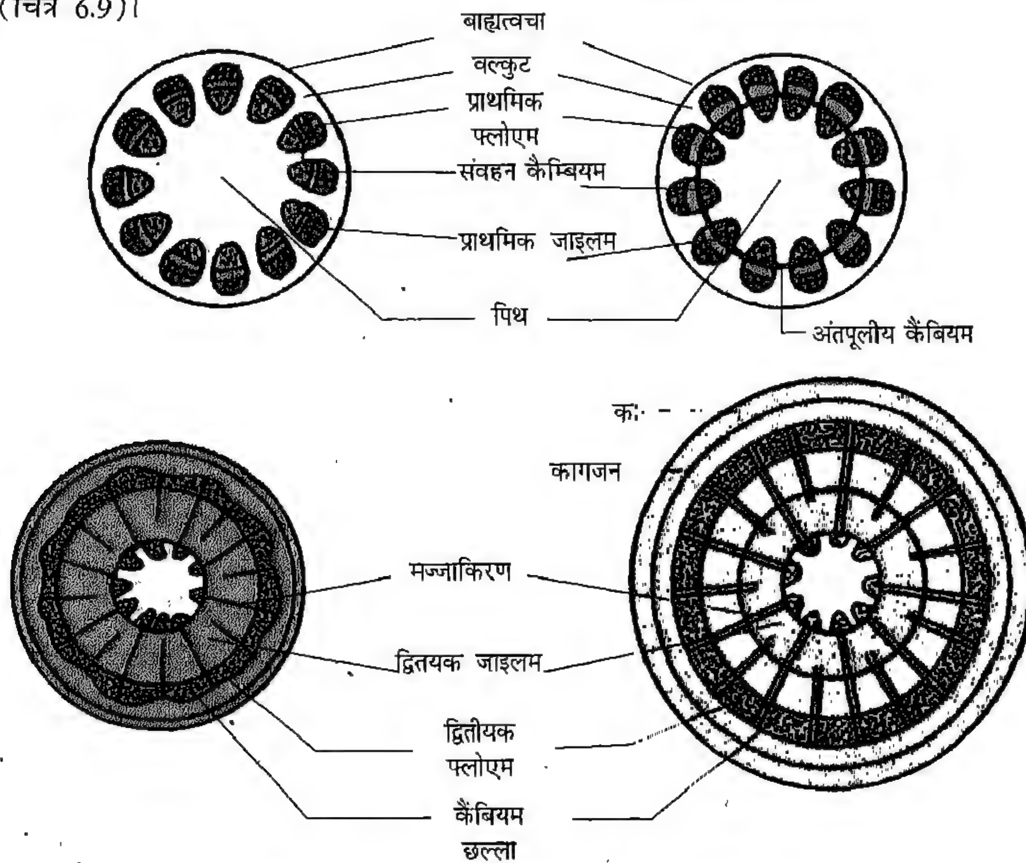
मेरिस्टेमी सतह जो संवहन ऊतक-जाइलम तथा फ्लोएम को काटती है उसे संवहन कैंबियम कहते हैं। शैशव तने में यह जाइलम तथा फ्लोएम के बीच एकल सतह के रूप में खंडों में होती हैं। बाद में यह एक संपूर्ण छल्ले का रूप ले लेती है।

6.4.1.1 *कैंबियमी छल्ले का बनना*

द्विबीजपत्री तने में प्राथमिक जाइलम तथा प्राथमिक फ्लोएम के बीच में स्थित कैंबियम **अंत:पूलीय कैंबियम** हैं। मध्यांश कोशिकाओं की कोशिकाएँ जो अंत:पूलीय के समीप होती हैं। ये मेरिस्टेमी (विभज्य) हो जाती हैं और एक **अंतरापूलीय कैंबियम** बनाता हैं। इस प्रकार कैंबियम का एक अखंड छल्ला बन जाता है।

6.4.1.2 *कैंबियम छल्ले की क्रिया*

कैंबियम छल्ला सक्रिय हो जाता है और बाहर तथा भीतर दोनों ओर नई कोशिकाएँ बनाता है। जो कोशिकाएँ पिथ की ओर बनती हैं, वे परिपक्व होने पर **द्वितीयक जाइलम** बनाती हैं और जो बाहर (परिधि) की ओर होती हैं, वे **द्वितीयक फ्लोएम** बनाती हैं। कैंबियम प्राय: भीतर की ओर अधिक सक्रिय होता है जबकि बाहर की इतना सक्रिय नहीं होता। इसके परिणामस्वरुप द्वितीयक जाइलम अधिक बनता है तथा द्वितीयक फ्लोएम कम। द्वितीयक फ्लोएम शीघ्र ही एक सघन पिंड बन जाता है। अंतत: प्राथमिक तथा द्वितीयक फ्लोएम शनै-शनै: दब जाते हैं; क्योंकि द्वितीयक जाइलम अखंड रूप से बनते रहते हैं। प्राथमिक जाइलम केंद्र में अथवा केंद्र के आस-पास लगभग वैसे ही बने रहते हैं। कुछ स्थानों पर कैंबियम पैरेंकाइमा की एक संकरी पट्टी बनाते हैं। यह पट्टी द्वितीयक जाइलम तथा द्वितीयक फ्लोएम में होकर अरीय दिशाओं में जाती है। इंको **द्वितीयक मज्जाकिरण** कहते हैं (चित्र 6.9)।



चित्र 6.9 अनुप्रस्थ काट में द्विबीजपत्री तने की द्वितीयक वृद्धि

6.4.1.3 बसंतदारु तथा शरद दारु

कैंबियम की क्रिया शरीरक्रियात्मक तथा पर्यावरणीय कारकों से नियंत्रित होती है। उष्णकटि बंधीय क्षेत्रों में, जलवायु समान नहीं रहती। बसंत के मौसम में कैंबियम बहुत सक्रिय होता है और अधिक संख्या में वाहिकाएँ बनाता है जिसकी गुहिका चौड़ी होती है। बसंत के मौसम में बनने वाली काष्ठ को **बसंतदारु** अथवा **अग्रदारु** कहते हैं। सर्दियों में कैंबियम कुछ कम सक्रिय होता है और संकरी वाहिकाएँ बनाता है। इस काष्ठ को **शरददारु** अथवा **पश्चदारु** कहते हैं।

बसंत का रंग हल्का होता है और उसका घनत्व भी कम होता है। शरददारु गहरे रंग की होती है और उसका घनत्व भी अधिक होता हैं। दो प्रकार के काष्ठ एकांतर संकेंद्र वलय के रूप में होते हैं जिन्हें **वार्षिक वलय** कहते हैं आप इन वार्षिक वलयों को गिन कर वृक्ष की आयु का अनुमान लगा सकते हैं।

6.4.1.4 अंत:काष्ठ तथा सरदारु

लंबी आयु वाले वृक्षों में द्वितीयक जाइलम का अधिकांश भाग विशेषत: तने का केंद्रीय भाग अथवा सबसे भीतरी भाग काले भूरे रंग का हो जाता है। और इसे अंत काष्ठ अथवा कठोरदारु कहते हैं। अंत:काष्ठ में बहुत से कार्बनिक यौगिक जैसे टेनिन, रेजिन, तेल, गोंद, खुशबूदार पदार्थ तथा आवश्यक तेल होते हैं। ये पदार्थ अंत:काष्ठ को कठोर, चिरस्थायी बनाते हैं और लकड़ी को सूक्ष्म जीवियों तथा कीड़ों से भी बचाते हैं। इस क्षेत्र में मृत तत्व होते हैं जिनकी भित्ति बहुत ही लिग्निनी होती है। इसे **हृददारु** कहते हैं। अंत:काष्ठ पानी का संवहन नहीं करता। यह केवल तने को यांत्रिक सहारा देता है। द्वितीयक जाइलम की परिधि क्षेत्र को **रसदारु** कहते हैं, जो हल्के रंग का होता है और जिसमें सजीव पैरेंकाइमा कोशिकाएँ होती हैं। यह मूल से पानी तथा खनिज लवण को पत्तियों तक पहुंचाता हैं।

6.4.2 कार्क कैंबियम

जैसे-जैसे तने की परिधि में वृद्धि होती जाती है त्यों-त्यों बाहरी वल्कुट तथा बाह्यत्वचा की सतहें टूटती जाती है और उन्हें नई संरक्षी कोशिका सतह की आवश्यकता होती है। इसलिए एक दूसरे मेरिस्टेमी ऊतक तैयार हो जाता है जिसे **कार्क कैंबियम** अथवा **कागजन** कहते हैं। यह प्राय: वल्कुट क्षेत्र में विकसित होता है।

यह कुछ सतही मोटी और संकरी पतली भित्ति वाली आयाताकार कोशिकाओं के बनी हाती हैं। कागजन दोनों ओर कोशिकाओं को बनाता है। बाहर की ओर की कोशिकाएँ **कार्क** अथवा **काग** में बँट जाती हैं और अंदर की ओर की कोशिकाएँ **द्वितीयक वल्कुट** अथवा कागअस्तर में विभेदित हो जाती है। कार्क में पानी प्रवेश नहीं कर सकता; क्योंकि इसकी कोशिका भित्ति पर सूबेरिन जमा रहता है। द्वितीयक वल्कुट की कोशिकाएँ पैरेंकाइमी होती हैं। कागजन, काग तथा काग मिलकर **परिचर्म** बनाते हैं। कार्क कैंबियम की क्रियाशीलता के कारण वल्कुट की बाहरी परत तथा बाह्यत्वचा पर दबाव पड़ता है

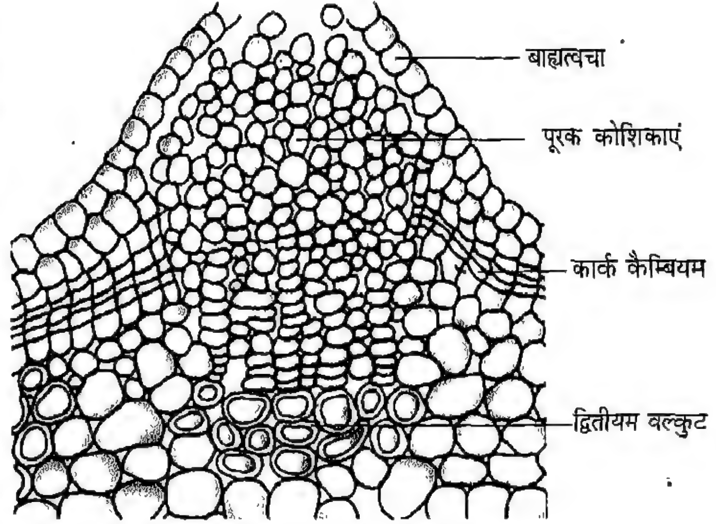
और अंततः ये परतें मृत हो जाती हैं और उतर जाती हैं क्रियाशील कार्क कैंबियम के बाहर जितनी भी मृत कोशिकाएँ हैं, वे **छालवल्क** बनाते हैं।

छालवल्क एक गैर तकनीकी शब्द है जो वाहिका कैंबियम से बाहर तक के ऊतकों को संदर्भित करता है। अतः इसमें द्वितीयक फ्लोएम भी शामिल है। मौसम के शुरुआत में जो छाल बनती है उसे **प्रारंभी** या **कोमल** छाल कहते हैं और मौसम के अंत में बनने वाली छाल को **पश्च** या **कठोर** छाल कहते हैं। *छालवल्क की रचना में विभिन्न प्रकार की सम्मिलित कोशिकाओं के नाम लिखें।*

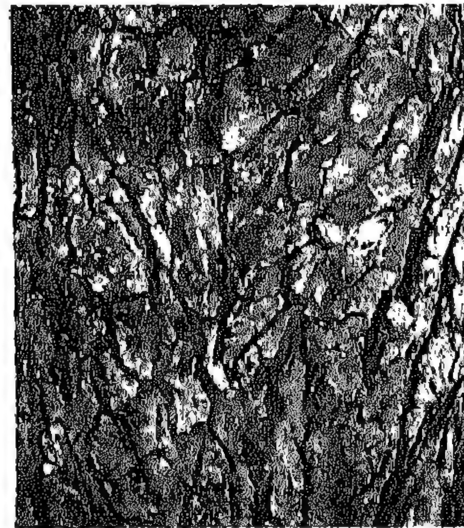
कुछ क्षेत्रों में कागजन कार्क कोशिकाओं की बजाय बाहर की ओर पैरेंकाइमी कोशिकाएँ बनाता है। ये पैरेंकाइमी कोशिकाएँ बाह्यत्वचा पर फट जाती हैं और लेंस के आकार के छिद्र बनाती है जिसे **वातरंध्र** कहते हैं। ये बाहरी वायुमंडल तथा तने की भीतरी ऊतकों के बीच गैसों का आदान-प्रदान करते हैं। ये अधिकांश काष्ठीय वृक्षों में पाए जाते हैं (चित्र 6.10)।

6.4.3 मूल में द्वितीयक वृद्धि

द्विबीजपत्री मूल में संवहन कैंबियम का उद्‌भव पूर्णतः द्वितीयक है। यह फ्लोएम बंडल के तुरंत नीचे, परिरंभ ऊतक के कुछ भाग, प्रोटोजाइलम के ऊपर स्थित ऊतकों से उत्पन्न होता है और एक अखंड लहरदार छल्ला बनाता है। यह बाद में वृत्ताकार बन जाता है (चित्र 6.11)। इसके आगे की घटनाएँ द्विबीजपत्री तने की तरह ही होती है, जो ऊपर बताई जा चुकी हैं। जिम्नोस्पर्म की मूल तथा तने में भी द्वितीयक वृद्धि होती हैं। एकबीजपत्री पौधों में द्वितीयक वृद्धि नहीं होती।

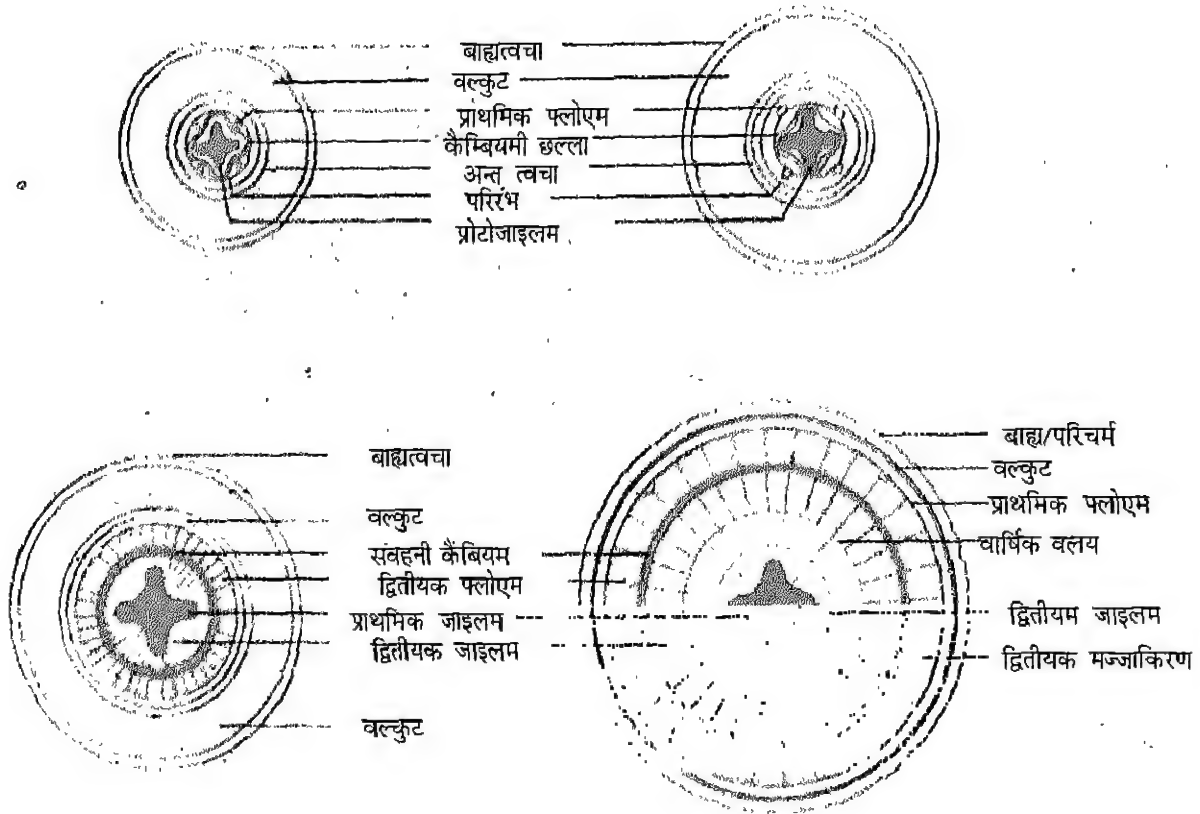


(अ)



(ब)

चित्र 6.10 (अ) वातरंध्र तथा (ब) छाल वल्क



चित्र 6.11 एक प्रारूपी द्विबीज मूल में पाई जाने वाली द्वितीयक वृद्धि की विभिन्न अवस्थाएं

सारांश

शारीरिकी दृष्टि से पौधा विभिन्न प्रकार के ऊतकों से बना है। ऊतक मुख्यतः मेरिस्टेमेटिक (शीर्ष, पार्श्वीय तथा अंतर्वेशी) तथा स्थायी (सरल तथा जटिल) में विभक्त होते हैं। ऊतक अनेकों कार्य करते हैं जैसे स्वांगीकरण, यांत्रिक सहारा, संचय तथा पानी, खनिज लवण तथा प्रकाशसंश्लेषी जैसे पदार्थों का संवहन। बाह्य त्वचीय तंत्र में बाह्य त्वचीय कोशिकाएँ, रंध्र तथा बाह्य त्वचीय उपांग होते हैं। तीन प्रकार के ऊतक तंत्र होते हैं- जैसे बाह्य त्वचीय, भरण तथा संवहन। भरण ऊतक तंत्र के तीन क्षेत्र होते हैं- वल्कुट (कॉर्टेक्स), परिरंभ तथा पिथ। संवहन ऊतक तंत्र में जाइलम तथा फ्लोएम होता है। जाइलम तथा फ्लोएम की स्थिति के अनुसार संवहन बंडल विभिन्न प्रकार के होते हैं।

संवहन बंडल संवहन रचना बनाते हैं और पानी, खनिज तथा खाद्य पदार्थों का स्थानांतरण करते हैं। द्विबीजपत्री तथा एक बीजपत्री पौधों की आंतरिक रचना में बहुत अंतर होता है। ये प्रकार, संख्या तथा संवहन बंडल की स्थिति के आधार पर अलग-अलग होते हैं। द्वितीयक वृद्धि द्विबीजपत्री पौधों के तने तथा मूल में होती है। इससे इंका व्यास बढ़ जाता है। काष्ठ वास्तव में द्वितीयक जाइलम है उनके संघटक तथा समय उत्पादन के अनुसार काष्ठ विभिन्न प्रकार के होते हैं।

अभ्यास

1. विभिन्न प्रकार के मेरिस्टेम की स्थिति तथा कार्य बताओ।
2. कार्क कैंबियम ऊतकों से बनाता है जो कार्क बनाते हैं। क्या आप इस कथन से सहमत हैं? वर्णन करो।
3. चित्रों की सहायता से काष्ठीय एंजियोस्पर्म के तने में द्वितीयक वृद्धि के प्रक्रम का वर्णन करो। इसकी क्या सार्थकता है?
4. निम्नलिखित में विभेद करो
   (अ) ट्रेकीड तथा वाहिका
   (ब) पैरेंकाइमा तथा कॉलेंकाइमा
   (स) रसदारु तथा अंत:काष्ठ
   (द) खुला तथा बंद संवहन बंडल
5. निम्नलिखित में शारीर के आधार पर अंतर करो
   (अ) एकबीजपत्री मूल तथा द्विबीजपत्री मूल
   (ब) एकबीजपत्री तना तथा द्विबीजपत्री तना
6. आप एक शैशव तने की अनुप्रस्थ काट का सूक्ष्मदर्शी से अवलोकन करें। आप कैसे पता करेंगे कि यह एकबीजपत्री तना अथवा द्विबीजपत्री तना है? इसके कारण बताओ।
7. सूक्ष्मदर्शी किसी पौधे के भाग की अनुप्रस्थ काट निम्नलिखित शारीर रचनाएँ दिखाती है।
   (अ) संवहन बंडल संयुक्त, फैले हुए तथा उसके चारों ओर स्केलेरेंकाइमी आच्छद हैं
   (ब) फ्लोएम पैरेंकाइमा नहीं है।
   आप कैसे पहचानोगे कि यह किसका है?
8. जाइलम तथा फ्लोएम को जटिल ऊतक क्यों कहते हैं?
9. रंध्रीतंत्र क्या है? रंध्र की रचना का वर्णन करो और इसका चिह्नित चित्र बनाओ।
10. पुष्पी पादपों में तीन मूलभूत ऊतक तंत्र बताओ। प्रत्येक तंत्र के ऊतक बताओ।
11. पादप शारीर का अध्ययन हमारे लिए कैसे उपयोगी है?
12. परिचर्म क्या है? द्विबीजपत्री तने में परिचर्म कैसे बनता है?
13. पृष्ठाधर पत्ती की भीतरी रचना का वर्णन चिह्नित चित्रों की सहायता से करो।
14. त्वक कोशिकाओं की रचना तथा स्थिति उन्हें किस प्रकार विशिष्ट कार्य करने में सहायता करती है?

अध्याय 7

प्राणियों में संरचनात्मक संगठन

आपने पिछले अध्याय में प्राणि जगत के अनेक एक कोशिकीय (unicellular) व बहुकोशिकीय (multicellular) जीवों का अध्ययन किया। एक कोशिकीय प्राणियों में जीवन की समस्त जैविक क्रियाएं जैसे- पाचन, श्वसन तथा जनन, एक ही कोशिका द्वारा संपन्न होती हैं। बहुकोशकीय प्राणियों के जटिल शरीर में उपर्युक्त आधारभूत क्रियाएं भिन्न-भिन्न कोशिका समूहों द्वारा व्यवस्थित रूप से संपन्न की जाती हैं। सरल प्राणी हाइड्रा का शरीर विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं का बना हुआ है, जिनमें प्रत्येक कोशिका की संख्या हजारों में होती है। मानव का शरीर अरबों कोशिकाओं का बना हुआ है, जो विविध कार्य संपन्न करता है। ये कोशिकाएं शरीर में एक साथ कैसे काम करती हैं? बहुकोशिकीय प्राणियों में समान कोशिकाओं का समूह, अंतरकोशिकीय पदार्थों सहित एक विशेष कार्य करता है, कोशिकाओं का ऐसा संगठन **ऊतक** (tissue) कहलाता है।

आपको आश्चर्य हो सकता है कि सभी जटिल प्राणियों का शरीर केवल चार प्रकार के आधारभूत ऊतकों का बना हुआ है। ये सब ऊतक एक विशेष अनुपात एवं प्रतिरूप से संगठित होकर अंगों का निर्माण करते हैं, जैसे- आमाशय, फुप्फुस (lungs), हृदय और वृक्क (kidney)। जब दो या दो से अधिक अंग अपनी भौतिक एवं रासायनिक पारस्परिक-क्रिया से एक निश्चित कार्य को संपन्न कर अंग-तंत्र का निर्माण करते हैं जैसे-पाचन तंत्र, श्वसन तंत्र इत्यादि। समस्त शरीर की जैविक क्रियाएं, कोशिका, ऊतक, अंग तथा अंग तंत्र में श्रम विभाजन के द्वारा संपन्न होती हैं और पूरे शरीर को जीवित रखने के लिए योगदान देती हैं।

7.1 प्राणि ऊतक

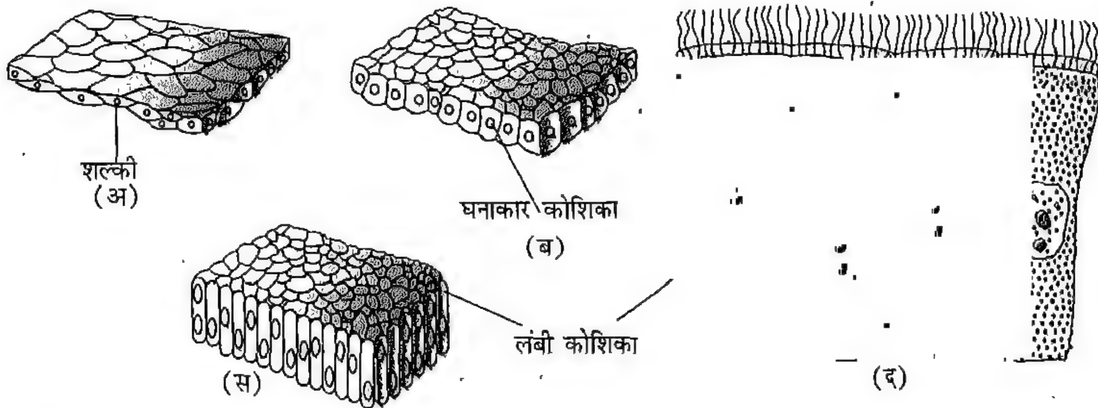
कोशिका की संरचना उसके कार्य के अनुसार बदलती रहती है। इस प्रकार ऊतक भिन्न-भिन्न होते हैं और उन्हें मोटे तौर पर निम्नलिखित से चार प्रकारों में वर्गीकृत किया

गया है- (1) उपकला ऊतक (2) संयोजी ऊतक (3) पेशी ऊतक (4) तंत्रिका ऊतक

7.1.1 उपकला ऊतक

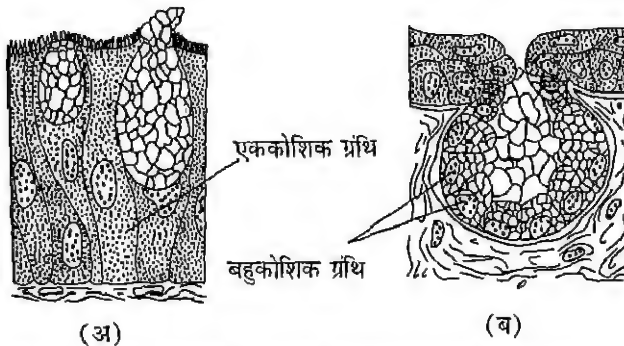
हम उपकला ऊतक को सामान्यत: उपकला ही कहते हैं। इस ऊतक में एक मुक्त स्तर होता है जो एक ओर तो देह-तरल (body fluid) और दूसरी ओर बाह्य वातावरण के संपर्क में रहता है और इस प्रकार देह का आवरण अथवा आस्तर (lining) का निर्माण करता है। कोशिकाएं अंतराकोशिकीय आधात्री (intercellular matrix) द्वारा दृढतापूर्वक जुड़ी रहती हैं। उपकला ऊतक दो प्रकार के होते हैं - 1. **सरल उपकला** तथा **संयुक्त उपकला।** सरल उपकला एक ही स्तर का बना होता है तथा यह देहगुहाओं, वाहिनियों, और नलिका का आस्तर है। संयुक्त उपकला कोशिकाओं की दो या दो से अधिक स्तरों की बनी होती है और इसका कार्य रक्षात्मक है जैसे कि हमारी त्वचा। कोशिका के सरंचनात्मक रूपांतरण के आधार पर सरल उपकला ऊतक तीन प्रकार के हैं-

शल्की (squamous) उपकला, घनाकार (cuboid) उपकला तथा स्तंभाकार (columnar) (चित्र 7.1)

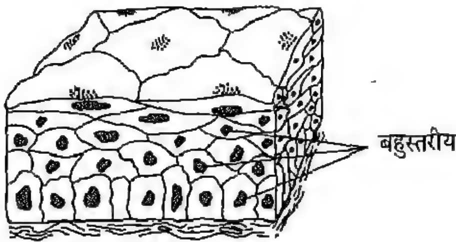


चित्र 7.1 सरल उपकला (अ) शल्की (ब) घनाकार (स) स्तंभाकार (द) पक्ष्माभ धारी स्तंभाकार कोशिकाएं

शल्की उपकला ऊतक यह एक चपटी कोशिकाओं के पतले स्तर से बनता है जिसके किनारे अनियमित होते हैं। यह ऊतक रक्त वाहिकाओं की भित्ति में तथा फेफड़े के वायु कोश (air sac) में पाया जाता है और यह विसरण सीमा का कार्य करती है। **घनाकार उपकला** यह ऊतक एक स्तरीय घन जैसी कोशिकाओं से बना होता है। यह सामान्यत: वृक्कों के वृक्ककों (nephrons) के नलिकाकार भागों तथा ग्रंथियों की वाहिनियों में पाया जाता है। इनका मुख्य कार्य स्रवण और अवशोषण है। वृक्क में वृक्ककों की समीपस्थ वलयित (concoluted) सूक्ष्म नलिका की उपकला में सूक्ष्मांकुर (microvilli) होते हैं। **स्तंभाकार उपकला** लंबी एवं पतली कोशिकाओं के एक स्तर का बना होता है। केंद्रक प्राय: कोशिका के आधारी भाग में होता है। मुक्त सतह पर प्राय: सूक्ष्मांकुर पाए जाते हैं। सूक्ष्मांकुर आमाशय, आंत्र तथा आंतरिक आस्तर में पाए जाते हैं और यह स्रवण ओर अवशोषण में सहायक देते हैं। यदि इन स्तंभाकार या घनाकार कोशिकाओं की मुक्त सतह पर पक्ष्माभ होते हैं तो इसे **पक्ष्माभी** (ciliated) **उपकला** (चित्र 7.1घ) कहते हैं। इनका कार्य कणों अथवा श्लेष्मा को उपकला की सतह पर एक निश्चित दिशा में ले जाना है। यह मुख्यत: श्वसनिका (broncheol) तथा डिंबवाहिनी



चित्र 7.2 ग्रंथिल उपकला (अ) एककोशिक (ब) बहुकोशिक



चित्र 7.3 संयुक्त उपकला

नलिकाओं (fallopiam tubes) जैसे खोखले अंगों की भीतरी सतह में पाए जाते है।

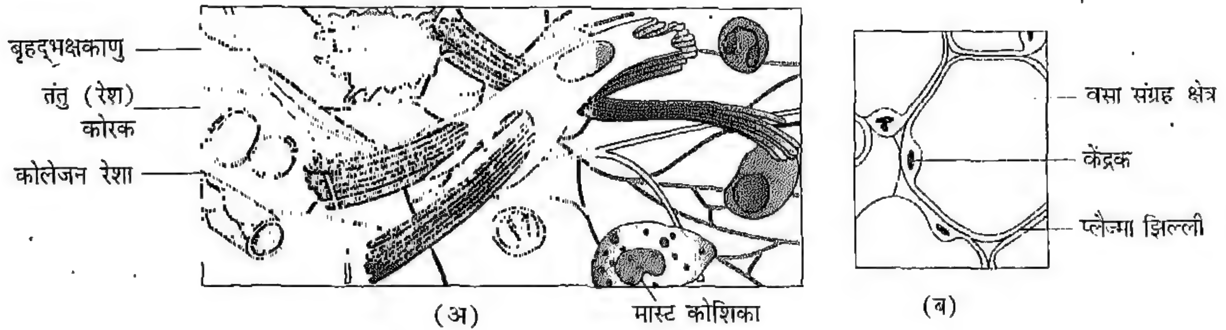
कुछ स्तंभाकार या घनाकार कोशिकाओं में स्रवण की विशेषता होती है और ऐसी उपकला को **उपकला ग्रंथिल** (glandular epithrlium) कहते हैं (चित्र 7.2)। इसे दो समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है- एक कोशिक जो पृथक ग्रंथिल कोशिकाओं का बना होता है, जैसे आहार नाल की कलश कोशिका (goblet cell) तथा बहुकोशिक जो कोशिकाओं के पुंज (उदाहरण -लार ग्रंथि) का बना होता है। स्रावी कोशिका में स्राव के निष्कासन के आधार पर ग्रंथियों को दो भागों में विभाजित किया जाता है, जिन्हें **बहिःस्रावी** (eocrine) ग्रंथि तथा **अंतः स्रावी ग्रंथि** (endocrine) कहते हैं। बहिःस्रावी ग्रंथि से श्लेष्मा, लार, कर्ण मोम (earwax) तेल, दुग्ध, आमाशय एंजाइम तथा अन्य कोशिका उत्पाद स्रावित होते हैं। ये सब वाहिनियों अथवा नलिकाओं के माध्यम से निर्मुक्त होते हैं। इसके विपरीत अंतःस्रावी ग्रंथियों में नलिकाएं नहीं होती हैं। इसके उत्पाद हार्मोन हैं जो सीधे उस तरल में छोड़े जाते हैं, जिसमें ग्रंथि स्थित होती है।

संयुक्त उपकला एक से ज्यादा कोशिका स्तरों (बहु-स्तरित) की बनी होती है और इस प्रकार स्रवण और अवशोषण में इसकी भूमिका सीमित है (चित्र 7.3)। इसका मुख्य कार्य रासायनिक व यांत्रिक प्रतिबंलों (stresses) से रक्षा करना है। यह त्वचा की शुष्क सतह, मुख गुहा की नम सतह पर, ग्रसनी, लार ग्रंथियों और अग्नाशयी की वाहिनियों के भीतरी आस्तर को ढकता है।

उपकला की सभी कोशिकाएं एक दूसरे से अंतरकोशिकीय पदार्थों से जुड़ी रहती हैं। लगभग सभी प्राणि ऊतकों में कोशिकाओं के विशेष जोड़ व्यक्तिगत (individual) कोशिकाओं को संरचनात्मक एवं कार्यात्मक संधि प्रदान करते हैं। उपकला और अन्य ऊतकों में तीन प्रकार की संधि (junctions) पाई जाती हैं। ये हैं-दृढ़, आसंजी एवं अंतराली संधि। **दृढ़ संधि** पदार्थों को ऊतक से बाहर निकलने से रोकती है। **आसंजी संधियों** पड़ोसी कोशिकाओं के कोशिका द्रव्य को एक दूसरे से जोड़ने का काम करती हैं। **अंतराली संधियों** आयनों तथा छोटे अणुओं एवं कभी-कभी बड़े अणुओं के तुरंत स्थांतरित करने में सहायता करती हैं। वे ऐसा संलग्न कोशिकाओं के कोशिकाद्रव को आपस में जोड़कर करती हैं।

7.1.2 संयोजी ऊतक

जटिल प्राणियों के शरीर में संयोजी ऊतक बहुतायत एवं विस्तृत रूप से फैला हुआ पाया जाता है। संयोजी ऊतक नाम शरीर के अन्य ऊतकों एवं अंग को एक दूसरे से जोड़ने तथा

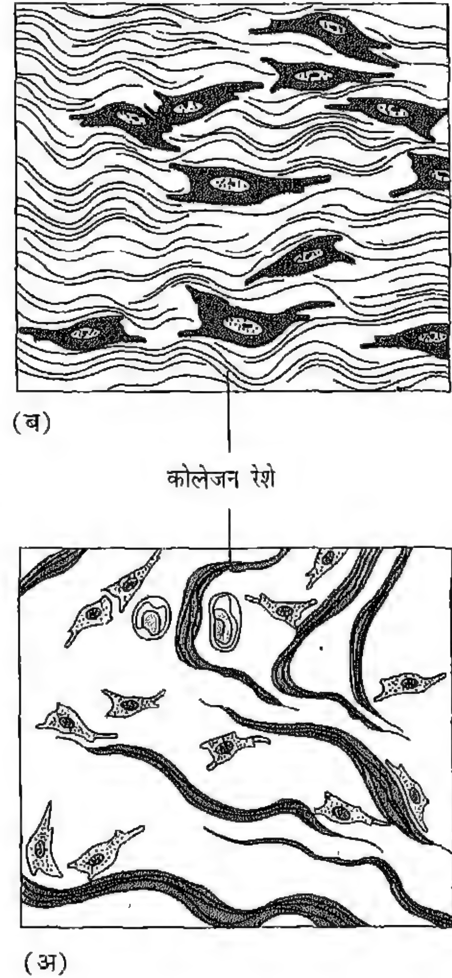


चित्र 7.4 ढीला संयोजी ऊतक (अ) ऐरियोलर ऊतक (ब) वसा ऊतक

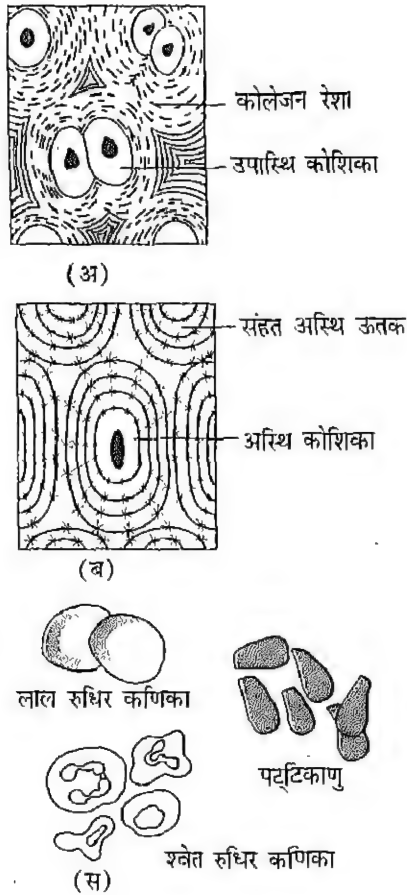
आलंबन के आधार पर दिया गया है। संयोजी ऊतक में कोमल ऊतक से लेकर विशेष प्रकार के ऊतक जैसे- उपास्थि, अस्थि, वसीय ऊतक तथा रक्त सम्मिलित हैं। रक्त को छोड़कर सभी संयोजी ऊतकों में कोशिका संरचनात्मक प्रोटीन का तंतु स्रावित करती हैं, जिसे **कोलेजन** या **इलास्टिन** कहते हैं। ये ऊतक को शक्ति, प्रत्यास्थता एवं लचीलापन प्रदान करते हैं। ये कोशिका रूपांतरित पॉलिसेकेराइड भी स्रावित करती है, जो कोशिका और तंतु के बीच में जमा होकर आधात्री का कार्य करता है। संयोजी ऊतक को तीन प्रकारों में विभक्त किया गया है (i) **लचीले संयोजी ऊतक**, (ii) **संघन संयोजी ऊतक** एवं (iii) **विशिष्टकृत संयोजी ऊतक**।

शिथिल संयोजी ऊतक में कोशिका एवं तंतु एक दूसरे से अर्धतरल आधारीय पदार्थ में शिथिलता से जुड़े रहते हैं, उदाहरण-**त्वचा गर्तिका ऊतक** जो त्वचा के नीचे पाया जाता है (चित्र 7.4)। यह प्राय: उपकला के लिए आधारीय ढाँचे का कार्य करता है। इस संयोजी ऊतक में प्राय: तंतु कोरक (जो तंतु को जन्म देता है), महाभक्षकाणु एवं मास्ट कोशिकाएं होती हैं। **वसा ऊतक** दूसरा शिथिल संयोजी ऊतक है जो मुख्यतया त्वचा के नीचे स्थिति होता है। इस ऊतक की कोशिकाएं वसा संग्रहण के लिए विशिष्ट होती हैं। भोजन के जो पदार्थ प्रयोग में नहीं आते, वे वसा के रूप में परिवर्तित कर इस ऊतक में संग्रहित कर लिए जाते हैं।

सघन संयोजी ऊतकों में तंतु एवं तंतु कोशिकाएं दृढ़ता से व्यवस्थित रहती हैं। अभिविन्यास के आधार पर तंतु तथा तंतुकोरक **सघन संयोजी ऊतक** को **नियमित संयोजी ऊतक** तथा **अनियमित संयोजी ऊतक** में विभाजित किया गया है। सघन नियमित ऊतक में तंतु कोरक समानांतर तंतु के गुच्छों के बीच में कतार में उपस्थित होते हैं। कंडराएं जो कंकाल पेशी को अस्थि से जोड़ती हैं तथा स्नायु, जो एक अस्थि को दूसरी अस्थि से जोड़ती हैं इसका उदाहरण है। कोलैजन तंतु का गुच्छा कंडराओं को प्रतिरोधी क्षमता प्रदान करता है



चित्र 7.5 घना संयोजी ऊतक (अ) घना नियमित (ब) घना अनियमित



चित्र 7.6 विशिष्टीकृत संयोजी ऊतक

और इसे टूटने से बचाता है। सघन नियमित संयोजी ऊतक लचीली स्नायु (ligament) में पाया जाता है। सघन अनियमित ऊतक में तंतु तथा तंतुकोरक होते हैं (तंतु में अधिकांश कोलेजन होता है) (चित्र 7.5) जिनका अभिविन्यास अलग होता है। यह ऊतक त्वचा में पाया जाता है। उपास्थि, अस्थि एवं रक्त **विशेष प्रकार के संयोजी ऊतक** हैं।

उपास्थि का अंतराकोशिक पदार्थ ठोस, विशिष्ट आनम्य एवं संपीडन रोधी होता है। इस ऊतक को बनाने वाली कोशिकाएं (उपास्थि अणु) स्वयं द्वारा स्रावित आधात्री में छोटी छोटी गुहिकाओं में बंद हो जाती है। (चित्र 7.6 अ)। कशेरुकी भ्रूण में विद्यमान अधिकांश उपास्थियां, वयस्क अवस्था में अस्थि द्वारा प्रतिस्थापित हो जाती हैं। वयस्क में कुछ उपास्थि नाक की नोंक, बाह्य कान संधियों, मेरुदंड की आस पास की अस्थियों के मध्य तथा पैर और हाथ में पाई जाती है।

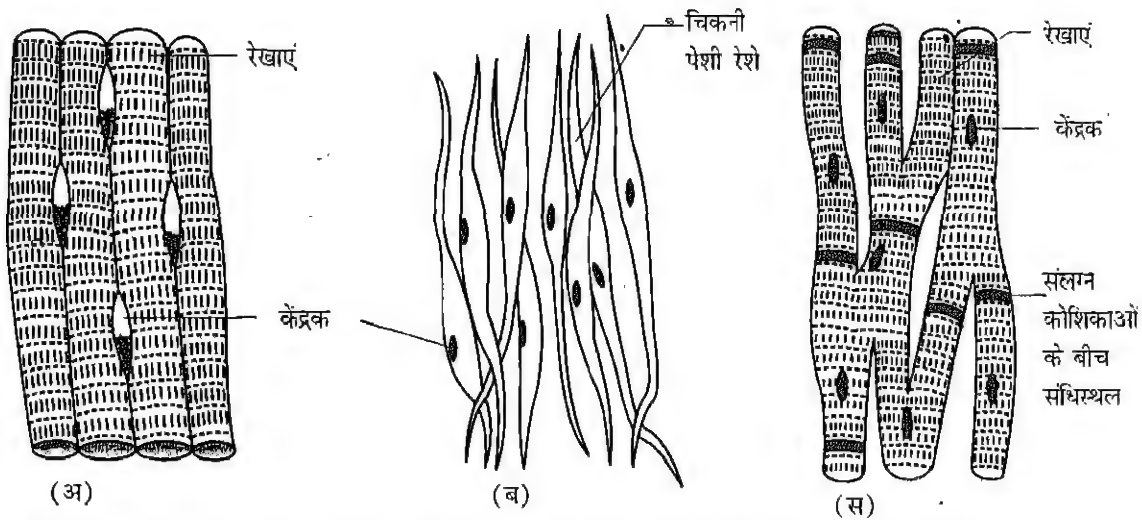
अस्थि खनिज युक्त ठोस संयोजी ऊतक है, इसका आनम्य आधात्री कॉलेजन तंतु एवं कैल्सियम लवण युक्त होता है जो अस्थि को मजबूती प्रदान करता है (चित्र 7.6 ब)। यह शरीर का मुख्य ऊतक है जो कि शरीर के कोमल अंगों का संरचनात्मक ढाँचा बनाता है तथा ऊतकों को सहारा एवं सुरक्षा देता है। अस्थि कोशिकाएं आधात्री के अंदर रिक्तिकाओं में उपस्थित रहती हैं। पैर की अस्थि जैसे आपकी लंबी अस्थि भार वहन का कार्य करती है। अस्थि कंकाल पेशी से जुड़कर परस्पर क्रिया द्वारा गति प्रदान करती है। कुछ अस्थियों में अस्थि मज्जा, रक्त कोशिकाओं का उत्पादन करती है।

रक्त तरल: संयोजी ऊतक होता है जिसमें जीवद्रव्य, लाल रुधिर कणिकाएं, सफेद रुधिर कणिकाएं और पट्टिकाणु (platlets) पाए जाते हैं (चित्र 7.6 स) रक्त मुख्य परिसंचारी तरल है जो कि विभिन्न पदार्थों के परिवहन में सहायता करता है। इसके बारे में आप विस्तृत रूप से अध्याय 17 और 18 में पढ़ेंगे।

7.1.3 पेशी ऊतक

पेशी ऊतक अनेक लंबे, बेलनाकार तंतुओं (रेशों) से बना होता है जो समानांतर-पंक्ति में सजे रहते हैं। यह तंतु कई सूक्ष्म तंतुकों से बना होता है जिसे **पेशी तंतुक** (myofibril) कहते हैं। समस्त पेशी तंतु समन्वित रूप से उद्दीपन के कारण संकुचित हो जाते हैं तथा पुनः लंबा होकर अपनी असंकुचित अवस्था में आ जाते हैं। पेशीय ऊतक की क्रिया से शरीर वातावरण में होने वाले परिवर्तनों के अनुसार गति करता है तथा शरीर के विभिन्न अंगों की स्थिति को संभाले रखता है। सामान्यतया शरीर की सभी गतियों में पेशियां प्रमुख भूमिका निभाती हैं। पेशीय ऊतक तीन प्रकार के होते हैं- (1) कंकाल पेशी (2) चिकनी पेशी (3) हृदय पेशी

कंकाल पेशी मुख्य रूप से कंकाली अस्थि से जुड़ी रहती है। प्रारूप (typical) पेशी जैसे द्विशिरस्का (biceps) (दो सिर वाली) पेशी में रेखीय कंकाल पेशी तंतु एक



चित्र 7.7 पेशी ऊतक (अ) कंकालीय (रेखित) पेशी ऊतक (ब) चिकनी पेशी ऊतक (स) हृद-पेशी ऊतक

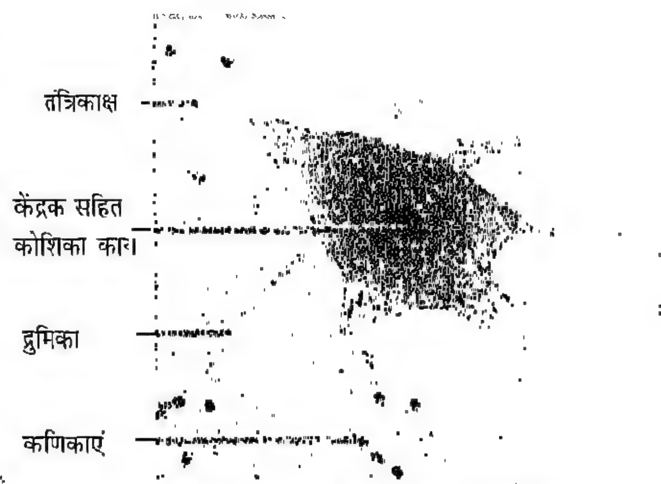
समूह में एक साथ समानांतर रूप में पाए जातें हैं। पेशी ऊतक के समूह के चारों ओर कठोर संयोजी ऊतक का आवरण होता है। (चित्र 7.7 अ) (इसके बारे में आप अध्याय 20 में विस्तार से पढ़ेंगे)।

चिकनी पेशी-चिकनी पेशीय ऊतक की संकुचनशील कोशिका के दोनों किनारे पतले होते हैं तथा इनमें रेखा या धारियाँ नहीं होती हैं (चित्र 7.7 ब)। कोशिका संधियां उन्हें एक साथ बाँधें रखती हैं तथा ये संयोजी ऊतक के आवरण से ढके समूह रहते हैं। आंतरिक अंगों जैसे- रक्त नलिका, अग्नाशय तथा आँत की भित्ति में इस प्रकार का पेशी ऊतक पाया जाता है। चिकनी पेशी का संकुचन् ''अनैच्छिक'' होता है; क्योंकि इनकी क्रियाविधि पर सीधा नियंत्रण नहीं होता है। जैसा कि हम कंकाल पेशियों के बारे में कर सकते हैं, चिकनी पेशी को मात्र सोचने भर से हम संकुचित नहीं कर सकते हैं।

हृदय पेशी- संकुचनशील ऊतक है जो केवल हृदय में ही पाई जाती है। हृदय पेशी की कोशिकाएं कोशिका संधियों द्वारा द्रव्य कला से एकरूप होकर चिपकी रहती हैं (चित्र 7.7 स)। संचार संधियों अथवा *अंतर्विष्ट डिस्क* (intercalated disc) के कुछ संगलन बिंदुओं पर कोशिका एक इकाई रूप में संकुचित होती है। जैसे कि जब एक कोशिका संकुचन के लिए संकेत ग्रहण करती है तब दूसरी पास की कोशिका भी संकुचन के लिए उद्दीपित होती है।

7.1.4 तंत्रिका ऊतक

तंत्रिका ऊतक मुख्य रूप से परिवर्तित अवस्थाओं के प्रति शरीर की अनुक्रियाशीला (responsiveness) के नियंत्रण के लिए उत्तरदायी होता है। तंत्रिका कोशिकाएं उत्तेजनशील कोशिकाएं हैं, जो



चित्र 7.8 तंत्रिकी-ऊतक (तंत्रिकोशिका)

तंत्रिका तंत्र की संचार इकाई है (चित्र 7.8)। तंत्रिबंध (Neuroglial) कोशिका बाकी तंत्रिका तंत्र को संरचना प्रदान करती है तथा तंत्रिका कोशिकाओं को सहारा तथा सुरक्षा देती है। हमारे शरीर में तंत्रिबध कोशिकाएं तंत्रिका ऊतक का आयतन के अनुसार आधा से ज्यादा हिस्से बनाता है।

जब एक तंत्रिका कोशिका को उपयुक्त रूप से उद्दीपित किया जाता है या वह स्वयं होती है तो विभिन्न वैद्युत परिवर्तन उत्पन्न होता है, जो बहुत तेजी से कोशिका झिल्ली पर गमन करता है। तंत्रिका कोशिका जब उत्तेजित होती है तब विभव परिवर्तन तंत्रिका कोशिका के अंतिम छोर पर पहुँचता है तथा आस-पास की तंत्रिकोशिका (neuron) एवं अन्य कोशिकाओं को या तो उद्दीपित करता है अथवा उन्हें उद्दीपित होने से रोकता है। (आप इसके बारे में अध्याय 21 में विस्तार से पढ़ेंगे)।

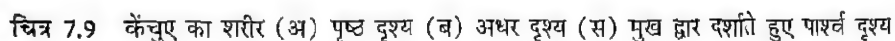
7.2 अंग और अंगतंत्र

बहुकोशीय प्राणियों में उपर्युक्त वर्णित ऊतक संगठित होकर अंग और अंगतंत्र की रचना करते हैं। इस तरह का संगठन लाखों कोशिकाओं द्वारा निर्मित जीव की सभी क्रियाओं को अधिक दक्षतापूर्वक एवं समन्वित रूप से चलाने के लिए आवश्यक होता है। शरीर के प्रत्येक अंग एक या एक से अधिक प्रकार के ऊतकों से बना होता हैं। उदाहरणार्थ, हृदय में चारों तरह के ऊतक होते हैं, उपकला, संयोजी, पेशीय तथा तंत्रकीय ऊतक। ध्यान पूर्वक अध्ययन के बाद हम यह देखते हैं कि अंग और अंगतंत्र की जटिलता एक निश्चित इंद्रियगोचर प्रवृत्ति को प्रदर्शित करती है। यह इंद्रियगोचर प्रवृत्ति एक विकासीय प्रवृत्ति कहलाती है। (इसके बारे में आप कक्षा 12 में विस्तार से पढ़ेंगे)।

यहाँ पर आपको तीन जीवों के विभिन्न विकासीय स्तर के बारे में बताया जा रहा है, जिसमें आपको शारीर (anatomy) और आकारिकी (mortphology) के संगठन एवं क्रियाविधि के बारे में जानकारी प्राप्त होगी। आकारिकी आपको जीवों की बाह्य संरचना या बाह्य दिखने वाले आकार का अध्ययन कराती है। पौधों या सूक्ष्म जीवों के संदर्भ में, आकारिकी शब्द का वस्तुत: मतलब यही है। प्राणियों के संबंध में आकारिकी का मतलब शरीर के बाह्य अंगों की बनावट या शरीर के बाह्य भागों का अध्ययन है! प्राणियों में शारीर का पारंपरिक मतलब आंतरिक अंगों की संरचना के अध्ययन से है। अब आप केंचुए, कॉकरोच तथा मेंढक के आकारिकी एवं शारीरकी का अध्ययन करेंगे। जो अकशेरुकी तथा कशेरुकी का क्रमश: प्रतिनिधित्व करते हैं।

7.3 केंचुआ

केंचुए लाल भूरे रंग के स्थलीय अकशेरुकी प्राणी होते हैं, जो कि नम मिट्टी की ऊपरी सतह में निवास करते हैं। दिन के समय ये जमीन के अंदर स्थित बिलों में रहते हैं, जो कि ये मिट्टी को छेदकर और निगलकर बनाते हैं। बगीचों में ये अपने द्वारा एकत्रित उत्सर्जी मल पदार्थों के बीच ढूँढ़े जा सकते हैं। इन उत्सर्जी मल पदार्थ को कृमि क्षिप्ति (worm casting) कहते हैं। *फेरेटिमा* व *लम्ब्रिकस* (*Pheretrima and Lumbricus*) सामान्य भारतीय केंचुए हैं।



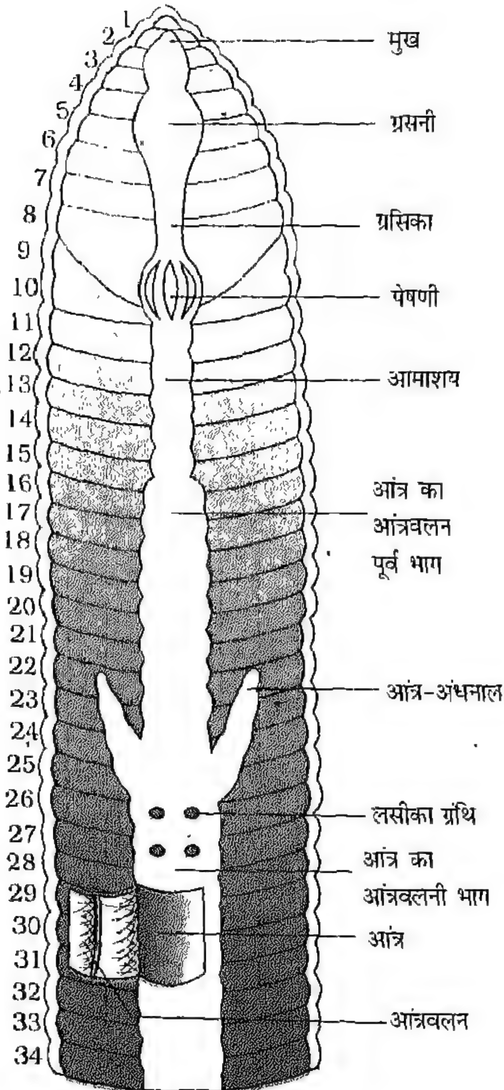
चित्र 7.9 केंचुए का शरीर (अ) पृष्ठ दृश्य (ब) अधर दृश्य (स) मुख द्वार दर्शाते हुए पार्श्व दृश्य

7.3.1 आकारिकी

इनका शरीर लंबा, और लगभग 100 – 120 समान समखंडों (metameres) में बँटा होता है। पृष्ठ तल पर एक गहरी मध्यरेखा (पृष्ठ रक्त वाहिका) दिखाई देती है। अधरतल पर जनन छिद्र पाए जाते हैं, जिसकी वजह से यह पृष्ठ तल से विभेदित किया जा सकता है। शरीर के अग्र भाग पर मुख एवं पुरोमुख (Prossomium) होते हैं। पुरोमुख एक पालि (lobe) है जो मुख को ढकने वाली एक फाननुमा संरचना है। यह फान मृदा दरारों को खोलकर कृमि को उसमें रेंग कर जाने में मदद करती है। पुरोमुख एक संवेदी संरचना है। शरीर का पहला खंड परितुंड (peristomium) या मुखखंड होता है, जिसमें मुख उपस्थित होता है। एक परिपक्व कृमि में एक चौड़ी ग्रंथिल गोलाकार पट्टी चौदहवें से सोलहवें खंड को घेरे रहती है। इन ग्रंथिल ऊतक वाले खंडों को **पर्याणिक** (clitellum) कहते हैं। इस प्रकार शरीर तीन प्रमुख भागों-अग्र-पर्याणिका, पर्याणिक और पश्च पर्याणिक खंडों में विभक्त होता है (चित्र 7.9)।

5-9 खंडों में अंतरखंडीय खांचों के अधर-पार्श्वीय भाग में चार जोड़ी शुक्रग्रहिका रंध्र (spermathecal apertures) स्थित होते हैं। एकल मादा जनन छिद्र चौदहवें खंड की मध्य अधर रेखा पर स्थित होता है। एक जोड़ा नर जनन छिद्र अठारवें खंड के अधर-पार्श्व में स्थित होते हैं। बहुत से छोटे छिद्र जिन्हें वृक्कक रंध्र कहते हैं, अधर तल

पर लगभग संपूर्ण शरीर पर पाए जाते हैं। इन छिद्रों के द्वारा उत्सर्गिकाएं शरीर के बाहर की ओर खुलती हैं। शरीर के प्रथम, अंतिम एवं पर्याणिका खंडों को छोड़कर समस्त देहखंडों में S आकार के **शूक** (setae) पाए जाते हैं, जो प्रत्येक खंड के मध्य में स्थित उपकला गर्त में धँसे रहते हैं। शूक छोटी बाल के समान संरचना होती है, जो कि फैल तथा सिकुड़ सकती है तथा गति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा निभाती है।

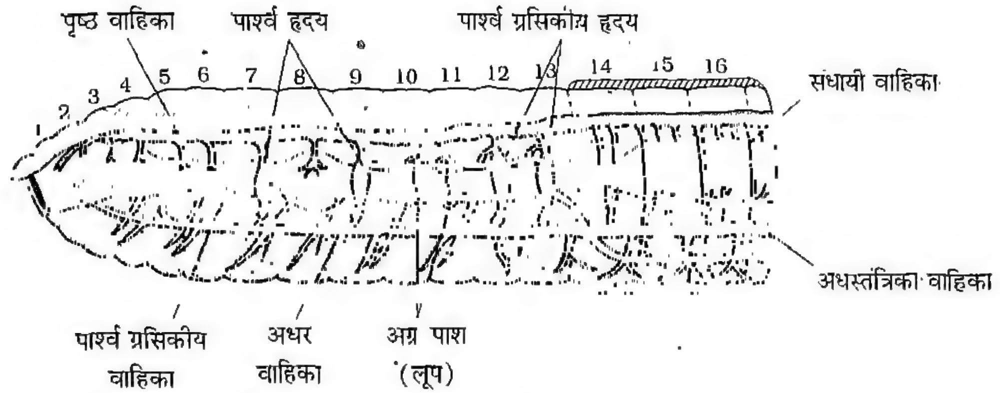


चित्र 7.10 केंचुए की आहार नाल

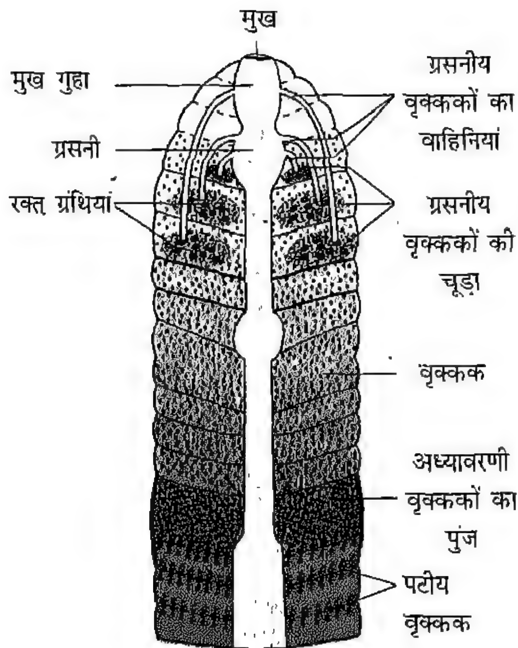
7.3.2 आंतरिक आकारिकी

केंचुए का शरीर एक पतली अकोशिकीय परत से ढका रहता है जिसे **उपत्वचा** कहते हैं। इसके नीचे अधिचर्म, दो पेशीय (गोलाकार व लंबवत्) परतें तथा सबसे अंदर की ओर देहगुहीय उपकला पाई जाती है। अधिचर्म स्तंभाकार उपकला कोशिकाओं को एक स्तर की बनी हुई होती है, जिसमें अन्य प्रकार की कोशिकाएं जैसे स्रावी ग्रंथि कोशिकाएं भी सम्मिलित हैं।

आहारनाल शरीर के प्रथम से अंतिम खंड तक एक लंबी, सीधी नली के रूप में उपस्थित होती है (चित्र 7.10)। प्रथम खंड पर उपस्थित मुख, प्रथम से तृतीय खंड में फैली मुखगुहा में खुलता है, जो ग्रसनी की ओर अग्रसर होती है और चौथे खंड में खुलती है। ग्रसनी एक छोटी संकरी नलिका में खुलती है, जिसे ग्रसिका कहते हैं, यह पाँचवे से सातवें खंड तक पाई जाती है, तथा एक पेशीय पेषणी (gizzard) आठवें और नवें खंड तक चलती है। यह सड़ी पत्तियों और मिट्टी आदि के कणों को पीसने में मदद करती है। आमाशय नौ से चौदह खंड तक स्थित होता है। केंचुए का भोजन सड़ी-गली पत्तियाँ और मिट्टी में मिश्रित कार्बनिक पदार्थ होते हैं। आमाशय में स्थित केल्सीफेरस ग्रंथियाँ ह्यूमस में उपस्थित- ह्यूमिक अम्लों को उदासीन बना देती है। आंत्र पंद्रहवें खंड से प्रारंभ होकर अंतिम खंड तक एक लंबवत नलिका के रूप में मिलती है। छब्बीसवें खंड में आंत्र से एक जोड़ी छोटी और शंक्वाकार आंत्रिक अंधनाल निकलती हैं। आंत्र का विशिष्ट गुण 26 से 35 खंड में आंत्र की पृष्ठ सतह में आंतरिक वलन, भित्तिभंज का पाया जाता है, जिसे **आंत्रवलन** (typhlosole) कहते हैं। यह वलन आंत्र में अवशोषण के प्रभावी क्षेत्र में वृद्धि कर देता है। आहार नाल, शरीर के अंतिम खंड पर एक छोटे छिद्र के रूप में खुलती है। जिसे गुदा (anus) कहते हैं। केंचुआ कार्बनिक पदार्थों से भरपूर मृदा को भोजन के रूप में निगलता है, आहारनाल से गुजरते समय,



चित्र 7.11 संवृत परिसंचरण तंत्र

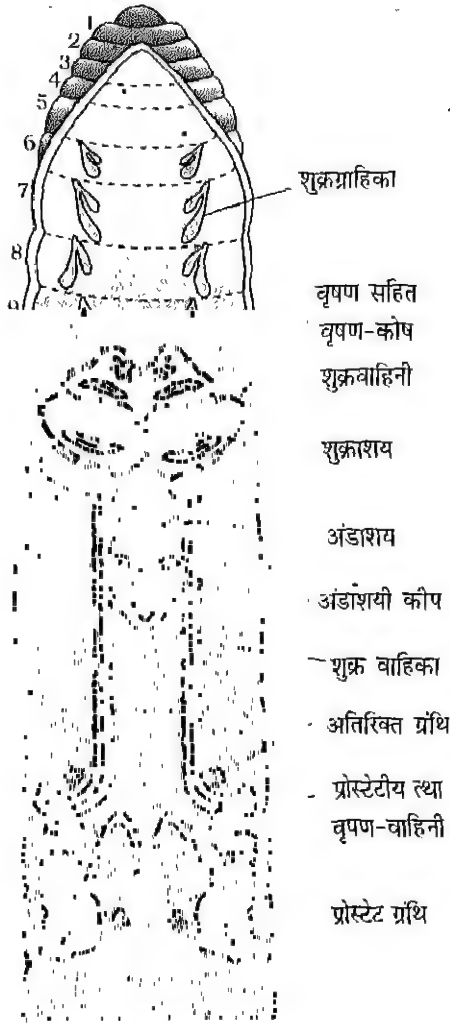


चित्र 7.12 केंचुए का वृक्कक-तंत्र

पाचक रस एंजाइमों का स्राव होता है जो कि पदार्थों के साथ घुल-मिल जाता है। ये एंजाइम जटिल भोज्य कणों को सूक्ष्म अवशोषण योग्य कणों में बदल देते हैं ये सरल अणु (molecules) आहारनाल-झिल्ली द्वारा अवशोषित करके उपयोग में लाए जाते हैं।

फेरिटिमा (केंचुए) का रुधिर परिसंचरण तंत्र बंद प्रकार का होता है, जिसमें रुधिर वाहिकाएं, केशिकाएं, हृदय होता है (चित्र 7.11)। बंद रुधिर परिसंचरण तंत्र के कारण रुधिर का (vessels) हृदय तथा रक्त वाहिनियों तक ही सीमित रहता है। संकुचन रक्त परिसंचरण को एक दिशा में रखता है। सूक्ष्म रुधिर वाहिकाएं रक्त को आहारनाल, तंत्रिका रज्जु और शरीर भित्ति तक पहुँचाती हैं। रुधिर ग्रंथियाँ चौथे, पाँचवें और छठे देह खंड पर पाई जाती हैं। ये ग्रंथियाँ हीमोग्लोबिन तथा रुधिर कोशिकाओं का निर्माण करती हैं जो रुधिर प्लाज्मा में घुल जाती हैं। इनकी प्रकृति भक्षकाण्विक होती है। केंचुए में विशिष्ट श्वसन तंत्र नहीं होता। श्वसन (गैस) विनिमय शरीर की आर्द्र सतह से उनकी रुधिर धारा में संपन्न होता है।

उत्सर्जी अंग खंडों में व्यवस्थित और वलयित नलिकाओं के बने होते हैं, जिन्हें वृक्कक (nephridia) कहते हैं। ये वृक्कक तीन प्रकार के होते हैं। (i) पटीय (septal) वृक्कक 15 वें खंड से अंतिम खंड के दोनों ओर अंतर खंडीय पटों पर पाए जाते हैं तथा ये आंत्र में खुलते हैं। (ii) अध्यावरणी वृक्कक जो शरीर की देह भित्ति के आंतरिक आस्तर पर तीसरे खंड से अंतिम खंड तक चिपके रहते हैं तथा शरीर की सतह पर खुलते हैं। (iii) ग्रसनीय वृक्कक चौथे, पाँचवें एवं छठे खंड में तीन युग्मित गुच्छों के रूप में पाए जाते हैं, (चित्र 7.12)। ये विभिन्न प्रकार के वृक्कक संरचना में मूलतः समान होते हैं।



चित्र 7.13 केंचुए का जनन तंत्र

वृक्कक शरीर तरल के आयतन एवं संगठन का नियमन करते हैं। वृक्कक कीपनुमा सिरे से प्रारंभ होता है, जो गुहीय कक्ष से अतिरिक्त द्रव को संचित करता है। कीप वृक्कक के नलिकीय भाग से जुड़ा रहता है, जो उत्सर्जी पदार्थों को छिद्र द्वारा शरीर से एकत्र कर आहार नाल में बाहर डालता है।

तंत्रिका तंत्र मूलतः खंडीय गुच्छिकाओं (ganglia) के रूप में दोहरी अधर तंत्रिका रज्जु पर व्यवस्थित होते हैं। बहुत सी तंत्रिका कोशिकाएं इकट्ठी होकर गुच्छिका का निर्माण करती हैं। अग्र सिरे पर (तीसरे व चौथे खंड में) तंत्रिका रज्जु दो सिरों में विभक्त होकर पार्श्वतः ग्रसिका को घेरते हुए पृष्ठ सतह पर प्रमस्तिष्क-गुच्छिका (cerebral ganglia) से मिलती है। इस प्रकार तंत्रिका वलय बन जाता है। तंत्रिका वलय, प्रमस्तिष्क गुच्छिका के साथ मिलकर मस्तिष्क का निर्माण करती है। प्रमस्तिष्क गुच्छिका, वलय की अन्य तंत्रिकाओं के साथ मिलकर संवेदी आवेगों और पेशीय अनुक्रियाओं (responses) को समाकालित करती है।

संवेदी तंत्र में आँखों का अभाव होता है; लेकिन इसमें कुछ प्रकाश और स्पर्श संवेदी अंग (ग्राही कोशिकाएं) विकसित होते हैं, जो प्रकाश की तीव्रता के अंतर को महसूस कर सकते हैं तथा पृथ्वी के कंपन को भी महसूस कर लेते हैं। केंचुए में विशेष प्रकार के रसायन संवेदी अंग, स्वादग्राही (tasterceptor) होते हैं, जो कि रासायनिक उद्दीपनों के लिए प्रतिक्रिया करते हैं। ये संवेदी अंग कृमि के अग्र भाग में पाए जाते हैं।

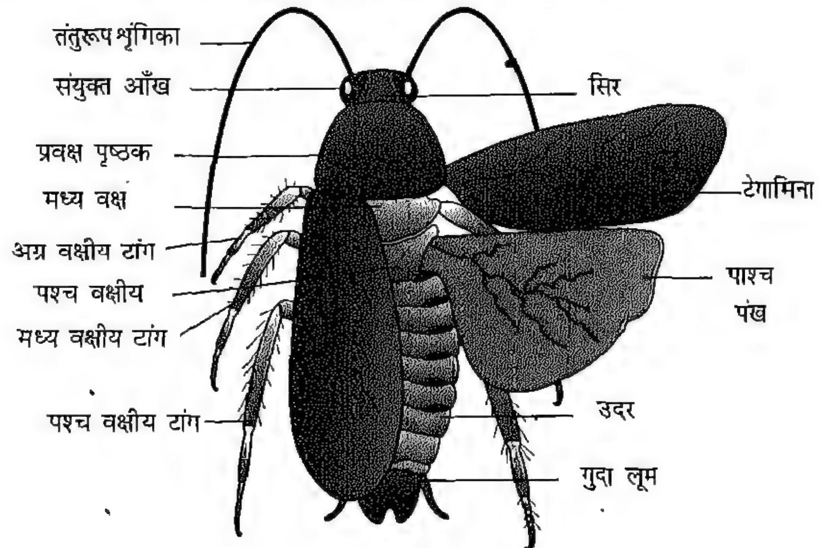
केंचुए उभयलिंगी (heremophrodite) होते हैं अर्थात् एक ही प्राणी में वृषण (नर) एवं अंडाशय (मादा) दोनों जनन अंग मिलते हैं। इनमें 10वें व 11वें खंड में 2 जोड़ी वृषण (testes) होते हैं (चित्र 7.13)। इनकी शुक्र-वाहिकाएं अठारहवें (vasa deferentia) खंड तक जाती हैं जहाँ ये प्रोस्टेट वाहिनी (duct) से जुड़ जाती हैं। दो जोड़ी सहायक अतिरिक्त ग्रंथियाँ, सत्रहवें तथा उन्नीसवें खंड में पाई जाती हैं। संयुक्त प्रोस्टेट (spermatic) और शुक्राणु वाहिनी अठारहवें खंड के अधरपार्श्व में एक जोड़ा नर जनन छिद्र द्वारा बाहर खुलती है। साथ ही छठे से नौवें खंड तक प्रत्येक खंड में एक छोटे थैलेनुमा संरचनाएं चार जोड़े शुक्राणु - धानियाँ पाई जाती हैं। यह मैथुन के दौरान शुक्राणुओं को प्राप्त कर संग्रहित करती हैं। एक जोड़ी अंडाशय बारहवें और तेरहवें खंड के आंतरखंडीय पट पर स्थित होते है। अंडाशय के नीचे अंडवाहिनी मुखिका पाई जाती है, जो अंडवाहिनी तक होती है। ये आपस में जुड़ कर चौदहवें खंड के अधरतल पर मात्र एक मादा जनन - छिद्र के रूप में बाहर खुलती है।

शुक्राणुओं के आपस में आदान-प्रदान की प्रक्रिया मैथुन के द्वारा होती है। जब एक कृमि दूसरे कृमि को पाता है तथा उनके जनद द्वार (gonadal opening) एक दूसरे के सानिध्य में आते हैं तो वे अपने शुक्राणुओं से भरे थैलों को जिन्हें शुक्राणुधर कहते हैं बदल लेते हैं। पर्याणिका की ग्रंथि कोशिकाओं द्वारा (ककून) उत्पन्न कोकूनों में परिपक्व शुक्राणु व अंड कोशिकाओं तथा तरल जमा किया जाता है। निषेचन एवं परिवर्धन कोकून के अंदर होता है जिसे कृमि मृदा में छोड़ देता है। अंड व शुक्राणु कोशिकाओं का कोकून के अंदर ही निषेचन हो जाता है। कृमि इन्हें अपने शरीर से अलग कर देता है व मृदा (नम स्थान) के ऊपर या अंदर छोड़ देता है। कृमि भ्रूण कोकून में रहते हैं। लगभग तीन सप्ताह के बाद लगभग चार की औसत से कोकून 2-20 शिशु कृमि का निर्माण करता है। कृमि में परिवर्धन प्रत्यक्ष होता है अर्थात् लार्वा अवस्था नहीं होती है।

केंचुआ किसानों का मित्र कहलाता है। यह मिट्टी में छोटे-छोटे बिल बनाता है, जिससे मिट्टी छिद्रित हो जाती है और बढ़ते पौधों की जड़ों के लिए वायु की उपलब्धता और उनका नीचे की ओर बढ़ना सुगम हो जाता है। इस प्रकार केंचुओं द्वारा मिट्टी को उपजाऊ बनाने की विधि या मिट्टी की उर्वर शक्ति बढ़ाने की विधि को कृमि कंपोस्ट खाद निर्माण कहते हैं। केंचुए मछली पकड़ने के लिए प्रलोभक के रूप में प्रयोग में भी लिए जाते हैं।

7.4 कॉकरोच (तिलचट्टा)

कॉकरोच चमकदार भूरे अथवा काले रंग के सपाट शरीर वाले प्राणी हैं; जिन्हें कि संघ (फाइलम) आर्थोपोडा (संधिपाद) की वर्ग इन्सेक्टा (कीटवर्ग) में सम्मिलित किया गया है। उष्णकटिबंधीय भाग में चमकीले पीले, लाल तथा हरे रंग के कॉकरोच अक्सर दिखाई दे जाते हैं। इनका आकार 1/4-3 इंच (0.6-7.6 सेमी.) होता है। इनमें लंबी शृंगिका (antenna) पैर तथा ऊपरी शरीर भित्ति में चपटी वृद्धि होती है जो कि सिर को ढके



चित्र 7.14 तिलचट्टे का बाह्य चित्र

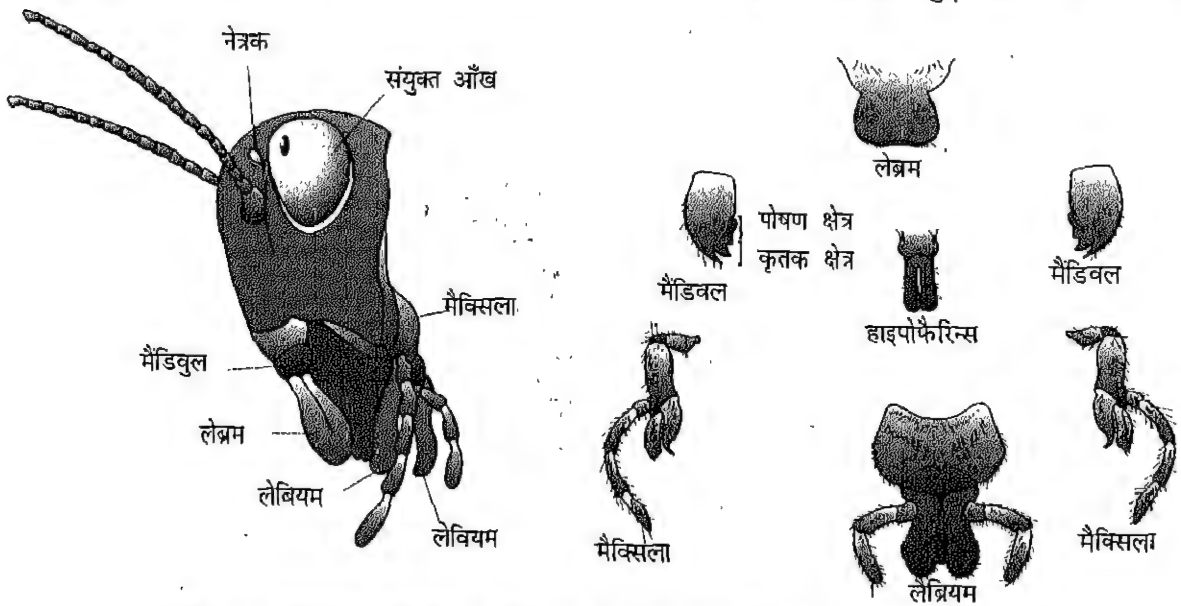
रहती है। समस्त संसार में ये रात्रिचर, सर्वभक्षी प्राणी हैं तथा नम जगह पर मिलते हैं। ये मनुष्यों के घर में रहकर गंभीर पीड़क एवं अनेक प्रकार के रोगों के वाहक हैं।

7.4.1 बाह्य आकारिकी

सामान्य वयस्क कॉकरोच, जाति *पेरिप्लेनेटा अमेरिकाना* का 34-53 मिमी. लंबा तथा पंखों वाला होता है, पंख नर में उदर के आखिरी छोर से भी आगे बढ़े होते हैं।

कॉकरोच का शरीर मुख्य रूप से खंडों में बँटा होता है, तथा इसके तीन मुख्य भाग होते हैं। सिर, वक्ष तथा उदर (चित्र 7.14)। इसका पूरा शरीर मजबूत काईटिन युक्त बाह्य कंकाल (भूरे रंग का) का बना होता है। प्रत्येक खंड में, बाह्य कंकाल में मजबूत पट्टिकाएं होती हैं जिन्हें कठक (sclerites) (पृष्ठवाली-पृष्ठकांश और अधरवाली-अधरकांश) कहते हैं, ये खंड आपस में एक पतली (महीन) व लचीली झिल्ली से जुड़े होते हैं, जिसे संधिकारी-झिल्ली या संधि झिल्ली कहते हैं।

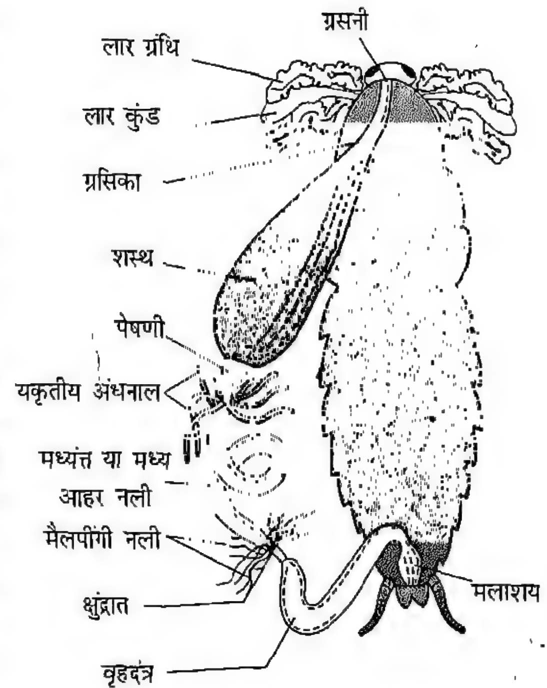
शरीर के अग्र भाग में स्थित सिर त्रिकोणीय होता है। शरीर के अनुदैर्घ्य अक्ष के साथ लगभग समकोण बनाता है। यह छः खंडों के मिलने से बनता है तथा अपनी लचीली गर्दन के कारण सभी दिशाओं में घूम सकता है। सिर संपुटिका पर एक जोड़ी संयुक्त नेत्र होते हैं। आँखों के आगे झिल्लीयुक्त सॉकेट से धागे जैसी एक जोड़ी शृंगिका निकलती है। शृंगिका में संवेदी ग्राही उपस्थित होते हैं, जो वातावरणीय दशाओं को मापने का काम करते हैं। सिर के आगे वाले छोर पर उपांग लगे होते हैं, जिनसे काटने व चबाने वाले मुखांग बनते हैं। मुखांग में एक जोड़ी ऊर्ध्वोष्ठ ऊपरी जबड़ा, एक जोड़ी चिबुकास्थि, एक जोड़ी जंभिका, एक अधारोष्ठ होता है। एक मध्य लचीली पालि जिसे अधोग्रसनी (hypophyanx) कहते हैं जिह्वा का कार्य करती है जो कि मुखांगों से घिरी गुहा में उपस्थित होती है (चित्र 7.15)। वक्ष मुख्यत: तीन भागों में बँटा होता है। अग्रवक्ष, मध्यवक्ष व पश्चवक्ष। सिरवक्ष से अग्रवक्षक एक छोटे प्रसार द्वारा जुड़ा रहता है जिसे गर्दन



चित्र 7.15 तिलचट्टा के सिर का क्षेत्र (अ) सिर क्षेत्र को दर्शाते हुए (ब) मुख भाग

कहते हैं। प्रत्येक वक्षीय खंड में एक जोड़ी टांगें पाई जाती हैं कक्षांग (coxa), शिखरक (trochanter) ऊर्विका (femur), अंतर्जंघिका (tibia) व गुल्फ (tarsus)। पंखों का प्रथम जोड़ा मध्यवक्ष से निकलता है तथा दूसरा पश्चवक्ष से। अग्र पंख (मध्यवक्षीय) जिन्हें प्रवार (tegmen) आच्छद कहते हैं। अपारदर्शी, गहरे रंग के होते हैं तथा विश्राम अवस्था में पश्चवक्ष पंखों से ढके रहते हैं। पश्चपंख पारदर्शी झिल्लीनुमा होते हैं तथा यह उड़ने में मदद करते हैं।

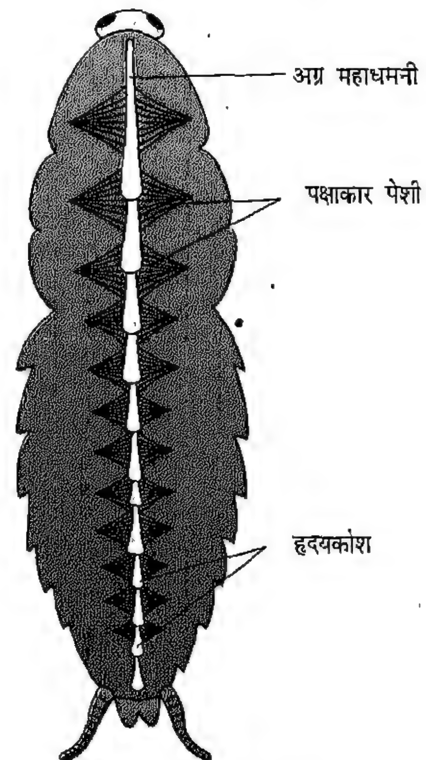
नर व मादा दोनों में उदर दस खंडीय होता है। सातवाँ अधरक नौकाकार होता है। तथा आठवां व नवां अधरक के साथ मिलकर एक जनन-कोष्ठ या जननिक कोष्ठ बनाता है जिसके अग्र भाग में मादा जनन छिद्र, स्पर्मेथिकल छिद्र व संपार्श्विक ग्रंथियाँ होती हैं। नर में केवल आठवाँ पृष्ठक ही सातवें खंड द्वारा ढका रहता है। नर-मादा दोनों में दसवें खंड पर एक जोड़ी संधियुक्त तंतुमय गुदीय लूम (cerci) होते हैं। इन लूमों के नीचे की ओर नर के नवें खंड में एक जोड़ी छोटे व धागे के समान गुदा शूक (anal stylels) होते हैं। मादा में शूक अनुपस्थित होते हैं।



चित्र 7.16 तिलचट्टा की आहारनाल

7.4.2 आंतरिक आकारिकी

देहगुहा में स्थित आहारनाल तीन भागों-अग्रांत्र, मध्यांत्र एवं पश्चांत्र में बँटी होती है (चित्र 7.16)। मुख एक छोटी नलिकाकार ग्रसनी में खुलता है, जिससे एक सीधी और संकरी नली ग्रसिका निकलती है। ग्रसिका एक पतले भित्ती वाले कोष में खुलती है, जिसे अन्नपुट कहते हैं, जिसमें भोजन संग्रहीत रहता है। इसके पीछे ग्रंथिल जठर (proventriculus) अथवा पेषणी होती है। इसमें बाहर एक मोटा वर्तुल पेशी स्तर होता है तथा स्तर की उपत्वचा छः स्थानों पर मोटी होकर उपत्वचीय दांत बनाती है। ये दांत भोजन के मोटे कणों को पीसने में सहायक होते हैं। पूरा अग्रांत्र अंदर से उपत्वचा (क्यूटिकल) से आस्तरित रहता है। मध्यांत्र एक संकरी एवं समान व्यास की नलिका होती है, जिसमें उपत्वचा का आस्तर नहीं होता है। अग्रांत्र व मध्यांत्र के संधिस्थल पर अंगुली के समान छह से आठ अंध-नलिकाएं लगी रहती हैं, जिनके सिरे बंद रहते हैं। इनको यकृतीय या जठरीय अंधनाल कहते हैं, ये पाचकरस बनाती हैं। मध्यांत्र व पश्चांत्र के संधि स्थल पर लगभग 100-150 पतली पीले रंग की नलिकाएं होती है। जिन्हें



चित्र 7.17 तिलचट्टे का खुला परिसंचरण तंत्र

मैलपीगी नलिकाएं कहते हैं। ये हीमोलिंफ से उत्सर्जी पदार्थों के उत्सर्जन में सहायक होती हैं। पश्चांत्र, मध्यांत्र से थोड़ा चौड़ा होता है तथा क्षुदांत्र, वृहदांत्र एवं मूत्राशय में विभक्त रहता है। मलाशय बाहर की ओर गुदा द्वारा खुलता है।

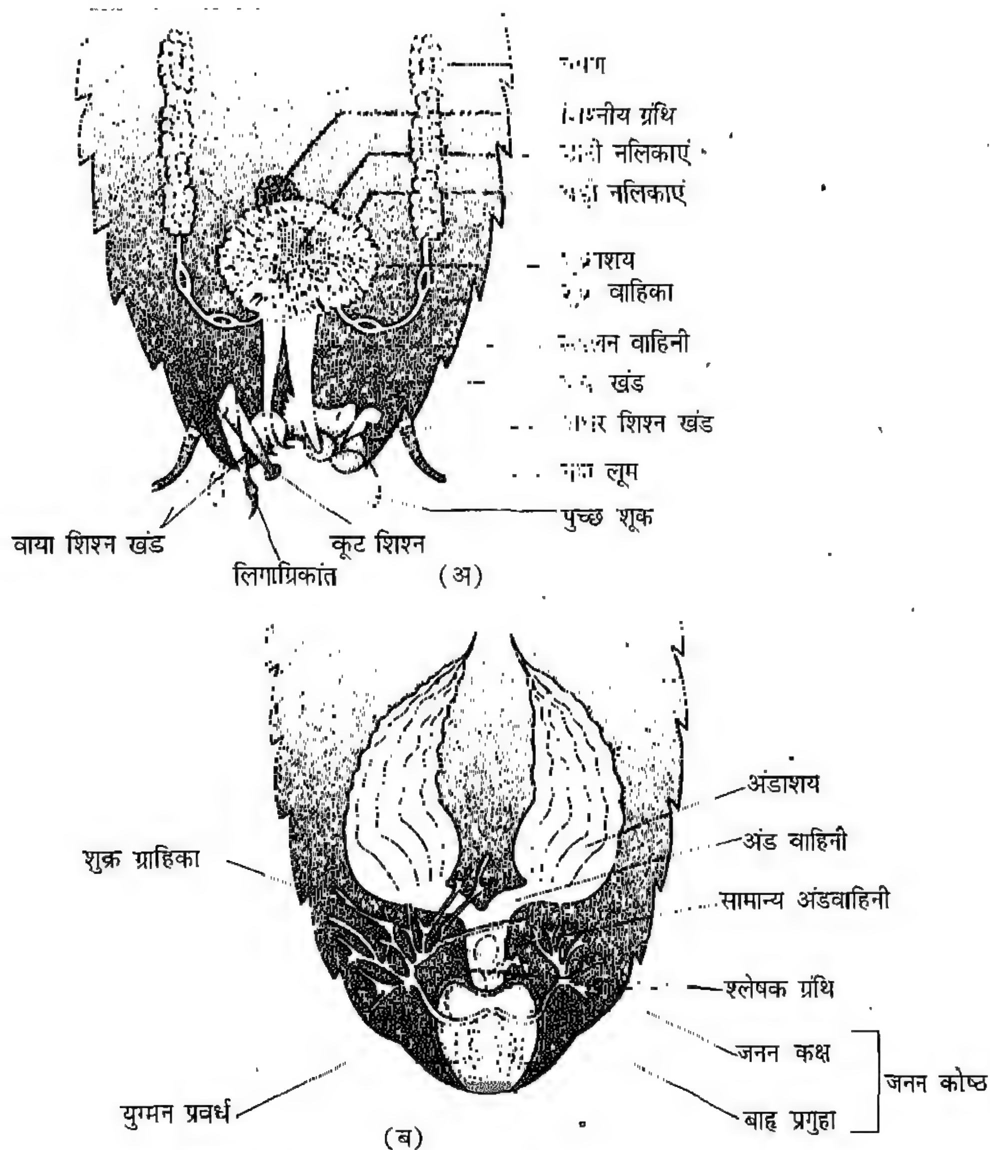
तिलचट्टे में खुले प्रकार का परिसंचरण तंत्र होता है (चित्र 7.17) इसकी रुधिर वाहिनियाँ अल्पविकसित होती हैं और रुधिरगुहा में खुलती हैं तथा उसी में सभी अंतरंग अंग डूबे रहते हैं, जिसे रुधिरलसीका कहते हैं। रुधिरलसीका (हीमोलिंफ) रंगहीन प्लाज्मा व रुधिराणुओं से बना होता है। कॉकरोच का हृदय एक लंबी पेशीय नली होती है जो रुधिरगुहा में वक्ष और अधर की मध्य-पृष्ठीय रेखा के साथ-साथ स्थित है। हृदय कीपाकार कोष्ठकों में विभेदित होता है और दोनों तरफ आस्य (ostia) होते हैं।

श्वसन तंत्र शाखित श्वास नालों (trachea) के जाल का बना होता है। श्वासनाल, श्वास छिद्रों द्वारा खुलती हैं। हवा 10 जोड़ी श्वास छिद्रों द्वारा अंदर प्रवेश करती है जो कि शरीर की पार्श्व सतह पर व्यवस्थित होते हैं। श्वासनाल पुन: विभाजित होकर श्वासनलिकाएं बनाती हैं। यह हवा को श्वास नलिकाओं द्वारा शरीर के सभी भागों तक पहुँचाती हैं। श्वास छिद्रों का खुलना अवरोधनी द्वारा नियमित होता है। श्वासनलिकाओं पर गैसों का आदान प्रदान विसरण विधि द्वारा होता है।

तिलचट्टे में उत्सर्जन मैलपीगी नलिकाओं द्वारा होता है। प्रत्येक नलिका ग्रंथिल एवं रोमयुक्त उपकला द्वारा आस्तरित रहती है। ये नाइट्रोजनी-अपशिष्ट पदार्थों का अवशोषण करके उन्हें जैव रासायनिक क्रिया द्वारा यूरिक अम्ल में परिवर्तित कर देती है। यूरिक अम्ल पश्चांत्र द्वारा उत्सर्जित कर दिया जाता है। अत: यह कीट यूरिकाम्ल उत्सर्गी कहलाता है। इनके साथ-साथ वसापिंड वृक्काणु उपत्वचा और यूरेकोस ग्रंथियां भी उत्सर्जन में सहायक होती हैं।

तिलचट्टा में **तंत्रिका तंत्र** एक श्रेणी बद्ध खंडीय व्यवस्थित गुच्छिकाओं का बना होता है, जो अधर तल पर युग्मित (paired) अनुदैर्घ्य संयोजक से जुड़ी रहती हैं। तीन गुच्छिकाएं वक्ष में और छ: उदर में स्थित होती हैं। कॉकरोच का तंत्रिका तंत्र पूरे शरीर में फैला रहता है। सिर मे तंत्रिका तंत्र का थोड़ा सा हिस्सा रहता है। जबकि बाकी भाग शरीर के दूसरे भागों के अधर तल में उपस्थित रहता है, अब तक आप यह जान चुके होंगे कि कॉकरोच का सिर काटने के बाद भी एक सप्ताह तक जीवित क्यों रहता है? सिर में मस्तिष्क अधिग्रसिका गुच्छिका द्वारा निरूपितत (represent) किया जाता है, जो कि शृंगिकाओं एवं संयुक्त नेत्र को तंत्रिकाएं भेजता है। तिलचट्टे में संवेदन अंग, शृंगिका, आँख, मैक्सिलरी स्पर्शक, लेबियल स्पर्शक तथा गुदा रोमक इत्यादि होते हैं। शृंगिका, स्पर्शक ओर रोमक स्पर्श संवेदी होते हैं। सिर के पृष्ठ सतह पर एक जोड़ी संयुक्त नेत्र पाए जाते हैं। प्रत्येक संयुक्त नेत्र में लगभग 2000 षटकोणीय नेत्रांशक (ommatia) होते हैं। कई नेत्रांशकों की मदद से तिलचट्टा एक ही वस्तु की कई प्रतिछायाएं देख सकता है। इस प्रकार की दृष्टि को मोजेक दृष्टि कहते हैं, जिसकी सुग्राहिता अधिक परंतु विभेदन कम होता है, यह सामान्यतया रात के समय होती है, अत: इसे रात्रि दृष्टि कहा जाता है।

तिलचट्टा द्विलिंगी होता है तथा दोनों लिंगों में पूर्ण विकसित जनन अंग होते हैं (चित्र 7.18)। नर जननांग एक जोड़ी वृषण के रूप में विद्यमान होते हैं, जो चौथे से छठे उदरीय



चित्र 7.18 तिलचट्टे का जनन तंत्र (अ) नर (ब) मादा

खंड के पार्श्व में व्यवस्थित होते हैं। प्रत्येक वृषण से एक पतली नलिका जिसे शुक्रवाहिनी कहते हैं, शुक्राशय से होते हुए स्खलनीय वाहिनी में खुलती है। ये स्खलनीय वाहिनी नर-जनन छिद्र में खुलती है जो गुदा के अधर में होता है। एक विशिष्ट छत्रक रूपी ग्रंथि उदर के छठे एवं सातवें खंड में होती है, जो सहायक जनन-ग्रंथि का कार्य करती है। बाह्य जननेन्द्रिय नर गोनोफोफिसस (युग्मनप्रवर्ध) अथवा शिशनखंड के रूप में होती है जननरंध्र के चारों ओर काइटिनी असममितीय संरचना है। शुक्राणु, शुक्राशय में संग्रहित रहते हैं और पुंज के रूप में आपस में चिपके रहते हैं। इन पुंजों को शुक्राणुधर कहते हैं। मैथुन के समय ये विसर्जित कर दिए जाते हैं। मादा जनन तंत्र में दो बृहद् आकार के अंडाशय होते हैं, जो उदर के दो से छठे खंड के पार्श्व में स्थित होते हैं। प्रत्येक अंडाशय आठ अंडाशयी नलिका अथवा अंडाशयकों का बना होता है, जिसमें परिवर्धित हो रहे

अंडों की एक शृंखला होती है। दोनों तरफ के अंडाशयों की अंडवाहिनियां मिलकर एक मध्य अंडवाहिनी का निर्माण करती है, जिसे योनि कहते हैं जो जनन कोष्ठ में खुलती है। छठे खंड में एक जोड़ी शुक्राणुधानी होती है, जो जनन कक्ष में खुलती है।

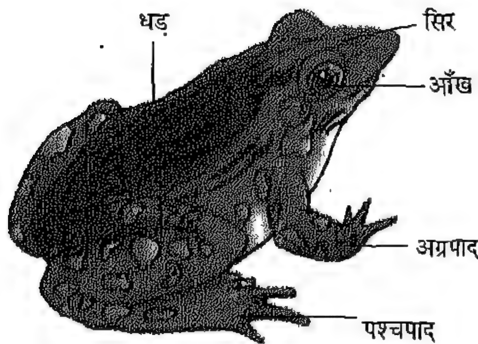
शुक्राणु, शुक्राणुधर के द्वारा स्थानांतरित होते हैं। इनके निषेचित अंडें एक संपुट में संकोशित होते हैं, जिसे अंडकवच कहते हैं। अंडकवच गहरे लाल रंग से काले भूरे रंग का 3/8 इंच (8 मिमी.) लंबा संपुट (केप्स्यूल) होता है। ये संपुट दरारों एवं आर्द्रता, युक्त तथा भोजन वाले स्थानों पर चिपका दिए जाते हैं। औसतन एक मादा 9-10 अंडकवच उत्पन्न करती है और प्रत्येक में 14-16 अंडे होते हैं। *पी.अमेरिकाना (P. americana)* का परिवर्धन में पौरोमेटाबोलस प्रकार का होता हैं अर्थात् इनके परिवर्धन में अर्भक (निंफ्स) अवस्था मुख्य रूप से पाई जाती है। अर्भक वयस्क के समान दिखते हैं। अर्भक में वृद्धि कायांतरण के द्वारा होती है तथा लगभग तेरह निर्मोचन के बाद यह वयस्क में बदल जाता है। अंतिम अर्भक अवस्था से पहली अवस्था में पक्षतल्प (wing pad) पाए जाते हैं

तिलचट्टों की बहुत सी जंगली जातिया पाई जाती हैं। तथा इनका कोई आर्थिक महत्व नहीं है। कुछ जातियां मनुष्य के वास-स्थान में अथवा उसके आस-पास फलती-फूलती होती हैं। ये पीड़क के रूप में कार्य करते हैं; क्योंकि ये खाद्य पदार्थों को नष्ट कर देते हैं तथा अपने दुर्गंधयुक्त उत्सर्ग द्वारा संदूषित कर देते हैं। भोज्य पदार्थों को संदूषित कर अनेक जीवाण्वीय बीमारियों को फैलाते हैं।

7.5 मेंढक

मेंढक वह प्राणी है जो मीठे जल तथा धरती दोनों पर निवास करता है तथा कशेरुकी संघ के एंफीबिया वर्ग से संबंधित होता है। भारत में पाई जाने वाली मेंढक की सामान्य जाति *राना टिग्रीना* है।

इसके शरीर का ताप स्थिर नहीं होता है। शरीर का ताप वातावरण के ताप के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। इस प्रकार के प्राणियों को असमतापी या अनियततापी कहते हैं। मेंढक के रंग को परिवर्तित होते हुए आपने अवश्य देखा होगा, जिस समय ये घास तथा नम जमीन पर होते हैं। क्या आप बता सकते हो, ऐसा क्यों होता है? उनमें अपने शत्रुओं से छिपने के लिए रंग परिवर्तन की क्षमता होती है, जिसे छद्मावरण कहा जाता है। इस रक्षात्मक रंग परिवर्तन क्रिया को अनुहरण (minimicry) कहते हैं। आपने यह भी देखा होगा कि मेंढक शीत व ग्रीष्म ऋतु में नहीं दिखते। इस अंतराल में ये सर्दी तथा गर्मी से अपनी रक्षा करने के लिए गहरे गड्ढों में चले जाते हैं। इस प्रक्रिया को क्रमशः शीत निष्क्रियता (hibernation) व ग्रीष्म निष्क्रियता (aestivation) कहते हैं।



चित्र 7.19 मेंढक का बाह्य चित्र

7.5.1 बाह्य आकारिकी

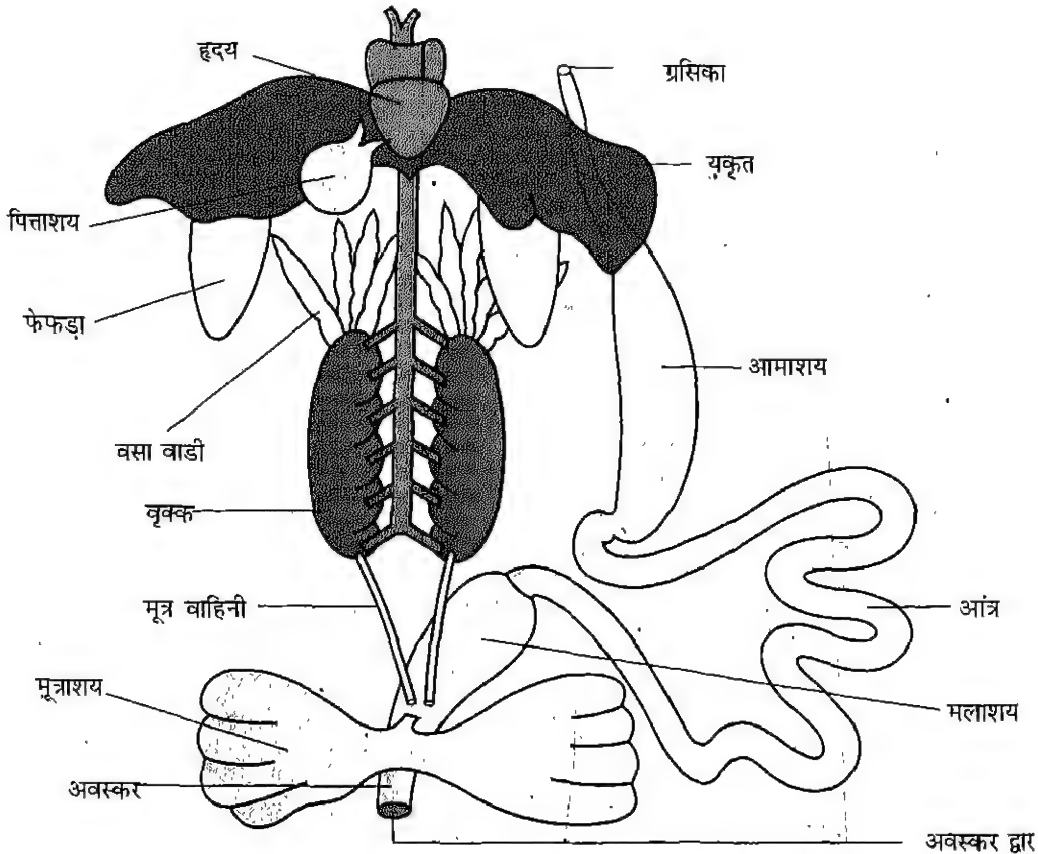
क्या आपने कभी मेंढक की त्वचा को छुआ है? मेंढक की त्वचा श्लेषमा (म्युकस) से ढकी होने के कारण चिकनी तथा फिसलनी होती है। इसकी त्वचा सदैव आर्द्र रहती है। मेंढक की ऊपरी सतह धानी हरे रंग की होती है, जिसमें अनियमित धब्बे होते हैं, जबकि नीचे की सतह हल्की पीली होती है। मेंढक कभी पानी नहीं पीता;

बल्कि त्वचा द्वारा इसका अवशोषण करता है।

मेंढक का शरीर सिर व धड़ में विभाजित रहता है। (चित्र 7.19) पूंछ व गर्दन का अभाव होता है। मुख के ऊपर एक जोड़ी नासिका द्वार खुलते हैं। आँखें बाहर की ओर निकली व निमेषकपटल से ढकी होती हैं ताकि जल के अंदर आँखों का बचाव हो सके। आँखों के दोनों ओर (कान) टिम्पैनम या कर्ण पटह उपस्थित होते हैं, जो ध्वनि संकेतों को ग्रहण करने का कार्य करते हैं। अग्र व पश्चपाद चलने, फिरने, टहलने व गड्ढा बनाने का काम करते हैं। अग्र पाद में चार अंगुलियाँ होती हैं; जबकि पश्चपाद में पाँच होती हैं। तथा पश्चपाद लंबें व मांसल होते हैं। पश्च पाद की झिल्लीयुक्त अंगुलि जल में तैरने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मेंढक में लैंगिक द्विरूपता देखी जाती है। नर मेंढक में आवाज उत्पन्न करने वाले वाक् कोष (vocal sacs) के साथ-साथ अग्रपाद की पहली अंगुलि में मैथुनांग होते हैं। ये अंग मादा मेंढक में नहीं मिलते हैं।

7.5.2 आंतरिक आकारिकी

मेंढक की देह गुहा में पाचन तंत्र, श्वसन तंत्र, तंत्रिका तंत्र, संचरण तंत्र, जनन तंत्र पूर्ण अच्छी तरह परिवर्धित संरचनाओं एवं कार्यों युक्त होते हैं। मेंढक का पाचन तंत्र आहार नाल तथा आहर ग्रंथि का बना होता है (चित्र 7.20)। मेंढक मांसाहारी है, अतः इसकी



चित्र 7.20 मेंढक की आंतरिक संरचना जो पूर्ण आहार तंत्र दर्शाती है।

आहारनाल लंबाई में छोटी होती है। इसका मुख, मुखगुहिका में खुलता है जो ग्रसनी से होते हुए ग्रसिका तक जाती है। ग्रसिका एक छोटी नली है जो आमाशय में खुलती है। आमाशय आगे चलकर आंत्र, मलाशय और अंत में अवस्कर (cloaca) द्वारा बाहर खुलता है। इसका मुँह मुखगुहिका द्वारा ग्रसनी में खुला है जो ग्रसिका तक जाती है।

यकृत पित्त रस स्रावित करता है जो पित्ताशय में एकत्रित रहता है। अग्नाश्य जो एक पाचक ग्रंथि है, जो अग्नाशयी रस स्रवित करता है जिसमें पाचक एंज़ाइम होते हैं। मेंढक अपनी द्विपालित जीभ से भोजन का शिकार पकड़ता है। इसके भोजन का पाचन आमाशय की दीवारों द्वारा स्रवित हाइड्रोक्लोरिक अम्ल तथा पाचक रसों द्वारा होता है। अर्धपाचित भोजन काइम कहलाता है जो आमाशय से ग्रहणी में जाता है। ग्रहणी पित्ताशय से पित्त और अग्नाशय से अग्नाशयी रस मूल पित्त वाहिनी द्वारा प्राप्त करती है। पित्तरस वसा तथा अग्नाशयी रस कार्बोहाइड्रेटों तथा प्रोटीन का पाचन करता है। पाचन की अंतिम प्रक्रिया आँत में होती है। पाचित भोजन आँत के अंदर अंकुर और सूक्ष्मांकुरों द्वारा अवशोषित होते हैं। अपाचित भोजन अवस्कर द्वार से बाहर निष्कासित कर दिया जाता है।

मेंढक जल व थल दोनों स्थानों पर दो विभिन्न विधियों द्वारा श्वसन कर सकते हैं। इसकी त्वचा एक जलीय श्वसनांग का कार्य करती है। इसे त्वचीय श्वसन कहते हैं। विसरण द्वारा पानी में घुली हुई ऑक्सीजन का विनिमय होता है। जल के बाहर त्वचा, मुख गुहा और फेफड़े वायवीय श्वसन अंगों का कार्य करते हैं। फेफड़ों के द्वारा श्वसन फुप्फसीय श्वसन कहलाता है। फेफड़े एक लंबें अंडाकार गुलाबी रंग की थैलीनुमा संरचनाएं होती हैं, जो देहगुहा के वक्षीय भाग में पाई जाती हैं। वायु नासा छिद्रों से होकर मुख गुहा तथा फेफड़ों में पहुँचती है। ग्रीष्म निष्क्रियता व शीत निष्क्रियता के दौरान मेंढक त्वचा से श्वसन करते हैं।

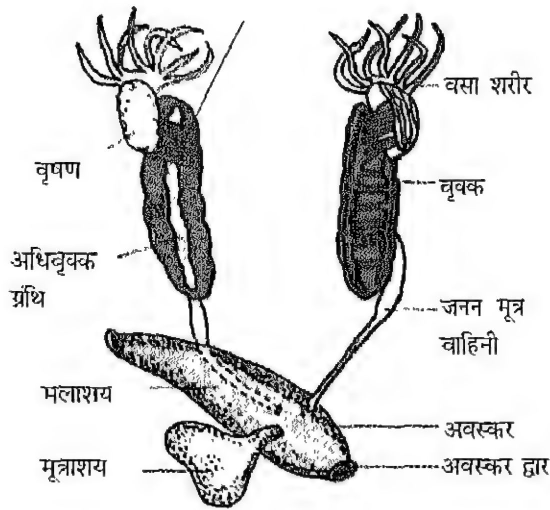
मेंढक का परिसंचरण तंत्र; सुविकसित बंद प्रकार का होता है। इसमें लसीका परिसंचरण भी पाया जाता है। अर्थात् ऑक्सीजनित अथवा विऑक्सीजनित रक्त हृदय में मिश्रित हो जाते हैं। रुधिर परिसंचरण तंत्र हृदय, रक्त वाहिकाओं और रुधिर से मिलकर बनता है। लसीका तंत्र लसीका, लसीका नलिकाओं और लसीका ग्रंथियों का बना होता है। हृदय एक त्रिकोष्ठीय मांसल संरचना है, जो कि देह गुहा के ऊपरी भाग में स्थित है। यह पतली पारदर्शी झिल्ली, हृदय-आवरण (पेरीकार्डियम) द्वारा ढका रहता है। एक त्रिकोष्ठीय संरचना, जिसे शिराकोटर (साइनस वेनोसस) कहते हैं, हृदय के दाहिने अलिंद से जुड़ा रहता है तथा महाशिराओं से रक्त प्राप्त करता है। हृदय की अधर सतह पर दाएं अलिंद के ऊपर एक थैलानुमा रचना धमनी शंकु होता है, जिसमें निलय (ventricle) खुलता है। हृदय से रक्त धमनियों द्वारा शरीर के सभी भागों में भेजा जाता है। इसे धमनी तंत्र कहते हैं। शिराएं शरीर के विभिन्न भागों से रक्त एकत्रित कर हृदय में पहुँचाती हैं, यह शिरा-तंत्र कहलाता है। मेंढक में विशेष संयोजी शिराएं यकृत तथा आँतों के मध्य वृक्क तथा शरीर के निचले भागों के मध्य पाई जाती है। इन्हें क्रमशः यकृत निवाहिका तंत्र एवं वृक्कीय निवाहिका तंत्र कहते हैं। रक्त प्लेज्मा तथा रक्त-कणिकाओं से मिलकर बना है। रक्त कणिकाएं हैं- लाल रुधिर कणिकाएं (रक्ताणु) एवं श्वेत रुधिर कणिकाएं

(श्वेताणु) एवं पट्टिकाणु (प्लेटलेट)। लाल रुधिर कणिकाओं में लाल रंग का श्वसन रंजक हीमोग्लोबिन पाया जाता है। इन कणिकाओं में केंद्रक पाया जाता है। लसीका रुधिर से भिन्न होता है; क्योंकि इसमें कुछ प्रोटीन व लाल रुधिर कणिकाएं अनुपस्थित होती हैं। परिसंचरण के दौरान रक्त पोषकों गैसों व जल को नियत स्थानों तक ले जाता है। रुधिर परिसंचरण मांसल हृदय की पंपन क्रिया द्वारा होता है।

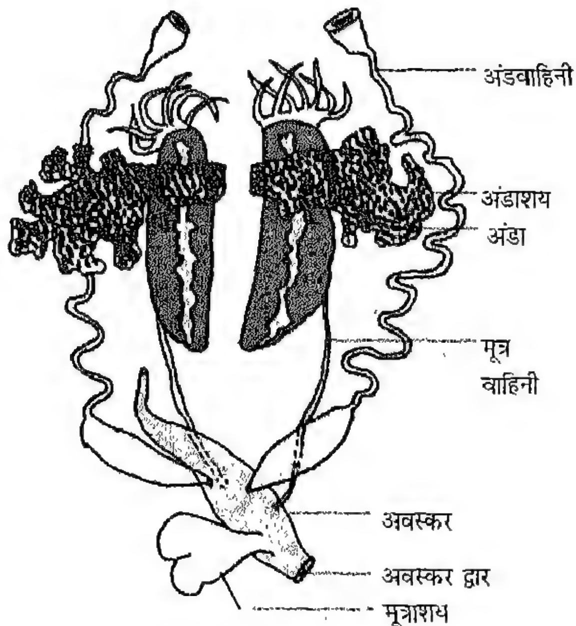
नाइट्रोजनी अपशिष्ट को शरीर से बाहर निकालने के लिए मेंढक में पूर्ण विकसित उत्सर्जी तंत्र होता है। उत्सर्जी अंग में मुख्यत: एक जोड़ी वृक्क, मूत्रवाहिनी, अवस्कर द्वार तथा मूत्राशय होते हैं। ये गहरे लाल रंग के सेम के आकार के होते हैं और देहगुहा में थोड़ा सा पीछे की ओर केशेरुक दंड के दोनों ओर स्थित होते हैं। प्रत्येक वृक्क कई सरंचनात्मक व क्रियात्मक इकाइयों, मूत्रजन नलिकाओं या वृक्काओं का बना होता है। नर मेंढक में मूत्र नलिका वृक्क से मूत्र जनन नलिका के रूप में बाहर आती है। मूत्रवाहिनी अवस्कर द्वार में खुलती है। मादा मेंढक में मूत्र वाहिनी एवं अंडवाहिनी अवस्कर द्वार में अलग-अलग खुलती हैं। एक पतली दीवार वाला मूत्राशय भी मलाशय के अधर भाग पर स्थित होता है, जो कि अवस्कर में खुलता है। मेंढक यूरिया का उत्सर्जन करता है इसलिए **यूरिया-उत्सर्जी** प्राणी कहलाता है। उत्सर्जी अपशिष्ट रक्त द्वारा वृक्क में पहुँचते हैं, जहाँ पर ये अलग कर दिए जाते हैं और उनका उत्सर्जन कर दिया जाता है।

नियंत्रण व समन्वय तंत्र मेंढक में पूर्ण विकसित होता है। इनमें अंत: स्रावी ग्रंथियाँ (endocrine system) व तंत्रिका तंत्र दोनों पाए जाते हैं। विभिन्न अंगों में आपसी समन्वयन कुछ रसायनों द्वारा होता है जिन्हें हॉर्मोन कहते हैं। ये अंत:स्रावी ग्रंथियों द्वारा स्रावित होते हैं। मेंढक की मुख्य अंत:स्रावी ग्रंथियाँ हैं – पीयूष (पिट्यूटरी), अवटु (थॉइराइड), परावटु (पैराथाइॅराइड), थाइमस, पीनियल काय, अग्नाशयी द्वीपकाएं, अधि वृक्क (adrenal) और जनद (gonad)। तंत्रिका तंत्र (मस्तिष्क तथा मेरु रज्जु) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र, परिधीय तंत्रिका तंत्र (कपालीय व मेरु तंत्र) और स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (ओटोनोमिक नर्वस सिस्टम) अनुकंपी और परानुकंपी (सिंपेथेटिक व पैरासिंपेथिटक) तंत्र का बना होता है। मस्तिष्क से 10 जोड़ी कपाल तंत्रिकाएं निकलती है। मस्तिष्क, हड्डियों से निर्मित मस्तिष्क बॉक्स अथवा कपाल के अंदर बंद रहता है। यह अग्र मस्तिष्क, मध्य मस्तिष्क और पश्च मस्तिष्क में विभाजित होता है। अग्र मस्तिष्क में घ्राण पालियाँ, जुड़वाँ, युग्मित, प्रमस्तिष्क गोलार्ध और केवल एक अग्रमस्तिष्क पश्च (diencephalon) होते हैं। मध्य मस्तिष्क एक जोड़ा दृक पालियों का बना होता है। पश्च मस्तिष्क, अनुमस्तिष्क एवं मेडूला ऑब्लांगेटा का बना होता है। मेडूला ऑब्लांगेटा महारंध्र से निकलकर मेरुदंड में स्थित मेरुरज्जु से जुड़ा रहता है।

मेंढक में भिन्न प्रकार के संवेदी अंग पाए जाते हैं। जैसे- स्पर्श अंग (संवेदी पिप्पल) स्वाद अंग (स्वाद कलिकाएं) गंध (नासिका उपकला) दृष्टि (नेत्र) व श्रवण (कर्ण पटह और आंतरिक कर्ण)। इन सब में आँखें और आंतरिक कर्ण सुव्यवस्थित होते हैं और बचे हुए दूसरे संवेदी अंग केवल तंत्रिका सिरों पर कोशिकाओं के गुच्छे होते हैं। मेंढक में एक जोड़ी गोलाकार नेत्र गड्ढों में स्थित होते हैं। ये साधारण नेत्र होते हैं। मेंढक में बाह्य कर्ण



चित्र 7.21 नर जनन तंत्र



चित्र 7.22 मादा जनन तंत्र

अनुपस्थित होता है केवल कर्णपट ही बाहर से दिखाई देता है। कर्ण एक ऐसा अंग है जो सुनने के साथ-साथ संतुलन का काम भी करता है।

मेंढक में मादा व नर जनन तंत्र अलग एवं पूर्ण सुव्यवस्थित होते हैं। नर जननांग एक जोड़ी पीले अंडाकार वृषण होते हैं जो, वृक्क के ऊपरी भाग से पेरिटोनियम के दोहरीवलय, मेजोर्कियम नामक झिल्ली द्वारा चिपके रहते हैं। (चित्र 7.21)। शुक्र वाहिकाएं संख्या में 10-12 होती हैं जो वृषण से निकलने के बाद अपनी ओर के वृक्क में धंस जाती हैं। वृक्क में ये विडर नाल में खुलती हैं, जो अंत में मूत्रवाहिनी में खुलती है। अब मूत्रवाहिनी मूत्र-जनन वाहिनी कहलाती है, जो वृक्क से बाहर आकर अवस्कर में खुलती है। अवस्कर एक छोटा मध्यकक्ष होता है, जो कि उत्सर्जी पदार्थ, मूत्र तथा शुक्राणुओं को बाहर भेजने का कार्य करता है।

मादा में वृक्क के पास एक जोड़ी अंडाशय उपस्थित होते हैं (चित्र 7.22) लेकिन इनका वृक्क से कोई क्रियात्मक संबंध नहीं होता है। एक जोड़ी अंडवाहिनियाँ अवस्कर में अलग-अलग खुलती हैं। एक परिपक्व मादा एक बार में 2,500 से 3,000 अंडे दे सकती है। इनमें बाह्य निषेचन पानी में होता है। भ्रूण परिवर्धन लार्वा के माध्यम से होता है, लार्वा टैडपोल कहलाता है।

मेंढक मनुष्य के लिए लाभदायक प्राणी है। यह कीटों को खाता है और इस तरह फसलों की रक्षा करता है। मेंढक वातावरण संतुलन बनाए रखते हैं; क्योंकि यह पारिस्थितिकी तंत्र की एक महत्वपूर्ण भोजन शृंखला की एक कड़ी है। कुछ देशों में मांसल पाद मनुष्यों द्वारा भोजन के रूप में इस्तेमाल किए जाते हैं।

सारांश

कोशिका ऊतक, अंग और अंग तंत्र कार्य को इस प्रकार विभक्त कर लेते हैं कि शरीर का बना रहना सुनिश्चित रहे और इस तरह वे श्रम विभाजन प्रदर्शित करते हैं। कोशिकाओं का ऐसा समूह जो अंतराकोशीय पदार्थों से बना होता है तथा एक या अधिक कार्य करता है, ऊतक कहलाता है। उपकला शरीर के चादर जैसे ऊतक होते हैं बाह्य सतह और गुहिकाओं, वाहिनियों और नलिकाओं का आस्तर है। उपकलाओं की एक मुक्त सतह होती है जिसके एक तरफ शरीर तरह तथा दूसरी तरफ बाह्य वातावरण होता है। इनकी कोशिकाएं संरचनात्मक एवं क्रियात्मक रूप से संधियों से जुड़ी रहती हैं।

विभिन्न प्रकार के संयोजी ऊतक एक साथ मिलकर शरीर के अन्य ऊतकों को आलंब, शक्ति, सुरक्षा और रोधन (insulation) प्रदान करते हैं। कोमल संयोजी ऊतक आधारीय पदार्थ में प्रोटीन रेशों तथा कई तरह की कोशिकाओं से मिलकर बना होता है। उपास्थि, अस्थि, रक्त तथा वसामय ऊतक एक विशेष प्रकार के संयोजी ऊतक होते हैं। उपास्थि एवं अस्थि दोनों एक तरह के संरचनात्मक पदार्थ होते हैं। रुधिर एक तरल ऊतक है जिसका कार्य परिवहन है। वसामय ऊतक ऊर्जा को संचित करने का काम करता है। पेशीय ऊतक जो किसी उद्दीपन पर अनुक्रिया के फलस्वरूप संकुचित (छोटा) होता है और शरीर व शरीर के भाग को गतिशील बनाता है। कंकाल पेशी, वह पेशी ऊतक है, जो अस्थियों से जुड़ी रहती है। चिकनी पेशी आंतरिक अंगों का एक घटक है। हृदय पेशी, हृदय की संकुचनशील भित्तियों का निर्माण करती है। संयोजी ऊतक में सभी तीनों तरह के ऊतक होते हैं। तंत्रीय तंत्र शरीर की सभी क्रियाओं की अनुक्रिया पर नियंत्रण रखता है। तंत्रिका ऊतक की एक इकाई न्युरॉन अथवा तंत्रि कोशिका है।

केंचुआ, कॉकरोच व मेंढक एक विशेष प्रकार की शरीर संरचना को प्रदर्शित करते हैं। *फेरेटिमा पोस्थुमा* (केंचुआ) का शरीर उपचर्म से ढका रहता है। शरीर के सभी खंड 14, 15, व 16 को छोड़कर एक जैसे होते हैं। 14, 15, व 16 खंड मोटे, गहरे, ग्रंथिल होते है व क्लाइटेलम (पर्याणिका) का निर्माण करते हैं। शरीर के प्रत्येक खंड में एक एस (S) आकार का काइटिन युक्त शूक का वलय होता है। यह चलन में सहायता करता है। अधरीय भाग के 5 और 6, 6 और 7, 7 और 8 तथा 8 और 9 खंडों के बीच स्थित खांचों में शुक्रवाहिका द्वार होते हैं। मादा जनन छिद्र 14 वें खंड तथा नर जनन छिद्र 18वें खंड में होता है। आहारनाल एक पतली नलिका होती है जो मुख, मुख गुहा, ग्रसिका, पेषणी, आमाशय, आंत्र और गुदा तक होती हैं। रुधिर परिसंचरण तंत्र बंद प्रकार का होता है जो हृदय तथा कपाट (वाल्व) का बना होता है। तंत्रिका तंत्र अधर तंत्रिका रज्जु का प्रतिनिधित्व करता है। केंचुआ द्विलिंगी प्राणी है। इसमें दो जोड़े वृषण क्रमश: 10वें व 11वें खंड में पाए जाते हैं। एक जोड़ा अंडाशय 12वें - 13वें अंतखंड के बीच स्थित होते हैं। यह एक पुंपूर्वी प्राणी है, जिसमें निषेचन पाया जाता है। निषेचन और परिवर्धन पर्याणिका की ग्रंथियों द्वारा स्रावित कोकून के अंदर होता है।

कॉकरोच *(पेरिप्लैनेटो अमेरिकाना)* का शरीर कायाटिन निर्मित, बाह्य कंकाल से ढका रहता है। यह सिर, वक्ष और उदर में विभाजित रहता है। खंडों पर संधियुक्त उपांग पाए जाते हैं। वक्ष के तीन खंड होते हैं, जिसमें दो जोड़ी चलन पाद पाए जाते हैं। दो जोड़े पंख पाए जाते हैं, जो क्रमश: दूसरे व तीसरे खंड में होते है। उदर में 10 खंड होते हैं। आहार नाल सुपरिवर्धित होता है जिसमें मुखांगों से घिरा मुख ग्रसनी, ग्रसिका, अन्नपुट (क्रॉप), पेषणी, मध्यांत्र, पश्चांत्र और गुदा शामिल है। अग्रांत्र एवं मध्यांत्र के संधि स्थल पर यकृतीय अधनाल उपस्थित होते है। मध्यांत्र एवं पश्चांत्र के मध्य मैलपीगी नलिकाएं उपस्थित होती है और उत्सर्जन में सहायता करती है। अन्नपुट (क्राप) के निकट एक जोड़ी लार ग्रंथियाँ उपस्थित होती हैं। रुधिर परिसंचरण तंत्र खुले प्रकार का होता है। श्वसन, श्वास नलिकाओं के जाल द्वारा होता है। श्वासनलिकाएं (श्वासरंध्र) द्वारा बाहर की ओर खुलती हैं। तंत्रिका तंत्र अधर तंत्रिका रज्जु और खंडीय गुच्छिकाओं द्वारा निरूपित किया जाता है। निषेचन आंतरिक होता है। मादा 10-40 अंडकवच उत्पन्न करती है, जिसमें परिवर्धित भ्रूण पाया जाता है। एक अंडकवच के फटने से 16 नवजात शिशु बाहर आते हैं, जिन्हें अर्भक (निम्फ) कहते हैं।

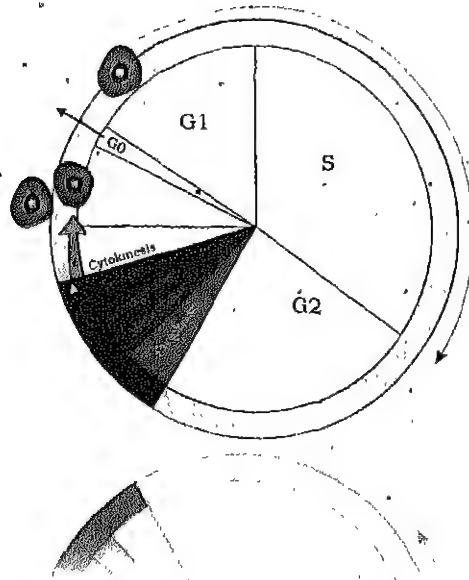
भारतीय बुलफ्राग, *राना टिग्रीना* भारत में पाया जाने वाला सामान्य मेंढक है। इसका शरीर त्वचा से ढका रहता है। त्वचा पर श्लेष्म ग्रंथियाँ पाई जाती है जो अत्यधिक संवहनी होती है तथा श्वसन (जल तथा थल) में सहायता करती है। शरीर, सिर और धड़ में विभक्त रहता है। एक पेशीय जिह्वा उपस्थित रहती है जो किनारे से कटी हुई ओर द्विपालित (वाईलोब्ड) होती है। यह शिकार को पकड़ने में मदद करती है। आहारनाल, ग्रसिका, आमाशय, आंत्र और मलाशय की बनी होती है, जो अवस्कर द्वारा बाहर की ओर खुलती है। मुख्य पाचन ग्रंथियाँ, यकृत और अग्नाशय हैं। यह पानी में त्वचा द्वारा तथा जमीन पर फेफड़ों द्वारा श्वसन करता है। रुधिर परिसंचरण तंत्र बंद और एकल प्रकार का होता है। लाल रुधिर कणिकाएं केंद्रक युक्त होती हैं तंत्रिका तंत्र, केंद्रीय, परिधीय और स्वायत्त प्रकार का होता है। जनन तंत्र के मूल अंग वृक्क एवं मूत्र जनन नलिकाएं हैं, जो अवस्कर में खुलती है। नर जननांग एक जोड़ी वृषण तथा मादा जननांग एक जोड़ी अंडाशय होते है। एक मादा एक बार में 2500 से 3000 अंडे देती है। निषेचन और परिवर्धन बाह्य होता है। अंडों से टेडपोल निकलता है, जो मेंढक में कायांतरित हो जाता है।

अभ्यास

1. एक शब्द या एक पंक्ति में उत्तर दीजिए:
   (i) *पेरिप्लेनेटा अमेरिकाना* का सामान्य नाम लिखिए।
   (ii) केंचुए में कितनी शुक्राणुधानियां पाई जाती हैं?
   (iii) तिलचट्टे में अंडाशय की स्थिति क्या है?
   (iv) तिलचट्टे के उदर में कितने खंड होते हैं?
   (v) मैलपीगी नलिकाएं कहाँ पाई जाती हैं?
2. निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए।
   (i) वृक्कक का क्या कार्य है?
   (ii) अपनी स्थिति के अनुसार केंचुए में कितने प्रकार के वृक्कक पाए जाते हैं?
3. केंचुए के जननांगों का नामांकित चित्र बनाइए।
4. तिलचट्टे की आहारनाल का नामांकित चित्र बताइए।
5. निम्न में विभेद करें:
   (अ) पुरोमुख एवं परितुंड (ब) पटीय (septal) वृक्कक और ग्रसनीय वृक्कक
6. रुधिर के कणीय अवयव क्या है?
7. निम्न क्या हैं तथा प्राणियों के शरीर में कहाँ मिलते हैं?
   (अ) अपास्थि-अणु (कोंड्रोसाइट) (ब) तंत्रिकाक्ष ऐक्सॉन (स) पक्ष्माभ उपकला
8. रेखांकित चित्र की सहायता से विभिन्न उपकला ऊतकों का वर्णन कीजिए।
9. निम्न में विभेद कीजिए।
   (अ) सरल उपकला तथा संयुक्त उपकला ऊतक (ब) हृदय पेशी तथा रेखित पेशी
   (स) सघन नियमित एवं सघन अनियमित संयोजी ऊतक (द) वसामय तथा रुधिर ऊतक
   (व) सामान्य तथा संयुक्त ग्रंथि
10. निम्न शृंखलाओं में सुमेलित न होने वाले अंशों को इंगित कीजिए:
    (अ) एरिओल ऊतक; रुधिर, तंत्रिकोशिका न्यूरॉन, कंडरा (टेंडन)
    (ब) लाल रुधिर कणिकाएं, सफेद रुधिर कणिकाएं, प्लेटलेस्ट, उपास्थि
    (स) बाह्यस्रावी, अंतस्रावी, लारग्रंथि, स्नायु (लिगामेंट)
    (द) मैक्सिला, मैंडिबल, लेब्रम, शृंगिका (एंटिना)
    (व) प्रोटोनेमा, मध्यवक्ष, पश्चवक्ष तथा कक्षांग (कॉक्स)
11. स्तंभ-I और स्तंभ-II को सुमेलित कीजिए:

स्तंभ-I	स्तंभ-II
(क) संयुक्त उपकला	(i) आहारनाल
(ख) संयुक्त नेत्र	(ii) तिलचट्टे
(ग) पट्टीय वृक्कक	(iii) त्वचा
(घ) खुला परिसंचरण तंत्र	(iv) किर्मीर दृष्टि
(ङ.) आंत्रवलन	(v) केंचुआ
(च) अस्थि अणु	(vi) शिश्न खंड
(छ) जननेन्द्रिय	(vii) अस्थि

12. केंचुए के परिसंचरण तंत्र का संक्षेप में वर्णन करें।
13. मेंढक के पाचन तंत्र का नामांकित चित्र बनाइए।
14. निम्न के कार्य बताइए:
    (अ) मेंढक की मूत्रवाहिनी (ब) मैलपिगी नलिका (स) केंचुए की देहभित्ति



इकाई तीन

कोशिकाः संरचना एवं कार्य

जीव विज्ञान जीवित जीवों का अध्ययन है। उनके स्वरूप एवं आकृति का विस्तृत विवरण ही सहज उनकी विविधता को प्रस्तुत करता है। कोशिका सिद्धांत या परिकल्पना इस विविध स्वरूपों में निहित एकत्व को इंगित करता है अर्थात् जीवन के सभी स्वरूप में कोशिकीय संगठन बताता है। इस खंड में दिए गए अध्यायों के अंतर्गत कोशिका संरचना तथा विखंडन द्वारा कोशिका वृद्धि का एक वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ ही कोशिका सिद्धांत जीवन प्रत्याभासों अर्थात शरीर वैज्ञानिक व व्यावहारिक प्रक्रमों के रहस्य का बोध भी पैदा करती है। यह रहस्य जीवित प्रतिभासों के कोशिकीय संगठन की अक्षतता (अखंडता) की आवश्यकता थी, जिसे प्रदर्शित या अवलोकित किया गया। शरीर विज्ञान एवं व्यावहारिक प्रक्रमों को समझने एवं अध्ययन करने के लिए कोई भी व्यक्ति को भौतिक रसायनिक उपागम अपनाना है तथा परिक्षण हेतु कोशिकामुक्त प्रणाली इस्तेमाल करना पड़ता है। यह उपागम हमें आण्विक भाषा में विभिन्न प्रक्रमों का वर्णित करने के योग्य बनाता है। यह उपागम जीवित ऊतकों में तत्वों एवं यौगिकों के विश्लेषण द्वारा स्थापित होता है इससे हमें पता लग पाएगा कि एक जीवित जैविक में किस प्रकार के कार्बनिक यौगिक उपस्थित हैं। अगले चरण में, यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि कोशिका के अंदर ये यौगिक क्या कर रहे हैं? और किस प्रकार से ये संपूर्ण शरीर विज्ञान प्रक्रम जैसे कि पाचन, उत्सर्जन, स्मरण, सुरक्षा, पहचानना आदि करते हैं। दूसरे शब्दों में, हम प्रश्न का उत्तर देते हैं, समस्त शरीर वैज्ञानिक प्रक्रमों का अणु आधार क्या है? यह किसी बीमारी के दौरान असामान्य प्रक्रमों को भी स्पष्ट कर सकता है । जीवित जैविकों के इस भौतिक रसायन उपागम को समझने एवं अध्ययन की प्रक्रिया 'न्युनीकरण जीव विज्ञान' कहलाती है। जहाँ पर जीव विज्ञान को समझने के लिए भौतिक एवं रसायनशास्त्र की तकनीकों एवं संकल्पना का उपयोग किया जाता है इस खंड के अध्याय 9 में जैव अणु का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।


जी.एन. रामाचंद्रन
(1922 - 2001)

जी.एन. रामाचंद्रन प्रोटीन संरचना के क्षेत्र में एक उत्कृष्ट व्यक्तित्व थे तथा मद्रास स्कूल ऑफ फॉरमेशनल एनालिसिस ऑफ बायोपालीमर के स्थापक थे। सन् 1954 में नेचर में प्रकाशित कोलाजेन के तिहरी कुंडलित संरचना की खोज तथा 'रामचंद्रन प्लाट' के उपयोग से प्रोटीन के बहुलक के विश्लेषण से संरचनात्मक जीव विज्ञान के क्षेत्र में उन्हें सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि प्राप्त हुई। आपका जन्म आठ अक्तूबर 1922 को दक्षिण भारत के समुद्रतटीय क्षेत्र कोचीन के निकट एक गाँव में हुआ था। आपके पिता एक स्थानीय कॉलेज में गणित के प्रोफेसर थे, अतः रामचंद्रन को गणित के प्रति रुचि पैदा करने में उनका पर्याप्त प्रभाव पड़ा था। आपने अपनी स्कूली शिक्षा पूरी करने के उपरांत मद्रास विश्वविद्यालय से भौतिकशात्र में बी.एस.सी. ऑनर्स की सर्वोच्च स्थान प्राप्त की। जब आप 1949 में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। जब आप कैंब्रिज विश्वविद्यालय में थे, तब आपकी मुलाकात लाइनस पावलिंग से हुई तथा ये उनके α हेलिक्स तथा β शीट संरचना के मॉडल पर प्रकाशित कार्य से बहुत प्रभावित थे जिससे आप कोलैजन की संरचना को हल करने की ओर अपना ध्यान खींचा था। आप 78 वर्ष की आयु में 7 अप्रैल, 2001 को स्वर्गवासी हुए।

अध्याय 8

कोशिका : जीवन की इकाई

जब आप अपने चारों तरफ देखते हैं तो जीव व निर्जीव दोनों को आप पाते हैं। आप अवश्य आश्चर्य करते होंगे एवं अपने आप से पूछते होंगे कि ऐसा क्या है, जिस कारण जीव, जीव कहलाते हैं और निर्जीव जीव नहीं हो सकते। इस जिज्ञासा का उत्तर तो केवल यही हो सकता है कि जीवन की आधारभूत इकाई जीव कोशिका की उपस्थित एवं अनुपस्थित है।

सभी जीवधारी कोशिकाओं से बने होते हैं। इनमें से कुछ जीव एक कोशिका से बने होते हैं जिन्हें एककोशिक जीव कहते हैं, जबकि दूसरे, हमारे जैसे अनेक कोशिकाओं से मिलकर बने होते हैं बहुकोशिक जीव कहते हैं।

8.1 कोशिका क्या है?

कोशिकीय जीवधारी (1) स्वतंत्र अस्तित्व यापन व (2) जीवन के सभी आवश्यक कार्य करने में सक्षम होते हैं। कोशिका के बिना किसी का भी स्वतंत्र जीव अस्तित्व नहीं हो सकता। इस कारण जीव के लिए कोशिका ही मूलभूत से संरचनात्मक व क्रियात्मक इकाई होती है।

एन्टोनवान लिवेनहाक ने पहली बार कोशिका को देखा व इसका वर्णन किया था। राबर्ट ब्राउन ने बाद में केंद्रक की खोज की। सूक्ष्मदर्शी की खोज व बाद में इनके सुधार के बाद इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा कोशिका की विस्तृत संरचना का अध्ययन संभव हो सका।

8.2 कोशिका सिद्धांत

1838 में जर्मनी के वनस्पति वैज्ञानिक मैल्थीयस स्लाइडेन ने बहुत सारे पौधों के अध्ययन के बाद पाया कि ये पौधे विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं से मिलकर बने होते हैं, जो पौधों में ऊतकों का निर्माण करते हैं। लगभग इसी समय 1839 में एक ब्रिटिश प्राणि वैज्ञानिक थियोडोर श्वान ने विभिन्न जंतु कोशिकाओं के अध्ययन के बाद पाया कि कोशिकाओं के बाहर एक पतली पर्त मिलती है जिसे आजकल 'जीवद्रव्यझिल्ली' कहते हैं। इस वैज्ञानिक ने पादप ऊतकों के अध्ययन के बाद पाया कि पादप कोशिकाओं में कोशिका भित्ति मिलती है जो इसकी विशेषता है। उपरोक्त आधार पर श्वान ने अपनी परिकल्पना रखते हुए बताया कि प्राणियों और वनस्पतियों का शरीर कोशिकाओं और उनके उत्पाद से मिलकर बना है।

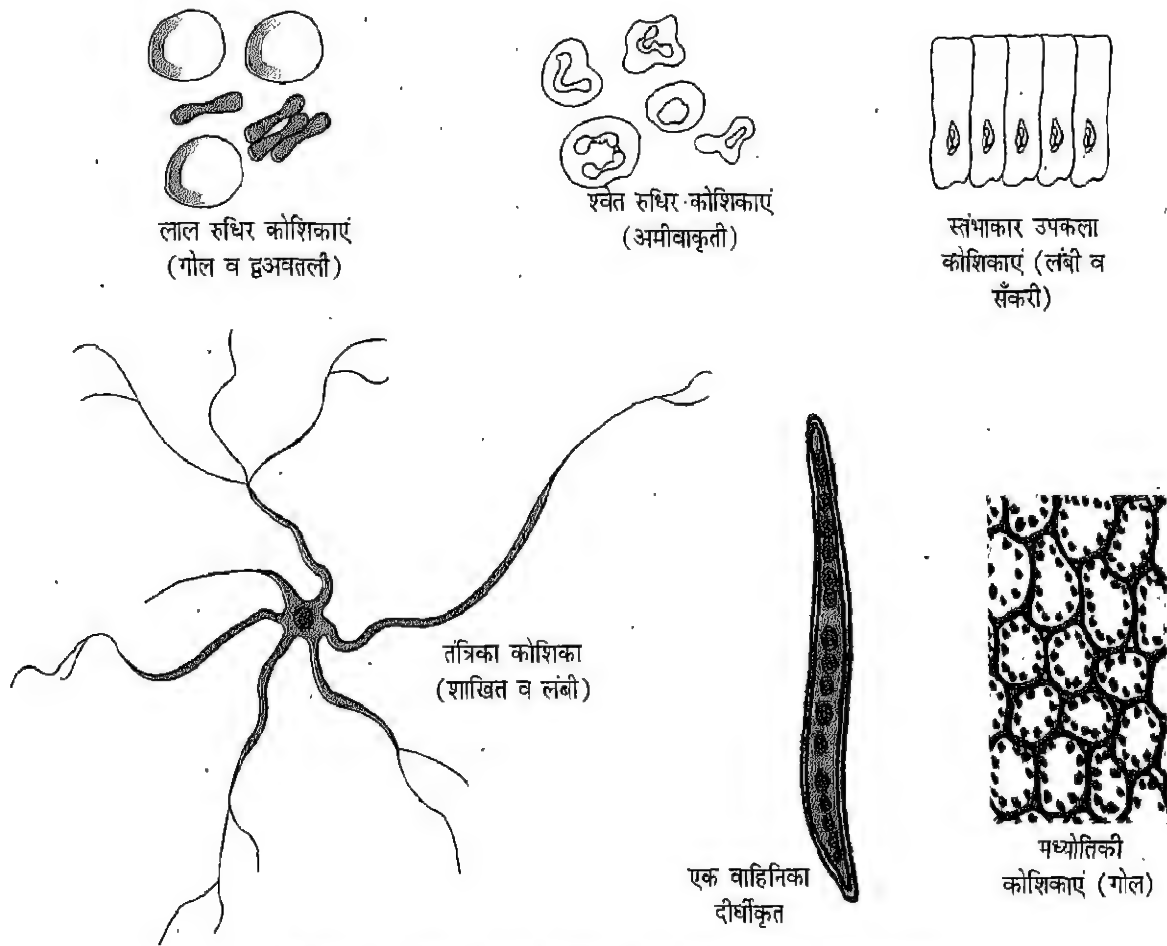
स्लाइडेन व श्वान ने संयुक्त रूप से कोशिका सिद्धांत को प्रतिपादित किया। यद्यपि इनका सिद्धांत यह बताने में असफल रहा कि नई कोशिकाओं का निर्माण कैसे होता है। पहली बार रडोल्फ विर्चो (1855) ने स्पष्ट किया कि कोशिका विभाजित होती है और नई कोशिकाओं का निर्माण पूर्व स्थित कोशिकाओं के विभाजन से होता है (ओमनिस सेलुल-इ सेलुला)। इन्होंने स्लाइडेन व श्वान की कल्पना को रूपांतरित कर नई कोशिका सिद्धांत को प्रतिपादित किया। वर्तमान समय के परिप्रेक्ष्य में कोशिका सिद्धांत निम्नवत है:

- सभी जीव कोशिका व कोशिका उत्पाद से बने होते हैं।
- सभी कोशिकाएं पूर्व स्थित कोशिकाओं से निर्मित होती हैं।

8.3 कोशिका का समग्र अवलोकन

आरंभ में आप प्याज के छिलके और/या मनुष्य की गाल की कोशिकाओं को सूक्ष्मदर्शी से देख चुके होंगे। उनकी संरचना का स्मरण करें। प्याज की कोशिका जो एक प्रारूपी पादप कोशिका है, जिसके बाहरी सतह पर एक स्पष्ट कोशिका भित्ति व इसके ठीक नीचे कोशिका झिल्ली होती है। मनुष्य की गाल की कोशिका के संगठन में बाहर की तरफ केवल एक झिल्ली संरचना निकलती दिखाई पड़ती है। प्रत्येक कोशिका के भीतर एक सघन झिल्लीयुक्त संरचना मिलती है, जिसे केंद्रक कहते हैं। इस केंद्रक में गुणसूत्र (क्रोमोसोम) होता है, जिसमें आनुवंशिक पदार्थ डीएनए होता है। जिस कोशिका में झिल्लीयुक्त केंद्रक होता है, उसे यूकैरियोट व जिसमें झिल्लीयुक्त केंद्रक नहीं मिलता उसे प्रोकैरियाट कहते हैं। दोनों यूकैरियाटिक व प्रोकैरियोटिक कोशिकाओं में इसके आयतन को घेरे हुए एक अर्द्धतरल आव्यूह मिलता है जिसे कोशिकाद्रव्य कहते हैं। दोनों पादप व जंतु कोशिकाओं में कोशिकीय क्रियाओं हेतु कोशिकाद्रव्य एक प्रमुख स्थल होता है। कोशिका की 'जीव अवस्था' संबंधी विभिन्न रासायनिक अभिक्रियाएं यहीं संपन्न होती हैं।

यूकैरियोटिक कोशिका में केंद्रक के अतिरिक्त अन्य झिल्लीयुक्त विभिन्न संरचनाएं मिलती हैं, जो **कोशिकांग** कहलाती हैं जैसे- अंतप्रद्रव्यी जालिका (ऐन्डोप्लाजमिक रेटीकुलम) सूत्र कणिकाएं (माइटोकॉन्ड्रिया) सूक्ष्मकाय (माइक्रोबॉडी), गाल्जीसामिश्र, लयनकाय (लायसोसोम) व रसधानी प्रोकैरियोटिक कोशिका में झिल्लीयुक्त कोशिकाओं का अभाव होता है।



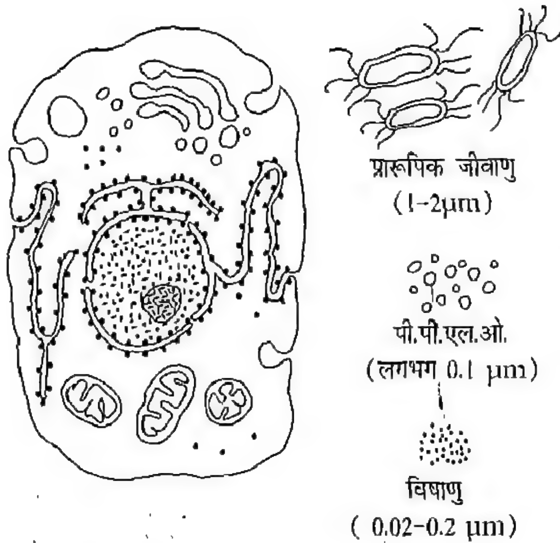
चित्र 8.1 *विभिन्न प्रकार के आकार की कोशिकाओं का चित्र द्वारा प्रदर्शन*

यूकैरियोटिक व प्रोकैरियोटिक दोनों कोशिकाओं में झिल्ली रहित अंगक राइबोसोम मिलते हैं। कोशिका के भीतर राइबोसोम केवल कोशिका द्रव्य में ही नहीं; बल्कि दो अंगकों- हरित लवक (पौधों में) व सूत्र कणिका में व खुरदरी अंतर्द्रव्यी जालिका में भी मिलते हैं।

जंतु कोशिकाओं में झिल्ली रहित तारक केंद्रक जैसे अन्य अंगक मिलते हैं, जो कोशिका विभाजन में सहायता करते हैं।

कोशिकाएं माप, आकार व कार्य की दृष्टि से काफी भिन्न होती हैं (चित्र 8.1)। उदाहरणार्थ- सबसे छोटी कोशिका माइकोप्लाज्मा 0.3 μm (माइक्रोमीटर) लंबाई की, जबकि जीवाणु (बैक्टीरिया)में 3 से 5 μm (माइक्रोमीटर) की होती हैं। पृथक की गई सबसे बड़ी कोशिका शुतरमुर्ग के अंडे के समान है। बहुकोशिकीय जीवधारियों में मनुष्य की लाल रक्त कोशिका का व्यास लगभग 7.0 μm (माइक्रोमीटर) होता है। तंत्रिका कोशिकाएं सबसे लंबी कोशिकाओं में होती हैं। ये बिंबाकार बहुभुजी, स्तंभी, घनाभ, धागे की तरह या असमाकृति प्रकार की हो सकती हैं। कोशिकाओं का रूप उनके कार्य के अनुसार भिन्न हो सकता है।

8.4 प्रोकैरियोटिक कोशिकाएं



चित्र 8.2 ससीमकेंद्री कोशिका का अन्य सजीवों के साथ तुलनात्मकता का चित्र द्वारा प्रदर्शन

प्रोकैरियोटिक कोशिकाएं, जीवाणु, नीलहरित शैवाल, माइकोप्लाज्मा और प्ल्यूरो निमोनिया सम जीव (PPLO) मिलते हैं। सामान्यतया ये यूकैरियोटिक कोशिकाओं से बहुत छोटी होती हैं और काफी तेजी से विभाजित होती हैं (चित्र 8.2)। माप का आकार काफी भिन्न होती हैं। जीवाणु के चार मूल आकार होते हैं- दंडाकार (बेसिलस), गोलाकार (कोकस), कोशाकार (विब्रो) व सर्पिल (स्पाइलर)।

प्रोकैरियोटिक कोशिका का मूलभूत संगठन आकार व कार्य में विभिन्नता के बावजूद एक सा होता है। सभी प्रोकैरियोटिक में कोशिका भित्ति होती हैं, जो कोशिका झिल्ली से घिरी रहती है। कोशिका में साइटोप्लाज्म एक तरल मैट्रिक्स के रूप में भरा रहता है। इसमें कोई स्पष्ट विभेदित केंद्रक नहीं पाया जाता है। आनुवंशिक पदार्थ मुख्य रूप से नग्न व केंद्रक झिल्ली द्वारा परिबद्ध नहीं होता है। जिनोमिक डीएनए के अतिरिक्त (एकल गुणसूत्र / गोलाकार डीएनए) जीवाणु में सूक्ष्म डीएनए वृत्त जिनोमिक डीएनए के बाहर पाए जाते हैं। इन डीएनए वृत्तों को प्लाज्मिड कहते हैं। ये प्लाज्मिड डीएनए जीवाणुओं में विशिष्ट समलक्षणों को बताते हैं। उनमें से एक प्रतिजीवी के प्रतिरोधी होते हैं।

आप उच्च कक्षाओं में पढ़ेंगे कि प्लाज्मिड डीएनए वृत्त जीवाणु का बाहरी डीएनए के साथ रूपांतरण के प्रवोधन हेतु उपयोगी है। केंद्रक झिल्ली यूकैरियोटिकों में पाई जाती है। राइबोसोम के अलावा प्रोकैरियोटिको में यूकैरियोटिकों अंगक नहीं पाए जाते हैं। प्रोकैरियोटिकों में कुछ विशेष प्रकार के अंतर्विष्ट मिलते हैं। प्रोकैरियोटिक की यह विशेषता कि उनमें कोशिका झिल्ली एक विशिष्ट विभेदित आकार में मिलती है जिसे मीसोसोम कहते हैं ये तत्व कोशिका झिल्ली अंतर्वलन होते हैं।

8.4.1 कोशिका आवरण और इसके रूपांतर

अधिकांश प्रोकैरियोटिक कोशिकाओं, विशेषकर जीवाणु कोशिकाओं में एक जटिल रासायनिक कोशिका आवरण मिलता है। इनमें कोशिका आवरण दृढ़तापूर्वक बंधकर तीन स्तरीय संरचना बनाते हैं; जैसे बाह्य परत ग्लाइकोकेलिक्स, जिसके पश्चात् क्रमशः कोशिका भित्ति एवं जीवद्रव्य झिल्ली होती है। यद्यपि आवरण के प्रत्येक परत का कार्य भिन्न है, पर यह तीनों मिलकर एक सुरक्षा इकाई बनाते हैं।

जीवाणुओं को उनकी कोशिका आवरण में विभिन्नता व ग्राम द्वारा विकसित अभिरंजनविधि के प्रति विभिन्न व्यवहार के कारण दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है, जैसे- जो ग्राम अभिरंजित होते हैं, उसे **ग्राम धनात्मक** एवं अन्य जो अभिरंजित नहीं हो पाते, उन्हें **ग्राम ऋणात्मक** कहते हैं।

ग्लाइकोकेलिक्स विभिन्न जीवाणुओं में रचना एवं मोटाई में भिन्न होती है। कुछ में यह ढीली आच्छद होती है जिसे **अवपंक पर्त** कहते हैं व दूसरों में यह मोटी व कठोर आवरण के रूप में हो सकती है जो **संपुटिका** (केपंसूल) कहलाती है। **कोशिकाभित्ति** कोशिका के आकार को निर्धारित करती है। वह सशक्त संरचनात्मक भूमिका प्रदान करती है, जो जीवाणु को फटने तथा निपातित होने से बचाती है।

जीवद्रव्यझिल्लिका प्रकृति में अर्द्धपारगम्य होती है और इसके द्वारा कोशिका बाह्य वातावरण से संपर्क बनाए रखने में सक्षम होती है। संरचना अनुसार यह झिल्ली यूकैरियोटिक झिल्ली जैसी होती है। एक विशेष झिल्लीमय संरचना, जो जीवद्रव्यझिल्ली के कोशिका में फैलाव से बनती है, को **मीसोजोम** कहते हैं। यह फैलाव **पुटिका, नलिका** एवं **पटलिका** के रूप में होता है। यह कोशिका भित्ति निर्माण, डीएनए प्रतिकृति व इसके संतति कोशिका में वितरण को सहायता देता है या श्वसन, स्रावी प्रक्रिया, जीवद्रव्यझिल्ली के पृष्ठ क्षेत्र, एंजाइम मात्रा को बढ़ाने में भी सहायता करता है। कुछ प्रोकैरियोटिक जैसे नीलहरित जीवाणु के कोशिका द्रव्य में झिल्लीमय विस्तार होता है जिसे वर्णकी लवक कहते हैं। इसमें वर्णक पाए जाते हैं।

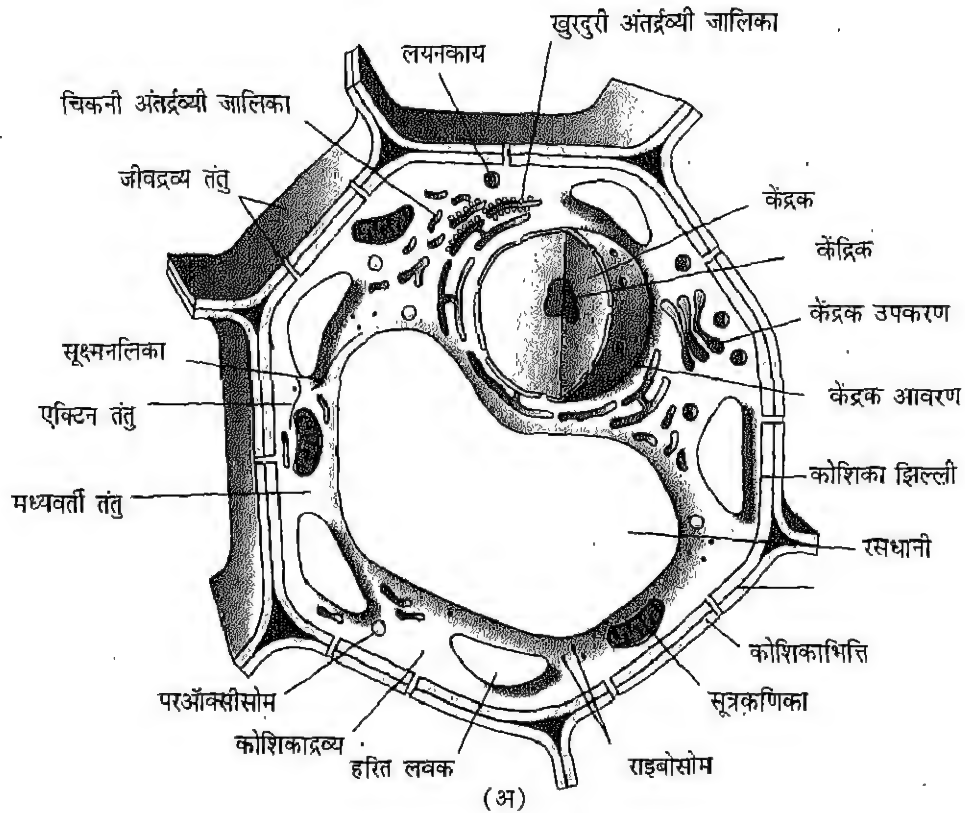
जीवाणु कोशिकाएं चलायमान अथवा अचलायमान होती हैं। यदि वह चलायमान हैं तो उनमें कोशिका भित्ति जैसी पतली संरचना मिलती हैं। जिसे कशाभिका कहते हैं जीवाणुओं में कशाभिका की संख्या व विन्यास का क्रम भिन्न होता है। जीवाणु कशाभिका (फ्लैजिलम) तीन भागों में बँटा होता है- **तंतु, अंकुश व आधारीय शरीर।** तंतु, कशाभिका का सबसे बड़ा भाग होता है और यह कोशिका सतह से बाहर की ओर फैला होता है।

जीवाणुओं के सतह पर पाई जाने वाली संरचना **रोम** व **झालर** इनकी गति में सहायक नहीं होती है। रोम लंबी नलिकाकार संरचना होती है, जो विशेष प्रोटीन की बनी होती है। झालर लघुशूक जैसे तंतु है जो कोशिका के बाहर प्रवर्धित होते हैं। कुछ जीवाणुओं में, यह उनको पानी की धारा में पाई जाने वाली चट्टानों व पोषक ऊतकों से चिपकने में सहायता प्रदान करती हैं।

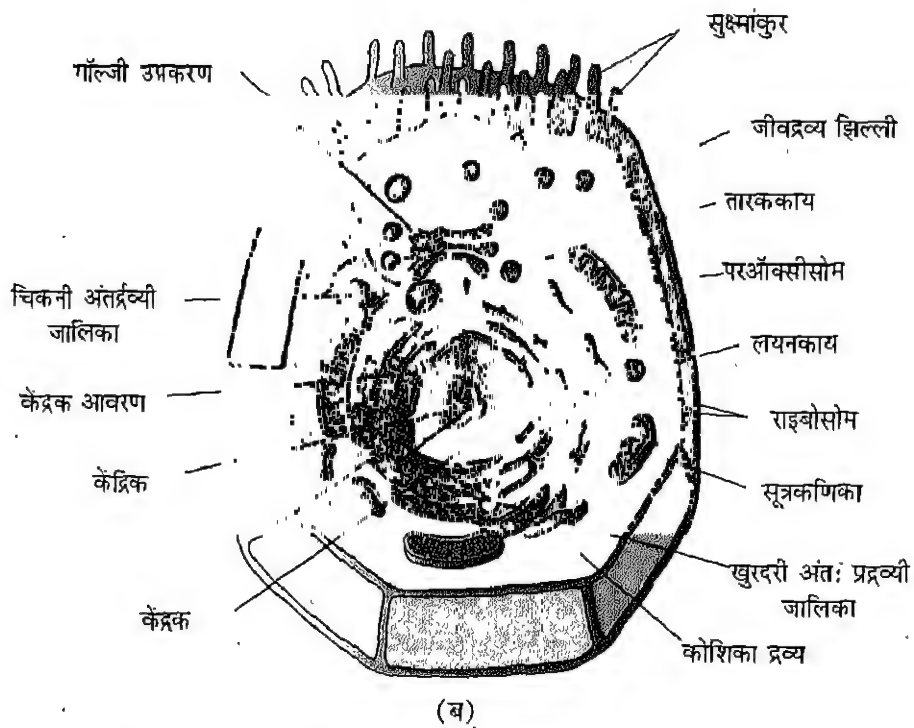
8.4.2 राइबोसोम व अंतर्विष्ट पिंड

प्रोकैरियोटिक में राइबोसोम कोशिका की जीवद्रव्यझिल्ली से जुड़े होते हैं। ये 15 से 20 नैनोमीटर आकार की होती हैं और दो उप इकाइयों में 50S व 30S की बनी होती हैं, जो आपस में मिलकर 70S प्रोकैरियोटिक राइबोसोम बनाते हैं। राइबोसोम के उपर प्रोटीन संश्लेषित होती है। बहुत से राइबोसोम एक संदेषवाहक आरएनए से संबद्ध होकर एक शृंखला बनाते हैं। जिसे **बहुराइबोसोम** अथवा **बहुसूत्र** कहते हैं। बहुसूत्र का राइबोसोम संदेशवाहक आरएनए से संबद्ध होकर प्रोटीन निर्माण में भाग लेता है।

अंतर्विष्ट पिंड : प्रोकैरियोटिक कोशिकाओं में बचे हुए पदार्थ कोशिकाद्रव्य में अंतर्विष्ट पिंड के रूप में संचित होते हैं। ये झिल्ली द्वारा घिरे नहीं होते एवं कोशिकाद्रव्य में स्वतंत्र रूप से पड़े रहते हैं, उदाहरणार्थ-फॉस्फेट कणिकाएं, साइनोफाइसिन कणिकाएं और ग्लाइकोजन कणिकाएं। गैस रसधानी नील हरित, बैंगनी और हरी प्रकाश-संश्लेषी जीवाणुओं में मिलती हैं।



(अ)



(ब)

चित्र 8.3 चित्र प्रदर्शित करता है (अ) पादप कोशिका (ब) प्राणि कोशिका

8.5 यूकैरियोटिक कोशिकाएं (ससीमकेंद्रकी कोशिकाएं)

सभी आद्यजीव, पादप, प्राणी व कवक में यूकैरियोटिक कोशिकाएं होती हैं। यूकैरियोटिक कोशिकाओं में झिल्लीदार अंगकों की उपस्थिति के कारण कोशिकाद्रव्य विस्तृत कक्षयुक्त प्रतीत होता है। यूकैरियोटिक कोशिकाओं में झिल्लीमय केंद्रक आवरण युक्त व्यवस्थित केंद्रक मिलता है। इसके अतिरिक्त यूकैरियोटिक कोशिकाओं में विभिन्न प्रकार के जटिल गतिकीय एवं कोशिकीय कंकाल जैसी संरचना मिलती है। इनमें आनुवंशिक पदार्थ गुणसूत्रों के रूप में व्यवस्थित रहते हैं।

सभी यूकैरियोटिक कोशिकाएं एक जैसी नहीं होती हैं। पादप व जंतु कोशिकाएं भिन्न होती हैं। पादप कोशिकाओं में कोशिका भित्ति, लवक एवं एक बड़ी केंद्रीय रसधानी मिलती है, जबकि प्राणी कोशिकाओं में ये अनुपस्थित होती हैं दूसरी तरफ प्राणी कोशिकाओं में तारकाय मिलता है जो लगभग सभी पादप कोशिकाओं में अनुपस्थित होता है (चित्र 8.3)। आइए! अब प्रत्येक कोशिकीय अंगक की संरचना व कार्यविधि का अध्ययन करें।

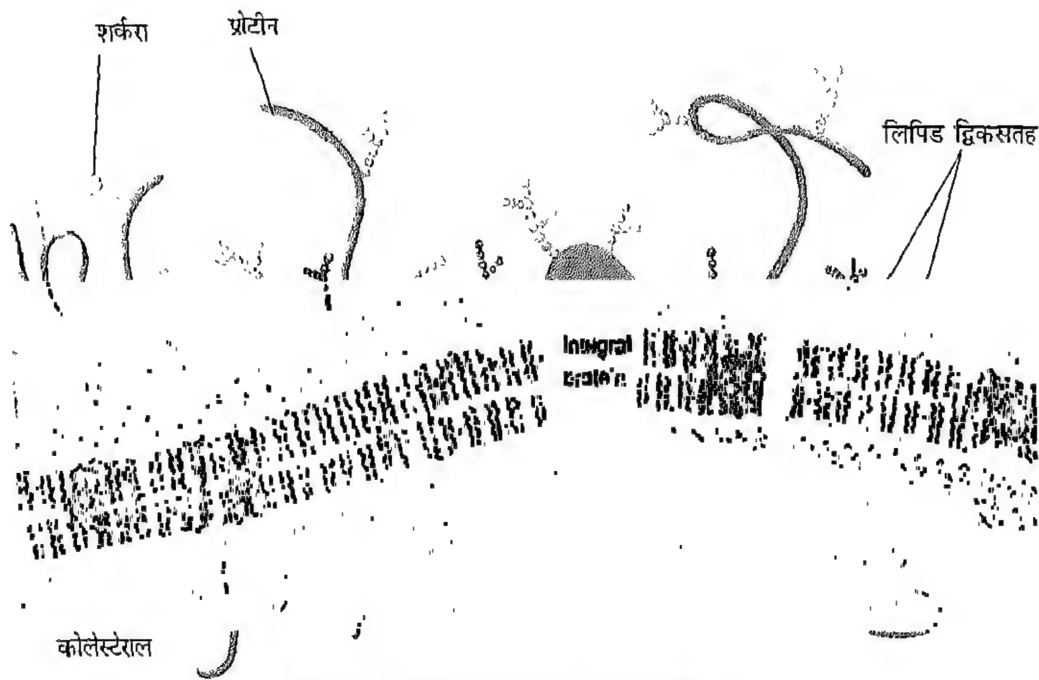
8.5.1 कोशिका झिल्ली

वर्ष 1950 के इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी की खोज के बाद कोशिका झिल्ली की विस्तृत संरचना का ज्ञान संभव हो सका है। इस बीच मनुष्य की लाल रक्तकणिकाओं की कोशिका झिल्ली के रासायनिक अध्ययन के बाद जीवद्रव्यझिल्ली की संभावित संरचना के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकी।

अध्ययनों के बाद इस बात की पुष्टि हुई की कोशिकाझिल्ली लिपिड की बनी होती है, जो दो सतहों में व्यवस्थित होती है। लिपिड झिल्ली के अंदर व्यवस्थित होते हैं, जिनका ध्रुवीय सिरा बाहर की ओर व जल भीरू पुच्छ सिरा अंदर की ओर होता है। इससे सुनिश्चित होता है कि संतृप्त हाइड्रोकार्बन की बनी हुई अध्रुवीय पुच्छ जलीय वातावरण से सुरक्षित रहती हैं (चित्र 8.4)। कोशिका झिल्ली में पाए जाने वाले लिपिड घटक-फास्फोग्लिसराइड्स के बने होते हैं।

बाद में, जैव रासायनिक अनुसंधानों से यह स्पष्ट हो गया है कि कोशिका झिल्ली में प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है। विभिन्न कोशिकाओं में प्रोटीन व लिपिड का अनुपात भिन्न-भिन्न होता है। मनुष्य की रुधिराणु (इरीथ्रोसाइट) की झिल्ली में लगभग 52 प्रतिशत प्रोटीन व 40 प्रतिशत लिपिड मिलता है। झिल्ली में पाए जाने वाले प्रोटीन को अलग करने की सुविधा के आधार पर दो अंगभूत व परिधीय प्रोटीन भागों में विभक्त कर सकते हैं। परिधीय प्रोटीन झिल्ली की सतह पर होता है, जबकि अंगभूत प्रोटीन आंशिक या पूर्णरूप से झिल्ली में धंसे होते हैं।

कोशिका झिल्ली का उन्नत नमूना 1972 में सिंगर व निकोल्सन द्वारा प्रतिपादित किया गया जिसे तरल किर्मीर नमूना के रूप में व्यापक रूप से स्वीकार कर किया गया (चित्र 8.4)। इसके अनुसार लिपिड के अर्धतरलीय प्रकृति के कारण द्विसतह के भीतर प्रोटीन पार्श्विक गति करता है। झिल्ली के भीतर गति करने की क्षमता उसकी तरलता पर निर्भर करती है।



चित्र 8.4 जीवद्रव्य झिल्ली का तरल किर्मीर नमूना

झिल्ली की तरलीय प्रकृति इसके कार्य जैसे- कोशिकावृद्धि, अंतरकोशिकीय संयोजन का निर्माण, स्रवण, अंतकोशिक, कोशिका विभाजन इत्यादि की दृष्टि में महत्वपूर्ण है।

जीवद्रव्यझिल्ली का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य यह है कि इससे अणुओं का परिवहन होता है। यह झिल्ली इसके दोनों तरफ मिलने वाले अणुओं के लिए चयनित पारगम्य है। कुछ अणु बिना ऊर्जा की आवश्यकता के इस झिल्ली से होकर आते हैं जिसे **निष्क्रिय परिवहन** कहते हैं। उदासीन विलेय सांद्रप्रवणता के अनुसार जैसे- उच्च सांद्रता से निम्न सांद्रता की ओर साधारण विसरण द्वारा इस झिल्ली से होकर जाते हैं। जल भी इस झिल्ली से उच्च सांद्रता से निम्न सांद्रता की ओर गति करता है। विसरण द्वारा जल के प्रवाह को **परासरण** कहते हैं। चूँकि ध्रुवीय अणु जो अध्रुवीय लिपिड द्विसतह से होकर नहीं जा सकते, उन्हें झिल्ली से होकर परिवहन के लिए झिल्ली की वाहक **प्रोटीन** की आवश्यकता होती है।

कुछ आयन या अणुओं का झिल्ली से होकर परिवहन उनकी सांद्रता प्रवणता के विपरीत जैसे निम्न से उच्च सांद्रता की ओर होता है। इस प्रकार के परिवहन हेतु ऊर्जा आधारित प्रक्रिया होती है, जिसमें एटीपी का उपयोग होता है जिसे **सक्रिय परिवहन** कहते हैं। यह एक पंप के रूप में कार्य करता है जैसे- सोडियम आपन/पोटैसियम आपन पंप।

8.5.2 कोशिका भित्ति

आपको याद ही होगा कि कवक व पौधों की जीवद्रव्यझिल्ली के बाहर पाए जाने वाली दृढ़ निर्जीव आवरण को कोशिका भित्ति कहते हैं। कोशिका भित्ति कोशिका को केवल

यांत्रिक हानियों और संक्रमण से ही रक्षा नहीं करता है; बल्कि यह कोशिकाओं के बीच आपसी संपर्क बनाए रखने तथा अवांछनीय वृहद अणुओं के लिए अवरोध प्रदान करता है। शैवाल की कोशिका भित्ति सेलुलोज, गैलेक्टेन्स, मैनान्स व खनिज जैसे कैल्सियम कार्बोनेट की बनी होती है, जबकि दूसरे पौधों में यह सेलुलोज, हेमीसेलुलोज, पेक्टीन व प्रोटीन की बनी होती है। नव पादप कोशिका की कोशिका भित्ति में स्थित **प्राथमिक भित्ति** में वृद्धि की क्षमता होती है, जो कोशिका की परिपक्वता के साथ घटती जाती है व इसके साथ कोशिका के भीतर की तरफ द्वितीय भित्ति का निर्माण होने लगता है।

मध्यपटलिका मुख्यतय: कैल्सियम पेक्टेट की बनी सतह होती है जो आस-पास की विभिन्न कोशिकाओं को आपस में चिपकाएं व पकड़े रहती है। कोशिका भित्ति एवं मध्य पटलिका में जीवद्रव्य तंतु (प्लाज्मोडैस्मेटा) आड़े-तिरछे रूप में स्थित रहते हैं। जो आस-पास की कोशिका द्रव्य को जोड़ते हैं।

8.5.3 अंत: झिल्लिका तंत्र

झिल्लीदार अंगक कार्य व संरचना के आधार पर एक दूसरे से काफी अलग होते हैं, इनमें बहुत से ऐसे होते हैं जिनके कार्य एक दूसरे से जुड़े रहते हैं उन्हें अंत: झिल्लिका तंत्र के अंतर्गत रखते हैं। इस तंत्र के अंतर्गत अंतर्द्रव्यी जालिका, गॉल्जीकाय, लयनकाय, व रसधानी अंग आते हैं। सूत्रकणिका (माइटोकॉन्ड्रिया), हरितलवक व परऑक्सीसोम के कार्य उपरोक्त अंगों से संबंधित नहीं होते, इसलिए इन्हें अंत: झिल्लिका तंत्र के अंतर्गत नहीं रखते हैं।

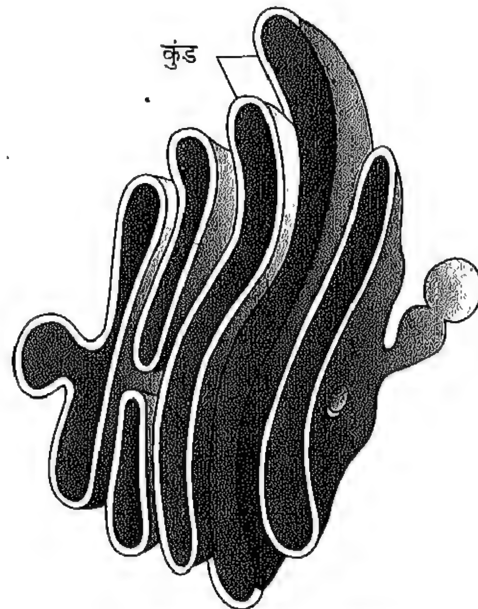
8.5.3.1 अंतर्द्रव्यी जालिका (ऐन्डोप्लाज्मिक रेटीकुलम)

इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी से अध्ययन के पश्चात् यह पता चला कि यूकैरियोटिक कोशिकाओं के कोशिकाद्रव्य में चपटे, आपस में जुड़े, थैली युक्त छोटी नलिकावत जालिका तंत्र बिखरा रहता है जिसे अंतर्द्रव्यी जालिका कहते हैं (चित्र 8.5)।

प्राय: राइबोसोम अंतर्द्रव्यी जालिका के बाहरी सतह पर चिपके रहते हैं। जिस अंतर्द्रव्यी जालिका के सतह पर यह राइबोसोम मिलते हैं, उसे खुरदरी अंतर्द्रव्यी जालिका कहते हैं। राइबोसोम की अनुपस्थिति पर अंतर्द्रव्यी जालिका



चित्र 8.5 अंतर्द्रव्यी जालिका



चित्र 8.6 गॉल्जी उपकरण

चिकनी लगती है, अतः इसे चिकनी अंतर्द्रव्यी जालिका कहते हैं। जो कोशिकाएं प्रोटीन संश्लेषण एवं स्रवण में सक्रिय भाग लेती हैं उनमें खुरदरी अंतप्रद्रव्यी जालिका बहुतायत से मिलती है। ये काफी फैली हुई तथा केंद्रक के बाह्य झिल्लिका तक फैली होती है।

चिकनी अंतर्द्रव्यी जालिका प्राणियों में लिपिड संश्लेषण के मुख्य स्थल होते हैं। लिपिड की भाँति स्टीरायडल हार्मोन चिकने अंतर्द्रव्यी जालिका में होते हैं।

8.5.3.2 गॉल्जी उपकरण

केमिलो गॉल्जी (1898) ने पहली बार केंद्रक के पास घनी रंजित जालिकावत संरचना तंत्रिका कोशिका में देखी। जिन्हें बाद में उनके नाम पर गॉल्जीकाय कहा गया (चित्र 8.6)। यह बहुत सारी चपटी डिस्क आकार की थैली या कुंड से मिलकर बनी होती है जिनका व्यास 0.5 माइक्रोमीटर से 1.0 माइक्रोमीटर होता है। ये एक दूसरे के समानांतर ढेर के रूप में मिलते हैं जिसे जालिकाय कहते हैं। गॉल्जीकाय में कुंडों की संख्या अलग-अलग होती है। गॉल्जीकुंड केंद्रक के पास सकेंद्रित व्यवस्थित होते हैं, जिनमें निर्माणकारी सतह (उन्नतोदर सिस) व परिपक्व सतह (उत्तलावतल ट्रांस) होती है। अंगक सिस व ट्रांस सतह पूर्णतया अलग होते हैं; लेकिन आपस में जुड़े रहते हैं।

गॉल्जीकाय का मुख्य कार्य द्रव्य को संवेष्टित कर अंतर-कोशिकी लक्ष्य तक पहुँचाना या कोशिका के बाहर स्रवण करना है। संवेष्टित द्रव्य अंतप्रद्रव्यी जालिका से पुटिका के रूप में गॉल्जीकाय के सिस सिरे से संगठित होकर परिपक्व सतह की ओर गति करते हैं। इससे स्पष्ट है कि गॉल्जीकाय का अंतर्द्रव्यी जालिका से निकटतम संबंध है। अंतर्द्रव्यी जालिका पर उपस्थित राइबोसोम द्वारा प्रोटीन का संश्लेषण होता है जो गॉल्जीकाय के ट्रांस सिरे से निकलने के पूर्व इसके कुंड में रूपांतरित हो जाते हैं। गॉल्जीकाय ग्लाइको प्रोटीन व ग्लाइकोलिपिड निर्माण का प्रमुख स्थल है।

8.5.3.3 लयनकाय (लाइसासोम)

यह झिल्ली पुटिका संरचना होती है जो संवेष्टन विधि द्वारा गॉल्जीकाय में बनते हैं। पृथकीकृत लयनकाय पुटिकाओं में सभी प्रकार की जल-अपघटकीय एंजाइम (जैसे-हाइड्रोलेजेज लाइपेसेज, प्रोटोएसेज व कार्बोडाइड्रेजेज) मिलतें हैं जो अम्लीय परिस्थितियों में सर्वाधिक सक्रिय होते हैं। ये एंजाइम कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, लिपिड, न्यूक्लिक अम्ल आदि के पाचन में सक्षम हैं।

8.5.3.4 रसधानी (वैक्यौल)

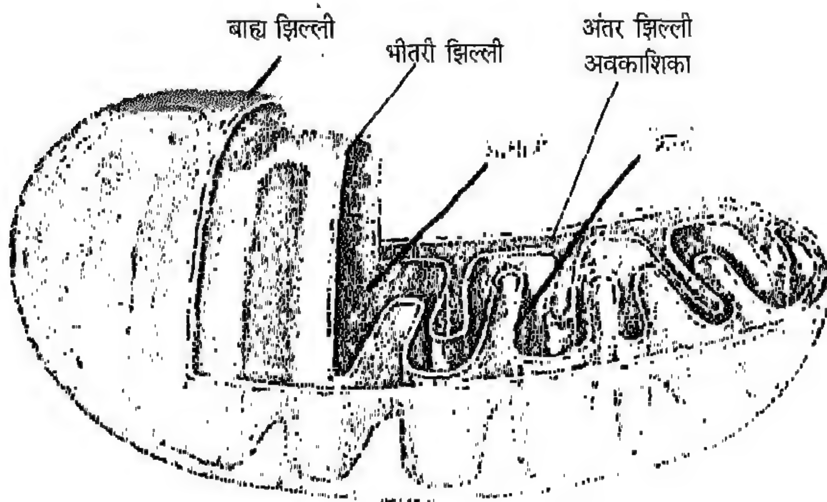
कोशिकाद्रव्य में झिल्ली द्वारा घिरी जगह को रसधानी कहते हैं। इनमें पानी, रस, उत्सर्जित पदार्थ व अन्य उत्पाद जो कोशिका के लिए उपयोगी नहीं है, भी इसमें मिलते हैं। रसधानी एकल झिल्ली से आवृत्त होती है जिसे टोनोप्लास्ट कहते हैं। पादप कोशिकाओं में यह कोशिका का 90 प्रतिशत स्थान घेरता है।

पौधों में बहुत से आयन व दूसरे पदार्थ सांद्रता प्रवणता के विपरीत टफेनोप्लास्ट से होकर रसधानी में अभिगमित होते हैं, इस कारण से इनकी सांद्रता रसधानी में कोशिकाद्रव्य की अपेक्षा काफी अधिक होती है।

अमीबा में **संकुचनशील रसधानी** उत्सर्जन के लिए महत्वपूर्ण है। बहुत सारी कोशिकाओं जैसे आद्यजीव में **खाद्य रसधानी** का निर्माण खाद्य पदार्थों को निगलने के लिए होता है।

8.5.4 सूत्रकणिका (माइटोकोंड्रिया)

सूत्रकणिका को जब तक विशेष रूप से अभिरंजित नहीं किया जाता तब तक सूक्ष्मदर्शी द्वारा इसे आसानी से नहीं देखा जा सकता है। प्रत्येक कोशिका में सूत्रकणिका की संख्या भिन्न होती है। यह उसकी कार्यिकी सक्रियता पर निर्भर करती है। ये आकृति व आकार में भिन्न होती है। यह तश्तरीनुमा बेलनाकार आकृति की होती है जो 1.0-4.1 माइक्रोमीटर लंबी व 0.2-1 माइक्रोमीटर (औसत 0.5 माइक्रोमीटर) व्यास की होती है। सूत्रकणिका एक दोहरी झिल्ली युक्त संरचना होती है, जिसकी बाहरी झिल्ली व भीतरी झिल्ली इसकी अवकाशिका को दो स्पष्ट जलीय कक्षों - बाह्य कक्ष व भीतरी कक्ष में विभाजित करती है। भीतरी कक्ष को **आधात्री** (मैट्रिक्स) कहते हैं। बाह्यकला सूत्रकणिका की बाह्य संतत सीमा बनाती है। इसकी अंतझिल्ली कई आधात्री की तरफ अंतरवलन बनाती है जिसे क्रिस्टी (एक वचन-क्रिस्टो) कहते हैं (चित्र 8.7)। क्रिस्टी इसके क्षेत्रफल को बढ़ाते हैं। इसकी दोनों झिल्लयों में इनसे संबंधित विशेष एंजाइम मिलते हैं, जो सूत्रकणिका के कार्य से संबंधित हैं। सूत्रकणिका का वायवीय श्वसन से संबंध होता है। इनमें कोशिकीय ऊर्जा एटीपी के रूप में उत्पादित होती हैं। इस कारण से सूत्रकणिका को कोशिका का शक्ति गृह कहते हैं। सूत्रकणिका के आधात्री में एकल वृत्ताकार डीएनए अणु व कुछ आरएनए राइबोसोम्स (70s) तथा प्रोटीन संश्लेषण के लिए आवश्यक घटक मिलते हैं। सूत्रकणिका विखंडन द्वारा विभाजित होती है।



चित्र 8.7 सूत्रकणिका की संरचना (अनुदैर्घ्य काट)

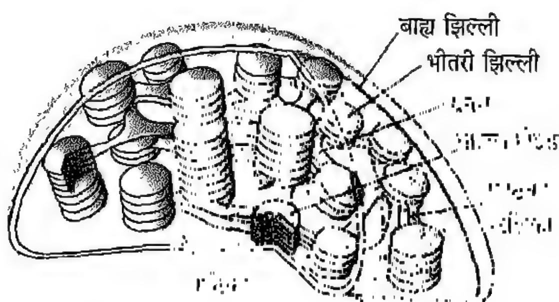
8.5.5 लवक (प्लास्टिड)

लवक सभी पादप कोशिकाओं एवं कुछ प्रोटोजोआ जैसे यूग्लिना में मिलते हैं। ये आकार में बड़े होने के कारण सूक्ष्मदर्शी से आसानी से दिखाई पड़ते हैं। इसमें विशिष्ट प्रकार के वर्णक मिलने के कारण पौधे भिन्न-भिन्न रंग के दिखाई पड़ते हैं। विभिन्न प्रकार के वर्णकों के आधार पर लवक कई तरह के होते हैं जैसे-**हरित लवक, वर्णीलवक** व **अवर्णीलवक**।

हरित लवकों में **पर्णहरित** वर्णक व केरोटिनॉइड वर्णक मिलते हैं जो प्रकाश-संश्लेषण के लिए आवश्यक प्रकाशीय ऊर्जा को संचित रखने का कार्य करते हैं। वर्णीलवकों में वसा विलेय **केरोटिनॉइड** वर्णक जैसे- केरोटीन, जैंथोफिल व अन्य दूसरे मिलते हैं। इनके कारण पादपों में पीले, नारंगी व लाल रंग दिखाई पड़ते हैं। अवर्णी लवक विभिन्न आकृति एवं आकार के रंगहीन लवक होते हैं जिनमें खाद्य पदार्थ संचित रहते हैं: **मंडलवक** में मंड के रूप में कार्बोहाइड्रेट संचित होता है; जैसे- आलू; **तेल लवक** में तेल व वसा तथा **प्रोटीन लवक** में प्रोटीन का भंडारण होता है।

हरे पौधों के अधिकतर हरितलवक पत्ती की पर्णमध्योतक कोशिकाओं में पाए जाते हैं। हरित लवक लेंस के आकार के अंडाकार, गोलाकार, चक्रिक व फीते के आकार के अंगक होते हैं जो विभिन्न लंबाई (5-10 मिमी.) व चौड़ाई (2-4 मिमी.) के होते हैं। इनकी संख्या भिन्न हो सकती है जैसे प्रत्येक कोशिका में एक *(क्लेमाइडोमोनास-हरितशैवाल)* से 20 से 40 प्रति कोशिका पर्णमध्योतक कोशिका हो सकती है।

सूत्रकणिका की तरह हरित लवक द्विझिल्लिकायुक्त होते हैं। उपरोक्त दो में से इसकी भीतरी लवक झिल्ली अपेक्षाकृत कम पारगम्य होती है। हरितलवक के अंत:झिल्ली से घिरे हुए भीतर के स्थान को पीठिका (स्ट्रोमा) कहते हैं। पीठिका में चपटे, झिल्लीयुक्त थैली जैसी संरचना संगठित होती है जिसे **थाइलेकोइड** कहते हैं (चित्र 8.8)। थाइलेकोइड सिक्कों के चट्टों की भाँति ढेर के रूप में मिलते हैं जिसे ग्रेना (एकवचन-ग्रेनम) या अंतरग्रेना थाइलेकोइड कहते हैं। इसके अलावा कई चपटी झिल्लीनुमा नलिकाएं जो ग्रेना के विभिन्न थाइलेकोइड को जोड़ती है उसे पीठिका पट्टलिकाएं कहते हैं। थाइलेकोइड की झिल्ली एक रिक्त स्थान को घेरे होती है। इसे अवकाशिका कहते हैं। हरितलवक की पीठिका में बहुत एंजाइम मिलते हैं जो कार्बोहाइड्रेट व प्रोटीन संश्लेषण के लिए आवश्यक है। इनमें छोटा, द्विलड़ी, वृत्ताकार डीएनए अणु व राइबोसोम मिलते हैं। हरित लवक थाइलेकोइड में उपस्थित होते हैं। हरित लवक में पाए जाने वाला राइबोसोम (70s) कोशिकाद्रव्यी राइबोसोम (80s) से छोटा होता है।



चित्र 8.8: हरित लवक का अनुभागीय दृश्य

8.5.6 राइबोसोम

जार्ज पैलेड (1953) ने इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा सघन कणिकामय संरचना राइबोसोम को सर्वप्रथम देखा था। ये राइबोन्यूक्लिक अम्ल व प्रोटीन के बने और किसी भी झिल्ली से घिरे नहीं रहते।

यूकैरियोटिक बोसोम 80S व प्रोकैरियोटिक राइबोसोम 70S प्रकार के होते हैं। यहाँ पर 'S' अवसादन गुणांक को प्रदर्शित करता है। यह अपरोक्ष रूप में आकार व घनत्व को व्यक्त करता है। दोनों 70S व 80S राइबोसोम दो उपइकाइयों से बना होता है।

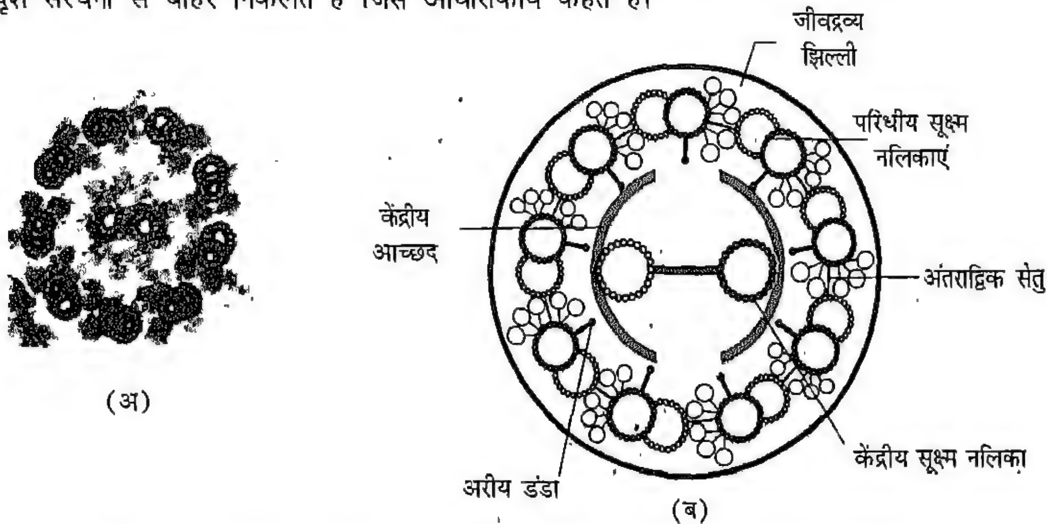
8.5.7 साइटोपंजर (साइटोस्केलेटन)

प्रोटीनयुक्त विस्तृत जालिकावत तंतु जो कोशिकाद्रव्य में मिलता है उसे **साइटोपंजर** कहते हैं। कोशिका में मिलने वाला साइटोपंजर के विभिन्न कार्य जैसे- यांत्रिक सहायता, गति व कोशिका के आकार को बनाए रखने में उपयोगी है।

8.5.8 पक्ष्माभ व कशाभिका (सीलिया तथा फ्लैजिला)

पक्ष्माभिकाएं (एकवचन-पक्ष्माभ) व कशाभिकाएं (एक वचन-कशाभिका) रोम सदृश कोशिका झिल्ली पर मिलने वाली अपवृद्धि है। पक्ष्माभ एक छोटी संरचना चप्पू की तरह कार्य करती है, जो कोशिका को या उसके चारों तरफ मिलने वाले द्रव्य की गति में सहायक है। कशाभिका अपेक्षाकृत लंबे व कोशिका के गति में सहायक है। प्रोकैरियोटिक जीवाणु में पाई जाने वाली कशाभिका संरचनात्मक रूप में यूकैरियोटिक कशाभिका से भिन्न होती है।

इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी अध्ययन से पता चलता है कि पक्ष्माभ व कशाभिका जीवद्रव्यझिल्ली से ढके होते हैं। इनके कोर को **अक्षसूत्र** कहते हैं, जो कई सूक्ष्म नलिकाओं का बना होता है जो लंबे अक्ष के समानांतर स्थित होते हैं। अक्षसूत्र के केंद्र में एक जोड़ा सूक्ष्म नलिका मिलती है और नौ द्विक अरीय परिधि की ओर व्यवस्थित सूक्ष्मनलिकाएं होती हैं। अक्षसूत्र की सूक्ष्मनलिकाओं की इस व्यवस्था को 9+2 प्रणाली कहते हैं (चित्र 8.9)। केंद्रीय नलिका सेतु द्वारा जुड़े हुए एवं केंद्रीय आवरण द्वारा ढके होते हैं, जो परिधीय द्विक के प्रत्येक नलिका को अरीय दंड द्वारा जोड़ते हैं। इस प्रकार नौ अरीय तान (छड़) बनती हैं। परिधीय द्विक सेतु द्वारा आपस में जुड़े होते हैं। दोनों पक्ष्माभ व कशाभिका तारक केंद्र सदृश संरचना से बाहर निकलते हैं जिसे आधारीकाय कहते हैं।



चित्र 8.9 पक्ष्माभ/कशाभिका का अनुभाग जो विभिन्न भागों (अ) इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मलेखी (ब) आंतरिक संरचना का चित्रात्मक प्रदर्शन करता है

8.5.9 तारककाय व तारककेंद्र (सन्ट्रोसोम तथा सैन्ट्रीऔल)

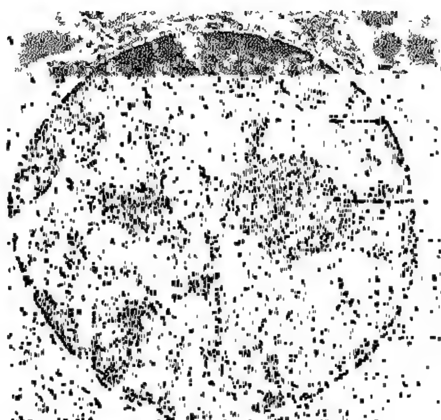
तारककाय वह अंगक है जो दो बेलनाकार संरचना से मिलकर बना होता है, जिसे तारककेंद्र कहते हैं। यह अक्रिस्टलीय परिकेंद्रीय द्रव्य से घिरा होता है। दोनों तारककेंद्र तारककाय में एक दूसरे के लंबवत् स्थित होते हैं, जिसमें प्रत्येक की संरचना बैलगाड़ी के पहिए जैसी होती है। तारककेंद्र सख्या में नौ समान दूरी पर स्थित परिधीय ट्यूब्यूलिन सूत्रों से बने होते हैं। प्रत्येक परिधीय सूत्रक एक त्रिक होते हैं। पास के त्रिक आपस में जुड़े होते हैं। तारककेंद्र का भीतरी भाग प्रोटीन का बना होता है जिसे **धुरी** कहते हैं, यह परिधीय त्रिक के नलिका से प्रोटीन से बने अरीय दंड से जुड़े होते हैं। तारककेंद्र पक्ष्माभ व कशाभिका का आधारीकाय बनाता है और तर्कुतंतु जंतु कोशिका विभाजन के उपरांत तर्कु उपकरण बनाता है।

8.5.10 केंद्रक (न्यूक्लिअस)

कोशिकीय अंगक केंद्रक की खोज सर्वप्रथम रार्बट ब्राउन ने 1831 से पूर्व की थी। बाद में फ्लेमिंग ने केंद्रक में मिलने वाले पदार्थ जो क्षारीय रंग से रंजित हो जाता है उसे **क्रोमोटीन** का नाम दिया।

अंतरकाल अवस्था केंद्रक (कोशिका केंद्रक जिसका विभाजन नहीं हो रहा हो) अत्याधिक फैली हुई व विस्तृत केंद्रकीय प्रोटीन तंतु की बनी होती है जिसे क्रोमोटीन कहते हैं, केंद्रकीय आधात्री में एक या अधिक गोलाकार संरचनाएं मिलती है जिसे **केंद्रिक** कहते हैं (चित्र 8.10)। इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि केंद्रक आवरण दो समानांतर झिल्लियों से बना होता है, जिनके बीच 10 से 50 नैनोमीटर का रिक्त स्थान पाया जाता है **जिसे परिकेंद्रकी** अवकाश कहते हैं। यह आवरण केंद्रक में मिलने वाले द्रव्य व कोशिकाद्रव्य के बीच अवरोध का काम करता है। बाह्य झिल्ली सामान्यतया अंतर्द्रव्यी जलिका से सतत रूप से जुड़ी रहती है व इस पर राइबोसोम भी जुड़े रहते हैं। निश्चित स्थानों पर केंद्रक आवरण छिद्र बनने के कारण विच्छिन्न हो जाता है। यह छिद्र केंद्रक आवरण की दोनों झिल्लियों के संगलन से बनता है। इन छिद्रों से होकर आरएनए व प्रोटीन अणु केंद्रक में कोशिकाद्रव्य व कोशिकाद्रव्य से केंद्रक की ओर आते-जाते रहते हैं। साधारणतया एक कोशिका में एक ही केंद्रक मिलता है; लेकिन ऐसा देखा गया है कि इनकी संख्या कभी-कभी परिवर्तित होती रहती है। क्या आप कुछ जीवों का नाम बता सकते हैं *जिनकी कोशिका में एक से अधिक केंद्रक मिलते हों?* कुछ परिपक्व कोशिकाएं केंद्रक रहित होती हैं जैसे-स्तनधारी जीवों की रक्ताणु व संवहनी पौधों में चालनी नलिका कोशिका। *क्या तुम मानते हो कि ये कोशिकाएं जीवित हैं?*

केंद्रकीय आधात्री या **केंद्रकद्रव्य** में केंद्रिक व क्रोम्रेटिन मिलता है। गोलाकार केंद्रिक केंद्रकद्रव्य में पाया जाता है। केंद्रिका झिल्ली रहित वह संरचना है जिसका द्रव्य केंद्रक से सतत संपर्क में रहता है। यह सक्रिय राइबोसोमस आरएनए संश्लेषण हेतु स्थल होते हैं। जो कोशिकाएं अधिक सक्रिय रूप से प्रोटीन संश्लेषण



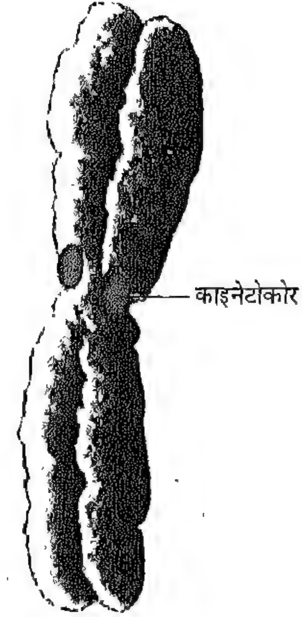
चित्र 8.10 केंद्रक की संरचना

करती है, उनमें बड़े व अनेक केंद्रिक मिलते हैं।

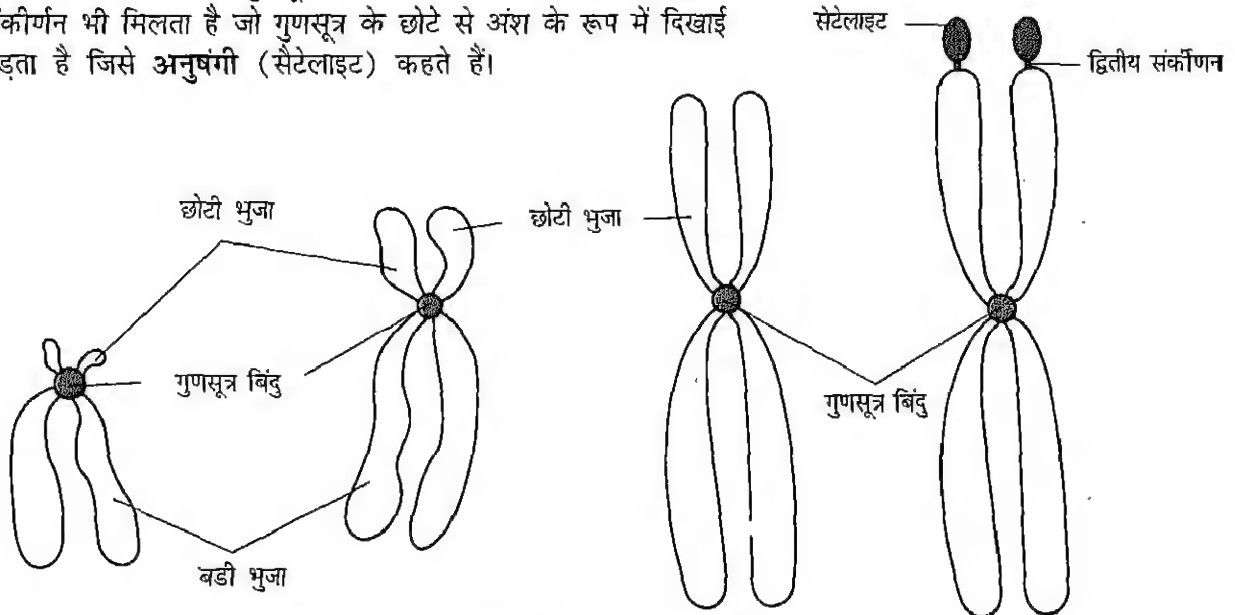
आप याद करें कि अंतरावस्था केंद्रक में ढीली-ढाली अस्पष्ट न्यूक्लियो प्रोटीन तंतुओं की जालिका मिलती है जिसे क्रोमोटीन कहते हैं। अवस्थाओं व विभाजन के समय केंद्रक के स्थान पर **गुणसूत्र** संरचना दिखाई पड़ती है। क्रोमोटीन में डीएनए तथा कुछ क्षारीय प्रोटीन मिलता है जिसे **हिस्टोन** कहते हैं, इसके अतिरिक्त उनमें इतर हिस्टोन व आरएनए भी मिलता है। मनुष्य की एक कोशिका में लगभग दो मीटर लंबा डीएनए सूत्र 46 गुणसूत्रों (23 जोड़ों) में बिखरा होता है। आप गुणसूत्र में डीएनए का संवेष्टन (पेकेजिंग) कक्षा 12 वीं में विस्तृत रूप में अध्ययन करेंगे।

प्रत्येक गुणसूत्र में एक प्राथमिक संकीर्णन मिलता है जिसे **गुणसूत्रबिंदु** (सेन्ट्रोमियर) भी कहते हैं। इस पर बिंब आकार की संरचना मिलती है जिसे **काइनेटोकोर** कहते हैं (चित्र 8.11)। गुणसूत्रबिंदु की स्थिति के आधार पर गुणसूत्रों को चार प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है (चित्र 8.12)। **मध्यकेंद्री** (मेट्रासैन्ट्रिक) गुणसूत्र में गुणसूत्रबिंदु गुणसूत्रों के बीचों-बीच स्थित होता है, जिससे गुणसूत्र की दोनों भुजाएं बराबर लंबाई की होती है। **उपमध्यकेंद्री** (सब -मेटासैन्ट्रिक) गुणसूत्र में गुणसूत्रबिंदु गुणसूत्र के एक किनारे के पास होता है जिसके परिणामस्वरूप एक भुजा छोटी व एक भुजा बड़ी होती है। **अग्रबिंदु** (ऐक्रो-सैन्ट्रिक) गुणसूत्र में गुणसूत्रबिंदु इसके बिल्कुल किनारे पर मिलता है। जिससे एक भुजा अत्यंत छोटी व एक भुजा बहुत बड़ी होती है, जबकि **अंतकेंद्री** (फीबोसैन्ट्रिक) गुणसूत्र में गुणसूत्रबिंदु गुणसूत्र के शीर्ष पर स्थित होता है।

कभी-कभी एकाध गुणसूत्र में निश्चित स्थानों पर अरंजित द्वितीय संकीर्णन भी मिलता है जो गुणसूत्र के छोटे से अंश के रूप में दिखाई पड़ता है जिसे **अनुषंगी** (सैटेलाइट) कहते हैं।



चित्र 8.11 काइनेटोकोर सहित गुणसूत्र



चित्र 8.12 गुणसूत्र बिंदु की स्थिति के आधार पर गुणसूत्रों के प्रकार

8.5.11 सूक्ष्मकाय (माइक्रोबॉडी)

बहुत सारी झिल्ली आवरित सूक्ष्म थैलियाँ जिसमें विभिन्न प्रकार के एंजाइम मिलते हैं, ये पौधों व जंतु कोशिकाओं में पाई जाती हैं।

सारांश

सभी जीव, कोशिका या कोशिका समूह से बने होते हैं। कोशिकाएं आकार व आकृति तथा क्रियाएं/कार्य की दृष्टि से भिन्न होती हैं। झिल्लीयुक्त केंद्रक व अन्य अंगकों की उपस्थिति या अनुपस्थिति के आधार पर कोशिका या जीव को प्रोकैरियोटिक या यूकैरियोटिक नाम से जानते हैं।

एक प्रारूपी यूकैरियोटिक कोशिका, केंद्रक व कोशिकाद्रव्य से बना होता है। पादप कोशिकाओं में कोशिका झिल्ली के बाहर कोशिका भित्ति पाई जाती है। जीवद्रव्यकला चयनित पारगम्य होती है और बहुत सारे अणुओं के परिवहन में भाग लेती है। अंत:झिल्लिकातंत्र के अंतर्गत अंतर्द्रव्यी जालिका, गॉल्जीकाय, लयनकाय व रसधानी होती है। सभी कोशिकीय अंगक विभिन्न एवं विशिष्ट प्रकार के कार्य करते हैं। पादप कोशिका में हरितलवक प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक प्रकाशीय उर्जा को संचित रखने का कार्य करते हैं। तारककाय व तारककेंद्र पक्ष्माभ व कशाभिका का आधारीयकाय बनाता है जो गति में सहायक है। जंतु कोशिकाओं में तारककेंद्र कोशिका विभाजन के दौरान तर्कु उपकरण बनाते हैं। केंद्रक में केंद्रिक व क्रोमोटीन का तंत्र मिलता है। यह अंगकों के कार्य को ही नियंत्रित नहीं करता, बल्कि आनुवंशिकी में प्रमुख भूमिका अदा करता है। अत: कोशिका जीवन की संरचनात्मक व क्रियात्मक इकाई होती है।

अंतर्द्रव्यी जालिका नलिकाओं व कुंडों से बनी होती है। ये दो प्रकार की होती हैं, खुरदरी व चिकनी। अंतर्द्रव्यी जालिका पदार्थों के अभिगमन, प्रोटीन-संश्लेषण, लाइपोप्रोटीन संश्लेषण तथा ग्लाइकोजन के संश्लेषण में सहायक होते हैं। गॉल्जीकाय झिल्लियुक्त अंगक है जो चपटे थैलीनुमा संरचना से बने होते हैं। इनमें कोशिकाओं का स्रवण संविष्ट होता है जिनमें सभी प्रकार के वृहद अणुओं के पाचन हेतु एंजाइम मिलते हैं। राइबोसोम प्रोटीन-संश्लेषण में भाग लेते हैं। ये कोशिकाद्रव्य में स्वतंत्र रूप में या अंतर्द्रव्यी जालिका से संबद्ध होते हैं। सूत्रकणिका ऑक्सीकारी फॉस्फोरिलीकरण तथा एडिनोसीनट्राईफास्फेट के निर्माण में सहायक होता है। ये द्विक झिल्ली क्रिस्टी में अंतरवलित होती है। लवक वर्णकयुक्त अंगक हैं जो केवल पादप कोशिकाओं में मिलते हैं। ये द्विक झिल्लीयुक्त रचनाएं हैं। लवक के ग्रेना में प्रकाशीय अभिक्रिया तथा पीठिका में अप्रकाशीय अभिक्रिया संपन्न होती है। हरे रंगीन लवक वर्णकी वर्णक होते हैं जिनमें केरोटीन तथा जैंथोफिल जैसे वर्णक मिलते हैं। पक्ष्माभ तथा कशाभिका कोशिका के गति में सहायक हैं। कशाभिका पक्ष्माभ से लंबे होते हैं। कशाभिका तरंगी गति से चलती है, जबकि पक्ष्माभ डोलनोदन द्वारा गति करता है। केंद्रक द्विक झिल्ली युक्त केंद्रक झिल्ली से घिरा होता है जिसमें केंद्रक छिद्र पाए जाते हैं। भीतरी झिल्ली केंद्रक द्रव्य व क्रोमोटीन पदार्थ को घेरे रहता है। प्राणी कोशिका में तारककेंद्र युग्मित होता है जो एक दूसरे के लंबवत स्थित होते हैं।

अभ्यास

1. इनमें कौन सा सही नहीं है?
   (अ) कोशिका की खोज रार्बट ब्राउन ने की थी।
   (ब) श्लाइडेन व श्वान ने कोशिका सिद्धांत प्रतिपादित किया था।
   (स) वर्चोव के अनुसार कोशिका पूर्वस्थित कोशिका से बनती है।
   (द) एक कोशिकीय जीव अपने जीवन के कार्य एक कोशिका के भीतर करते हैं।
2. नई कोशिका का निर्माण होता है।
   (अ) जीवाणु किण्वन से।
   (ब) पुरानी कोशिकाओं के पुनरुत्पादन से।
   (स) पूर्व स्थित कोशिकाओं से।
   (द) अजैविक पदार्थों से।
3. निम्न के जोड़ा बनाइए :

(अ) क्रिस्टी	(i) पीठिका में चपटे कलामय थैली
(ब) कुंडिका	(ii) सूत्रकणिका में अंतर्वलन
(स) थाइलेकोइड	(iii) गॉल्जी उपकरण में बिंब आकार की थैली

4. इनमें से कौन सा सही है :
   (अ) सभी जीव कोशिकाओं में केंद्रक मिलता है।
   (ब) दोनों जंतु व पादप कोशिकाओं में स्पष्ट कोशिका भित्ति होती है।
   (स) प्रोकैरियोटिक की झिल्ली में आवरित अंगक नहीं मिलते हैं।
   (द) कोशिका का निर्माण अजैविक पदार्थों से नए सिरे से होता है।
5. प्रोकैरियोटिक कोशिका में क्या मीसोसोम होता है? इसके कार्य का वर्णन करें।
6. कैसे उदासीन विलेय जीवद्रव्यझिल्ली से होकर गति करते हैं? क्या ध्रुवीय अणु उसी प्रकार से इससे होकर गति करते हैं? यदि नहीं तो इनका जीवद्रव्यझिल्ली से होकर परिवहन कैसे होता है?
7. दो कोशिकीय अंगकों का नाम बताइए जो द्विकला से घिरे होते हैं। इन दो अंगकों की क्या विशेषताएं है? इनका कार्य व रेखांकित चित्र बनाइए?
8. प्रोकैरियोटिक कोशिका की क्या विशेषताएं हैं?
9. बहुकोशिकीय जीवों में श्रम विभाजन की व्याख्या कीजिए।
10. कोशिका जीवन की मूल इकाई है, इसे संक्षिप्त में वर्णन करें।
11. केंद्रक छिद्र क्या है? इनके कार्य को बताइए।
12. लयनकाय व रसधानी दोनों अंत:झिल्लीमय संरचना है फिर भी कार्य की दृष्टि से ये अलग होते हैं। इस पर टिप्पणी लिखें?
13. रेखांकित चित्र की सहायता से निम्न की संरचना का वर्णन करें– (i) केंद्रक (ii) तारककाय ।
14. गुणसूत्रबिंदु क्या है? कैसे गुणसूत्रबिंदु की स्थिति के आधार पर गुणसूत्र का वर्गीकरण किस रूप में होता है। अपने उत्तर को देने हेतु विभिन्न प्रकार के गुणसूत्रों पर गुणसूत्रबिंदु की स्थिति को दर्शाने हेतु चित्र बनाइए।

अध्याय 9

जैव अणु

इस जीवमंडल में विविध प्रकार के जीव मिलते हैं। मस्तिष्क में यह प्रश्न उठता है कि क्या सभी जीव रासायनिक संघटन की दृष्टि से एक ही प्रकार के तत्वों एवं यौगिकों से मिलकर बने होते हैं? आप रसायन विज्ञान में सीख चुके होगें कि तत्वों का विश्लेषण कैसे करते हैं। यदि पादप व प्राणी ऊतकों एवं सूक्ष्मजीवी लेई में तत्वों का परीक्षण करें तो हमें कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन व अन्य तत्वों की एक सूची प्राप्त होती है। जिनकी मात्रा जीव ऊतकों की प्रति इकाई मात्रा में भिन्न-भिन्न होती है। यदि उपरोक्त परीक्षण निर्जीव पदार्थ जैसे भू-पर्पटी के एक टुकड़े का करें, तब भी हमें तत्वों की उपरोक्त सूची प्राप्त होती है। लेकिन उपरोक्त दोनों सूचियों में क्या अंतर है? सुनिश्चित तौर पर उनमें कोई अंतर नहीं मिलता है। सभी तत्व जो भू-पर्पटी के नमूने में मिलते हैं, वे सभी जीव ऊतकों के नमूने में भी मिलते हैं। फिर भी सूक्ष्म परीक्षण से पता चलता है कि कार्बन व हाइड्रोजन की मात्रा अन्य तत्वों की अपेक्षा किसी भी जीव में भू-पर्पटी से सामान्यतया ज्यादा होती है। (तालिका 9.1)

9.1 रासायनिक संघटन का विश्लेषण कैसे करें ?

इसी तरह से हम पूछ सकते हैं कि जीवों में कार्बनिक यौगिक किस रूप में मिलते हैं? उपरोक्त उत्तर पाने के लिए कोई व्यक्ति क्या करेगा? इसका उत्तर पाने के लिए हमें रासायनिक विश्लेषण करना होगा। हम किसी भी जीव ऊतक (जैसे-सब्जी या यकृत का टुकड़ा आदि) को लेकर खरल व मूसल की सहायता से ट्राइक्लोरोएसिटिक अम्ल के साथ पीसते हैं, जिसके बाद एक गाढ़ा कर्दम (slurry) प्राप्त होता है, पुन: इसे महीन कपड़े में रखकर कसकर निचोड़ने (छानने) के बाद हमें दो अंश प्राप्त होते हैं। एक अंश जो अम्ल में घुला होता है उसे निस्यंद कहते हैं व दूसरा अंश अम्ल में अविलेय है जिसे

धारित कहते हैं। वैज्ञानिकों ने अम्ल घुलनशील भाग में हजारों कार्बनिक यौगिकों को प्राप्त किया। तुम्हें उच्च कक्षाओं में बताया जाएगा कि जीव ऊतकों के नमूनों का विश्लेषण व इनमें मिलने वाले, विशेषकर कार्बनिक यौगिकों की पहचान केसे की जाती है? किसी निचोड़ में मिलने वाले विशेष यौगिक को उसमें मिलने वाले अन्य यौगिकों से अलग करने के लिए विभिन्न पृथक्करण विधि अपनाते हैं, जब तक कि वह अलग नहीं हो जाता। दूसरे शब्दों में एक वियुक्त एक शुद्ध यौगिक होता है। विश्लेषणात्मक तकनीक का प्रयोग कर किसी भी यौगिक के आण्विकसूत्र व संभावित संरचना के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। जीव ऊतकों में मिलने वाले सभी कार्बनिक यौगिकों को 'जैव अणु' कहते हैं। लेकिन जीवों में भी अकार्बनिक तत्व व यौगिक मिलते हैं। हम यह कैसे जान पाते हैं? एक थोड़ा भिन्न किंतु भंजक प्रयोग करना पड़ेगा। जीव ऊतकों (पर्ण व यकृत) की थोड़ी मात्रा को तोलकर (यह नम भार कहलाता है) शुष्क कर लें, जिससे संपूर्ण जल वाष्पित हो जाता है। बचे हुए पदार्थ से शुष्क भार प्राप्त होता है। यदि ऊतकों को पूर्ण रूप से जलाया जाए तो सभी कार्बनिक यौगिक ऑक्सीकृत होकर गैसीय रूप (CO_2 व जल वाष्प) में अलग हो जाते हैं। बचे हुए पदार्थ को 'भस्म' कहते हैं। इस भस्म में अकार्बनिक तत्व (जैसे कैल्सियम, मैग्नीसियम आदि) मिलते हैं। अकार्बनिक यौगिक जैसे सल्फेट, फॉस्फेट आदि अम्ल घुलनशील अंश में मिलते हैं। इस कारण से तत्वीय विश्लेषण से किसी जीव ऊतक के तत्वीय संगठन की हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, क्लोरीन, कार्बन आदि के रूप में जानकारी मिलती (सारणी 9.1) है। यौगिकों के परीक्षण से जीव ऊतकों में उपस्थित कार्बनिक व अकार्बनिक (तालिका 9.2) यौगिकों के बारे में जानकारी मिलती है। रसायन विज्ञान के दृष्टिकोण से क्रियात्मक समूह जैसे ऐल्डीहाइड, कीटोन एरोमेटिक (Aromatic) यौगिकों आदि की पहचान की जा सकती है किंतु जीव विज्ञान की दृष्टि से इन्हें अमीनो अम्ल, न्यूक्लियोटाइड क्षार, वसा अम्ल इत्यादि में वर्गीकृत करते हैं।

तालिका 9.1 जीव व निर्जीव पदार्थों में पाए जाने वाले तत्वों की तुलना

तत्व	% भार	
	भू-पर्पटी	मनुष्य शरीर
हाइड्रोजन (H)	0.14	0.5
कार्बन (C)	0.03	18.5
ऑक्सीजन (O)	46.6	65.0
नाइट्रोजन (N)	बहुत थोड़ा	3.3
सल्फर (S)	0.03	0.3
सोडियम (Na)	2.8	0.2
कैल्सियम (Ca)	3.6	1.5
मैगनीशियम (Mg)	2.1	0.1
सिलिकॉन (Si)	27.7	नगण्य

* सी.एन. राव द्वारा लिखित 'अंडरस्टैंडिंग केमेस्ट्री' से उद्धरित, विश्वविद्यालय प्रकाशन, हैदराबाद

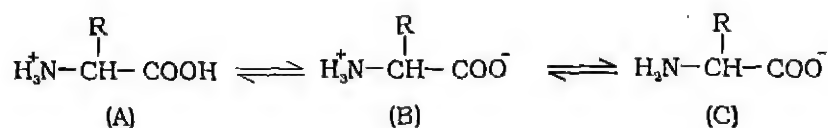
तालिका 9.2 जीव ऊतकों में पाए जाने वाले अकार्बनिक अवयवों की सूची

घटक	सूत्र
सोडियम	Na^+
पोटैसियम	K^+
कैल्सियम	Ca^{++}
मैगनीसियम	Mg^{++}
जल	H_2O
यौगिक	$NaCl$, $CaCO_3$, PO_4^{3-}, SO_4^{2-}

अमीनो अम्ल कार्बनिक यौगिक होते हैं जिनमें इसके एक ही कार्बन (α-कार्बन) पर एक अमीनो समूह व एक अम्लीय समूह प्रतिस्थापित होते हैं। इस कारण इन्हें (α) एल्फा अमीनो अम्ल कहते हैं। ये प्रतिस्थापित मेथेन हैं। चार प्रतिस्थाई समूह चार संयोजकता स्थल से जुड़े रहते हैं। ये समूह हाइड्रोजन, कार्बोक्सिल समूह, अमीनो समूह तथा भिन्न परिवर्तनशील समूह जिसे R समूह, से व्यक्त करते हैं, पाए जाते हैं। R समूह की प्रकृति के आधार पर अमीनो अम्ल अनेक प्रकार के होते हैं फिर भी प्रोटीन में

उपलब्धता के आधार पर ये 21 प्रकार के होते हैं। प्रोटीन के अमीनो अम्लों में R समूह, हाइड्रोजन (अमीनो अम्ल-ग्लाइसीन), मेथिल समूह (ऐलेनीन), हाइड्रोक्सीमेथिल (सीरिन) आदि हो सकते हैं। 21 में से 3 को चित्र 9.1 में दर्शाया गया है।

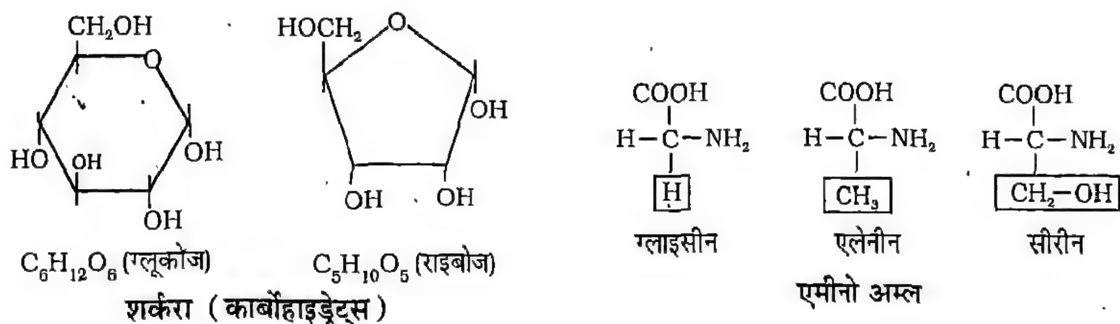
अमीनो अम्लों के भौतिक व रासायनिक गुण मुख्यतया अमीनो, कार्बोक्सिल व R क्रियात्मक समूह पर निर्भर है। अमीनो व कार्बोक्सिल समूहों की संख्या के आधार पर अम्लीय (उदाहरण ग्लुटामिक अम्ल), क्षारीय (उदाहरण लाइसिन) और उदासीन (उदाहरण वेलीन) अमीनो अम्ल होते हैं। इसी तरह से एरोमेटिक अमीनो अम्ल (टायरोसीन, फेनिलऐलेनीन, ट्रिप्टोफ़ान) होते हैं। अमीनो अम्लों का एक विशेष गुण यह है कि अमीनो ($-NH_2$) व कार्बोक्सिल ($-COOH$) समूह आयनिकरण प्रकृति के होते हैं, अत: विभिन्न pH वाले विलयनों में अमीनो अम्लों की संरचना परिवर्तित होती रहती है।

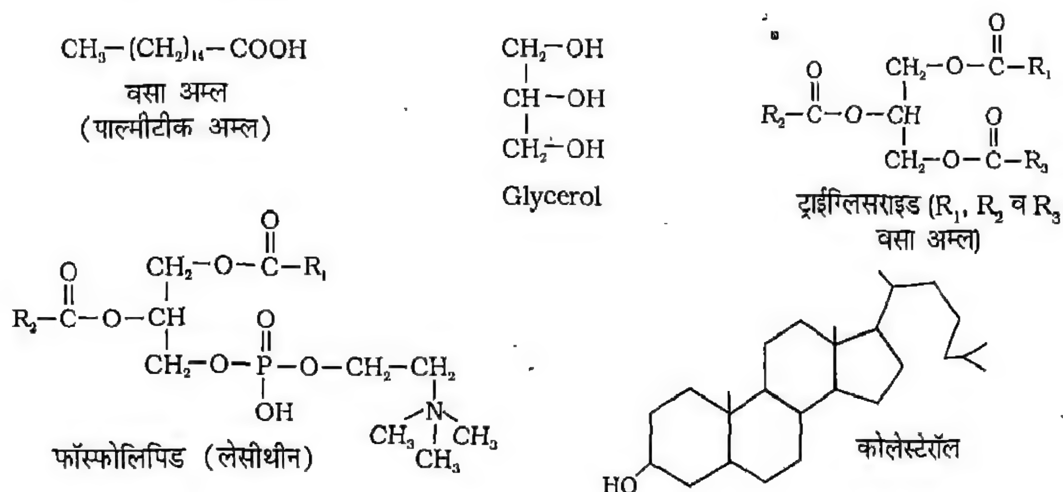


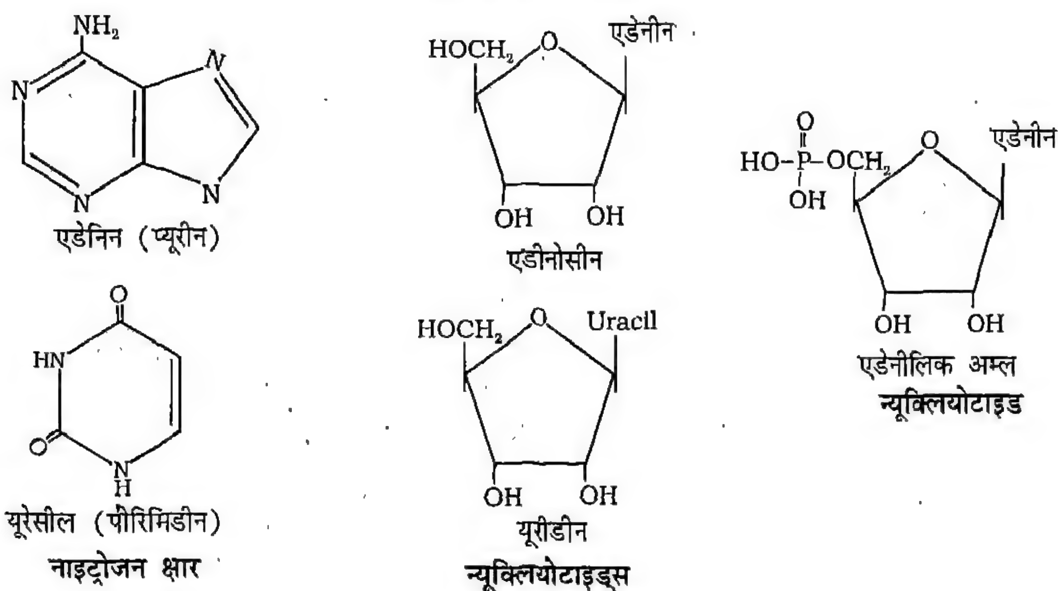
B को ज्विटर आयनिक प्रारूप कहते हैं।

साधारणतया लिपिड पानी में अघुलनशील होते हैं। ये साधारण वसा अम्ल हो सकते हैं। वसा अम्ल में एक कार्बोक्सिल समूह होता है, जो एक R समूह से जुड़ा होता है। R समूह मेथिल ($-CH_3$), अथवा ऐथिल $-C_2H_5$ या उच्च संख्या वाले $-CH_2$ समूह (1 कार्बन से 19 कार्बन)। उदाहणार्थ - पाल्मिटिक अम्ल में कार्बोक्सिल कार्बन के सहित 16 कार्बन मिलते हैं। ऐरेकिडोनिक अम्ल में कार्बोक्सिल कार्बन सहित 20 कार्बन परमाणु होते हैं। वसा अम्ल संतृप्त (बिना द्विक आबंध) या असंतृप्त (एक या एक से अधिक c=c द्विआबंध) प्रकार के हो सकते हैं। दूसरा साधारण लिपिड ग्लिसरॉल है जो ट्राइहाइड्रिक्ससी प्रोपेन होता है। बहुत सारे लिपिड्स में ग्लिसरॉल व वसा अम्ल दोनों मिलते हैं। यहाँ पर वसा अम्ल ग्लिसरॉल से एस्टरीकृत होता है तब वे मोनोग्लिसरॉइड, डाइग्लिसरॉइड तथा ट्राई ग्लिसरॉइड हो सकते हैं। गलन बिंदु के आधार पर वसा या तेल (oils) कहलाते हैं। तेलों का गलनांक अपेक्षाकृत कम होता है (जैसे जिंजेली तेल)। अत: सर्दियों में तेल के रूप में होते हैं। क्या आप बाजार में उपलब्ध वसा की पहचान कर सकते हैं? कुछ लिपिड्स में फॉस्फोरस व एक फॉस्फोरिलीकृत कार्बनिक यौगिक मिलते हैं। ये फॉस्फोलिपिड्स हैं, जो कोशिका झिल्ली में मिलते हैं जैसे लेसिथिन। कुछ ऊतक विशेष तौर तंत्रिका ऊतक में अधिक जटिल संरचना के लिपिड पाए जाते हैं।

जीवों में बहुत सारे कार्बनिक यौगिक विषमचक्रीय वलय युक्त भी होते हैं। इनमें से कुछ नाइट्रोजन क्षार-ऐडेनीन, ग्वानीन, साइटोसीन, यूरेसिल व थायमीन हैं। ये शर्करा से जुड़कर न्यूक्लिोसाइड बनाते हैं। यदि इनसे फॉस्फेट समूह भी शर्करा से इस्टरीकृत रूप में हो तो इन्हें न्यूक्लियोटाइड कहते हैं। ऐडेनोसिन, ग्वानोसिन, थायमिडिन, यूरिडिन व







चित्र 9.1 जीव ऊतकों में पाए जाने वाले कम अणुभार के कार्बनिक यौगिकों का चित्रात्मक प्रदर्शन

साइटिडिन न्यूक्लियोसाइड हैं। ऐडेनिलिक अम्ल, थायमेडिलिक अम्ल, ग्वानिलिक अम्ल, यूरिडिलिक अम्ल व सिटिडिलिक अम्ल न्यूक्लियोटाइड्स हैं। न्यूक्लीक अम्ल जैसे डीएनए (DNA) व आरएनए आनुवंशिक पदार्थ के रूप में कार्य करते हैं।

9.2 प्राथमिक व द्वितियक उपापचयज

रसायन विज्ञान की एक महत्वपूर्ण शाखा में जीवों के हजारों बड़े-छोटे यौगिकों का विलगन (पृथक्करण) किया जाता है। उनकी संरचना निर्धारित की जाती है और संभव हो तो उन्हें संश्लेषित किया जाता है। यदि कोई जैव अणुओं की एक तालिका बनाए तो उनमें हजारों कार्बनिक यौगिक जैसे अमीनो अम्ल, शर्करा इत्यादि पाए जाएंगे। कुछ कारणों से जिन्हें खंड 9.10 में दिया गया है, को हम उपापचयज कहते हैं। उपरोक्त सभी श्रेणी के इन यौगिकों की उपस्थिति को जिन्हें (चित्र 9.1) में दर्शाया गया है। कोई व्यक्ति प्राणि ऊतकों में ज्ञात कर सकता है। इन्हें प्राथमिक उपापचयज कहते हैं। जब कोई पादप, कवक व सूक्ष्म जीवी कोशिकाओं का विश्लेषण करें तो उसे इन प्राथमिक उपापचयजों के अतिरिक्त हजारों यौगिक जैसे- एल्केलायड्, फ्लेवेनोयड्स, रबर, वाष्पशील तेल, प्रतिजैविक, रंगीन वर्णक, इत्र, गोंद, मसाले मिलते हैं। इन्हें **द्वितीयक उपापचयज** कहते हैं (तालिका 9.3)। प्राथमिक उपापचयज ज्ञात कार्य करते हैं व सामान्य कार्यिकी प्रक्रिया में इनकी भूमिका भी ज्ञात है, किंतु हम इस समय सभी द्वितीयक उपापचयजों की (जिन प्राणियों में ये पाए जाते हैं, में उनकी) भूमिका या कार्य नहीं जानते। जबकि इनमें से बहुत (जैसे- रबर, औषधि, मसाले, इत्र व वर्णक) मनुष्य के कल्याण में उपयोगी हैं। कुछ द्वितीयक उपापचयजों का पारिस्थितिक महत्व है। आप बाद के अध्यायों व वर्षों में इनके बारे में विस्तृत रूप से अध्ययन करेंगे।

तालिका 9.3 कुछ द्वितीयक उपापचयज

वर्णक	कैरोटीनाएड्स, एंथोसाइनिन्स, आदि
एल्कल्वाएड	मार्फीन, कोडेसीन, आदि
टरपीन्वाएडसं	मोनोटरपींस, डाइटरपींस आदि
आवश्यक तेल	नींबूघास तेल, आदि
टॉक्सीन	एब्रिन, रिसीन
लेक्टिन्स	कोनकेनेवेलीन ए
ड्रग्स	वीनब्लेस्टीन, करकुमीन आदि
बहुलक पदार्थ	रबर, गोंद, सेलुलोज

9.3 वृहत् जैव अणु

अम्ल घुलनशील भाग में पाए जाने वाले सभी यौगिकों की एक सामान्य विशेषता है कि इनका अणुभार 18 से लगभग 800 डाल्टॉन के आस-पास होता है।

अम्ल अविलेय अंश में केवल चार प्रकार के कार्बनिक यौगिक जैसे प्रोटीन, न्यूक्लीक अम्ल, पॉलीसैकेराइड्स व लिपिड्स मिलते हैं। लिपिड्स के अतिरिक्त इस श्रेणी के यौगिकों का अणु भार दस हजार डाल्टॉन या इसके ऊपर होता है। इस कारण से जैव अणु अर्थात् जीवों में मिलने वाले रासायनिक यौगिक दो प्रकार के होते हैं। एक वे हैं जिनका अणुभार एक हजार डाल्टॉन से कम होता है; उन्हें सामान्यतया सूक्ष्मअणु या जैव अणु कहते हैं; जबकि जो अम्ल अविलेय अंश में पाए जाते हैं; उन्हें वृहत् अणु या **वृहत् जैव अणु** कहते हैं।

लिपिड्स के अतिरिक्त अविलेय अंशों में पाए जाने वाले अणु बहुलक पदार्थ होते हैं। लिपिड्स जिनके अणुभार 800 से अधिक नहीं होते, वे अम्ल अविलेय अंश या वृहत् आण्विक अंश की श्रेणी में क्यों आते हैं? वास्तव में लिपिड्स कम अणुभार के यौगिक होते हैं, वे ऐसे ही नहीं मिलते, बल्कि कोशिका झिल्ली और दूसरी झिल्लियों में पाए जाते हैं। जब हम ऊतकों को पीसते हैं तब कोशकीय संरचना विघटित हो जाती है। कोशिकाझिल्ली व अन्य दूसरी झिल्लियाँ टुकड़ों में विखंडित हो जाती हैं, तथा पुटिका बनाती हैं जो जल में घुलनशील नहीं हैं। इस कारण से इन झिल्लियों के पुटिका के रूप में टुकड़े अम्ल अविलेय भाग के साथ पृथक् हो जाते हैं, जो वृहत् आण्विक अंश का भाग होते हैं। सही अर्थ में लिपिड्स वृहत् अणु नहीं है। अम्ल विलेय अंश वास्तव में कोशिका द्रव्य संगठन का भाग है। कोशिका द्रव्य व अंगकों के वृहत् अणु अम्ल अविलेय अंश होते हैं। ये दोनों आपस में मिलकर जीव ऊतकों या जीवों का संगठन बनाते हैं।

संक्षेप में, यदि जीव ऊतकों में पाए जाने वाले रासायनिक संगठन को बाहुल्यता की दृष्टि से श्रेणीबद्ध किया जाए तो हम पाते हैं कि जीवों में पानी सबसे सर्वाधिक बाहुल्यता से मिलने वाला रसायन है। (तालिका 9.4)

तालिका 9.4 कोशिकाओं का औसत संगठन

अवयव	कुल कोशिकीय भार का प्रतिशत
जल	70-90
प्रोटीन	10-15
कार्बोहाइड्रेट	3
लिपिड	2
न्युक्लीक अम्ल	5-7
आयन	1

9.4 प्रोटीन

प्रोटीन पॉलीपेप्टाइड होते हैं। ये अमीनो अम्ल की रेखीय शृंखलाएं होती हैं, जो पेप्टाइड बंधों से जुड़ी होती हैं; जैसा कि चित्र 9.2 में दर्शाया गया है।

प्रत्येक प्रोटीन अमीनो अम्ल का बहुलक है। अमीनो अम्ल 21 प्रकार के होने से (जैसे-एलेनीन, सिस्टीन, प्रोलीन, ट्रीप्टोफान, लाइसीन आदि) होते हैं। प्रोटीन समबहुलक नहीं, बल्कि विषम बहुलक होते हैं। एक समबहुलक एक एकलक की कई बार आवर्ती के कारण बनता है। अमीनो अम्ल के बारे में यह जानकारी अति महत्वपूर्ण है जैसा कि बाद में पोषण अध्याय में आप पढ़ेंगे कि कुछ अमीनो अम्ल स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक होते हैं, जिनकी आपूर्ति खाद्य पदार्थों के द्वारा होती है। इस तरह आहार की प्रोटीन इन आवश्यक अमीनो अम्ल की स्रोत होती हैं। इस प्रकार से अमीनो अम्ल अनिवार्य या अनानिवार्य हो सकते हैं। अनानिवार्य वे होते हैं जो हमारे शरीर में बनते हैं। जबकि हम अनिवार्य अमीनो अम्लों की आपूर्ति अपने खाद्य पदार्थ से करते हैं। प्रोटीन जीवों में बहुत सारे कार्य करते हैं, इनमें कुछ

तालिका 9.5 कुछ प्रोटीन व इनके कार्य

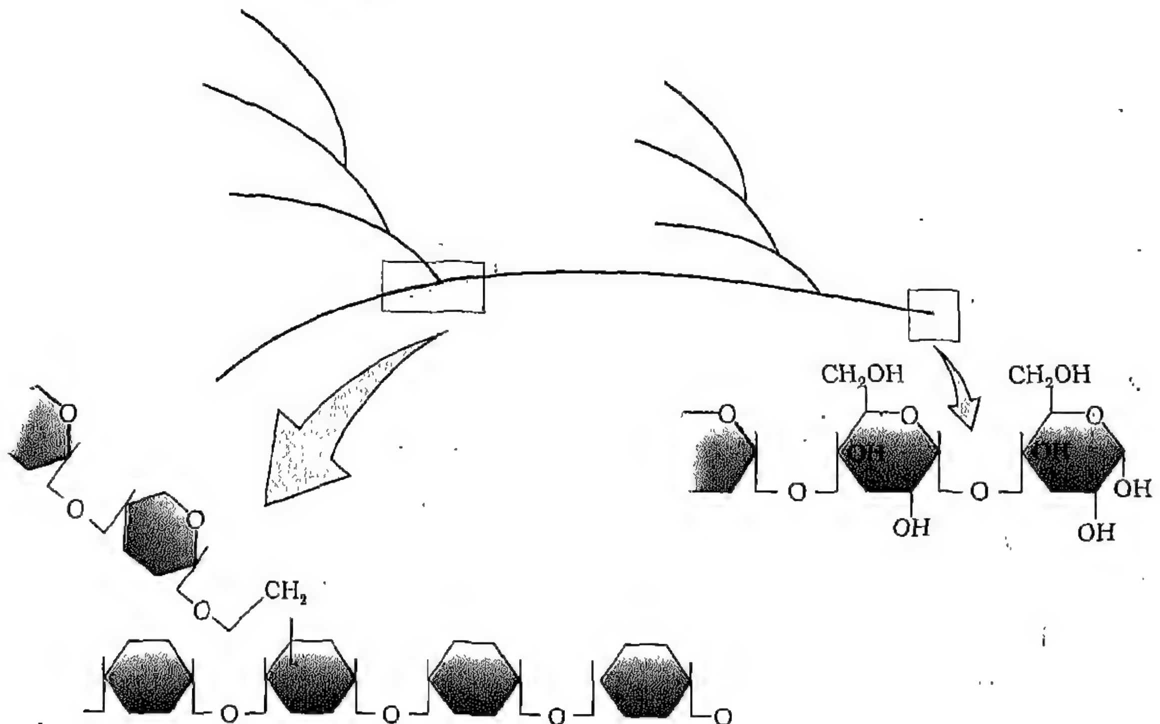
प्रोटीन	कार्य
कोलेजन	अंतरकोशिकीय भरण पदार्थ
ट्रिपसिन	एंजाइम
इंसुलिन	हार्मोन
प्रतिजीव	संक्रमितकर्ता से लड़ना
ग्राही	संवेदी ग्रहण (सूंघना, स्वाद, हार्मोन आदि)
जी.एल.यू.टी-4	ग्लूकोज का कोशिका में परिवहन

पोषकों के कोशिका झिल्ली से होकर अभिगमन, करने तथा कुछ संक्रामक जीवों से बचाने में सहायक होती हैं और कुछ एंजाइम के रूप में होती हैं (तालिका 9.5)।

9.5 पॉलीसैकेराइड

अम्ल अविलेय भाग में दूसरे श्रेणी के वृहत् अणुओं की तरह पॉलीसैकेराइड्स (कार्बोहाइड्रेडस) भी पाए जाते हैं। ये पॉलीसैकेराइड्स शर्करा की लंबी शृंखला होती है। यह शृंखला सूत्र की तरह (कपास के रेशे) विभिन्न प्रकार एकल सैकेराइड्स से मिलकर बने होते हैं। उदाहरणार्थ, सेलुलोज एक बहुलक पॉलीसैकेराइड होता है जो एक प्रकार के मोनोसैकेराइड जैसे ग्लूकोज का बना होता है। सेलुलोज एक सम बहुलक है। इसका एक परिवर्तित रूप स्टार्च (मंड) सेलुलोज से भिन्न होता है, लेकिन यह पादप ऊतकों में ऊर्जा भंडार के रूप में मिलता है। प्राणियों में एक अन्य परिवर्तित रूप होता है जिसे ग्लाइकोजन कहते हैं। इनूलिन फ्रुक्टोज का बहुलक है। एक पॉलीसैकेराइड शृंखला (जैसे ग्लाइकोजन) का दाहिना सिरा अपचायक व बाया सिरा अनअपचायक कहलाता है। यह शाखायुक्त होती है, जो व्यंगचित्र जैसी दिखाई देती है (चित्र 9.2)।

मंड में द्वितीयक कुंडलीदार संरचना मिलती है। वास्तव में मंड में आयोडीन अणु इसके कुंडलीय भाग से जुड़े होते हैं। आयोडीन अणु मंड से जुड़कर नीला रंग देता है। सेलुलोज में उपरोक्त जटिल कुंडलियाँ नहीं मिलने के कारण आयोडीन इसमें प्रवेश नहीं कर पाता है।



चित्र 9.2 ग्लाइकोजन के अंश का चित्रात्मक प्रदर्शन

पादप कोशिका भित्ति सेलुलोज की बनी होती है। कागज पौधों की लुगदी से बना होता है जो सेलुलोज होता है। रूई के धागे सेलुलोज के बने होते हैं। प्रकृति में बहुत सारे जटिल पॉलीसैकेराइड्स मिलते हैं। ये अमीनो शर्करा व रासायनिक रूप से परिवर्तित शर्करा (जैसे - ग्लूकोसमीन, एनएसीटाइल ग्लूकोसएमीन आदि) से मिलकर बने होते हैं। जैसे आर्थोपोडा के बाह्यकंकाल जटिल सैकेराइड्स काइटीन से बने होते हैं। ये जटिल पॉलीसैकेराइड्स विषमबहुलक होते हैं।

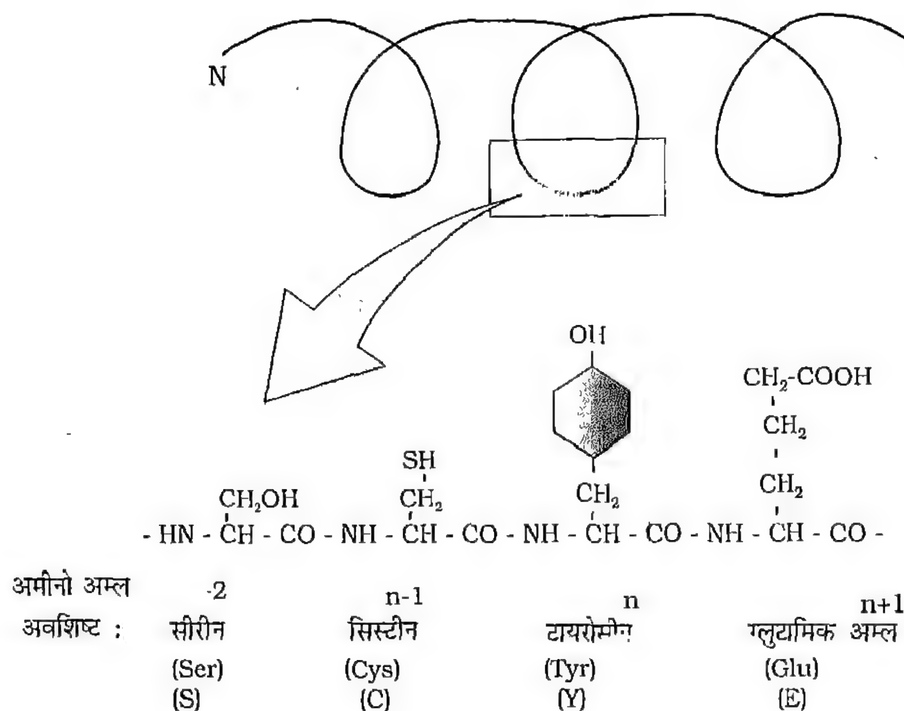
9.6 न्यूक्लीक अम्ल

दूसरे प्रकार का एक वृहत् अणु जो किसी भी जीव ऊतक के अम्ल अविलेय अंश में मिलता है, उसे न्यूक्लीक अम्ल कहते हैं। यह पॉलीयूक्लीयोटाइडस होते हैं। यह पॉलीसैकेराइड्स व पॉली पेप्टाइड्स के साथ समाविष्ट होकर किसी भी जीव ऊतक या कोशिका का वास्तविक वृहत्आण्विक अंश बनाता है। न्यूक्लीक अम्ल न्यूक्लीयोटाइड से मिलकर बने होते हैं। एक न्यूक्लीयोटाइड तीन भिन्न रासायनिक घटकों से मिलकर बना होता है। पहला विषम चक्रीय यौगिक, दूसरा मोनोसैकेराइड व तीसरा फॉस्फोरिक अम्ल या फॉस्फेट होता है।

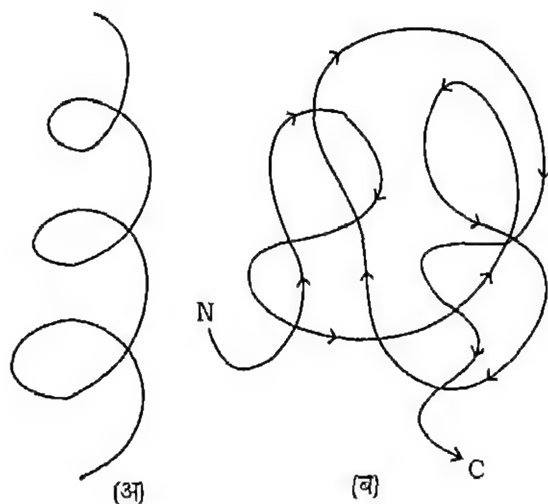
यदि चित्र 9.1 को ध्यान दें तो पाएंगे कि न्यूक्लीक अम्ल में विषमचक्रीय यौगिक नाइट्रोजन क्षार जैसे- ऐडेनीन, ग्वानीन, यूरेसील, साइटोसीन व थाईमीन होते हैं। ऐडेनीन व ग्वानीन प्रतिस्थापित प्यूरीन है तथा अन्य तीन प्रतिस्थापित पीरीमिडीन हैं। विषमचक्रीय वलय को क्रमश: प्यूरीन व पीरीमिडिन कहते हैं। पॉलीन्यूक्लीयोटाइड में मिलने वाली शर्करा या तो राइबोज (मोनोसैकेराइड पेंटोज) या डीऑक्सीराइबोज होती है। जिस न्यूक्लीक अम्ल में डीऑक्सीराइबोज मिलता है, उसे डीऑक्सीराइबोन्यूक्लीक अम्ल (डीएनए) व जिसमें राइबोज मिलता है, उसे राइबोन्यूक्लीक अम्ल (आरएनए) कहते हैं।

9.7 प्रोटीन की संरचना

जैसा की पहले बताया गया है कि प्रोटीन विषमबहुलक होते हैं जो अमीनो अम्ल की लड़ियों से बने होते हैं। अणुओं की संरचना का अर्थ विभिन्न संदर्भों में भिन्न-भिन्न होता है। अकार्बनिक रसायन में संरचना का संबंध आण्विकसूत्र से होता है (जैसे $NaCl$, $MgCl_2$ आदि)। कार्बनिक रसायनविज्ञनी जब अणुओं की संरचना (जैसे-बेंजीन, नैपथलीन आदि) को व्यक्त करते हैं तो वे हमेशा उसके द्विआयामी दृश्य को व्यक्त करते हैं। भौतिक वैज्ञानी आण्विक संरचना के त्रिआयामी दृश्य को; जबकि जीव विज्ञानी प्रोटीन की संरचना चार तरह से व्यक्त करते हैं। प्रोटीन में अमीनो अम्ल के क्रम व इसके स्थान के बारे में जैसे कि पहला, दूसरा व इसी प्रकार अन्य कौन सा अमीनो अम्ल होगा, की जानकारी को प्रोटीन की **प्राथमिक संरचना** कहते हैं (चित्र 9.3)। कल्पना करें कि प्रोटीन एक रेखा है तो इसके बाएं सिरे पर प्रथम व दाएं सिरे पर अंतिम अमीनो अम्ल मिलता है। प्रथम अमीनो अम्ल को नाइट्रोजनसिरा अमीनो अम्ल कहते हैं, जबकि अंतिम अमीनो अम्ल को कार्बनसिरा (C-सिरा) अमीनो अम्ल कहते हैं। प्रोटीन लड़ी हमेशा फैली हुई दृढ़ छड़ी जैसी रचना नहीं होती है। यह लड़ी कुंडली की तरह मुड़ी होती है



चित्र 9.3 कल्पित प्रोटीन के अंश की प्राथमिक संरचना N व C प्रोटीन के दो सिरों को प्रकट करता है। एकल अक्षरीय कूट तथा अमीनो अम्लों का 3-अक्षरीय संक्षेपण दिखाया या है।



चित्र 9.4 कार्टून द्वारा प्रदर्शित (अ) प्रोटीन की एक द्वितीयक संरचना (ब) एक तृतीयक संरचना

(घूमती हुई सीढ़ी की तरह)। वास्तव में प्रोटीन लड़ी कुछ का अंश कुंडली के रूप में व्यवस्थित होता है। प्रोटीन में केवल दक्षिणावर्ती कुंडलियाँ मिलती हैं। अन्य जगहों पर प्रोटीन की लड़ी दूसरे रूप में मुड़ी हुई होती है, इन्हें **द्वितीयक संरचना** कहते हैं। इसके अतिरिक्त प्रोटीन की लंबी कड़ी अपने ऊपर ही ऊन के एक खोखले गोले के समान मुड़ी हुई होती है जिसे प्रोटीन की **तृतीयक संरचना** कहते हैं (चित्र 9.4 a,b)। यह प्रोटीन के त्रिआयामी रूप को प्रदर्शित करता है। तृतीयक संरचना प्रोटीन के जैविक क्रियाकलापों के लिए नितांत आवश्यक है।

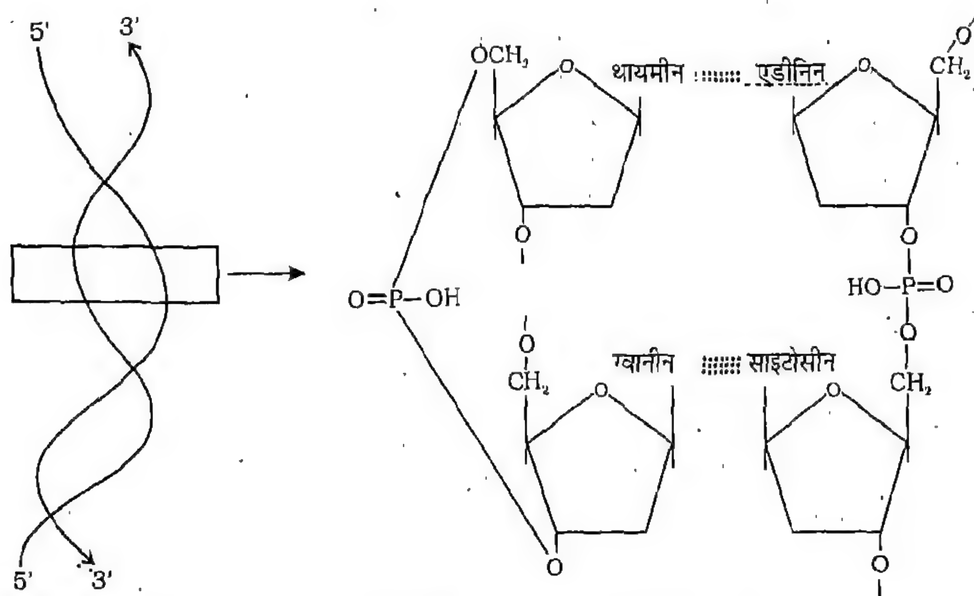
कुछ प्रोटीन एक से अधिक पॉलीपेप्टाइड्स या उपइकाइयों के समूह होते हैं, जिस ढंग से प्रत्येक पॉलीपेप्टाइड्स या उपइकाई एक दूसरे के सापेक्ष व्यवस्थित होती हैं (उदाहरण, गोले की सीधी लड़ी, गोले एक दूसरे के ऊपर व्यवस्थित होकर घनाभ या पट्टिका की संरचना आदि)। वे प्रोटीन के स्थापत्य को प्रदर्शित करती हैं, जिसे प्रोटीन की **चतुष्क**

संरचना कहते हैं। वयस्क मनुष्य का हीमोग्लोबीन चार उपखंडों का बना होता है। इनमें दो एक दूसरे के समान होते हैं। दो उपखंड अल्फा (α) व दो उपखंड बीटा (β) प्रकार के होते हैं, जो आपस में मिलकर मनुष्य के हीमोग्लोबीन (Hb) बनाते हैं।

9.8 एक बहुलक में एककों को जोड़ने वाले बंधों की प्रकृति

किसी भी पॉलीपेप्टाइड या प्रोटीन में एमीनो अम्ल **पेप्टाइड बंध** द्वारा जुड़े होते हैं, जो एक एमीनो अम्ल के कार्बाक्सिल (-COOH) समूह व अगले अमीनो अम्ल के एमीनो ($-NH_2$) समूह के बीच अभिक्रिया के उपरांत जल अणु के निकलने के बाद बनता है (इस प्रक्रिया को निर्जलीकरण कहते हैं)। एक पॉलीसैकेराइड में मोनोसेकेराइड संभवतः **ग्लाइकोसाइडिक बंध** द्वारा जुड़े रहते हैं। यह बंध भी निर्जलीकरण द्वारा बनता है। यह बंध पास के दो मोनो सैकेराइड के दो कार्बन परमाणु के बीच बनता है। न्यूक्लीक अम्ल में एक न्यूक्लीओटाइड के एक शर्करा का 3'- कार्बन अनुवर्ती न्यूक्लीओटाइड के शर्करा के 5'- कार्बन से फॉस्फेट समूह द्वारा जुड़ा होता है। शर्करा के फॉस्फेट व हाइड्राक्सिल समूह के बीच का बंध एक एस्टर बंध होता है। एस्टर बंध दोनों तरफ मिलता है, अतः इसे फॉस्फोडाएटस्टर बंध कहते हैं (चित्र 9.5)।

न्यूक्लीक अम्लों में विभिन्न प्रकार की द्वितीयक संरचना मिलती है। उदाहरणार्थ वाटसन क्रिक का प्रसिद्ध नमूना डीएनए की द्वितीयक संरचना को प्रदर्शित करता है। इस नमूने से स्पष्ट है कि डीएनए एक दोहरी कुंडली के रूप में मिलता है। पॉलीयूक्लीओटाइड्स की दोनों लड़ियाँ प्रति समानांतर है जो एक दूसरे की विपरीत दिशाओं में होती हैं। इनका मुख्य भाग शर्करा-फॉस्फेट-शर्करा शृंखला से बना होता है। नाइट्रोजन क्षार एक दूसरे की तरफ मुख किए हुए मुख्य भाग पर लगभग लंबवत प्रक्षेपित होते हैं। एक लड़ी के क्षार



चित्र 9.5 डी.एन.ए. की द्वितीयक संरचना का चित्रात्मक प्रदर्शन

ए एवं जी अनिवार्यता दूसरे लड़ी के क्षार क्रमशः टी एवं सी से क्षार युग्म बनाते हैं। ए एवं टी के बीच दो हाइड्रोजन बंध जबकि जी व सी के बीच तीन हाइड्रोजन बंध होते हैं। प्रत्येक शृंखला एक घुमावदार सीढ़ी जैसी प्रतीत होती है। सीढ़ी का प्रत्येक पद क्षारों युग्मों का बना होता है। सीढ़ी का प्रत्येक पद दूसरे पद से 360 के कोण पर घूमा होता है। कुंडलित शृंखला के एक पूर्ण घुमाव में दस पद या दस क्षार युग्म पाए जाते हैं। इस तरह आप डीएनए का रेखाचित्र बनाने का प्रयास कर सकते हैं। एक पूर्ण घुमाव की लंबाई 34Å (एंग्स्ट्राम) होता है जबकि दो क्षार युग्मों के बीच खड़ी दूरी 3.4Å एंग्स्ट्राम होती है। उपरोक्त वर्णित विशेषतायुक्त डीएनए को बीडीएनए कहते हैं। उच्च कक्षाओं में तुम्हें बताया जाएगा कि एक दर्जन से भी अधिक प्रकार के डीएनए होते हैं, जिनका नामकरण संरचनात्मक विशेषता के आधार पर अंग्रेजी की वर्णमाला के आधार पर किया गया है।

9.9 शरीर अवयवों की गतिक अवस्था-उपापचय की संकल्पना

हम लोगों ने अब तक जो अध्ययन किया है उसके अनुसार जीव, चाहे वह साधारण जीवाणु कोशिका हो, प्रोटोजोआ, पौधा या प्राणी हो, ये सभी हजारों कार्बनिक यौगिकों से मिलकर बने होते हैं। ये यौगिक या जैव अणु एक निश्चित सांद्रता में मिलते हैं (इन्हें मोल्स प्रति कोशिका या मोल्स प्रति लीटर आदि के रूप में व्यक्त करते हैं)। अध्ययनों से एक जो प्रमुख जानकारी प्राप्त हुई है उसके अनुसार जैव अणुओं में हेर-फेर होता रहता है। इससे तात्पर्य यह है कि ये लगातार दूसरे नए जैव अणुओं में **परिवर्तित** होते रहते हैं और दूसरे जैव अणुओं से मिलकर बनते रहते है। जीवधारियों में यह निर्माण व विखंडन रासायनिक अभिक्रिया द्वारा लगातार होता रहता है। सभी इन रासायनिक अभिक्रियाओं को **उपापचय** कहते हैं। सभी उपापचयी अभिक्रियाओं द्वारा जैवअणुओं का रूपांतरण होता रहता है। कुछ उपापचयी रूपांतरण के उदाहरण निम्न हैं-एमीनो अम्ल से कार्बनडाइऑक्साइड के निकलने के बाद एमीनो अम्ल का एमीन में बदलना, न्यक्लीयोटाइड क्षार से एमीनो समूह का अलग होना, डाईसैकेराइड में ग्लाइकोसाइडिक बंध का जल अपघटन। इस प्रकार दस से हजारों उदाहरणों की सूची बना सकते हैं। अधिकांशतः इस प्रकार की रासायनिक अभिक्रियाएं अकेले नहीं होती, बल्कि सदैव.अन्य दूसरी अभिक्रियाओं से जुड़ी होती हैं। उपापचयजों का एक दूसरे में परिवर्तन आपस में जुड़ी हुई अभिक्रियाओं की शृंखलाओं से होता है, जिन्हें उपापचयी पथ कहते हैं। ये उपापचयी पथ शहर की कार/मोटर यातायात व्यवस्था जैसी होती है। ये पथ या तो रेखीय या वृत्ताकार होते हैं। ये पथ एक दूसरे से आड़े-तिरछे यातायात के संगम जैसे दिखाई पड़ते हैं। उपापचयज यातायात के कार/मोटर सदृश एक निश्चित वेग व दिशा में उपापचयी पथ से होकर गमन करते हैं। यह उपापचयज बहाव शरीर के घटकों की गतिक अवस्था कहलाता है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि आपस में जुड़ा हुआ यह उपापचयी यातायात अत्यंत निर्वाध गति से बिना दुर्घटना के स्वस्थ अवस्था बनाए रखने के लिए होता रहता है। इन उपापचयी अभिक्रियाओं की दूसरी विशेषता यह है कि इनकी प्रत्येक रासायनिक क्रिया **उत्प्रेरित अभिक्रियाएं** हैं। जीव तंत्र में कोई भी उपापचयी रूपांतरण बिना उत्प्रेरक के संपन्न नहीं होता है। कार्बनडाइऑक्साइड का पानी में घुलना जो एक भौतिक प्रक्रिया है, लेकिन जीव

तंत्र में यह एक उत्प्रेरित अभिक्रिया होती है। उत्प्रेरक जो किसी उपापचयी रूपांतरण की गति को बढ़ाते हैं, वे भी प्रोटीन होते हैं। ये प्रोटीन जिनमें उत्प्रेरण की क्षमता होती है उन्हें **एंजाइम** कहते हैं।

9.10 जीव का उपापचयी आधार

उपापचयी पथ द्वारा साधारण पदार्थों से जटिल पदार्थ (जैसे एसीटीक अम्ल से कोलेस्ट्राल का बनना)व जटिल पदार्थों से सरल पदार्थों (जैसे कंकाली पेशियों में ग्लूकोज से लैक्टिक अम्ल) का निर्माण होता रहता है। पहली प्रकार की प्रक्रिया को जैव संश्लेषण पथ या **उपचयी** पथ कहते हैं। दूसरी प्रक्रिया में अपचय या विखंडन होता है, इसलिए इसे **अपचयी** पथ कहते हैं। उपचयी पथों में ऊर्जा खर्च होती है। एमिनो अम्लों से प्रोटीन के निर्माण में ऊर्जा की आवश्यकता होती है। दूसरी तरफ अपचयी पथ द्वारा ऊर्जा मुक्त.होती है, जैसे कंकाली पेशियों में जब ग्लूकोज लैक्टिक अम्ल में टूटता है तो ऊर्जा मुक्त होती है। यह उपापचयी पथ जिसके द्वारा ग्लूकोज से लैक्टिक अम्ल का निर्माण होता है, 10 उपापचयी चरणों में पूर्ण होता है तथा इसे ग्लाइकोलिसिस कहते हैं। जीवों में विखंडन द्वारा निकलने वाली यह ऊर्जा रासायनिक बंध के रूप में संचित कर ली जाती है। यह बंध ऊर्जा जब और जहाँ आवश्यक होती है; जैसे जैव संश्लेषण, परासरण व यांत्रिक कार्य किए जाने पर, इसका उपयोग किया जाता है। ऊर्जा की मुद्रा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्वरूप जीव तंत्र में एक रसायन में बंध ऊर्जा के रूप में मिलता है **जिसे एडीनोसीन ट्राई फास्फेट (एटीपी)** कहते हैं।

जीव अपनी ऊर्जा कैसे प्राप्त करते हैं? उनमें किस तरह की योजना विकसित हुई है? वे इस ऊर्जा को कैसे व किस रूप में संचित करते हैं? इस ऊर्जा को वे.कार्य में कैसे बदलते हैं? तुम इन सब चीजों के बारे में बाद में उच्च कक्षाओं में एक नई शाखा में अध्ययन करोगे, जिसे 'जैव ऊर्जा विज्ञान' (Bioenergetics) कहते हैं।

9.11 जीव अवस्था

इस अवस्था में आप समझ चुके होंगे कि जीवों में उनके अनुसार एक निश्चित सांद्रता में हजारों रासायनिक यौगिक मिलते हैं, जिसे उपापचयज या जैव अणु कहते हैं, उदाहरणार्थ सामान्य स्वस्थ व्यक्ति में रक्त शर्करा की मात्रा 4.5-5.0 मिलीमोल जबकि हार्मोन की नैनोग्राम प्रति मिलीलीटर होती है। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि जैविक तंत्र में सभी जीव एक स्थिर अवस्था में मिलते हैं जिनमें सभी जैव अणुओं की एक निश्चित मात्रा होती है। ये जैव अणु एक उपापचयी प्रवाह में होते हैं। कोई भी रासायनिक या भौतिक प्रक्रिया स्वतः साम्यावस्था को प्राप्त करती है। स्थिर अवस्था एक असाम्यावस्था होती है। भौतिक सिद्धांत के अनुसार कोई भी तंत्र साम्यावस्था में कार्य नहीं कर सकता है। जैसा कि जीव हमेशा कार्य करते हैं, उनमें कभी भी साम्यावस्था की स्थिति नहीं हो सकती है। **अतः जीव अवस्था एक असाम्य स्थाई अवस्था होती है, जिससे कार्य संपन्न होता है।** जीव प्रक्रिया एक लगातार प्रयास है जिसमें साम्यावस्था से बचा जा सके।

संपन्न होता है। जीव प्रक्रिया एक लगातार प्रयास है जिसमें साम्यावस्था से बचा जा सके। इसके लिए सदा ऊर्जा की आवश्यकता होती है। उपापचय वह प्रक्रिया है जिससे ऊर्जा प्राप्त होती है। अतः जीव अवस्था व उपापचय एक दूसरे के पर्यायवाची होते हैं। बिना उपापचय के जीव अवस्था प्राप्त नहीं हो सकती है।

9.12 एंजाइम

लगभग सभी एंजाइम प्रोटीन होते हैं। कुछ न्यूक्लीक अम्ल एंजाइम की तरह व्यवहार करते हैं, इन्हें राइबोजाइम्स कहते हैं। किसी भी एंजाइम को रेखीय चित्र द्वारा चित्रित कर सकते हैं। एक एंजाइम में भी प्रोटीन की तरह प्राथमिक संरचना मिलती है जो एमीनो अम्ल की शृंखला से बना होता है। प्रोटीन की तरह एंजाइम में भी द्वितीयक व तृतीयक संरचना मिलती है। जब आप तृतीयक संरचना (चित्र 9.4ब) को देखेंगे तो ध्यान देंगे कि प्रोटीन शृंखला का प्रमुख भाग अपने ऊपर स्वयं कुंडलित होता है और शृंखला स्वयं आड़ी-तिरछी स्थित होती है। इससे बहुत सी दरार या थैलियाँ बन जाती हैं। इस प्रकार की थैली को सक्रिय स्थल कहते हैं। एंजाइम का सक्रिय स्थल वे दरार या थैली हैं, जिनमें क्रियाधार आकर व्यवस्थित होते हैं। इस प्रकार एंजाइम सक्रिय स्थल द्वारा अभिक्रियाओं को तेज गति से उत्प्रेरित करता है। एंजाइम उत्प्रेरक अकार्बनिक उत्प्रेरक से कई प्रकार से भिन्न होते हैं; लेकिन इनमें एक बहुत बड़े अंतर को जानना आवश्यक है। अकार्बनिक उत्प्रेरक उच्च तापक्रम व दाब पर कुशलता से काम करते हैं। एंजाइम अणु उच्च तापक्रम (40^0 से. से ऊपर) पर क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। साधारणतया अति उच्च तापक्रम (जैसे गर्म स्रोतों या गंधक के झरनों में) पाए जाने वाले जीवों से प्राप्त एंजाइम स्थाई होते हैं और उनकी उत्प्रेरक शक्ति उच्च तापक्रम (80^0 से 90^0 से. तक) पर भी बनी रहती है। उपरोक्त एंजाइम जो उष्मा स्नेही जीवों से पृथक् किए गए हैं, उष्मास्थाई होते हैं। यह उनकी विशेषता है।

9.12.1 रासायनिक अभिक्रियाएं

एंजाइम्स क्या होते हैं? इससे पहले यह समझ लेना आवश्यक है कि रासायनिक अभिक्रिया क्या होती है। रासायनिक यौगिकों में दो तरह के परिवर्तन होते हैं। पहला भौतिक परिवर्तन जिसमें बिना बंध के टूटे हुए यौगिक के आकार में परिवर्तन होता है। अन्य भौतिक प्रक्रिया में द्रव्य की अवस्था में परिवर्तन होता है, जैसे बर्फ का पिघलकर पानी में परिवर्तित होना या पानी का वाष्प में बदलना। ये भौतिक प्रक्रियाएं हैं। रूपांतरण के समय बंधों का टूटना व नये बंधों का निर्माण होना ही रासायनिक अभिक्रिया होती है। उदाहरण -बेरियम हाइड्राक्साइड गंधक के अम्ल से क्रिया कर बेरियम सल्फेट व पानी बनाता है।



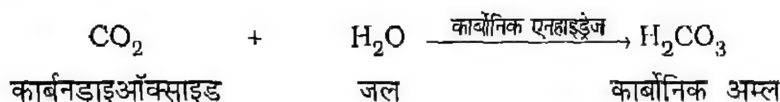
$$Ba(OH)_2 + H_2SO_4 \rightarrow BaSO_4 + 2H_2O$$

यह एक अकार्बनिक रासायनिक अभिक्रिया है। ठीक इसी प्रकार (टार्च का जल अपघटन द्वारा ग्लूकोज में बदलना एक कार्बनिक रसायनिक अभिक्रिया है। भौतिक या रासायनिक

अभिक्रिया की दर का सीधा संबंध इकाई समय में बनने वाले उत्पाद से होता है। इसे इस प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं:

$$\text{दर} = \frac{\delta P}{\delta t}$$

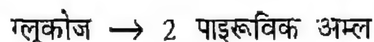
यदि दिशा निर्धारित हो तो इस दर को वेग भी कहते हैं। भौतिक व रासायनिक प्रक्रियाओं की दर अन्य कारकों के साथ-साथ तापक्रम द्वारा प्रभावित होती है। एक सर्वमान्य नियम के अनुसार प्रत्येक 10^0 सेंटिग्रेड तापक्रम के बढ़ने या घटने पर अभिक्रिया की दर क्रमशः द्विगुणित या आधी हो जाती है। उत्प्रेरित अभिक्रियाएं, अनुत्प्रेरित अभिक्रियाओं की अपेक्षा उच्च दर से संपन्न होती हैं। जब किसी एंजाइम द्वारा उत्प्रेरित अभिक्रिया की दर बिना उत्प्रेरण के संपन्न होने वाली अभिक्रिया से बहुत अधिक होती है। उदाहरणार्थ:



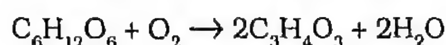
$$\underset{\text{कार्बनडाइऑक्साइड}}{CO_2} + \underset{\text{जल}}{H_2O} \xrightarrow{\text{कार्बोनिक एनहाइड्रेज}} \underset{\text{कार्बोनिक अम्ल}}{H_2CO_3}$$

यह अभिक्रिया बहुत मंद गति से होती है जिसमें एक घंटे में कार्बोनिक अम्ल के 200 अणुओं का निर्माण होता है, लेकिन उपरोक्त अभिक्रिया कोशिका द्रव्य में उपस्थित एंजाइम कार्बोनिक एनहाइड्रेज की उपस्थिति में तीव्रगति से संपन्न होती है, जिसके कार्बोनिक अम्ल के 600000 अणु प्रति सेकेंड बनते हैं। एंजाइम ने इस क्रिया की दर को 10 लाख गुना बढ़ा दिया। एंजाइम की यह शक्ति वास्तव में अविश्वसनीय लगती है।

हजारों प्रकार के एंजाइम होते हैं जो विशेष प्रकार की रासायनिक व उपापचयी अभिक्रियाओं को उत्प्रेरित करते हैं। बहुचरणीय रासायनिक अभिक्रियाओं में जहाँ प्रत्येक चरण एक ही जटिल एंजाइम या विभिन्न प्रकार के एंजाइम से उत्प्रेरित होती है, तो इन्हें उपापचयी पथ कहते हैं। जैसे उदाहरण-



ग्लूकोज $\rightarrow$ 2 पाइरूविक अम्ल

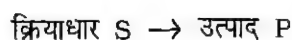


$$C_6H_{12}O_6 + O_2 \rightarrow 2C_3H_4O_3 + 2H_2O$$

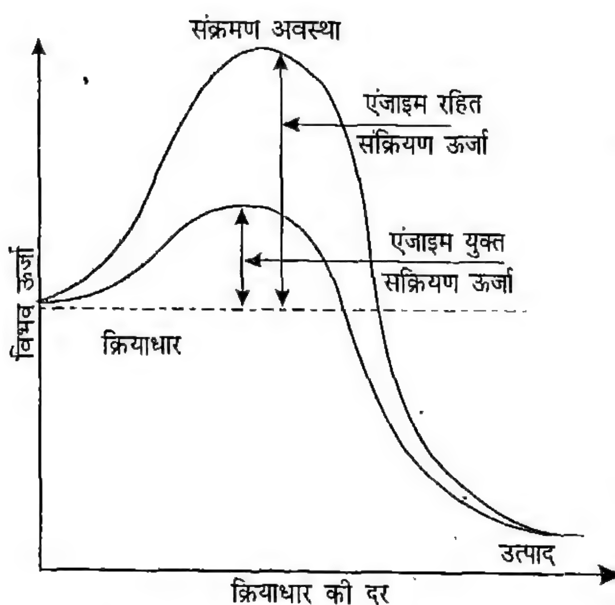
ग्लूकोज से पाइरूविक अम्ल का निर्माण एक रासायनिक पथ द्वारा होता है, जिसमें दस विभिन्न प्रकार के एंजाइम उपापचयी अभिक्रिया को उत्प्रेरित करते हैं। आप अध्याय 14 में उपरोक्त अभिक्रियाओं के बारे में अध्ययन करेंगे। इस अवस्था में आपको जान लेना चाहिए कि एक ही उपापचयी पथ एक या दो अतिरिक्त अभिक्रियाओं के द्वारा विभिन्न प्रकार के उपापचयी उत्पाद बनाते हैं। हमारी कंकाली पेशियों में अनॉक्सी स्थिति में लैक्टिक अम्ल का निर्माण होता है जबकि सामान्य ऑक्सी स्थिति में पाइरूविक अम्ल का निर्माण होता है। खमीर में किण्वन के दौरान उपरोक्त पथ द्वारा इथेनाल (एल्कोहल) का निर्माण होता है। विभिन्न दिशाओं में विभिन्न प्रकार के उत्पाद का निर्माण संभव है।

9.12.2 एंजाइम द्वारा उच्च दर से रासायनिक रूपांतरण कैसे होता है?

इसे समझने के लिए एंजाइम के बारे में थोड़ा विस्तृत अध्ययन करना पड़ेगा। सक्रिय स्थल के बारे में हम पहले ही पढ़ चुके हैं। रासायनिक या उपापचयी रूपांतरण एक अभिक्रिया होती है। जो रसायन (Chemical) उत्पाद में रूपांतरित होता है, उसे क्रियाधार (Substrate) कहते हैं। एंजाइम जो एक सक्रिय स्थल सहित एक त्रिविम संरचना की प्रोटीन है, जो एक क्रियाधार को उत्पाद में बदलता है। सांकेतिक रूप में इसे निम्न ढंग से चित्रित कर सकते हैं।


क्रियाधार S $\longrightarrow$ उत्पाद P

क्रियाधार (S) एंजाइम के सक्रिय स्थल जो दरार या पुटिका के रूप में होता है, से जुड़ जाता है। क्रियाधार सक्रिय स्थल की ओर जाते हैं। इस प्रकार आवश्यक एंजाइम-क्रियाधार सम्मिश्र (ES) का अविकल्पीय निर्माण होता है। ई (E) एंजाइम को प्रदर्शित करता है। इस समूह का निर्माण एक अल्पकालिक घटना है। क्रियाधार एंजाइम के सक्रिय स्थल से जुड़ने की अवस्था में क्रियाधार की नई संरचना का निर्माण होता है जिसे संक्रमण अवस्था-संरचना कहते हैं। इसके बाद शीघ्र ही प्रत्याशित बंध के टूटने या बनने के उपरांत सक्रिय स्थल से उत्पाद अवमुक्त होता है। दूसरे शब्दों में क्रियाधार की संरचना उत्पाद की संरचना में रूपांतरित हो जाती है। रूपांतरण का यह पथ तथा कथित संक्रमण अवस्था के द्वारा होता है। स्थाई क्रियाधार व उत्पाद के बीच में बहुत सारी 'रूपांतरित संरचनात्मक अवस्था' हो सकती है। इस कथन का आशय है कि बनने वाली सभी मध्यवर्ती संरचनात्मक अवस्था अस्थाई होती है। स्थाइत्व का संबंध अणु की ऊर्जा अवस्था या संरचना से जुड़ा होता है। यदि इसे चित्रात्मक लेखाचित्र के रूप में प्रदर्शित किया जाए तो यह चित्र 9.6 के अनुरूप होगा।



चित्र 9.6: सक्रिमण ऊर्जा की संकल्पना

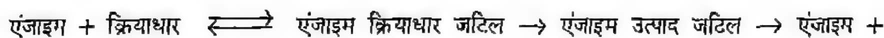
y- अक्ष अंतर्निहित ऊर्जा अंश को व्यक्त करता है। x- अक्ष संरचनात्मक रूपांतरण की या वह अवस्था जिसका निर्माण मध्यवर्ती संरचना द्वारा होता है, की प्रगति को व्यक्त करता है। दो चीजें ध्यान देने योग्य हैं। क्रियाधार (S) व उत्पाद (p) के बीच ऊर्जा स्तर में अंतर। यदि उत्पाद क्रियाधार से नीचे स्तर का है तो अभिक्रिया बाह्य उष्मीय होती है। इस अवस्था में उत्पाद निर्माण हेतु ऊर्जा आपूर्ति (गर्म करने से) की आवश्यकता नहीं होती है। फिर भी चाहे यह बाह्यउष्मीय या स्वतः प्रवर्तित अभिक्रिया या अंतःउष्मीय या ऊर्जा आवश्यक अभिक्रिया हो क्रियाधार को उच्च ऊर्जा अवस्था या संक्रमण अवस्था से गुजरना होता है। क्रियाधार व संक्रमण अवस्था के बीच औसत ऊर्जा के अंतर को 'सक्रियण ऊर्जा' (Activation energy) कहते हैं।

एंजाइम ऊर्जा अवरोध को घटाकर क्रियाधार से उत्पाद के आसान रूपांतरण में सहयोग करता है।

9.12.3 एंजाइम क्रिया की प्रकृति

प्रत्येक एंजाइम (E) के अणु में क्रियाधार-बंधन-स्थल (Substrate binding site) मिलता है जो क्रियाधार (s) से बंध कर सक्रिय एंजाइम-क्रियाधार सम्मिश्र (ES) का निर्माण करता है। यह सम्मिश्र अल्पावधि का होता है, जो उत्पाद (P) एंव अपरिवर्तित एंजाइम में विघटित हो जाता है इसके पूर्व मध्यावस्था के रूप में एंजाइम उत्पाद (EP) जटिल का निर्माण होता है।

एंजाइम-क्रियाधार जटिल (ES) का निर्माण उत्प्रेरण के लिए आवश्यक होता है।



एंजाइम क्रिया के उत्प्रेरक चक्र को निम्न चरणों में व्यक्त किया जा सकता है-

1. सर्वप्रथम क्रियाधार सक्रिय स्थल में व्यवस्थित होकर एंजाइम के सक्रिय स्थल से बँध जाता है।
2. बँधने वाला क्रियाधार एंजाइम के आकार में इस प्रकार से बदलाव लाता है कि क्रियाधार एंजाइम से मजबूती से बँध जाता है।
3. एंजाइम का सक्रिय स्थल अब क्रियाधार के काफी समीप होता है जिसके परिणामस्वरूप क्रियाधार के रासायनिक बंध टूट जाते हैं और नए एंजाइम उत्पाद जटिल का निर्माण होता है।
4. एंजाइम नवनिर्मित उत्पाद को अवमुक्त कर... है व एंजाइम स्वतंत्र होकर क्रियाधार के दूसरे अणु से बँधने के लिए तैयार हो जाता है। इस प्रकार पुनः उत्प्रेरक चक्र प्रारंभ हो जाता है।

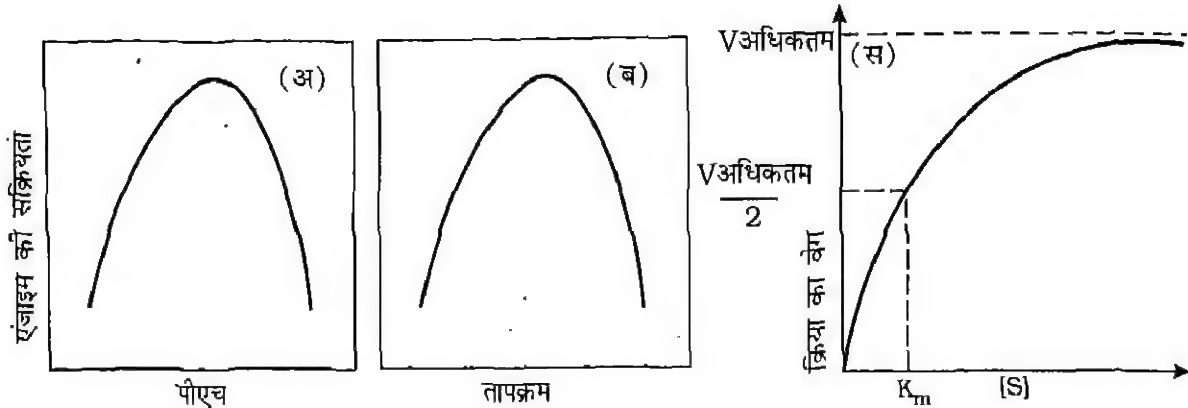
9.12.4 एंजाइम क्रियाविधि को प्रभावित करने वाले कारक

जो कारक प्रोटीन की तृतीयक संरचना को परिवर्तित करते हैं, वे एंजाइम की सक्रियता को भी प्रभावित करते हैं; जैसे- तापक्रम, पी.एच. (pH)। क्रियाधार की सांद्रता में परिवर्तन या किसी विशिष्ट रसायन का एंजाइम से बंधन, उसकी प्रक्रिया को नियंत्रित करते हैं।

तापक्रम व पी एच (pH)

एंजाइम सामान्यतः तापक्रम व पी एच के लघु परिसर में कार्य करते हैं (चित्र 9.7)। प्रत्येक एंजाइम की अधिकतम क्रियाशीलता एक विशेष तापक्रम व पी एच पर ही होती है, जिसे क्रमशः ईष्टतम तापक्रम व पी एच कहते हैं। इस ईष्टतम मान के ऊपर या नीचे होने से क्रियाशीलता घट जाती है। निम्न तापक्रम एंजाइम को अस्थाई रूप से निष्क्रिय अवस्था में सुरक्षित रखता है, जबकि उच्च तापक्रम एंजाइम की क्रियाशीलता को समाप्त कर देता है; क्योंकि उच्च तापक्रम एंजाइम के प्रोटीन को विकृत कर देता है।

क्रियाधार की सांद्रता (s) के बढ़ने के साथ-साथ पहले तो एंजाइम क्रिया की गति (v) बढ़ती है। अभिक्रिया अंततोगत्वा सर्वोच्च गति (Vmax) प्राप्त करने के बाद क्रियाधार



चित्र 9.7 (अ) पी.एच. (ब) तापक्रम तथा (स) क्रियाधार की सांद्रता का एंजाइम सक्रियता पर परिवर्तन का प्रभाव

की सांद्रता बढ़ने पर भी अग्रसर नहीं होती है। ऐसा इसलिए होता है कि एंजाइम के अणुओं की संख्या क्रियाधार के अणुओं से कहीं कम होती हैं और इन अणुओं से एंजाइम के संतृप्त होने के बाद एंजाइम का कोई भी अणु क्रियाधार के अतिरिक्त अणुओं से बंधन करने के लिए मुक्त नहीं बचता है, (चित्र 9.7)।

किसी भी एंजाइम की क्रियाशीलता विशिष्ट रसायनों की उपस्थिति में संवेदनशील होती है जो एंजाइम से बँधते हैं। जब रसायन का एंजाइम से बँधने के उपरांत इसकी क्रियाशीलता बंद हो जाती है तो इस प्रक्रिया को **संदमन** (Inhibition) व उस रसायन को **संदमक** (Inhibitor) कहते हैं।

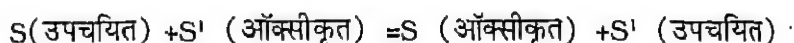
जब संदमक अपनी आणुविक संरचना में क्रियाधार से काफी समानता रखता है और एंजाइम की क्रियाशीलता को संदमित करता हो तो इसे **प्रतिस्पर्धात्मक संदमन** (Competitive Inhibitor)कहते हैं। संदमक की क्रियाधार से निकटतम संरचनात्मक समानता के फलस्वरूप यह क्रियाधार से एंजाइम के क्रियाधार-बंधक स्थल से बंधते हुए प्रतिस्पर्धा करता है। परिणामस्वरूप क्रियाधार, क्रियाधार बंधक स्थल से बंध नहीं पाता, जिसके फलस्वरूप एंजाइम क्रिया मंद पड़ जाती है। उदाहरण के लिए, सक्सीनिक डिहाइड्रोजिनेज का मेलोनेट द्वारा संदमन जो संरचना में क्रियाधार सक्सीनेट से निकट की समानता रखता है। ऐसे प्रतिस्पर्धी संदमकों का अक्सर उपयोग जीवाणु जन्म रोगजनकों (Bacterial Pathogens) के नियंत्रण हेतु किया जाता है।

9.12.5 एंजाइम का नामकरण व वर्गीकरण

हजारों एंजाइमों की खोज, विलगन व अध्ययन किया जा चुका है। एंजाइम द्वारा विभिन्न अभिक्रिया के उत्प्रेरण के आधार पर, इन्हें विभिन्न समूहों में वर्गीकृत किया गया है। एंजाइम को 6 वर्गों व प्रत्येक वर्ग को 4-13 उपवर्गों में विभाजित किया गया है। जिनका नामकरण चार अंकीय संख्या पर आधारित है।

ऑक्सीडोरिडक्टेजेज/डीहाइड्रोजीनेजेज

एंजाइम जो दो क्रियाधारकों S व के S' बीच ऑक्सीअपचयन को उत्प्रेरित करते हैं जैसे

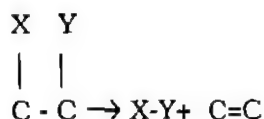

S(उपचयित) +S' (ऑक्सीकृत) =S (ऑक्सीकृत) +S' (उपचयित)

ट्रांसफरेजेज : एंजाइम क्रियाधारकों के एक जोड़े S व S' के बीच एक समूह (हाइड्रोजन के अतिरिक्त) के स्थानातंरण को उत्प्रेरित करते हैं। जैसे-


$$S\text{-}G + S' \rightarrow S + S'G$$

हाइड्रोलेजेज : एंजाइम इस्टर, ईथर, पेप्टाइड, ग्लाइकोसाइडिक, कार्बन-कार्बन, कार्बन-हैलाइड या फॉस्फोरस-नाइट्रोजन बंधों का जल-अपघटन करते हैं।

लायेजेज : जल अपघटन के अतिरिक्त विधि द्वारा एंजाइम क्रियाधारकों से समूहों के अलग होने को उत्प्रेरित करते हैं, जिसके फलस्वरूप द्विबंधों का निर्माण होता है।



आइसोमरेजेज : वे सभी एंजाइम जो प्रकाशीय, ज्यामितिय व स्थितीय समावयवों के अंतर-रूपांतरण को उत्प्रेरित करते हैं।

लाइगेजेज : एंजाइम दो यौगिकों के आपस में जुड़ने को उत्प्रेरित करते हैं, जैसे एंजाइम जो कार्बन-ऑक्सीजन, कार्बन-सल्फर, कार्बन-नाइट्रोजन व फॉस्फोरस-ऑक्सीजन बंधों के निर्माण के लिए उत्प्रेरित करते हैं।

9.12.6 सहकारक (Co-factors)

एंजाइम एक या अनेक बहुपेप्टाइड शृंखलाओं से मिलकर बना होता है। फिर भी कुछ स्थितियों में इतर प्रोटीन अवयव, जिसे सह-कारक कहते हैं, एंजाइम से बंधकर उसे उत्प्रेरक सक्रिय बनाते हैं। इन उदाहरणों में एंजाइम के केवल प्रोटीन भाग को एपोएंजाइम कहते हैं। सह-कारक तीन प्रकार के होते है : प्रोस्थेटिक-समूह, सह-एंजाइम व धातु-आयन।

प्रोस्थेटिक-समूह कार्बनिक यौगिक होते हैं और यह अन्य सह-कारकों से इस रूप में भिन्न होते हैं कि ये एपोएंजाइम्स से दृढ़ता से बंधे होते हैं। उदाहरणस्वरूप एंजाइम परऑक्सीडेज व केटलेज जो हाइड्रोजन पराक्साइड को ऑक्सीजन व पानी में विखंडित करते हैं, हीम प्रोस्थेटिक समूह होता है जो एंजाइम के सक्रिय स्थल से जुड़ा होता है।

सह एंजाइम भी कार्बनिक यौगिक होते हैं और इनका संबंध एपोएंजाइम से अस्थाई होता है जो सामान्यतया उत्प्रेरण के दौरान बनता है। सह-एंजाइम विभिन्न एंजाइम उत्प्रेरित अभिक्रियाओं में सह-कारक के रूप में कार्य करते हैं। अनेक सह-एंजाइम का मुख्य रासायनिक अवयव विटामिन्स होते हैं जैसे- सहएंजाइम नीकोटीनेमाइड एडेनीन डाईन्यूक्लीयोटाइड (NAD) नीकोटीनेमाइड एडेनीन डाईन्यूक्लीयोटाइड फॉस्फेट (NADP) विटामिन नियासीन से जुड़े होते हैं।

जो सक्रिय स्थल पर पार्श्व-शृंखला से समन्वयन बंध बनाते हैं व उसी समय एक या एक से अधिक समन्वयन बंध द्वारा क्रियाधारकों से जुड़े होते हैं। जैसे-प्रोटीयोलिटीक एंजाइम कार्बाक्सीपेप्टीडेज से जिंक एक सह-कारक के रूप में जुड़ा होता है।

एंजाइम से यदि सह-कारक को अलग कर दिया जाय तो इनकी उत्प्रेरक क्रियाशीलता समाप्त हो जाती है, इससे स्पष्ट है कि एंजाइम की उत्प्रेरक क्रियाशीलता हेतु ये निर्णायक भूमिका अदा करते हैं।

सारांश

जीवों में आश्चर्यजनक विभिन्नता मिलती है। इनकी रासायनिक संघटन व उपापचयी अभिक्रियाओं में असाधारण समानताएं मिलती हैं। जीव ऊतकों व निर्जीव द्रव्यों में पाए जाने वाले तत्वों के संघटन का यदि गुणात्मक परीक्षण किया जाए तो वे काफी समान होते हैं। फिर भी सूक्ष्म परीक्षण के बाद यह स्पष्ट है कि यदि जीव तंत्र व निर्जीव द्रव्यों की तुलना की जाए तो जीव तंत्र में कार्बन, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन की अपेक्षाकृत अधिक बहुलता होती है। जीव में सर्वाधिक प्रचुर रसायन जल मिलता है। कम अणुभार (1000 डाल्टन से कम) वाले हजारों जैव अणु होते हैं। जीवों में एमीनो अम्ल, एकलसैकेराइडस, द्विक्शैकेराइडस शर्कराएं, वसा, अम्ल, ग्लिसरॉल, न्यूक्लियोटाइड, न्यूक्लियोसाइडस व नाइट्रोजन क्षार जैसे कुछ कार्बनिक यौगिक मिलते हैं। इनमें 21 प्रकार के एमीनो अम्ल व 5 प्रकार के न्यूक्लीयोटाइडस मिलते हैं। वसा व तेल ग्लिसराइडस होते हैं, जिनमें वसा अम्ल, ग्लिसराल से इस्टरीकृत होता है। फॉस्फोलिपिडस में फॉस्फोरीकृत नाइट्रोजनीय यौगिक मिलते हैं।

जीव तंत्रों में केवल तीन प्रकार के वृहत्अणु जैसे- प्रोटीन, न्यूक्लीक अम्ल व बहुसैकेराइडस मिलते हैं। लिपिड्स का झिल्ली संबंधित होने के कारण वृहत् आण्विक अंश में रहते हैं। जैव वृहत् अणु बहुलक होते है। वे विभिन्न घटकों से बने होते हैं। न्यूक्लीक अम्ल (डी.एन.ए. व आर.एन.ए.) न्यूक्लिओटाइडस से मिलकर बने होते हैं। जैव वृहत् अणुओं में संरचनाओं का पदानुक्रम जैसे- प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक व चतुष्कीय संरचनाएं मिलती हैं। न्यूक्लीक अम्ल आनुवंशिक द्रव्य की कोशिकाभित्तियों के रूप में कार्य करता है। बहुसैकेराइडस पौधों, कवकों व संधिपादों के बाह्य कंकाल के घटक हैं। ये ऊर्जा के संचित रूप (जैसे-स्टार्च व ग्लाइकोजेन) में भी मिलते हैं। प्रोटीन विभिन्न कोशिकीय कार्यों में सहायता करते हैं। उनमें से कुछ एंजाइम्स, प्रतिरक्षी, ग्राही, हार्मोन्स, व दूसरे संरचनात्मक प्रोटीन होते हैं। प्राणी जगत में सर्वाधिक प्रचुरता में मिलने वाला प्रोटीन कोलेजेन व संपूर्ण जैवमंडल मे सर्वाधिक प्रचुरता में मिलने वाला प्रोटीन रूबीस्को (RUBISCO) है।

एंजाइम्स प्रोटीन होते हैं जो कोशिकाओं में जैव रासायनिक क्रियाओं की उत्प्रेरक शक्ति होते हैं। प्रोटीनमय एंजाइम्स क्रियाशीलता हेतु ईष्टतम तापक्रम व पी.एच. (ph) की आवश्यकता होती हैं। एंजाइम्स अभिक्रिया की दर को काफी तीव्र कर देते हैं। न्यूक्लीक अम्ल आनुवंशिक सूचनाओं के वाहक होते हैं, जो इसे पैतृक पीढ़ी से संतति में आगे बढ़ाते हैं।

अभ्यास

1. वृहत् अणु क्या है? उदाहरण दीजिए?
2. ग्लाइकोसिडिक, पेप्टाइड, तथा फॉस्फो-डाइस्टर बंधों का वर्णन कीजिए?
3. प्रोटीन की तृतीयक संरचना से क्या तात्पर्य है?
4. 10 ऐसे रुचिकर सूक्ष्म जैव अणुओं का पता लगाइए जो कम अणुभार वाले होते हैं व इनकी संरचना बनाइए? ऐसे उद्योगों का पता लगाइए जो इन यौगिकों का निर्माण विलगन द्वारा करते हैं? इनको खरीदने वाले कौन है? मालूम कीजिए?
5. प्रोटीन में प्राथमिक संरचना होती है, यदि अपको जानने हेतु ऐसी विधि दी गई है, जिसमें प्रोटीन के दोनों किनारों पर अमीनो अम्ल है तो क्या आप इस सूचना को प्रोटीन की शुद्धता अथवा समागंता (homogeneity) से जोड़ सकते हैं?
6. चिकित्सार्थ अभिकर्ता (therapeutic agents) के रूप में प्रयोग में आने वाले प्रोटीन का पता लगाइए व सूचीबद्ध कीजिए। प्रोटीन की अन्य उपयोगिताओं को बताइए (जैसे सौंद्रर्य-प्रसाधन आदि)।
7. ट्राइग्लिसराइड के संगठन का वर्णन कीजिए।
8. क्या आप प्रोटीन की अवधारणा के आधार पर वर्णन कर सकते हैं कि दूध का दही अथवा योगर्ट में परिवर्तन किस प्रकार होता है?
9. क्या आप व्यापारिक दृष्टि से उपलब्ध परमाणु मॉडल (बल व स्टिक नमूना) का प्रयोग करते हुए जैवअणुओं के उन प्रारूपों को बना सकते हैं?
10. अमीनो अम्लों को दुर्बल क्षार से अनुमापन (Titrate) कर, अमीनो अम्ल में वियोजी क्रियात्मक समूहों का पता लगाने का प्रयास कीजिए?
11. ऐलेनीन अमीनो अम्ल की संरचना बताइए?
12. गोंद किससे बने होते हैं? क्या फेविकोल इससे भिन्न है?
13. प्रोटीन, वसा व तेल अमीनो अम्लों का विश्लेषणात्मक परीक्षण बताइए एवं किसी भी फल के रस, लार, पसीना तथा मूत्र में इनका परीक्षण करें?
14. पता लगाइए कि जैव मंडल में सभी पादपों द्वारा कितने सेल्यूलोज का निर्माण होता है। इसकी तुलना मनुष्यों द्वारा उत्पादित कागज से करें। मानव द्वारा प्रतिवर्ष पादप पदार्थों की कितनी खपत की जाती है? इसमें वनस्पतियों की कितनी हानि होती है?
15. एंजाइम के महत्वपूर्ण गुणों का वर्णन कीजिए?

अध्याय 10

कोशिका चक्र और कोशिका विभाजन

क्या आप जानते हैं कि सभी जीव चाहे सबसे बड़ा ही क्यों न हो, जीवन का प्रारंभ एक कोशिका से करता है ? आप आश्चर्यचकित हो सकते हैं कि कैसे एक कोशिका से इतने बड़े जीव का निर्माण होता है। वृद्धि व जनन सभी कोशिकाओं का ही नहीं? सभी सजीवों की विशेषता है। सभी कोशिकाएं दो भागों में विभाजित होकर जनन करती हैं, जिसमें प्रत्येक पैतृक कोशिका विभाजित होकर दो नई संतति कोशिकाओं का निर्माण करती है। ये नव निर्मित संतति कोशिकाएं स्वयं वृद्धि व विभाजन करती हैं। एक पैतृक कोशिका और इसकी संतति वृद्धि व विभाजन के बाद एक नई कोशिकीय जनसंख्या का निर्माण करती है। दूसरे शब्दों में, इस प्रकार की वृद्धि व विभाजन के कई चक्रों के बाद एक कोशिका से ऐसी संरचना का निर्माण होता है, जिसमें कई लाख कोशिकाएं होती हैं।

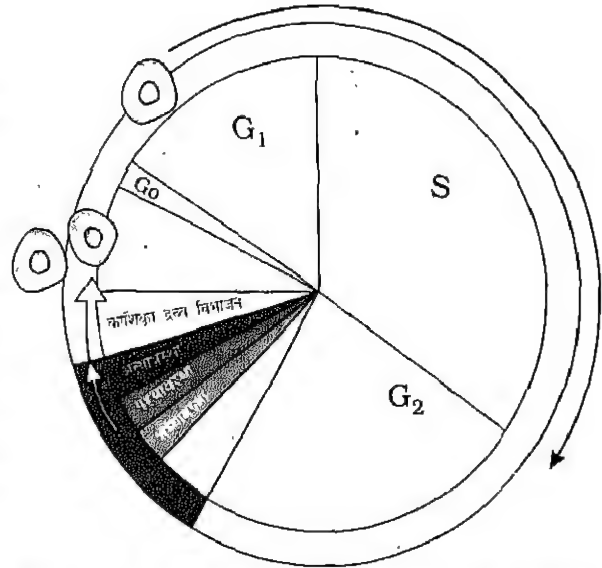
10.1 कोशिका चक्र

कोशिका विभाजन सभी जीवों के लिए एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। एक कोशिका विभाजन के दौरान डीएनए प्रतिकृति व कोशिका वृद्धि होती है। ये सभी प्रक्रियाएं जैसे- कोशिका विभाजन, डीएनए प्रतिकृति और कोशिका वृद्धि एक दूसरे के साथ समायोजित होकर, इस प्रकार संपन्न होती हैं कि कोशिका विभाजन सही होता है व संतति कोशिकाओं में इनकी पैतृक कोशिकाओं वाला जीनोम होता है। घटनाओं का यह अनुक्रम जिसमें कोशिका अपने जीनोम का द्विगुणन व अन्य संघटकों का संश्लेषण और तत्पश्चात विभाजित होकर दो नई संतति कोशिकाओं का निर्माण करती हैं, इसे **कोशिका चक्र** कहते हैं। यद्यपि कोशिका वृद्धि (कोशिकाद्रव्यीय वृद्धि के संदर्भ में) एक सतत प्रक्रिया है, जिसमें डीएनए का संश्लेषण कोशिका चक्र की किसी एक विशिष्ट अवस्था में होता

है। कोशिका विभाजन के दौरान, प्रतिकृति गुणसूत्र (डीएनए) जटिल घटना क्रम के द्वारा संतति केंद्रकों में वितरित हो जाते हैं। ये सारी घटनाएं आनुवंशिक नियंत्रण के अंतर्गत होती हैं।

10.1.1 कोशिका चक्र की प्रावस्थाएं

एक प्ररूपी (यूकेरियोटिक) चक्र का उदाहरण मनुष्य की कोशिका के संवर्द्धन में होता है, जो लगभग प्रत्येक चौबीस घंटे में विभाजित होती है (चित्र 10.1)। यद्यपि कोशिका चक्र की यह अवधि एक जीव से दूसरे जीव एवं कोशिका से दूसरी कोशिका प्रारूप के लिए बदल सकती है। उदाहरणार्थ- यीस्ट के कोशिका चक्र के पूर्ण होने में लगभग नब्बे मिनट लगते हैं।



चित्र 10.1 कोशिका चक्र का चित्रात्मक दृश्य जो एक कोशिका को दो कोशिकाओं के बनाने को इंगित करता है।

कोशिका चक्र की दो मूल प्रावस्थाएं होती हैं:

1. **अंतरावस्था** (Interphase)
2. **एम प्रावस्था** (सूत्री विभाजन) (Mitosis Phase)

सूत्री विभाजन (एम अवस्था) उस अवस्था को व्यक्त करता है, जिसमें वास्तव में कोशिका विभाजन या समसूत्री विभाजन होता है और अंतरावस्था दो क्रमिक एम प्रावस्थाओं के बीच की प्रावस्था को व्यक्त करता है। यह ध्यान देने योग्य महत्व की बात है कि मनुष्य की कोशिका के औसतन अवधि चौबीस घंटे की कोशिका चक्र में कोशिका विभाजन सिर्फ लगभग एक घंटे में पूर्ण होता है, जिसमें कोशिका चक्र की कुल अवधि की 95 प्रतिशत से अधिक की अवधि अंतरावस्था में ही व्यतीत होती है।

एम प्रावस्था का आरंभ केंद्रक के विभाजन (**कैरियो काइनेसिस**) से होता है,जो कि संगत संतति गणसूत्र के पृथक्करण (सूत्री विभाजन) के समतुल्य होता है और इसका अंत कोशिकाद्रव्य विभाजन (**साइटोकाइनेसिस**) के साथ होता है। अंतरावस्था को विश्राम प्रावस्था भी कहते हैं। यह वह प्रावस्था है जिसमें कोशिका विभाजन के लिए तैयार होती है तथा इस दौरान क्रमबद्ध तरीके से कोशिका वृद्धि व डीएनए का प्रतिकृतिकरण दोनों होते हैं।

अंतरावस्था को तीन प्रावस्थाओं में विभाजित किया गया है :

- **पश्च सूत्री अंतरकाल प्रावस्था** (G_1 Phase)
- **संश्लेषण प्रावस्था** (S Phase)
- **पूर्व-सूत्री विभाजन अंतरालकाल प्रावस्था** (G_2 Phase)

पश्च सूत्री अंतरकाल प्रावस्था (जी₁फेस) समसूत्री विभाजन एवं डीएनए प्रतिकृतिकरण के बीच अंतराल को प्रदर्शित करता है। जी, प्रावस्था में कोशिका उपापचयी रूप से सक्रिय होती हैं एवं लगातार वृद्धि करती है, परंतु इसका डीएनए प्रतिकृति नहीं करता। एस फेस या **संश्लेषण प्रावस्था** के दौरान डीएनए का निर्माण एवं इसकी प्रतिकृति होती है। इस दौरान डीएनए की मात्रा दुगुनी हो जाती है। यदि डीएनए की प्रारंभिक मात्रा को 2 C से

पादप व प्राणी अपने जीवन काल कैसे वृद्धि करते हैं? क्या पौधों में सभी कोशिकाएं जीवन भर विभाजित होती रहती हैं? क्या आप सोचते हैं कि कुछ कोशिकाएं सभी पौधों एवं प्राणियों के जीवन में हमेशा विभाजित होती रहती हैं? क्या आप उच्चकोटि के पादप में उस ऊतक का नाम व स्थान बता सकते हैं, जिसकी कोशिकाएं जीवन भर विभाजित होती रहती हैं? शीर्षस्थ कोशिका में पाए जाने वाली कोशिका जीवन भर विभाजित होती रहती है, इसलिए उन्हें विभज्योतिकी ऊतक कहते हैं। क्या प्राणियों में भी ऐसा ही विभज्योतिकी ऊतक मिलता है?

आप प्याज की जड़ की शीर्ष पर पाई जाने वाली कोशिका में सूत्री विभाजन का अध्ययन कर चुके होंगे। इसकी प्रत्येक कोशिका में 14 गुणसूत्र होते हैं। क्या आप बता सकते हैं कि G_1 अवस्था, S एवं M प्रावस्था के बाद कोशिका में कितने गुणसूत्र होंगे? यदि कोशिका में M प्रावस्था के बाद डीएनए की मात्रा 2C है तो G_1, S तथा G_2 प्रावस्था के बाद, इसकी कितनी मात्रा होगी।

चिह्नित किया जाए तो यह बढ़कर 4 C हो जाती है, यद्यपि गणसूत्र की संख्या में कोई वृद्धि नहीं होती। यदि G_1 प्रावस्था में कोशिका द्विगुणित है या 2n गुणसूत्र है तो S प्रावस्था के बाद भी इसकी संख्या वही रहती है, जो G_1 अवस्था में थी अर्थात 2n होगी।

प्राणी कोशिका में S प्रावस्था के दौरान केंद्रक में डीएनए का जैसे ही प्रतिकृतिकरण प्रारंभ होता है वैसे ही तारककेंद्र का कोशिकाद्रव्य में प्रतिकृतिकरण होने लगता है। कोशिका वृद्धि के साथ सूत्री विभाजन हेतु G_2 प्रावस्था के दौरान प्रोटीन का निर्माण होता है।

प्रौढ़ प्राणियों में कुछ कोशिकाएं विभाजित नहीं होती (जैसे हृदय कोशिका) और अनेक दूसरी कोशिकाएं यदा-कदा विभाजित होती है; ऐसा तब ही होता है जब क्षतिग्रस्त या मृत कोशिकाओं को बदलने की आवश्यकता होती है। ये कोशिकाएं जो आगे विभाजित नहीं होती है G_1 अवस्था से निकलकर निष्क्रिय अवस्था में पहुँचती हैं, जिसे कोशिका चक्र की **शांत अवस्था** (G_0) कहते हैं। इस अवस्था की कोशिका उपापचयी रूप से सक्रिय होती है लेकिन यह विभाजित नहीं होती। इनका विभाजन जीव की आवश्यकतानुसार होता है।

प्राणियों में सूत्री विभाजन केवल द्विगुणित कायिक कोशिकाओं में ही दिखाई देता है। इसके विपरीत पादपों में सूत्री विभाजन अगुणित एवं द्विगुणित दोनों कोशिकाओं में दिखाई देता है। पादपों में पीढ़ी एकांतरण (अध्याय 3) के उदाहरणों को याद करते हुए पादप जातियों और अवस्थाओं की पहचान करें, जिनमें अगुणित कोशिकाओं में सूत्री विभाजन दिखाई पड़ता है।

10.2 सूत्री विभाजन अवस्था (M प्रावस्था)

यह कोशिका चक्र की सर्वाधिक नाटकीय अवस्था होती है, जिसमें कोशिका के सभी घटकों का वृहद् पुनर्गठन होता है। जनक व संतति कोशिका में गुणसूत्रों की संख्या बराबर होती है, इसलिए इसे **सम विभाजन** कहते हैं। सुविधा के लिए सूत्री विभाजन को केंद्रक विभाजन की चार अवस्थाओं में विभाजित किया गया है। यहाँ यह समझ लेना आवश्यक है कि कोशिका विभाजन एक प्रगतिशील प्रक्रिया है और इसकी विभिन्न अवस्थाओं के बीच स्पष्ट रूप से विभाजन करना मुश्किल है। सूत्री विभाजन को चार अवस्थाओं में विभाजित किया गया है :

- **पूर्वावस्था** (Prophase)
- **मध्यावस्था** (Metaphase)
- **पश्चावस्था** (Anaphase)
- **अंत्यावस्था** (Telophase)

10.2.1 पूर्वावस्था

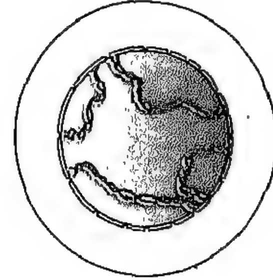
अंतरावस्था की S व G_2 अवस्था के बाद पूर्वावस्था सूत्री विभाजन का पहला पड़ाव है। S व G_2 अवस्था में डीएनए के नए सूत्र बन तो जाते हैं, लेकिन आपस में गुँथे होने के कारण स्पष्ट नहीं होते। गुणसूत्रीय पदार्थ के संघनन का प्रारंभ ही पूर्वावस्था की पहचान

है। गुणसूत्रीय संघनन की प्रक्रिया के दौरान ही गुणसूत्रीय द्रव्य स्पष्ट होने लगते हैं (चित्र 10.2 अ)।

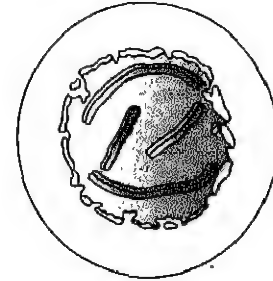
तारककेंद्र जिसका अतंरावस्था की S प्रावस्था के दौरान ही द्विगुणन हुआ था, अब कोशिका के विपरीत धुव्रों की ओर चलना प्रारंभ कर देता है।

पूर्वावस्था के पूर्ण होने के दौरान जो महत्वपूर्ण घटनाएं होती हैं उनकी निम्न विशेषताएं हैं:

- गुणसूत्रीय द्रव्य संघनित होकर ठोस गुणसूत्र बन जाता है। गुणसूत्र दो अर्धगुणसूत्रों से बना होता है, जो आपस में सेंट्रोमियर से जुड़े रहते हैं।
- समसूत्री तर्कु, सूक्ष्म नलिकाओं के जमावड़े की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है। कोशिका जीवद्रव्य के ये प्रोटीनयुक्त घटक इस प्रक्रिया में सहायता करते हैं। पूर्वावस्था के अंत में यदि कोशिका को सूक्ष्मदर्शी से देखा जाता है तो इसमें गॉल्जीकाय, अंतर्द्रव्यी जालिका, केंद्रिका व केंद्रक आवरण दिखाई नहीं देता है।

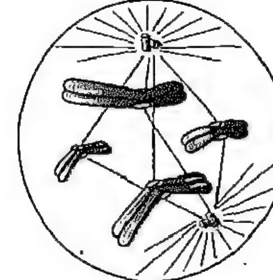


प्रारंभिक पूर्वावस्था

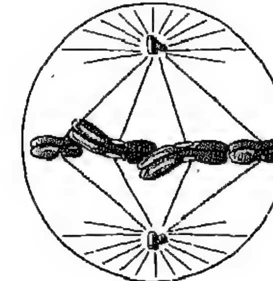


पश्चपूर्वावस्था

(अ)



मध्यावस्था की ओर परिवर्तन



मध्यावस्था

(ब)

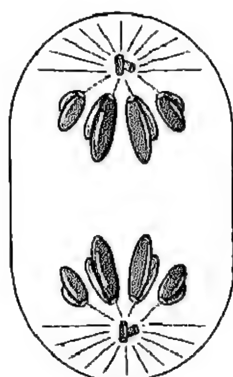
चित्र 10.2 अ एवं ब सूत्री विभाजन की अवस्थाओं का चित्रात्मक दृश्य

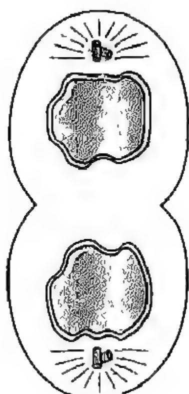
10.2.2 मध्यावस्था

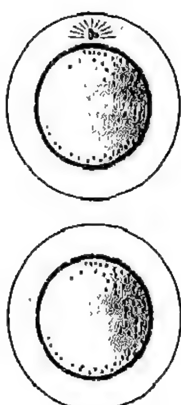
केंद्रक आवरण के पूर्णरूप से विघटित होने के साथ समसूत्री विभाजन की द्वितीय अवस्था प्रारंभ होती है, इसमें गुणसूत्र कोशिका के कोशिका द्रव्य में फैल जाते हैं। इस अवस्था तक गुणसूत्रों का संघनन पूर्ण हो जाता है और सूक्ष्मदर्शी से देखने पर ये स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगते हैं। यही वह अवस्था है जब गुणसूत्रों की आकृति का अध्ययन बहुत ही सरल तरीके से किया जा सकता है।

मध्यावस्था गुणसूत्र दो संतति अर्धगुणसूत्रों से बना होता है जो आपस में गुणसूत्रबिंदु से जुड़े होते हैं (चित्र 10.2ब)। गुणसूत्रबिंदु के सतह पर एक छोटा बिंब आकार की संरचना मिलती है जिसे काइनेटोकोर कहते हैं। सूक्ष्म नलिकाओं से बने हुए तर्कुतंतु के जुड़ने का स्थान ये संरचनाएं (काइनेटीकोर) हैं, जो दूसरी ओर कोशिका के केंद्र में स्थित गुणसूत्र से जुड़े होते हैं। मध्यावस्था में सभी गुणसूत्र मध्यरेखा पर आकर स्थित रहते हैं। प्रत्येक गुणसूत्र का एक अर्धगुणसूत्र एक ध्रुव से तर्कुतंतु द्वारा अपने काइनेटोकोर के द्वारा जुड़ जाता है, वहीं इसका संतति अर्धगुणसूत्र तर्कुतंतु द्वारा अपने काइनेटोकोर से विपरीत ध्रुव से जुड़ा होता है (चित्र 10.2 ब)। मध्यावस्था में जिस तल पर गुणसूत्र पंक्तिबद्ध हो जाते हैं, उसे **मध्यावस्था पट्टिका** कहते हैं। इस अवस्था की मुख्य विशेषता निम्नवत है:

- तर्कुतंतु गुणसूत्र के काइनेटोकोर से जुड़े रहते हैं।
- गुणसूत्र मध्यरेखा की ओर जाकर मध्यावस्था पट्टिका पर पंक्तिबद्ध होकर ध्रुवों से तर्कुतंतु से जुड़ जाते हैं।


पश्चावस्था
(स)


अंत्यावस्था
(द)


अंतरावस्था
(य)

चित्र 10.2 स से य सूत्री विभाजन की अवस्थाओं का चित्रात्मक दृश्य

10.2.3 पश्चावस्था

पश्चावस्था के प्रारंभ में मध्यावस्था पट्टिका पर आए प्रत्येक गुणसूत्र एक साथ अलग होने लगते हैं, इन्हें संतति अर्धगुणसूत्र कहते हैं जो कोशिका विभाजन के बाद बनने वाले नए संतति केंद्रक का गुणसूत्र बनेंगे, वे विपरीत ध्रुवों की ओर जाने लगते हैं। जब प्रत्येक गुणसूत्र मध्यांश पट्टिका से काफी दूर जाने लगता है तब प्रत्येक का गुणसूत्रबिंदु ध्रुवों की ओर होता है जो गुणसूत्रों को ध्रुवों की ओर जाने का नेतृत्व करते हैं, साथ ही गुणसूत्र की भुजाएं पीछे आती हैं (चित्र 10.2 स)। पश्चावस्था की निम्न विशेषताएं है :

- गुणसूत्रबिंदु विखंडित होते हैं और अर्धगुणसूत्र अलग होने लगते हैं।
- अर्धगुणसूत्र विपरीत ध्रुवों की ओर जाने लगते हैं।

10.2.4 अंत्यावस्था

सूत्री विभाजन की अंतिम अवस्था के प्रारंभ में अंत्यावस्था गुणसूत्र जो क्रमानुसार अपने ध्रुवों पर चले गए हैं; असंघनित होकर अपनी संपूर्णता को खो देते हैं। एकल गुणसूत्र दिखाई नहीं देता है व अर्धगुणसूत्र द्रव्य दोनों ध्रुवों की तरफ एक समूह के रूप में एकत्रित हो जाते हैं (चित्र 10.2 द)। इस अवस्था की मुख्य घटनाएं निम्नवत हैं:

- गुणसूत्र विपरीत ध्रुवों की ओर एकत्रित हो जाते हैं और इनकी पृथक पहचान समाप्त हो जाती है।
- गुणसूत्र समूह के चारों तरफ केंद्रक झिल्ली का निर्माण हो जाता है।
- केंद्रिका, गॉल्जीकाय व अंतर्द्रव्यी जालिका का पुनर्निर्माण हो जाता है।

10.2.5 कोशिकाद्रव्य विभाजन (Cytokinesis)

सूत्री विभाजन के दौरान द्विगुणित गुणसूत्रों का संतति केंद्रकों में संपृथकन होता है जिसे केंद्रक विभाजन (Karyokinesis) कहते हैं। कोशिका विभाजन संपन्न होने के अंत में कोशिका स्वयं एक अलग प्रक्रिया द्वारा दो संतति कोशिकाओं में विभाजित हो जाती है, इस प्रक्रिया को कोशिकाद्रव्य विभाजन कहते हैं (चित्र 10. 2 य)। प्राणी कोशिका का विभाजन जीवद्रव्यकला में एक खांचा बनने से संपन्न होता है। खांचों के लगातार गहरा होने व अंत में केंद्र में आपस में मिलने से कोशिका का कोशिकाद्रव्य दो भागों में बँट जाता है। यद्यपि पादप कोशिकाएं जो अपेक्षाकृत अप्रसारणीय कोशिका भित्ति से घिरी होती हैं अतः इनमें कोशिकाद्रव्य विभाजन दूसरी भिन्न प्रक्रियाओं द्वारा संपन्न होता है। पादप कोशिकाओं में नई कोशिका भित्ति निर्माण कोशिका के केंद्र से शुरू होकर बाहर की ओर पूर्व स्थित पार्श्व कोशिका भित्ति से जुड़ जाता है। नई कोशिकाभित्ति निर्माण एक साधारण पूर्वगामी रचना से प्रारंभ होता है जिसे **कोशिका पट्टिका** कहते हैं, जो दो सन्निकट कोशिकाओं की भित्तियों के बीच मध्य पट्टिका को दर्शाती है। कोशिकाद्रव्य विभाजन के समय कोशिका अंगक जैसे सूत्रकणिका (माइटोकॉड्रिया)

व प्लैस्टिड लवक का दो संतति कोशिकाओं में वितरण हो जाता है। कुछ जीवों में केंद्रक विभाजन के साथ कोशिकाद्रव्य का विभाजन नहीं हो पाता है; इसके परिणामस्वरूप एक ही कोशिका में कई केंद्रक बन जाते हैं। ऐसी बहुकेंद्रकी कोशिका को **संकोशिका** कहते हैं (उदाहरणार्थ- नारियल का तरल भ्रूणपोश)।

10.3 सूत्री कोशिका विभाजन का महत्व

सूत्री विभाजन या मध्यवर्तीय विभाजन केवल द्विगुणित कोशिकाओं में होता है। यद्यपि कुछ *निम्न श्रेणी के पादपों एवं सामाजिक कीटों में अगुणित कोशिकाएं भी सूत्री विभाजन द्वारा* विभाजित होती हैं। सूत्री विभाजन का एक प्राणी के जीवन में क्या महत्व है, इसको समझना काफी आवश्यक है।

क्या आप कुछ ऐसे उदाहरण जानते हैं जहाँ आपने अगुणित व द्विगुणित कीटों के बारे में पढ़ा है। इस विभाजन से बनने वाली द्विगुणित संतति कोशिकाएं साधारणतया समान आनुवंशिक अवयव वाली होती है। बहुकोशिकीय जीवधारियों की वृद्धि सूत्री विभाजन के कारण होती है। कोशिका वृद्धि के परिणामस्वरूप केंद्रक व कोशिकाद्रव्य के बीच का अनुपात अव्यवस्थित हो जाता है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि कोशिका विभाजित होकर केंद्रक कोशिकाद्रव्य अनुपात को बनाए रखे। सूत्री विभाजन का एक महत्वपूर्ण योगदान यह है कि इसके द्वारा कोशिका की मरम्मत होती है। अधिचर्म की उपरी सतह की कोशिकाएं, आहार नाल की भीतरी सतह की कोशिकाएं एवं रक्त कोशिकाएं निरंतर प्रतिस्थापित होती रहती है।

10.4 अर्धसूत्री विभाजन

लैंगिक प्रजनन द्वारा संतति के निर्माण में दो युग्मकों का संयोजन होता है, जिनमें अगुणित गुणसूत्रों का एक समूह होता है। युग्मक का निर्माण विशिष्ट द्विगुणित कोशिकाओं से होता है। यह विशिष्ट प्रकार का कोशिका विभाजन है, जिसके द्वारा बनने वाली अगुणित संतति कोशिकाओं में गुणसूत्रों की संख्या आधी हो जाती है। इस प्रकार के विभाजन को **अर्धसूत्री विभाजन** कहते हैं। लैंगिक जनन करने वाले जीवधारियों के जीवन चक्र में अर्धसूत्री विभाजन द्वारा अगुणित अवस्था उत्पन्न होती है एवं निषेचन द्वारा द्विगुणित अवस्था पुनःस्थापित होती है। पादपों एवं प्राणियों में युग्मकजनन के दौरान अर्धसूत्री विभाजन होता है, जिसके परिणामस्वरूप अगुणित युग्मक उत्पन्न होते हैं। अर्धसूत्री विभाजन की मुख्य विशेषताएं निम्नवत हैं:

- अर्धसूत्री विभाजन के दौरान केंद्रक व कोशिका विभाजन के दो अनुक्रमिक चक्र संपन्न होते हैं, जिसे **अर्धसूत्री I** व **अर्धसूत्री II** कहते हैं। इस विभाजन में डीएनए प्रतिकृति का सिर्फ एक चक्र पूर्ण होता है।
- S अवस्था में पैतृक गुणसूत्रों के प्रतिकृति के साथ समान संतति अर्धगुणसूत्र बनने के बाद अर्धसूत्री I अवस्था प्रारंभ होती है।
- अर्धसूत्री II विभाजन में समजात गुणसूत्रों का युगलन व पुनर्योजन होता है।

- अर्धसूत्री II के अंत में चार अगुणित कोशिकाएं बनती हैं। अर्धसूत्री विभाजन को निम्न अवस्थाओं में वर्गीकृत किया गया है :

अर्धसूत्री I	**अर्धसूत्री II**
पूर्वावस्था I	पूर्णावस्था II
मध्यावस्था I	मध्यावस्था II
पश्चावस्था I	पश्चावस्था II
अंत्यावस्था I	अंत्यावस्था II

10.4.1 अर्धसूत्री विभाजन I

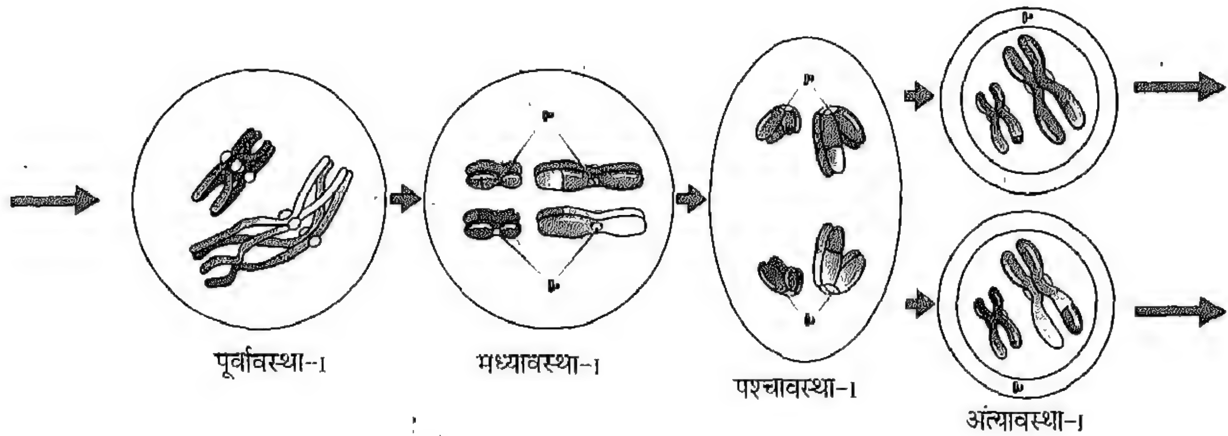
पूर्वावस्था I : अर्धसूत्री विभाजन I की पूर्वावस्था की तुलना समसूत्री विभाजन की पूर्वावस्था से की जाए तो, यह अधिक लंबी व जटिल होती है। गुणसूत्रों के व्यवहार के आधार पर इसे पाँच प्रावस्थाओं में उपविभाजित किया गया है जैसे-तनुपट्ट (लेप्टोटीन), युग्मपट्ट (जाइगोटीन), स्थूलपट्ट (पैकेटीन), द्विपट्ट (डिप्लोटीन) व पारगतिक्रम (डायकाइनेसिस)।

साधारण सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखने पर **तनुपट्ट** (लिप्टोटीन) अवस्था के दौरान गुणसूत्र धीरे-धीरे स्पष्ट दिखाई देने लगते हैं। गुणसूत्र का संहनन (कॉम्पैक्शन) पूरी तनुपट्ट अवस्था के दौरान जारी रहता है। इसके उपरांत पूर्वावस्था I का द्वितीय चरण प्रारंभ होता है, जिसे **युग्मपट्ट** कहते हैं। इस अवस्था के दौरान गुणसूत्रों का आपस में युग्मन प्रारंभ हो जाता है और इस प्रकार की संबद्धता को सूत्रयुग्मन कहते हैं।

युग्मपट्ट (जाइगोटीन) : इस प्रकार के गुणसूत्रों के युग्मों को समजात गुणसूत्र कहते हैं। इस अवस्था का इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मलेखी यह दर्शाता है कि गुणसूत्र सूत्रयुग्मन के साथ एक जटिल संरचना का निर्माण होता है, जिसे सिनेप्टोनिमल सम्मिश्र कहते हैं। जिस सम्मिश्र का निर्माण एक जोड़ी सूत्रयुग्मित समजात गुणसूत्रों द्वारा होता है, उसे **युगली** (bivalent) अथवा **चतुष्क** (tetrad) कहते हैं। यद्यपि ये अगली अवस्था में अधिक स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। पूर्वावस्था I की उपर्युक्त दोनों अवस्थाएं **स्थूलपट्ट** (Pachytene) अवस्था से अपेक्षाकृत कम अवधि की होती हैं। इस अवस्था के दौरान युगली गुणसूत्र चतुष्क के रूप में अधिक स्पष्ट दिखाई देने लगते हैं।

इस अवस्था में पुनर्योजन ग्रंथिकाएं दिखाई देने लगती हैं जहाँ पर समजात गुणसूत्रों के असंतति अर्धगुणसूत्रों के बीच विनिमय (क्रासिंग ओवर) होता है। विनिमय दो समजात गुणसूत्रों के बीच आनुवंशिक पदार्थों के आदान-प्रदान के कारण होता है। विनिमय एंजाइम द्वारा नियंत्रित प्रक्रिया है व जो एंजाइम इस प्रक्रिया में भाग लेता है, उसे रिकाम्बीनेज कहते हैं। दो गुणसूत्रों में आनुवंशिक पदार्थों का पुनर्योजन जीन विनिमय द्वारा अग्रसर होता है। समजात गुणसूत्रों के बीच पुनर्योजन स्थूलपट्ट अवस्था के अंत तक पूर्ण हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप विनिमय स्थल पर गुणसूत्र जुड़े हुए दिखाई पड़ते हैं।

द्विपट्ट (डिप्लोटीन) के प्रारंभ में सिनेप्टोनीमल सम्मिश्र का विघटन हो जाता है और युगली के समजात गुणसूत्र विनिमय बिंदु के अतिरिक्त एक दूसरे से अलग होने लगते



चित्र 10.3 अर्द्धसूत्रण की अवस्थाएं

हैं। विनिमय बिंदु पर X आकार की संरचना को **काएज्मेटा** कहते हैं। कुछ कशेरुकी प्राणियों के अडंकों में द्विपट्ट महीनों या वर्षों बाद समाप्त होती है।

अर्धसूत्री पूर्वावस्था I की अंतिम अवस्था **पारगतिक्रम (डायाकाइनेसिस)** कहलाती है। जिसमें काएज्मेटा का उपांतीभवन हो जाता है, जिसमें काएज्मेटा का अंत होने लगता है। इस अवस्था में गुणसूत्र पूर्णतया संघनित हो जाते हैं व तर्कुतंतु एकत्रित होकर समजात गुणसूत्रों को अलग करने में सहयोग प्रदान करते हैं। पारगतिक्रम के अंत तक केंद्रिका अदृश्य हो जाती है और केंद्रक-आवरण झिल्ली भी विघटित हो जाता है। पारगतिक्रम मध्यावस्था की ओर पारगमन को निरूपित करता है।

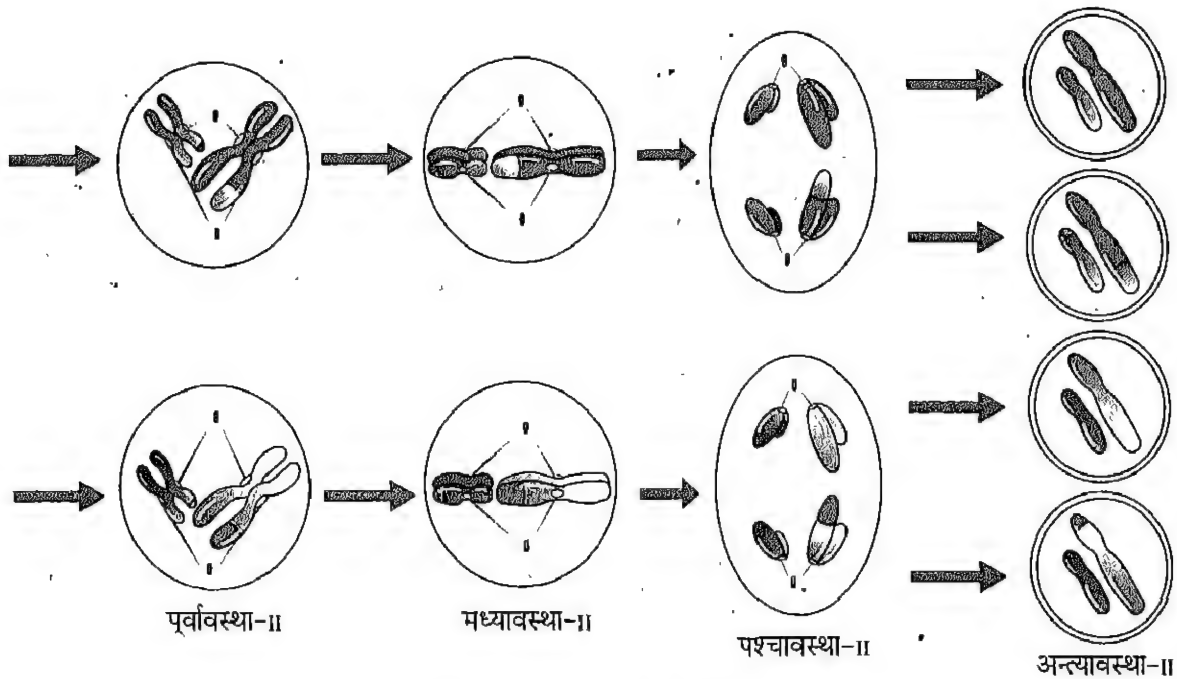
मध्यावस्था I : युगली गुणसूत्र मध्यरेखा पट्टिका पर व्यवस्थित हो जाते हैं (चित्र 10.3)। विपरीत ध्रुवों के तर्कुतंतु की सूक्ष्मनलिकाएं समजात गुणसूत्रों के जोड़ों से अलग-अलग चिपक जाती हैं।

पश्चावस्था I : समजात गुणसूत्र पृथक् हो जाते हैं, जबकि संतति अर्धगुणसूत्र गुणसूत्रबिंदु से जुड़े रहते हैं (चित्र 10.3)।

अंत्यावस्था I : इस अवस्था में केंद्रक आवरण व केंद्रिक पुन: स्पष्ट होने लगते हैं, कोशिकाद्रव्य विभाजन शुरू हो जाता है और कोशिका की इस अवस्था को कोशिका द्विक कहते हैं (चित्र 10.3)। यद्यपि बहुत से मामलों में गुणसूत्र का कुछ छितराव हो जाता है जबकि अंतरावस्था केंद्रक में पूर्णतया फैली अवस्था में नहीं मिलते हैं। दो अर्धसूत्री विभाजन के बीच की अवस्था को अंतरालावस्था (इंटरकाइनेसिस) कहते हैं और यह सामान्यतया कम समय के लिए होती है। उसके बाद पूर्वावस्था II आती है जो पूर्वावस्था I से काफी सरल होती है।

10.4.2 अर्धसूत्री विभाजन II

पूर्वावस्था II : अर्धसूत्री विभाजन II गुणसूत्र के पूर्ण लंबा होने के पहले व कोशिकाद्रव्य विभाजन के तत्काल बाद प्रारंभ होता है। अर्धसूत्री विभाजन I के विपरीत अर्धसूत्री विभाजन II सामान्य सूत्री विभाजन के समान होता है। पूर्वावस्था II के अंत तक केंद्रक



चित्र 10.4 अर्द्धसूत्रण की अवस्थाएं

आवरण अदृश्य हो जाता है (चित्र 10.4)। गुणूसत्र पुनः संहनित हो जाते हैं।

मध्यावस्था II : इस अवस्था में गुणसूत्र मध्यांश पर पंक्तिबद्ध हो जाते हैं और विपरीत ध्रुवों की तर्कुतंतु की सूक्ष्मनलिकाएं, इनके संतति अर्धगुणसूत्र के काइनेटोकोर से चिपक जाती हैं (चित्र 10.4)।

पश्चावस्था II : इस अवस्था में गुणसूत्रबिंदु अलग हो जाते हैं और इनसे जुड़े संतति अर्धगुणसूत्र कोशिका के विपरीत ध्रुवों की ओर चले जाते हैं (चित्र 10.4)।

अंत्यावस्था II : यह अवस्था अर्धसूत्री विभाजन की अंतिम अवस्था है, जिसमें गुणसूत्रों के दो समूह पुनः केंद्रक आवरण द्वारा घिर जाते हैं। कोशिकाद्रव्य विभाजन के उपरांत चार अगुणित संतति कोशिकाओं का कोशिका चतुष्टय बन जाता है (चित्र 10.4)।

अर्धसूत्री विभाजन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा लैंगिक जनन करने वाले जीवों की प्रत्येक जाति में विशिष्ट गुणसूत्रों की संख्या पीढ़ी दर पीढ़ी संरक्षित रहती है। यद्यपि विरोधाभासी प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप गुणसूत्रों की संख्या आधी हो जाती है। इसके द्वारा जीवधारियों की जनसंख्या में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक आनुवंशिक विभिन्नताएं बढ़ती जाती है। विकास प्रक्रिया के लिए विभिन्नताएं अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

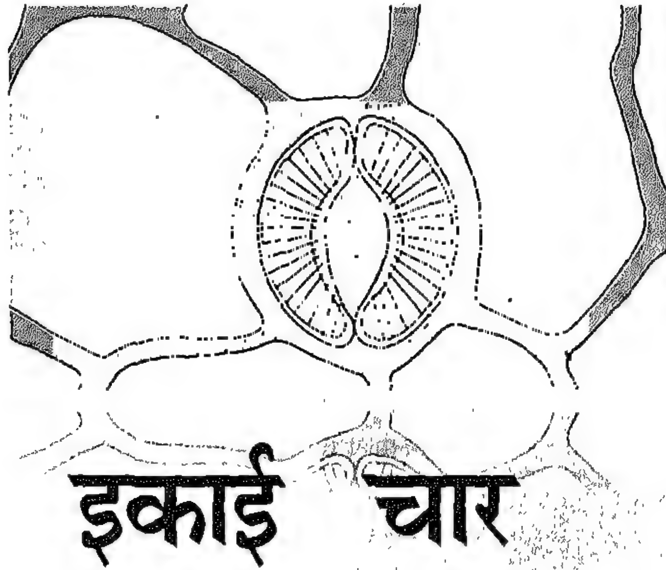
सारांश

कोशिका सिद्धांत के अनुसार एक कोशिका का निर्माण पूर्ववर्ती कोशिका से होता है। इस प्रक्रिया को कोशिका विभाजन कहते हैं। लैंगिक जनन करने वाले किसी भी जीवधारी का जीवन चक्र एक कोशिकीय युग्मनज (जाइगोट) से प्रारंभ होता है। कोशिका विभाजन जीवधारी के वयस्क बनने के बाद भी रुकता नहीं है; बल्कि यह उसके जीवन भर चलता रहता है। उन अवस्थाओं को जिनके अंतर्गत कोशिका एक विभाजन से दूसरे विभाजन की ओर गुजरती है, उसे कोशिका चक्र कहते हैं। कोशिका चक्र में दो प्रावस्थाएं होती हैं (1) अंतरावस्था- कोशिका विभाजन की तैयारी की प्रावस्था तथा (2) सूत्री विभाजन- कोशिका विभाजन का वास्तविक समय। अंतरावस्था को पुनः G_1, S व G_2 प्रावस्थाओं में विभाजित किया गया है। G_1 प्रावस्था में कोशिका सामान्य उपापचयी क्रिया संपन्न करते हुए वृद्धि करती है। इस अवस्था में अधिकांश अंगकों का द्विगुणन होता है। S प्रावस्था में डीएनए प्रतिकृति व गुणसूत्र द्विगुणन होता है। G_2 प्रावस्था में कोशिकाद्रव्य की वृद्धि होती है। सूत्री विभाजन को चार अवस्थाओं में विभाजित किया गया है जैसे पूर्वावस्था, मध्यावस्था, पश्चावस्था व अंत्यावस्था। पूर्वावस्था में गुणसूत्र संघनित होने लगते हैं। साथ ही तारककेंद्र विपरीत ध्रुवों की ओर चले जाते हैं। केंद्रक आवरण व केंद्रिक विलोपित हो जाते हैं व तर्कुतंतु दिखना प्रारंभ हो जाते हैं। मध्यावस्था में गुणसूत्र मध्य पट्टिका पर पंक्तिबद्ध हो जाते हैं। पश्चावस्था के दौरान गुणसूत्रबिंदु विभाजित हो जाते हैं और अर्धगुणसूत्र विपरीत ध्रुवों की ओर चलना प्रारंभ कर देते हैं। अर्धगुणसूत्रों के ध्रुवों पर पहुँचने के बाद गुणसूत्रों का लंबा होना प्रारंभ हो जाता है, व केंद्रिक तथा केंद्रक आवरण पुनः स्पष्ट होने लगते हैं। यह अवस्था अंत्यावस्था कहलाती है। केंद्रक विभाजन के बाद कोशिक ़व्य का विभाजन होता है; इसे कोशिकाद्रव्य विभाजन कहते हैं। अतः सूत्रीविभाजन को समविभाजन भी कहते हैं, जिसके द्वारा संतति कोशिका में पितृकोशिकाओं के समान गुणसूत्रों की संख्या बरकरार रहती है।

सूत्री विभाजन के विपरीत अर्धसूत्री विभाजन उन द्विगुणित कोशिकाओं में होता है, जो युग्मक निर्माण के लिए निर्धारित होती हैं। इस विभाजन को अर्धसूत्री विभाजन भी कहते हैं। इस विभाजन के बाद बनने वाले युग्मकों में गुणसूत्रों की संख्या आधी हो जाती है। लैंगिक जनन में युग्मकों के संगलन से पैतृक कोशिका में पाए जाने वाले गुणसूत्रों की संख्या की वापसी हो जाती है। अर्धसूत्री विभाजन को दो अवस्थाओं में विभाजित किया गया है। अर्धसूत्री विभाजन I व अर्धसूत्री विभाजन II, प्रथम अर्धसूत्री विभाजन में समजात गुणसूत्र जोड़े युगली बनाते हैं तथा इनमें विनिमय होता है। अर्धसूत्री विभाजन I की पूर्वावस्था लंबी होती है व पाँच उपअवस्थाओं में विभाजित की गई है। ये अवस्थाएं है- तनुपट्ट (लेप्टोटीन), युग्मपट्ट (जाइगोटीन), स्थूलपट्ट (पैकीटीन), द्विपट्ट (डिप्लोटीन) व पारगतिक्रम (डाया काइनेसिस)। मध्यावस्था- I के समय युगली मध्यावस्था पट्टिका पर व्यवस्थित हो जाते हैं। इसके पश्चात पश्चावस्था I में समजात गुणसूत्र अपने दोनों अर्धगुणसूत्रों के साथ विपरीत ध्रुवों की ओर चले जाते हैं। प्रत्येक ध्रुव जनक कोशिका की तुलना में आधे गुणसूत्र प्राप्त करता है। अंत्यावस्था I के समय केंद्रक आवरण व केंद्रिक पुनः दिखाई देने लगते हैं। अर्धसूत्री विभाजन II सूत्री विभाजन के समान होता है। पश्चावस्था II के समय संतति अर्धगुणसूत्र आपस में अलग हो जाते हैं। इस प्रकार अर्धसूत्री विभाजन के पश्चात चार अगुणित कोशिकाएं बनती है।

अभ्यास

1. स्तनधारियों की कोशिकाओं की औसत कोशिका चक्र अवधि कितनी होती है?
2. जीवद्रव्य विभाजन व केंद्रक विभाजन में क्या अंतर है?
3. अंतरावस्था में होने वाली घटनाओं का वर्णन कीजिए।
4. कोशिका चक्र का Go (प्रशांत प्रावस्था) क्या है?
5. सूत्री विभाजन को सम विभाजन क्यों कहते हैं?
6. कोशिका चक्र की उस अवस्था का नाम बताएं, जिसमें निम्न घटनाएं संपन्न होती हैं-
   (i) गुणसूत्र तर्कु मध्यरेखा की तरफ गति करते हैं।
   (ii) गुणसूत्रबिंदु का टूटना व अर्धगुणसूत्र का पृथक् होना।
   (iii) समजात गुणसूत्रों का आपस में युग्मन होना।
   (iv) समजात गुणसूत्रों के बीच विनिमय का होना।
7. निम्न के बारे में वर्णन करें।
   (i) सूत्रयुग्मन (ii) युगली (iii) काएज्मेटा
8. पादप व प्राणी कोशिकाओं के कोशिकाद्रव्य विभाजन में क्या अंतर है?
9. अर्धसूत्री विभाजन के बाद बनने वाली चार संतति कोशिकाएं कहाँ आकार में समान व कहाँ भिन्न आकार की होती हैं?
10. सूत्री विभाजन की पश्चावस्था अर्धसूत्री विभाजन की पश्चावस्था I में क्या अंतर है?
11. सूत्री व अर्धसूत्री विभाजन में प्रमुख अंतरों को सूचीबद्ध करें?
12. अर्धसूची विभाजन का क्या महत्व है?
13. अपने शिक्षक के साथ निम्न के बारे में चर्चा करे-
    (i) अगुणित कीटों व निम्न श्रेणी के पादपों में कोशिका विभाजन कहाँ संपन्न होता है?
    (ii) उच्च श्रेणी पादपों की कुछ अगुणित कोशिकाओं में कोशिका विभाजन कहाँ नहीं होता है?
14. क्या S प्रावस्था में बिना डीएनए प्रतिकृति के सूत्री विभाजन हो सकता है?
15. क्या बिना कोशिका विभाजन के डीएनए प्रतिकृति हो सकती है?
16. कोशिका विभाजन की प्रत्येक अवस्थाओं के दौरान होने वाली घटनाओं का विश्लेषण करें और ध्यान दें कि निम्न लिखित दो प्राचलों में कैसे परिवर्तन होता है?
    (i) प्रत्येक कोशिका की गुणसूत्र संख्या (N)
    (ii) प्रत्येक कोशिक में डीएनए की मात्रा (C)



इकाई चार

पादप कार्यकीय (शरीर क्रियात्मकता)

एक समय के पश्चात जैव संरचना का वर्णन एवं जीवित जैविकों की विभिन्नता (विवरण) का अंत दो अलग रूप में हुआ जो जीव विज्ञान में स्पष्ट रूप से परस्पर विरोधी परिप्रेक्ष्य के थे। यह दो परिप्रेक्ष्य शुरूआती दौर पर जीवन स्वरूप एवं प्रतिभास के संगठन के दो स्तर पर आधारित था। इसमें एक को जैव स्वरूप संगठन के स्तर पर वर्णित किया गया जबकि दूसरे को संगठन के कोशिकीय एवं अणु स्तर में वर्णित किया गया। परिणामस्वरूप पहला परिस्थिति-विज्ञान तथा इससे संबंधित विज्ञान के अंतर्गत था जबकि दूसरा शरीर विज्ञान एवं जैव-रसायन शास्त्र के रूप में स्थापित हुआ। पुष्पी पादपों में शरीर वैज्ञानिक प्रक्रमों का वर्णन एक उदाहरण के तौर पर है, जिसे इस खंड के अध्यायों में दिया गया है। पादपों में खनिज पोषण, प्रकाश-संश्लेषण, परिवहन, श्वसन तथा पादप वृद्धि एवं परिवर्धन को अंततः आण्विक भाषा में ही कोशिकीय कार्यविधि और यहाँ तक कि जैविक स्तर को संदर्भित किया गया है। जहाँ भी औचित्यपूर्ण पाया गया है, वहाँ पर पर्यावरण के संदर्भ में शरीर वैज्ञानिक प्रक्रम के संबंधों की भी चर्चा की गई है।



मेलविन कैलविन
(1911 -)

मेलविन कैलविन का जन्म अप्रैल 1911 में मिनसोटा (यू.एस.ए.) में हुआ था और आपने मिनसोटा विश्वविद्यालय से रसायन शास्त्र में पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। आपने बर्कले की केलीफोर्निया यूनीवर्सिटी के रसायन शास्त्र के प्रोफेसर के पद पर सेवाएं प्रदान की।

द्वितीय विश्व युद्व के ठीक बाद, जब पूरा विश्व हिरोशिमा-नागासाकी की विस्फोटक घटना से रेडियोधर्मिता के दुष्प्रभाव को देखकर दु:ख से स्तब्ध था, तब मेलविन और उनके सहकर्मी ने रेडियोधर्मिता के लाभदायक उपयोगों को प्रकट किया। आपने जे.ए. बाशाम के साथ मिलकर C_{14} के साथ कार्बनडाइऑक्साइड के लेबलप्रविध द्वारा कच्ची सामग्री जैसे कार्बनडाइऑक्साइड जल एवं खनिजो जैसे तत्वों से तथा शर्करा रचना से ग्रीन प्लांट्स (हरित पादपों) में प्रतिक्रिया का अध्ययन किया था। मेलविन ने प्रस्तावित किया कि पौधे प्रकाश ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में बदल देते हैं, जिसके लिए एक वर्णक अणुओं के संगठित ऐरे (समूह) तथा अन्य तत्वों में एक इलेक्ट्रॉन को स्थानांतरित करते हैं। प्रकाश-संश्लेषण में कार्बन के स्वांगीकरण के पाथवे के प्रतिचित्रण करने पर आपको 1961 में नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ।

मेलविन के द्वारा स्थापित किए गए प्रकाश-संश्लेषण के सिद्वांत, आज भी, ऊर्जा एवं पदार्थो के लिए पुन: स्थापन योग्य संसाधनों के अध्ययन तथा सौर-ऊर्जा अनुसंधान में आधारभूत अध्ययनों के लिए भी उपयोग किया जाता हैं।

अध्याय 11

पौधों में परिवहन

क्या आपको कभी आश्चर्य नहीं हुआ है कि वृक्षों की सबसे ऊँची शिखर तक पानी कैसे पहुँचता है, या फिर इस बात के लिए कि पदार्थ एक कोशिका से दूसरी कोशिका की ओर कैसे बढ़ जाते हैं और ये पदार्थ समान प्रकार से एक दिशा में चलते हैं? क्या इन तत्वों को आगे बढ़ने के लिए उपापचयी ऊर्जा की आवश्यकता होती है? पेड़-पौधों को जंतुओं की अपेक्षा कहीं अधिक दूरी तक अणुओं को ले जाने की आवश्यकता होती है जबकि उनमें किसी प्रकार का परिवहन तंत्र नहीं होता। जड़ों द्वारा ग्रहण किया गया पानी पौधों के सभी भागों तक पहुँचता है, जो बढ़ते हुए तने के अग्र भाग तक जाता है। पत्तियों द्वारा संपन्न प्रकाश-संश्लेषण के परिणामस्वरूप उत्पन्न उत्पाद भी पौधों के सभी अंगों तक पहुँचते हैं और मृदा की गहराई में अंत:स्थापित जड़ों के शीर्ष तक जाते हैं। यह गतिशीलता लघु दूरी तक, कोशिका के अंदर या झिल्लिका के आर-पार और ऊतक के अंतर्गत एक कोशिका से दूसरी कोशिका तक बनी रहती है। पेड़-पौधों में होने वाली इस परिवहन विधि को समझने के लिए, हमें सबसे पहले कोशिका की आधारभूत बनावट तथा पौधे की शरीर-रचना विज्ञान के बारे में मूल जानकारी को पुन: स्मरण करना होगा और इसके साथ ही साथ हमें विसरण, विभव एवं आयन के बारे में जानकारी भी प्राप्त करनी होगी।

जब हम पदार्थों के परिवहन की बात करते हैं तो सबसे पहले हमें यह पारिभाषित करना आवश्यक होता है कि हम किस प्रकार की गति और किन पदार्थों की चर्चा कर रहे हैं। पुष्पीय पौधों में जिन पदार्थों का परिवहन होता है, उनमें जल, खनिज पोषक, कार्बनिक पोषक एवं पौधों के वृद्धि नियामक मुख्य हैं। कम दूरी तक पदार्थों की गति, प्रसरण एवं साइटोप्लाजमिक धारा सक्रिय परिवहन की मदद से हो सकता है। लंबी दूरी के लिए परिवहन, संवहनीय तंत्र (जाइलम तथा फ्लाऐम) द्वारा संपन्न होता है और इसे **स्थानांतरण** कहा जाता है।

एक महत्त्वपूर्ण पहलू जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है; वह परिवहन की दिशा है। मूलीय पादपों में जाइलम परिवहन (पानी और खनिजों का) आवश्यक रूप से एक दिशात्मक अर्थात् मूल से तने तक होता है। कार्बनिक और खनिज पोषकों का परिवहन बहुदिशात्मक होता है। प्रकाश-संश्लेषिक पत्तियों द्वारा संश्लेषित कार्बनिक यौगिकों को पौधे के सभी अंगों जिनमें भंडार अंग भी सम्मिलित हैं, तक पहुँचाया जाता है। बाद में भंडार अंगों से इन्हें पुन: परिवहनित किया जाता है। जड़ों द्वारा खनिज पोषक तत्वों को जड़ों द्वारा ग्रहण करके उसे तने, पत्तियों एवं वृद्धि क्षेत्रों तक भेजा जाता है। जब किसी पौधे का कोई भाग जरावस्था को प्राप्त करता है तो उसे क्षेत्र के पोषकों को वापस लेकर वृद्धि करने वाले क्षेत्रों की ओर भेज दिया जाता है। हार्मोन या पादप वृद्धि नियामक तथा अन्य रसायन-उत्तेजक भी परिवहनित किए जाते हैं, यद्यपि इनकी मात्रा बहुत कम होती है। कई बार ये एक ध्रुवीय या एक दिशायी होते हैं और संश्लेषित स्थान से दूसरे भागों तक परिवहनित होते हैं। अत: एक पुष्पीय पौधे में यौगिकों का आवागमन काफी जटिल (लेकिन संभवत: बहुत क्रमानुसार) और विभिन्न दिशाओं में होता है। प्रत्येक अंग कुछ पदार्थों को ग्रहण करता है तथा कुछ दूसरों को देता है।

11.1 परिवहन के माध्यम

11.1.1 विसरण

विसरण द्वारा गति निष्क्रिय होती है तथा यह कोशिका के एक भाग से दूसरे भाग तक या कोशिका से अन्य कोशिका तक कम दूरी तक या ऐसा कह सकते हैं कि पत्तियों के अंतरकोशिकीय स्थान से बाह्य पर्यावरण तक कुछ भी हो सकती है। इसमें ऊर्जा का व्यय नहीं होता। विसरण में अणु अनियमित रूप से गति करते हैं, परिणामस्वरूप पदार्थ उच्च सांद्रता से निम्न सांद्रता वाले क्षेत्र में जाते हैं। विसरण एक धीमी प्रक्रिया है तथा वह जीवित तंत्र पर निर्भर नहीं करती। विसरण गैस द्रव में स्पष्ट परिलक्षित होती है जबकि ठोस में ठोस का विसरण कुछ अंश तक ही संभव है। पौधों के लिए विसरण अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण है क्योंकि पादप शरीर में गैसीय गति का यह अकेला माध्यम है।

विसरण की दर सांद्रता की प्रवणता, उन्हें अलग करने वाली झिल्ली की पारगम्यता, ताप तथा दाब से प्रभावित होती है।

11.1.2 सुसाध्य विसरण

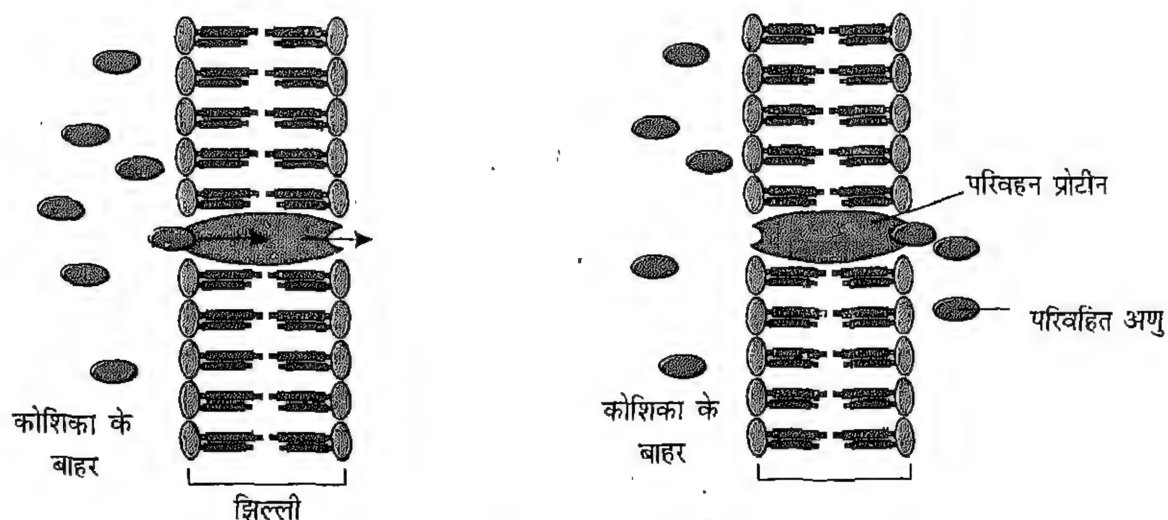
जैसा पहले बताया गया है कि विसरण उत्पन्न करने के लिए प्रवणता का पहले से उपस्थित रहना अत्यंत आवश्यक है। विसरण की दर पदार्थों के आकार पर निर्भर करती है। यह तो पहले से ही स्पष्ट है कि लघु पदार्थ तेज गति से विसरण करते हैं। किसी भी पदार्थ का विसरण झिल्ली के प्रमुख सहभागी लिपिड (Lipid) में घुलनशीलता पर निर्भर करता है। लिपिड में घुलनशील पदार्थ झिल्लिका के माध्यम से तेजी से विसरित होते हैं। जिस पदार्थ का अंश या मोइटी (Moiety) जलरागी होता है। वह झिल्लिका के आर-पार कठिनाई से गुजरता है। अत: उनकी गति को सुगम बनाने की आवश्यकता होती

है। ऐसे अणु को आर-पार करने के लिए झिल्लिका प्रोटीन स्थान उपलब्ध कराती है। वे सांद्रता प्रवणता स्थापित नहीं कर पाते, जबकि अणुओं के विसरण के लिए सांद्रता प्रवणता निश्चित तौर पर पहले से ही उपस्थित होनी चाहिए, भले ही उन्हें प्रोटीन से मदद मिल रही हो। यह प्रक्रिया ही **सुसाध्य विसरण** कहलाती है।

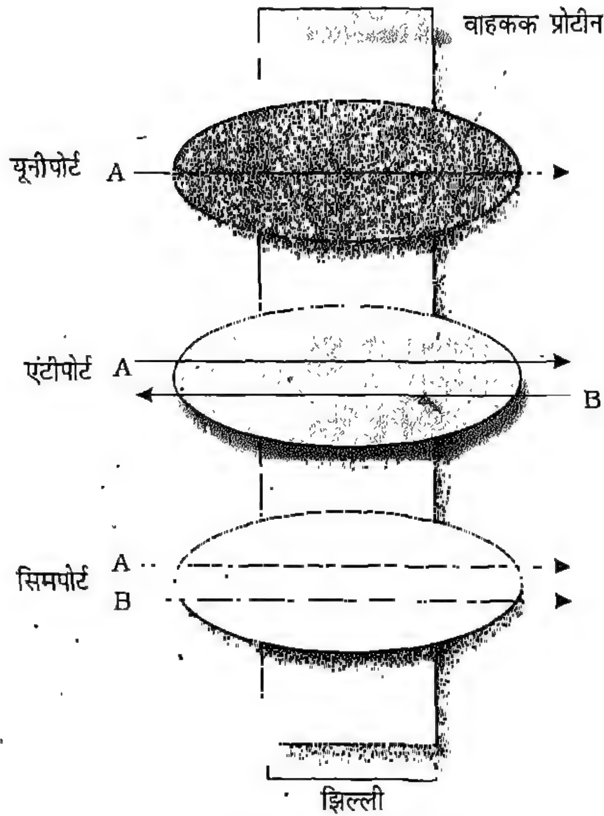
सुसाध्य विसरण में पदार्थों को झिल्ली के आर-पार करने में विशिष्ट प्रोटीन मदद करती है और इसमें एटीपी ऊर्जा का भी व्यय नहीं होता। सुसाध्य विसरण निम्न से उच्च सांद्रता में पूर्ण परिवहन नहीं कर सकता है, अतः इस कारण ऊर्जा निवेश की आवश्यकता होती है। परिवहन की गति दर तब अधिकतम होती है जब प्रोटीन के सभी संवाहकों का प्रयोग पूर्णरूप से हो। सुसाध्य विसरण अति विशिष्ट होता है। यह कोशिकाओं को पदार्थों के उद्ग्रहण के लिए चयन करने की छूट प्रदान करता है। यह निरोधकों के प्रति संवेदनशील होता है, जो प्रोटीन की पार्श्व शृंखला से प्रतिक्रिया करती है।

अणुओं को आर-पार जाने के लिए झिल्लिका में मौजूद प्रोटीन रास्ता बनाती है। कुछ रास्ते हमेशा खुले होते हैं तथा कुछ नियंत्रित हो सकते हैं। कुछ बड़े होते हैं, जो विभिन्न प्रकार के अणुओं को पार जाने की छूट देते हैं। **पोरिन** एक प्रकार की प्रोटीन है जो प्लास्टिड माइटोकोंड्रिया तथा बैक्टीरिया की बाह्य झिल्ली में बड़े आकार के छिद्रों का निर्माण करती है ताकि झिल्ली में से होकर प्रोटीन के छोटे साइज के अणु भी उसमें से गुजर सकें।

चित्र 11.1 प्रदर्शित करता है कि बाह्यकोशिकीय अणु परिवहन प्रोटीन पर बंधित रहते हैं और यही परिवहन प्रोटीन बाद में घूर्णत होकर कोशिका के भीतर अणु को मुक्त कर देती है। उदाहरण के तौर पर जलमार्ग - जो आठ तरह के विभिन्न **एक्वापोरिन** से बना होता है।



चित्र 11.1 सुसाध्य विसरण



चित्र 11.2 सुसाध्य विसरण

11.1.2.1 निष्क्रिय सिमपोर्ट तथा एंटीपोर्ट

कुछ वाहक या परिवहन प्रोटीन विसरण की अनुमति तभी देते हैं, जब दो तरह के अणु एक साथ चलते हैं। **सिमपोर्ट** में, दोनों अणु एक ही दिशा में झिल्लिका को पार करते हैं, जबकि ऐंटीपोर्ट में वे उलटी दिशा में चलते हैं (चित्र 11.2)। जब एक अणु दूसरे अणु से स्वतंत्र होकर झिल्लिका को पार करता है, तब इस विधि को **यूनिपोर्ट** कहते हैं।

11.1.3 सक्रिय परिवहन

सक्रिय परिवहन सांद्रता प्रवणता के विरुद्ध अणुओं को पंप करने में ऊर्जा का उपयोग करता है। सक्रिय परिवहन झिल्लिका प्रोटीन द्वारा पूर्ण किया जाता है। अत: झिल्लिका के विभिन्न प्रोटीन सक्रिय तथा निष्क्रिय दोनों परिवहन में मुख्य भूमिका निभाते हैं। पंप एक तरह का प्रोटीन है जो पदार्थों को झिल्लिका के पार कराने में ऊर्जा का प्रयोग करती है। ये पंप प्रोटीन पदार्थों का कम सांद्रता से अधिक सांद्रता तक परिवहन करा सकते हैं। परिवहन की गति अधिकतम तब होती है जब परिवहन करने वाले सभी प्रोटीन का प्रयोग हो रहा हो या वह संतृप्त ही क्यों न हो। एंजाइमों की भांति वाहक प्रोटीन झिल्लिका के पार करने वाले पदार्थों के प्रति बहुत अधिक विशिष्ट होती हैं। ये प्रोटीन निरोधक के प्रति भी संवेदनशील होती है जो पार्श्व शृंखला से प्रतिक्रिया करते हैं।

11.1.4 विभिन्न परिवहन विधियों की तुलना

तालिका 11.1 में भिन्न-भिन्न परिवहन तंत्र की तुलना की गई है। जैसा कि स्पष्ट हो चुका है कि झिल्लिका की प्रोटीन सुसाध्य विसरण एवं सक्रिय परिवहन के लिए

तालिका 11.1 विभिन्न परिवहन तंत्रों की तुलना

गुण	साधारण विसरण	सुसाध्य परिवहन	सक्रिय परिवहन
विशिष्ट झिल्लिका प्रोटीन की आवश्यकता	नहीं	हाँ	हाँ
उच्च वर्णात्मक	नहीं	हाँ	हाँ
परिवहन संतृप्त	नहीं	हाँ	हाँ
शिखरोपरि (अपहिल) परिवहन	नहीं	नहीं	हाँ
एटीपी ऊर्जा की आवश्यकता	नहीं	नहीं	हाँ

उत्तरदायी होती है तथा इस प्रकार यह उच्च वर्णात्मक होने के सामान्य लक्षण जैसे संतृप्त होना, निरोधकों के प्रति अनुक्रिया तथा हार्मोनीय नियंत्रण प्रदर्शित करते हैं। लेकिन विसरण चाहे सुसाध्य हो या नहीं, प्रवणता के अनुसार होता है तथा ऊर्जा का उपयोग नहीं करता।

11.2 पादप-जल संबंध

पौधों के शारीरिक क्रियाकलाप के लिए जल अनिवार्य है और यह सभी जीवित प्राणियों के लिए एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह वह माध्यम उपलब्ध कराता है जिसमें सभी पदार्थ घुलनशील होते हैं। जीव द्रव्य में हजारों तरह के अणु पानी में घुले होते हैं और निलंबित रहते हैं। एक तरबूज के अंतर्गत 92 प्रतिशत से अधिक भाग पानी का होता है तथा ज्यादातर शाकीय पौधों में शुष्क पदार्थ केवल 10 से 15 प्रतिशत होता है, बाकी जल होता है। हालांकि यह बात बिल्कुल सच है कि एक पौधे में जल का वितरण भिन्न-भिन्न होता है, काष्ठ वाले भाग में थोड़ा कम होता है तथा नरम भाग में बहुत ज्यादा। एक बीज सूखा सा दिख सकता है; परंतु फिर भी उसमें पानी की कुछ मात्रा होती है अन्यथा वह जीवित नहीं रहेगा और श्वसन भी नहीं करेगा।

स्थलीय पौधे प्रतिदिन भारी मात्रा में पानी ग्रहण करते हैं; लेकिन पत्तियों से इनका अधिकतर भाग **वाष्पोत्सर्जन** द्वारा हवा में उड़ जाता है। मक्के का एक परिपक्व पौधा एक दिन में लगभग तीन लीटर पानी अवशोषित करता है जबकि सरसों का पौधा लगभग पांच घंटे में अपने वजन के बराबर पानी अवशोषित कर लेता है। पानी की इस उच्च मात्रा की मांग के कारण, यह आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि कृषि एवं प्राकृतिक पर्यावरण में पौधे की वृद्धि एवं उत्पादकता को सीमित करने वाला सीमाकारी कारक प्रायः जल ही होता है।

11.2.1 जल विभव या जल अंतःशक्ति

पादप-जल संबंध की व्याख्या करने के लिए कुछ विशेष मानक शब्दों की समझ अध्ययन को आसान बना देती है। जल विभव जल की गति या परिवहन को समझने के लिए आधारभूत धारणा है। **विलेय विभव या विलेय अंतःशक्ति** तथा **दाब विभव या दाब अंतःशक्ति** जल विभव को सुनिश्चित करने वाले दो मुख्य कारक हैं।

जल के अणुओं में गतिज ऊर्जा पाई जाती है। द्रव तथा गैस की अवस्था में वे अनियमित गति करते हुए पाए जाते हैं, यह गति तीव्र तथा स्थिर दोनों तरह की हो सकती है। किसी तंत्र में यदि अधिक मात्रा में जल हो तो उसमें अधिक गतिज ऊर्जा तथा जल विभव होगा। अतः यह सुनिश्चित है कि शुद्ध जल में सबसे ज्यादा जल विभव होगा। यदि कोई दो अंतर्विष्ट जल तंत्र संपर्क में हों तो पानी के अणु के अनियमित गति के कारण जल के वास्तविक गति की त्वरित गति ज्यादा ऊर्जा वाले भाग से कम ऊर्जा वाले भाग में होगी। अतः पानी उच्च जल विभव वाले अंतर्विष्ट जल के तंत्र से कम जल विभव वाले तंत्र की ओर जाएगा। पदार्थ की गति की यह प्रक्रिया ऊर्जा की प्रवणता के अनुसार होती है और विसरण कहलाती है। जल विभव को ग्रीक चिन्ह Psi या Ψ से चिह्नित किया गया है और इसे पासकल्स जैसी दाब इकाई में व्यक्त किया गया है। परंपरा के अनुसार शुद्ध जल के जल

विभव को एक मानक ताप पर जो किसी दाब में नहीं है, पर शून्य माना गया है।

यदि कुछ विलेय शुद्ध जल में घोले जाते हैं, तो घोल में मुक्त पानी कम हो जाता है। जल की सांद्रता घट जाती है और जल विभव भी कम हो जाता है। इसीलिए सभी विलेयनों में शुद्ध जल की अपेक्षा **जल विभव** निम्न होता है। इस निम्नता का परिमाण एक विलेय के द्रवीकरण के कारण है जिसे **विलेय विभव** कहा जाता है (या Ψs)। Ψs सदैव नकारात्मक होता है, जब विलेय के अणु अधिक होते हैं तो Ψs अधिक नकारात्मक होता है। वायुमंडलीय दबाव पर विलेय या घोल का जल विभव Ψs = विलेय विभव Ψs होता है।

यदि घोल या शुद्ध जल पर वायुमंडलीय दबाव से अधिक दबाव लगाया जाए तो उसका जल विभव बढ़ जाता है। यह एक जगह से दूसरी जगह पानी पंप करने के बराबर होता है। क्या आप सोच सकते हैं कि हमारे शरीर के किस तंत्र में दाब निर्मित होता है? जब विसरण के कारण पौधे की कोशिका में जल प्रवेश करता है और वह कोशिका भित्ति की ओर बढ़ा देता है और कोशिका को **स्फीत** बना (फुला) देता है (चित्र 11.2)। यह **दाब विभव** को बढ़ा देता है। दाब विभव ज्यादातर सकारात्मक होता है। हालाँकि पौधों में नकारात्मक विभव या जाइलम के जल खंड में तनाव एक तने में जल के परिवहन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दाब विभव को Ψp से चिह्नित किया गया है। कोशिका का जल विभव, विलेय एवं दाब विभव दोनों ही से प्रभावित होता है। इन दोनों के बीच संबंध निम्न प्रकार से होता है:

$$\Psi s = \Psi s + \Psi p$$

11.2.2 परासरण

पौधे की कोशिका, कोशिका झिल्ली या एक कोशिका भित्ति से घिरी होती है। यह कोशिका भित्ति जल एवं विलयन में पदार्थों के लिए मुक्त रूप से पारगम्य होती है। अतः यह परिवहन या गति के लिए बाधक नहीं होती है। एक पौधे की कोशिकाओं में प्रायः एक केंद्रीय रसधानी होती है, जिसका रसधानीयुक्त रस कोशिका के विलेय विभव में भागीदारी करता है। पादप कोशिका में कोशिका झिल्ली तथा रसधानी की झिल्ली, टोनोप्लास्ट, दोनों एक साथ कोशिका के भीतर एवं बाहर अणुओं की गति निर्धारित करने के लिए महत्वपूर्ण होते हैं।

परासरण विशेष रूप से एक विभेदक अर्ध या पारगम्य झिल्लिका के आर-पार जल के विसरण के लिए संदर्भित किया जाता है। परासरण स्वतः ही प्रेरित बल की अनुक्रिया से पैदा होता है। परासरण की दिशा एवं गति **दाब प्रवणता** एवं **सांद्रता प्रवणता** पर निर्भर करती है। जल अपने उच्च रासायनिक विभव (या सांद्रता) से निम्न रासायनिक विभव में तब तक संचारित होता है जब तक कि साम्यता पर न पहुँच जाए। साम्यता पर दो कक्षों का जल विभव एक समान होना चाहिए।

आपने विद्यालय में पहले के चरणों में एक आलू का परासरणमापी (ऑस्मोमीटर) बनाया होगा। यदि कंद को पानी में रखा जाता है तो आलू के कंद की गुहा में रखा शर्करा का सांद्र घोल परासरण के द्वारा पानी को एकत्र कर लेता है।

चित्र 11.3 का अध्ययन करें, जिसमें दो कक्षों अ एवं ब में रखे गये विलयनों को भरकर अर्धपारगम्य झिल्ली द्वारा अलग-अलग किया गया है।

(अ) किस कक्ष के घोल में एक निम्नतर जल विभव है?

(ब) किस कक्ष के घोल में निम्नतर विलेय विभव है?

(स) परासरण किस दिशा में संपन्न होगा?

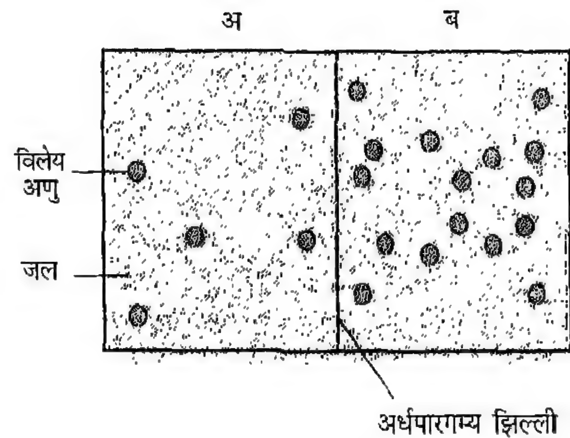
(द) किस विलयन का उच्च विलेय विभव उच्चतर होगा?

(य) साम्यता के समय किस कक्ष में जल विभव निम्नतर होगा?

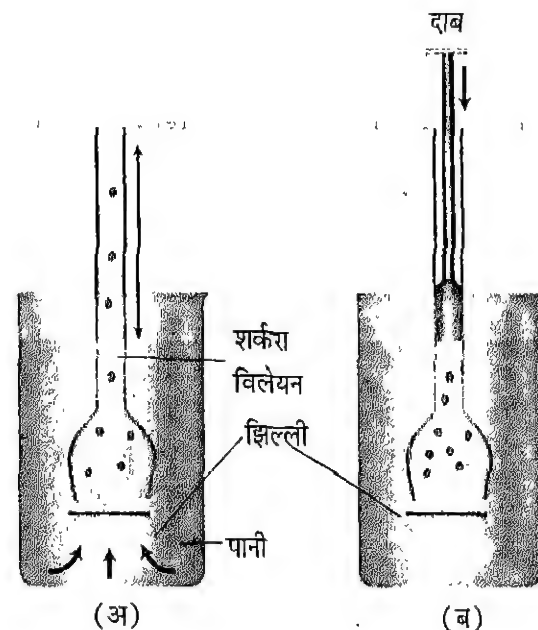
(र) यदि एक कक्ष में ψ का मान -2000 kPa है और दूसरे में -1000 kpa है तो किस कक्ष में उच्चतर ψ होगा?

आइए, एक दूसरे प्रयोग की चर्चा करें, जहां शर्करा के विलेयन को एक कीप में लिया गया है, जो एक बीकर में रखे गए पानी से अर्ध पारगम्य झिल्ली द्वारा अलग है। (चित्र 11.4)। *(आप इस प्रकार की झिल्लिका एक अंडे से प्राप्त कर सकते हैं। आप अंडे के एक सिरे पर छोटा सा छेद करके सारा पीला एवं श्वेत पदार्थ (योल्क एवं एल्बूमिन) निकाल लें और फिर अंडे के कवच को कुछ घंटों के लिए तनु नमक के अम्ल (Hcl) में छोड़ दें। अंडे का कवच घुल जाएगा और उसकी झिल्ली साबुत प्राप्त हो जाएगी)।* पानी कीप की ओर गति करेगा और कीप में घोल का स्तर बढ़ जाएगा। यह प्रक्रिया तब तक जारी रहेगी जब तक कि साम्यता की स्थिति नहीं आ जाती। *यदि किसी कारणवश, शर्करा झिल्ली के माध्यम से बाहर निकल आएं तब क्या कभी साम्यता की स्थिति आएगी?*

कीप के ऊपरी भाग पर बाहरी दाब डाला जा सकता है ताकि झिल्लिका के माध्यम से कीप में पानी विसरित न हो। यह दाब पानी को विसरित होने से रोकता है। विलेय सांद्रता अधिक होने पर पानी को विसरित होने से रोकने के लिए अधिक दबाव की भी आवश्यकता होगी। संख्यात्मक आधार पर परासरण दाब परासरण विभव के बराबर होता है लेकिन इसका संकेत विपरीत होता है। परासरण दबाव में प्रयुक्त दाब सकारात्मक होता है जबकि परासरण विभव नकारात्मक होता है।



चित्र 11.3



चित्र 11.4 परासरण का एक प्रदर्शन। एक कीप में शर्करा विलयन भर कर, पानी से भरे बीकर में उल्टा रखा गया है। जिसका मुख अर्ध पारगम्य झिल्ली से बंद है। (अ) जल झिल्ली को पार करते हुए विसरण से कीप के घोल कर स्तर बढ़ाएगा (जैसा की तीर के निशान दिखा रहे हैं।) (ब) कीप में जल के बहाव को रोकने के लिए दाब का इस्तेमाल किया जा सकता है जैसा कि चित्र में दिखाया गया है।

11.2.3 जीवद्रव्यकुंचन

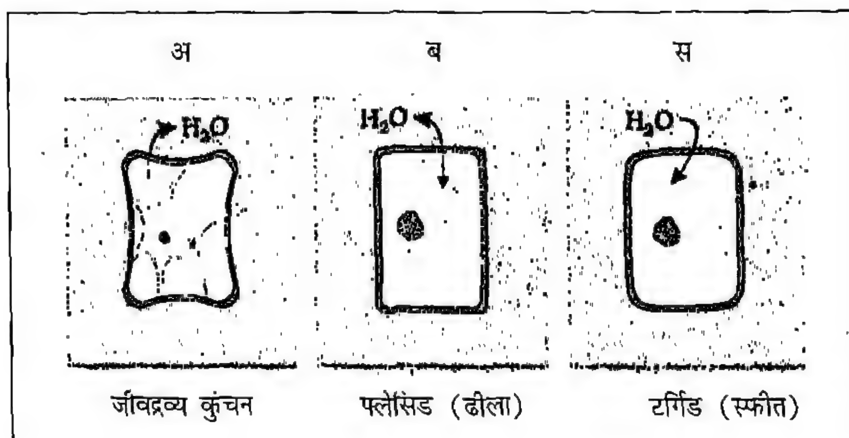
पादप कोशिकाओं (या ऊतकों) में जल की गति के प्रति व्यवहार करना उसके आस-पास के घोल पर निर्भर करता है। यदि बाहरी घोल कोशिका द्रव्य के परासरण दाब को संतुलित करता है तो उसे हम **समपरासारी** कहते हैं। यदि बाहरी विलेयन कोशिका द्रव्य से अधिक तनुकृत है तो उसे **अल्पपरासरी** कहते हैं और यदि बाहरी विलेयन बहुत अधिक सांद्रतायुक्त होता है तो इसे **अतिपरासारी** कहते हैं। कोशिकाएं अल्पपरासारी घोल में फूलती हैं और अतिपरासारी में सिकुड़ती हैं।

जीवद्रव्यकुंचन तब होता है जब कोशिका से पानी बाहर गति कर जाए तथा पादप कोशिका की कोशिका झिल्ली सिकुड़कर कोशिका भित्ति से अलग हो जाती है। यह तब होता है, जब एक कोशिका (या ऊतक) को अतिपरासारी घोल में डाला जाता है। सबसे पहले जीवद्रव्य से पानी बाहर आता है फिर रसधानी से। जब कोशिका से विसरण द्वारा पानी निकल कर बाह्यकोशिका द्रव्य में जाता है, तब जीवद्रव्य कोशिका भित्ति से अलग हो जाती है और इसे कोशिका का जीवद्रव्य कुंचन कहा जाता है। जल का परिवहन झिल्ली के आर-पार उच्चतर जल विभव क्षेत्र (अर्थात् कोशिका) निम्नतर जल विभव क्षेत्र में कोशिका के बाहर (चित्र 11.5) जाता है।

जीवद्रव्यकुंचित कोशिका में कोशिका भित्ति एवं संकुचित जीवद्रव्य के बीच की जगह को कौन भरता है?

जब कोशिका (या ऊतकों) को **समपरासारी** घोल में रखा जाता है तो जल का कुल प्रभाव अंदर या बाहर की ओर नहीं होता है। यदि बाह्य घोल जीवद्रव्य के परासारी दाब को संतुलित रखता है तो इसे समपरासारी कहते हैं। कोशिकाओं में जब जल अंदर और बाहर समान रूप से प्रवाहित होता है तो कोशिकाएं साम्यावस्था में कही जाती हैं तब कोशिका को ढीला (**फ्लोसिड**) कहा जाता है।

जीवद्रव्यसंकुचन की प्रक्रिया प्रायःप्रतिवर्ती होती है। जब कोशिकाओं को अल्परासारी घोल (उच्च जल विभव या जीवद्रव्य की तुलना में तनुकृत) विलेयन में रखा जाता है तो कोशिका में जल विसरित होता है और जीवद्रव्य को भित्ति के विरुद्ध दबाव बनाने का कारण बनता है जिसे **स्फीति दाब** कहा जाता है। पानी घुसने के कारण जीव द्रव्य द्वारा



प्रकट किए गए कठोर भित्ति के विपरीत दाब को दाब विभव या Ψ_p कहते हैं। कोशिका भित्ति की दृढ़ता के कारण कोशिका नहीं फटती है। यह स्फीति दाब अंततः कोशिकाओं के विस्तार एवं फैलाव के लिए उत्तरदायी होता है।

- *एक ढीली कोशिका का Ψ_p क्या होगा?*
- *पौधे के अलावा किस जीव में कोशिका भित्ति होती है?*

11.2.4 अंत:शोषण

अंत:शोषण एक विशेष प्रकार का विसरण है। जब ठोस एवं कोलाइडस द्वारा पानी को अवशोषित किया जाता है तो इसके कारण उसके आयतन में विशाल रूप से वृद्धि होती है। अंत:शोषण के प्रतिष्ठित उदाहरणों में बीजों और सूखी लकड़ियों द्वारा जल का अवशोषण है। फूली हुई लकड़ी या काष्ठ के द्वारा पैदा किए गए दाब का प्रयोग आदि मानव द्वारा बड़ी चट्टानों एवं पत्थरों को तोड़ने के लिए किया जाता था। यदि अंत:शोषण के द्वारा दाब नहीं होता तो नवोद्भिद खुली जमीन पर उभरकर नहीं आ पाते, वे संभवतः बाहर आकर स्थापित नहीं हो पाते।

अंत:शोषण भी एक प्रकार का विसरण है, क्योंकि जल की गति सांद्रण प्रवणता के अनुसार है। बीज या अन्य ऐसी ही सामग्रियों में पानी लगभग नहीं के बराबर है अत: ये आसानी से जल का अवशोषण कर लेते हैं। अवशोषक तथा अंत:शोषित होने वाले द्रव के बीच जल विभव प्रवणता आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, कोई भी पदार्थ जो किसी भी द्रव को अंत:शोषित करता हो, अवशोषक और द्रव के बीच बंधुता होना पहली शर्त है।

11.3 लंबी दूरी तक जल का परिवहन

प्रारंभिक अवस्था में आपने एक प्रयोग किया होगा। इस प्रयोग के दौरान आपने रंगीन पानी में सफेद फूल सहित टहनी को डाला होगा तथा उसके रंग के परिवर्तन को भी देखा होगा। टहनी के कटे छोर को कुछ घंटे तक घोल में रहने के बाद आपने निश्चित ही उस क्षेत्र को ध्यान से देखा होगा जिसमें से रंगीन पानी का परिवहन होता है। यह प्रयोग आसानी से दर्शाता है कि पानी के परिवहन का रास्ता संवहनी बंडल मुख्यत: जाइलम है। अब हम लोगों को और आगे बढ़ना है। पौधों में पानी तथा अन्य पदार्थों के परिवहन की प्रक्रिया को समझना है।

लंबी दूरी तक पदार्थों का परिवहन केवल विसरण द्वारा नहीं हो सकता है। विसरण एक धीमी प्रक्रिया है। यह छोटी दूरी तक अणुओं को पहुँचाने में कारगर है। उदाहरण के लिए : एक प्रारूपिक पादप कोशिका (लगभग 50μm) के आर-पार अणु को गति करने के लिए लगभग 2.5s समय लगता है। *इस दर पर आप क्या गणना कर सकते हैं कि पौधों के अंदर 1m की दूरी तय करने में अणुओं को विसरण के द्वारा कितना समय लगेगा?*

बड़े एवं जटिल जीवों में बहुधा पदार्थों का परिवहन लंबी दूरी तक होता है। कभी-कभी उत्पादन या अवशोषण एवं संग्रहण के स्थान एक दूसरे से काफी दूर होते हैं, अत: विसरण एवं सक्रिय परिवहन काफी नहीं है। इसलिए विशिष्ट व्यापक दूरी का

परिवहन तंत्र आवश्यक हो जाता है ताकि आवश्यक पदार्थ निश्चित रूप से तीव्र गति से पहुंच सकें। जल, खनिज तथा भोजन सामूहिक प्रणाली द्वारा परिवहन करते हैं। **सामूहिक या थोक प्रवाह** में पदार्थों का एक स्थान से दूसरे स्थान तक परिवहन, दो बिंदुओं के बीच दाब की भिन्नता के परिणामस्वरूप होता है। सामूहिक प्रवाह की यह विशिष्टता है कि पदार्थ चाहे घोल हो या **निलंबन** नदी के प्रवाह की तरह ही बहता है। यह विसरण से भिन्न होता है, जहाँ पर विभिन्न पदार्थ अपनी सांद्रता प्रवणता के अनुसार स्वतंत्र रूप से परिवहनित किए जाते हैं। थोक प्रवाह को तो घनात्मक जलीय दाब प्रवणता या ऋणात्मक जलीय दाब प्रवणता (जैसे: पुआल के द्वारा चूषण) के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

पदार्थों की पादपों के संवहनी ऊतकों के द्वारा थोक या सामूहिक गति को स्थानांतरण कहते हैं। क्या आपको याद है कि जब आपने ऊँचे पादपों की जड़ों, तनों तथा पत्तियों के अनुप्रस्थ काट (क्रास सेक्शन) को देखा था और उसकी संवहनी प्रणाली का अध्ययन किया था? उच्च पादपों में बहुत ही उच्च विशेषीकृत संवहनी ऊतक – जाइलम और फ्लोएम होते हैं। जाइलम मुख्य रूप से जल, खनिज लवणों, कुछ कार्बनिक नाइट्रोजन तथा हार्मोन को जड़ से वायवीय भाग तक स्थानांतरित करता है। फ्लोएम मुख्य रूप से विभिन्न प्रकार के कार्बनिक एवं अकार्बनिक विलेयनों को पत्तियों से पादपों के विभिन्न भागों में स्थानांतरित करता है।

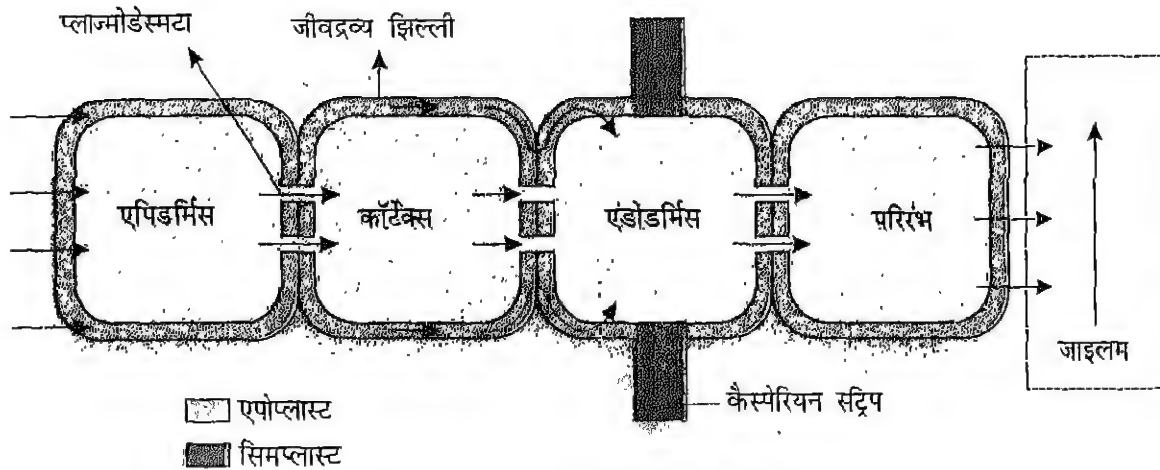
11.3.1 पौधे जल को कैसे अवशोषित करते हैं?

हम सभी जानते हैं कि जड़ें पेड़ों के लिए ज्यादातर जल को अवशोषित करती हैं, इसीलिए हम जल को मृदा में डालते हैं न कि पत्तियों पर। जल और खनिज तत्वों के अवशोषण की जिम्मेदारी विशेष रूप से मूल रोमों की होती है जो कि जड़ों के अग्र शीर्ष भाग पर लाखों की संख्या में पाए जाते हैं। मूल रोम पतली भित्ति वाले होते हैं जो अवशोषण के लिए व्यापक रूप से क्षेत्र प्रदान करते हैं। जल, खनिज-विलेय के साथ मूल रोम से होकर शुद्ध रूप से विसरण प्रक्रिया के द्वारा अवशोषित किया जाता है। एक बार जब मूल रोम द्वारा जल अवशोषित कर लिया जाता है तब वह जड़ों की गहरी पर्तों में दो भिन्न पथों से गति करता है। दो भिन्न पथ निम्न हैं:

- एपोप्लास्ट पथ
- सिमप्लास्ट पथ

एपोप्लास्ट निकटवर्ती कोशिका भित्ति का तंत्र है। जड़ों के अंतस्त्वचा में मौजूद **कैस्पेरी पट्टी** को छोड़कर पूरे पौधे में फैला रहता है (चित्र 11.6)। जल का एपोप्लास्टिक परिवहन केवल अंतरकोशिकीय जगहों और कोशिकाओं की भित्ति में उत्पन्न होता है। एपोप्लास्ट के माध्यमं से होने वाला परिवहन कोशिका झिल्ली को पार नहीं करता है। यह गति प्रवणता पर निर्भर करती है। एपोप्लास्ट जल के परिवहन में कोई भी बाधा नहीं डालता है और जल परिवहन सामूहिक प्रवाह के माध्यम से होता रहता है। जैसे ही जल अंतरकोशिकी गुहा या वातावरण में वाष्पित होता है तो एपोप्लास्ट के सतत जल प्रवाह में तनाव उत्पन्न हो जाता है। अतः आसंजक एवं संशक्ति शीलता के कारण जल का सामूहिक प्रवाह होता है।

सिमप्लास्टिक तंत्र अंतः संबंधित जीव द्रव्य का तंत्र है। पड़ोसी कोशिकाएं कोशिका लड़ी से जुड़ी होती हैं जो कि जीव द्रव्य तंतु तक विस्तृत रूप से फैली रहती हैं।



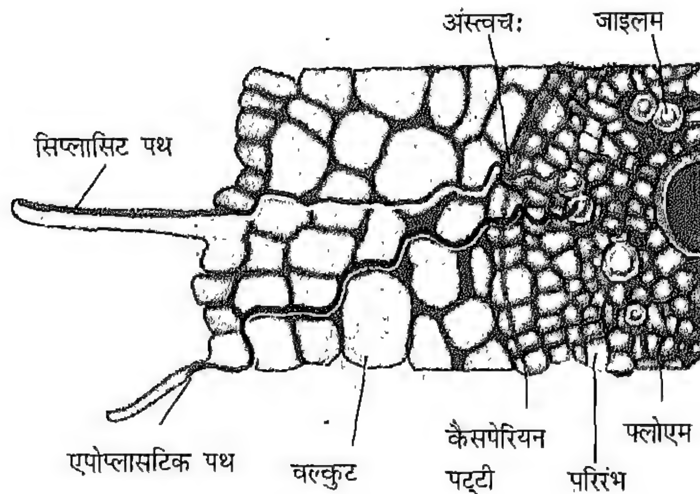
चित्र 11.6 जड़ में जल के गति का पथ

सिमप्लास्टिक परिवहन में जल कोशिकाओं के जीव द्रव्य के माध्यम से तथा **अंतरकोशिकी** परिवहन में यह जीव द्रव्य तंतु के माध्यम से आगे बढ़ता है। जल कोशिकाओं के अंदर कोशिका झिल्ली के माध्यम से प्रवेश करता है, अत: इस प्रकार का परिवहन अपेक्षाकृत धीमा होता है। सिमप्लास्टिक को परिवहन में कोशिका द्रव्यी प्रवाहन सहायता करता है। आप कोशिका द्रव्यी प्रवाहन को *हाइड्रिला* की पत्ती के कोशिका में देखा होगा, क्लोरोप्लास्ट का परिवहन प्रवाह के कारण आसानी से दिखाई पड़ सकता है।

जड़ों में अधिकतर जल प्रवाह एपोप्लास्ट के माध्यम से उत्पन्न होता है चूँकि वल्कुट-कोशिकाएँ ढीली गठित होती है अत: जल की गति में किसी प्रकार का प्रतिरोध उत्पन्न नही होता। हालाँकि वल्कुट की आंतरिक सीमा, सीमा **अंत:त्वचा**, पानी के लिए अप्रवेश्य होती है। ऐसा सुवेरिनमय मैट्रिक्स के कारण होता है जिसे **कैस्पेरी पट्टी** कहा जाता है। पानी का अणु पर्त को भेदने के असमर्थ होता है, अत: इन्हें असुवेरिनमय कोशिका भित्ति क्षेत्र की ओर पुन: झिल्लिका के माध्यम से कोशिका के अंदर भेजा जाता है। इसके बाद जल सिमप्लास्ट के द्वारा गतिशील होता है और पुन: झिल्ली को पार करता है ताकि जाइलम कोशिकाओं तक पहुँच सके। जल की गति मूलपरत से अंत:कोशिका तक सिमप्लास्टिक होती है। यही एक रास्ता है जिससे पानी तथा अन्य विलेय वैस्कुलर सिलिंडर में प्रवेश करते हैं।

एक बार जाइलम माध्यम के भीतर पहुँचने पर जल पुन: कोशिकाओं के बीच तथा उसके आर-पार जाने के लिए स्वतंत्र हो जाता है। नई जड़ों में जल सीधे जाइलम वाहिकाओं या/और वाहिनिकाओं में प्रवेश करता है। ये जीवन रहित नालियाँ हैं और एक प्रकार से एपोप्लास्ट का हिस्सा भी हैं। मूल संवहनी तंत्र में जल तथा खनिज आयनों का मार्ग निम्न चित्र में संक्षेपीकृत किया गया है (चित्र 11.7)।

कुछ पौधों में अतिरिक्त संरचनाएं जुड़ी होती हैं जो उन्हें जल (एवं खनिजों) के अवशोषण में मदद करती हैं। **माइकोराइजा** जड़ के साथ फफूँदी (कवक) का सहजीवी संगठन है। फफूँदी या कवक तंतु नई जड़ों के आस-पास नेटवर्क (बनाते) हैं या वे मूल कोशिका में प्रवेश कर जाते हैं। कवक तंतु का एक बड़ा व्यापक तल क्षेत्र होता है जो भूमि से खनिज आयन एवं जल को मूल से अधिक मात्रा में अवशोषित कर लेता है।



चित्र 11.7 जल एवं आयन का सिंप्लास्टिक एवं एपोलास्टिक पथ तथा जड़ों में प्रवाह

ये कवक जड़ को जल एवं खनिज उपलब्ध कराते हैं और बदले में जड़ें भी माइकोराइजी को शर्करा तथा नाइट्रोजन समाहित यौगिक प्रदान करते हैं। कुछ पौधों का माइकोराइजा के साथ का अविकल्पी संबंध होते हैं। उदाहरण के लिए माइकोराइजा की उपस्थिति के बिना चीड़ का बीज न तो अंकुरित हो सकता है और न ही स्थापित हो सकता है।

11.3.2 पौधों में जल का ऊपर की ओर गमन

हमने अभी देखा कि पौधे मृदा से जल का कैसे अवशोषण करते हैं और संवहनी ऊतकों में इसे कैसे पहुँचाते हैं। अब हम यह जानने व समझने का प्रयास करेंगे कि जल पौधे के विभिन्न भागों तक कैसे पहुँचता है। यह जल का चलन क्रियाशील है या अभी भी निष्क्रिय है? चूँकि जल पेड़ के तने में गुरुत्वाकर्षण के विरुद्ध गति करता है तो इसके लिए ऊर्जा कौन देता है?

11.3.2.1 मूल दाब

जैसे कि मृदा के विभिन्न आयन सक्रियता के साथ जड़ों के संवहनी ऊतकों में परिवहनित होते हैं तो जल भी इसी प्रक्रिया का अनुसरण (अपनी विभव प्रवणता से) करता है तथा जाइलम के अंदर **दाब** बढ़ाता है। यह घनात्मक दाब ही **मूल दाब** कहलाता है और तने में कम ऊँचाई तक जल को ऊपर भेजने के लिए उत्तरदायी होता है। हम कैसे देख सकते हैं कि मूलदाब विद्यमान है। इसके लिए एक छोटा सा नरम तने वाला पौधा चुनें और जिस दिन वातावरण पर्याप्त आर्द्रता पूर्ण हो, उस दिन प्रातःकाल के समय तने के नीचे क्षैतिज दिशा में उसे तीखे ब्लेड से काट दें। आप जल्द ही देखेंगे कि उस कटे हुए तने पर द्रव की कुछ मात्रा ऊपर की ओर उठ आती है। यह द्रव सकारात्मक मूल दाब के कारण आता है। यदि आप उस तने में एक रबर की पतली नली चढ़ा दें तो आप वास्तव में स्राव की दर माप सकते हैं और स्रावित द्रव के कारकों की संरचना जान सकते हैं। मूल दाब का प्रभाव रात तथा सुबह के समय भी देखा जा सकता है, जब वाष्पीकरण की

प्रक्रिया कम होती है और अतिरिक्त पानी घास के तिनकों की नोक पर विशेष छिद्रों से स्रावित जल बूंदों के रूप में लटकने लगता है। इस प्रकार द्रव के रूप में पानी का क्षय **बिंदुस्राव** (गटेशन) कहलाता है।

जल परिवहन की कुल क्रिया में मूल दाब केवल एक साधारण दाब ही प्रदान कर पाता है। यह उच्च वृक्षों में जल के चलन में इसकी कोई बड़ी भूमिका नहीं होती है। मूल दाब का व्यापक योगदान जाइलम में पानी के अणुओं को निरंतर कड़ी के रूप में स्थापित रखने में हो सकती है जो कि अक्सर वाष्पोत्सर्जन के द्वारा पैदा किए गए वृहत् तनावों के कारण टूटती रहती है। अधिकांश जल को परिवहन करने में मूल दाब का कोई अर्थ नहीं है। अधिकतर पौधों की आवश्यकता वाष्पोत्सर्जनित खिंचाव से पूरी हो जाती है।

11.3.2.2 वाष्पोत्सर्जन खिंचाव

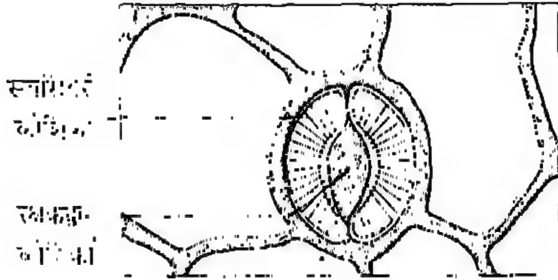
प्राणियों की भांति पौधों में परिसंचरण तंत्र नहीं होता, इसके बावजूद, जाइलम के माध्यम से जल का ऊपरी बहाव पर्याप्त उच्च दर से, लगभग 15 मीटर प्रति घंटे तक हो सकता है। यह गति कैसे होती है? यह एक पेंचीदा सवाल आज तक सवाल ही बना हुआ है। पौधे के द्वारा पानी ऊपर की ओर 'धकेला' जाता है या फिर ऊपर से खींचा जाता है। अधिकतर शोधकर्ता सहमत हैं कि पौधों द्वारा पानी मुख्यतः खींचा जाता है और इसकी संचालन शक्ति पत्तियों में वाष्पोत्सर्जन की प्रक्रिया का परिणाम है। इसे जल परिवहन का **संयंजन-तनाव वाष्पोत्सर्जन खिंचाव मॉडल** के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। परंतु इस वाष्पोत्सर्जन खिंचाव को कौन जनित कर रहा है?

पौधों में जल अस्थायी है। प्रकाश-संश्लेषण एवं वृद्धि के लिए पत्तियों में पहुँचने वाले पानी का एक प्रतिशत से भी कम प्रयोग किया जाता है। पानी की अधिकतर मात्रा पत्तियों से **रंध्र** द्वारा उड़ा दी जाती हैं। जल की यही क्षति **वाष्पोत्सर्जन** कहलाती है।

आपने पिछली कक्षाओं में वाष्पोत्सर्जन का अध्ययन एक स्वस्थ पादप को पॉलीथिन के अंदर रखकर और उसके अंदर की सतह पर जल की सूक्ष्म बूंदों का अवलोकन करके किया होगा। आप पत्ती से पानी की इस कमी की प्रक्रिया को कोबाल्टक्लोराइड पेपर द्वारा कर सकते हैं, जिसका रंग पानी अवशोषित करने पर बदल जाता है।

11.4 वाष्पोत्सर्जन (ट्रांसपिरेशन)

वाष्पोत्सर्जन, पौधों द्वारा जल का वाष्प के रूप में परिवर्तन तथा इससे उत्पन्न क्षति है। मुख्यतः यह पत्तियों में पाए जाने वाले **रंध्रों** से होता है। वाष्पोत्सर्जन में पानी का वाष्प बनकर उड़ने के अलावा ऑक्सीजन एवं कार्बनडाइऑक्साइड का आदान-प्रदान भी पत्तियों में छोटे छिद्रों जिन्हें रंध्र कहते हैं, के द्वारा होता है। सामान्यतः ये रंध्र दिन में खुले रहते हैं और रात में बंद हो जाते हैं। रंध्र का बंद-होना और खुलना रक्षक कोशिकाओं के स्फीति (टरगर) में बदलाव से होता है। प्रत्येक **रक्षक कोशिका** की आंतरिक भित्ति **रंध्रछिद** की तरफ काफी मोटी एवं तन्यतापूर्ण होती है। रंध्र को घेरे दो रक्षक कोशिकाओं में जब स्फीति दाब बढ़ता है तो पतली बाहरी भित्तियाँ बाहर की ओर उभरती है और अंदरूनी भित्ति को अर्धचंद्राकार स्थिति में आने को मजबूर करती है। रंध्र छिद्र के खुलने


चित्र 11.8 रक्षक कोशिका रंध्र के साथ

में रक्षक कोशिका की भित्तियों में उपस्थित सूक्ष्म सूत्राभ (माइक्रोफिबरिल) भी सहायता करता है। सेलुलोज सूक्ष्मसूत्राभ का अभिविन्यास अरीय क्रम से होता है न कि अनुदैर्घ्य क्रम से, जो रंध्रछिद्र को आसानी से खोलता है। पानी की कमी होने पर जब रक्षक कोशिका की स्फीति समाप्त होती है (या जल तनाव खत्म होता है) तो तन्य आंतरिक भित्तियाँ पुनः अपनी मूल स्थिति में जाती हैं, तब रक्षक कोशिकाएँ ढीली पड़ जाती हैं और रंध्र छिद्र बंद हो जाते हैं। सामान्य तौर पर एक पृष्ठधारी (प्राय:द्विबीजपत्री) पत्ती के निचली ओर अधिक संख्या में रंध्र होते हैं जबकि एक द्विपार्श्वीय (प्राय: एक बीजपत्री) पत्ती में रंध्रों की संख्या दोनों तरफ लगभग बराबर होती है।

वाष्पोत्सर्जन कई बाहरी कारकों जैसे कि ताप, प्रकाश, आर्द्रता एवं वायु की गति से प्रभावित होता है-वाष्पोत्सर्जन को प्रभावित करने वाले अन्य पादप कारक जैसे कि रंध्रों की संख्या एवं वितरण, खुले रंध्रों का प्रतिशत, पौधों में पानी की उपस्थिति तथा वितान रचना आदि है।

जाइलम रस का वाष्पोत्सर्जित रूप से ऊपर चढ़ना मुख्य रूप से पानी के निम्न भौतिक गुणों पर निर्भर करता है:

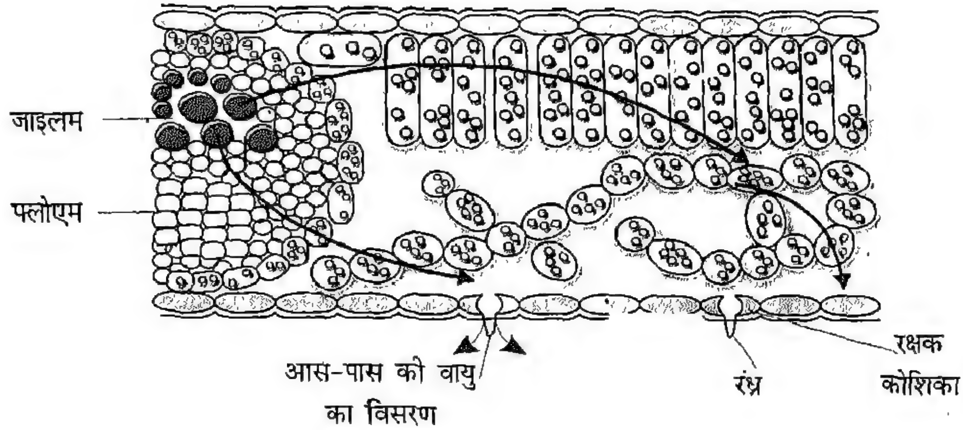
सासंजन - जल के अणुओं के बीच आपसी आकर्षण

आसंजन - जल अणुओं का ध्रुवीय सतह की ओर आकर्षण (जैसे कि वाहिकीय तत्वों की सतह)

पृष्ठ तनाव - पानी के अणु का द्रव अवस्था में गैसीय अवस्था की अपेक्षा एक दूसरे से अधिक आकर्षित होना।

पानी की ये विशिष्टताएँ उसे उच्च **तन्य सामर्थ्य** प्रदान करती हैं, जैसे एक केशिकात्व खिंचाव शक्ति से प्रतिरोध की क्षमता तथा उच्च **केशिकात्व** अर्थात् किसी पतली नलिका में चढ़ने की क्षमता। पौधों में केशिकात्व को लघुव्यास वाले वाहिकीय, तत्व जैसे **ट्रैकीड** एवं **वाहिका तत्व** से भी सहायता मिलती है।

प्रकाश-संश्लेषण प्रक्रिया के लिए जल की आवश्यकता होती है। जाइलम वाहिकाएँ पानी को जरूरत के अनुसार जड़ से पत्ती की शिराओं तक पहुँचाती हैं। लेकिन वह कौन सी शक्ति है, जो पानी के अणुओं को पत्ती के मृदूतक तक जरूरत के अनुसार खींच लाती हैं। जैसे ही वाष्पोत्सर्जन होता है और चूँकि पानी की पतली परत कोशिकाओं के ऊपर लगातार होती है, अत: यह जाइलम से पत्ती तक पानी के अणुओं को खींचने में प्रतिफलित होता है। अधोरंध्री गुहिका तथा अंतरा कोशिका जगत के बजाय वातावरण में जलवाष्प की सांद्रता कम होती है, अत: पानी पास की हवा में विसरित हो जाता है और यह खिंचाव पैदा करता है (चित्र 11.9)। मापन से स्पष्ट होता है कि वाष्पोत्सर्जन द्वारा पैदा किया गया बल पानी को जाइलम के आकार के स्तंभ में 130 मीटर की ऊँचाई तक खींचने के लिए पर्याप्त होता है।



चित्र 11.9 जल एवं आयन अवशोषण एवं जड़ों में चालन के सिंप्लास्टिक एवं एपोप्लास्टिक पथ

11.4.1 वाष्पोत्सर्जन एवं प्रकाश-संश्लेषणः एक समझौता

वाष्पोत्सर्जन में एक से अधिक उद्देश्य निहित होते हैं जो कि निम्नलिखित हैं:

- पौधों में अवशोषण एवं परिवहन के लिए वाष्पोत्सर्जन खिंचाव पैदा करना
- प्रकाश-संश्लेषण क्रिया के लिए पानी का संभरण
- मृदा से प्राप्त खनिजों का पौधों के सभी अंगों तक परिवहन करना
- पत्ती के सतह को वाष्पीकरण द्वारा 10 से 15 डिग्री तक ठंडा रखना
- कोशिकाओं को स्फीत रखते हुए पादपों के आकार एवं बनावट को नियंत्रित रखना

एक सक्रिय प्रकाश-संश्लेषण में रत पौधे को जल की अत्यंत ही आवश्यकता रहती है। प्रकाश-संश्लेषण में उपलब्ध जल सीमाकारी हो सकता है, जिसे वाष्पोत्सर्जन और प्रभावित करता है। वर्षावनों में आर्द्रता इसी जल-चक्र के कारण वातावरण में तथा पुनः मृदा में देखी गई है।

सी-4 (C_4) प्रकाश-संश्लेषण तंत्र का क्रम-विकास, संभवतः कार्बन-डाइऑक्साइड की उपलब्धता को बढ़ाने तथा पानी की क्षति को कम करने की रणनीति के तहत हुआ है। C_4 पौधे, C_3 की तुलना में कार्बन (शर्करा बनाने में) को सुस्थिर बनाने में दोगुना सक्षम होते हैं। C_4 पौधे C_3 पौधे से समान मात्रा के कार्बन डाइऑक्साइड के यौगिकीरण हेतु आधी मात्रा में जल को खोते (कम करता) हैं।

11.5 खनिज पोषक का उद्ग्रहण एवं संचरण

पौधे अपनी कार्बन एवं अधिकतर ऑक्सीजन की आवश्यक मात्रा वातावरण में उपलब्ध कार्बन डाइऑक्साइड से प्राप्त करते हैं; हालाँकि उनकी शेष पोषण की आवश्यकता हाइड्रोजन हेतु मृदा से प्राप्त खनिजों तथा जल से पूरी होती है।

11.5.1 खज़िन आयनों का उद्ग्रहण

जल के समान, सभी खनिज तत्व जड़ों द्वारा निष्क्रियता विधि द्वारा अवशोषित नहीं किए जा सकते। इसके लिए दो कारक जिम्मेदार होते हैं। (i) मृदा के अंदर खनिजों का आवेशित रूप में रहना है जोकि कोशिका भित्ति को पार नहीं करें सकते हैं और (ii)

मृदा के अंतर्गत खनिजों की सांद्रता, जड़ों के अंदर की सांद्रता से प्रायः कम होती है। इसीलिए अधिकतर खनिज जड़ों में बाह्य त्वचा की कोशिकाओं की कोशिका द्रव्य में **सक्रिय अवशोषण** के द्वारा प्रवेश करते हैं। इसमें एटीपी के रूप में ऊर्जा की आवश्यकता होती है। आयन का सक्रिय उद्ग्रहण मूल में जल विभव प्रवणता के लिए अंशतः जिम्मेदार होता है, अतः परासरण द्वारा जल के प्रवेश के लिए भी कुछ आयन बाह्य त्वचा कोशिका में निष्क्रिय रूप से भी संचलन करते हैं। मूल रोम कोशिका की झिल्ली में पाए जाने वाले विशिष्ट प्रोटीन, आयन को मृदा से सक्रिय पंप द्वारा बाह्य त्वचा की कोशिकाओं के कोशिका द्रव्य में भेजती हैं। सभी कोशिकाओं की भांति अंतःत्वचा में भी कोशिका की झिल्ली में कई परिवहन प्रोटीन पाए जाते हैं। वे कुछ विलेय को झिल्ली के आर-पार आने जाने देते हैं लेकिन अन्य को नहीं। *अंतःत्वचा की कोशिकाओं के परिवहन प्रोटीन नियंत्रण बिंदु होते हैं, जहाँ पौधे विलेय की मात्रा एवं प्रकार को जाइलम में पहुँचाते हैं तथा समायोजित करते हैं।* यहाँ ध्यान दें कि मूल अंतःत्वचा में सुबेरित की पट्टी होने के कारण एक दिशा में ही सक्रिय परिवहन करने की क्षमता होती है।

11.5.2 खनिज आयनों का स्थानांतरण

जब आयन सक्रिय या निष्क्रिय उद्ग्रहण से या फिर दोनों की सम्मिश्रित प्रक्रिया के माध्यम से जाइलम में पहुँच जाते हैं, तब उनका परिवहन पादप तने एवं सभी भागों तक वाष्पोत्सर्जन प्रवाह के माध्यम से होता है।

खनिज तत्वों के लिए मुख्य कुंड पौधों की वृद्धि का क्षेत्र होता है जैसे कि शिखाग्र एवं पार्श्व विभाज्योतक, तरुण-पत्तियाँ, विकासशील फूल, फल एवं बीज तथा भंडारण अंग। खनिज आयनों का विसर्जन महीन शिराओं के अंतिम छोर पर कोशिकाओं के द्वारा विसरण एवं सक्रिय उद्ग्रहण से होता है।

खनिज आयनों को जल्दी ही पुनःसंघटित विशेष रूप से पुराने जरावस्था वाले भाग से किया जाता है। पुरानी तथा मरती हुई पत्तियाँ अपने भीतर के खनिजों को नई पत्तियों में निर्यातित कर देती हैं। ठीक इसी प्रकार से पत्तियाँ पर्णपाती वृक्ष से झड़ने के पहले अपने खनिज तत्वों को अन्य भागों को दे देती हैं। जो पदार्थ प्रायः त्वरित संचारित या संघटित होते हैं; वे हैं फॉस्फोरस, सल्फर, नाइट्रोजन तथा पोटैशियम। कुछ तत्व जो कि संचरनात्मक कारक होते हैं, जैसे कि कैल्सियम, इन्हें पुनःसंघटित नहीं किया जाता है। जाइलम स्राव का विश्लेषण यह दर्शाता है कि कुछ नाइट्रोजन अकार्बनिक आयनों के रूप में तथा इसका अत्यधिक भाग कार्बनिक एमिनो अम्ल तथा संबंधित कारकों के रूप में ढोए जाते हैं। इसी तरह फॉस्फोरस एवं सल्फर भी कार्बनिक यौगिकों के रूप में पहुँचाए जाते हैं। इसके अलावा जाइलम एवं फ्लोएम के बीच भी पदार्थों का आदान-प्रदान होता है। अतः हम स्पष्ट रूप से अंतर नहीं कर पाते कि जाइलम केवल अकार्बनिक पोषकों का परिवहन करता है तथा फ्लोएम कार्बनिक पदार्थों का, जैसा कि पहले विश्वास किया जाता था।

11.6 फ्लोएम परिवहन: उद्गम से कुंड की ओर प्रवाह

आहार मुख्यतः शर्करा वाहिका ऊतक के फ्लोएम द्वारा उद्गम से कुड की ओर परिवहनित किया जाता है। सामान्यतः स्रोत को पौधे का वह हिस्सा माना जाता है जहाँ आहार संश्लेषित होता है, जैसे कि पत्तियाँ और कुंड (सिंक)। यह वह भाग है, जहाँ

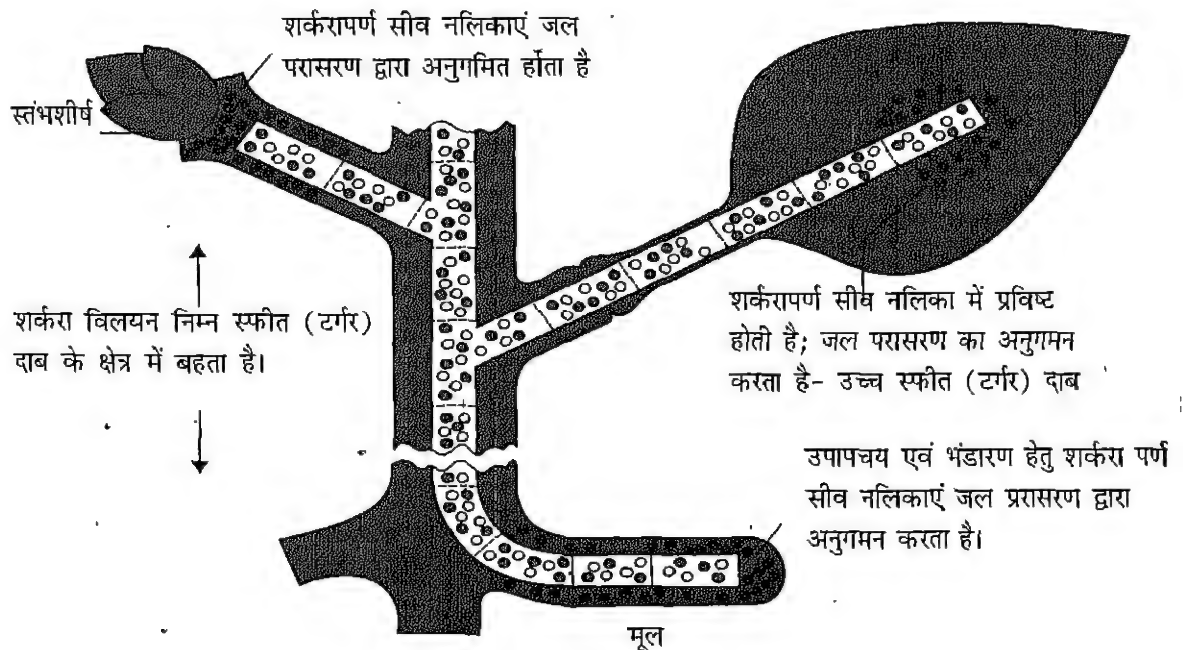
भोजन एकत्र होता है। लेकिन यह स्रोत और कुंड अपनी भूमिकाएँ मौसम एवं जरूरत के अनुसार बदल भी सकते हैं। जड़ों में एकत्र की गई शर्करा वसंत के आरंभ में आहार का स्रोत बन जाती है। इस समय पादपों पर नई कलियाँ कुंड का काम करती हैं। प्रकाश-संश्लेषण साधनों की वृद्धि एवं परिवर्धन हेतु ऊर्जा की आवश्यकता होती है। चूँकि स्रोत और कुंड का संबंध परिवर्तनशील है, अतःगति की दिशा ऊपर या नीचे की ओर अर्थात् **दोतरफा** हो सकती है। जाइलम के साथ यह विपरीत है, जहाँ गति सदैव नीचे से ऊपर की ओर एक दिशा में होती है। यद्यपि, वाष्पोत्सर्जन का जल **एकतरफा** प्रवाह करता है किंतु फ्लोएम के रस में भोजन का परिवहन सभी दिशाओं में हो सकता है जब तक स्रोत और कुंड शर्करा का उपयोग संग्रहण तथा अपादान में सक्षम हों।

फ्लोएम रस में मुख्यत: जल और शर्करा होता है, लेकिन अन्य शर्कराएँ, हार्मोन तथा एमीनो अम्ल आदि भी फ्लोएम के द्वारा **स्थानांतरित** होते हैं।

11.6.1 दाब प्रवाह या सामूहिक प्रवाह परिकल्पना

स्रोत से कुंड की ओर शर्करा के स्थानांतरण के लिए आवश्यक स्वीकृत क्रियाविधि को दाब प्रवाह परिकल्पना कहते हैं (चित्र 11.10)। जैसे ही स्रोत पर ग्लूकोज (प्रकाश-संश्लेषण द्वारा) संश्लेषित होता है, शर्करा (एक डाइसैकेराइड) में बदल दिया जाता है। इसके बाद यह शर्करा सखी कोशिकाओं में तथा बाद में सक्रिय परिवहन द्वारा जीवंत फ्लोएम चालन नलिका कोशिका में संचरित होती है। स्रोत पर लदान (लोडिंग) की यह प्रक्रिया फ्लोएम में एक अतिपरासारी अवस्था को पैदा कर देता है।

निकटवर्ती जाइलम जल परासरण के द्वारा फ्लोएम में चला जाता है। जब परासरणी दाब फ्लोएम में बनता है तो फ्लोएम रस निम्न दाब के क्षेत्र में चला जाता है। कुंड पर परासरणी दबाव निश्चित रूप से घटना चाहिए। एक बार फिर फ्लोएम रस से शर्करा को



चित्र 11.10 स्थानांतरण की प्रक्रिया की आरेखीय प्रस्तुति

बाहर करने तथा उस कोशिका तक जहाँ शर्करा ऊर्जा, स्टार्च या सेलुलोज में बदलती है, ले जाने के लिए सक्रिय परिवहन आवश्यक होता है। जैसे ही शर्कराएँ हटती हैं, परासरणी दाब घटता है और जल फ्लोएम से बाहर चला जाता है।

सारांश में फ्लोएम शर्कराओं का परिवहन स्रोत से शुरू होता है, जहाँ शर्कराओं को एक चालानीनलिका में (सक्रिय परिवहन द्वारा) लादा जाता है। फ्लोएम की यह लदान एक जल विभव प्रवणता की शुरूआत करता है जो कि फ्लोएम में सामूहिक प्रवाह को सुगम बनाता है।

फ्लोएम ऊतक सीव ट्यूब कोशिकाओं (चालानी नलिका कोशिका) से बना होता है जो लंबी स्तंभ की रचना करता है, जिसके अंतिम भित्ति में छिद्र होता है, जिन्हें चालनी पट्टिका कहते हैं। कोशिका द्रव्यी तंतु चालनी पट्टिका के छिद्र में प्रवेशित होती है तथा सतत तंतु बनाती है। जैसे ही द्रवस्थैतिक दबाव फ्लोएम के चालनी नलिका में बढ़ता है दाब प्रवाह शुरू हो जाता है तथा द्रव (रस) फ्लोएम से चलन करता है। इस बीच कुंड पर आने वाले शर्करा को फ्लोएम से सक्रिय रूप से तथा शर्करा के रूप में बाहर किया जाता है। फ्लोएम में विलेय की क्षति से एक उच्च जल विभव पैदा होता है और पानी अंत में जाइलम के पास आ जाता है।

एक साधारण प्रयोग, जिसे गिर्डलिंग कहा जाता है, उसका प्रयोग भोजन के परिवहन में होने वाले ऊतक को पहचानने में किया गया। पेड़ के स्तंभ पर छाल का एक वलय (रिंग) फ्लोएम तक सावधानीपूर्वक हटाया जाता है। नीचे की तरफ अब भोजन की गति न होने के कारण वलय के ऊपर की छाल कुछ सप्ताह के बाद फूल जाती है। यह साधारण प्रयोग दर्शाता है कि फ्लोएम ऊतक भोजन के स्थानांतरण के लिए उत्तरदायी है तथा परिवहन की दिशा एकदिशीय है, अर्थात् मूल की तरफ। इस प्रयोग को आसानी से किया जा सकता है।

सारांश

पौधे विभिन्न अकार्बनिक तत्वों (आयन) एवं लवणों को अपने आस-पास के पर्यावरण से, विशेषकर, हवा, पानी तथा मृदा से लेते हैं। इन पोषकों की गति पर्यावरण से पौधों में, तथा एक पौधे की कोशिका से दूसरे पौधे की कोशिका तक, आवश्यक रूप से झिल्ली के आर-पार परिवहन के द्वारा होती है। कोशिका झिल्ली के आर-पार परिवहन, विसरण, सुसाध्य परिवहन या सक्रिय परिवहन के द्वारा होता है। मूल के द्वारा अवशोषित खनिज एवं पानी को जाइलम के द्वारा संचारित किया जाता है तथा पत्तियों के द्वारा संश्लेषित कार्बनिक पदार्थ पादप के विभिन्न भागों में फ्लोएम के द्वारा परिवहन किए जाते हैं।

निष्क्रिय परिवहन (विसरण, परासरण) तथा सक्रिय संचरण, जीवों में पोषकों को झिल्लिकाओं के आर-पार संचरित करने के दो तरीके हैं। निष्क्रिय परिवहन में विसरण के द्वारा झिल्ली के आर-पार बिना ऊर्जा व्यय किए पोषकों की गति सांद्रता प्रवणता के अनुसार होती है। पदार्थों का विसरण आकार तथा उसके जल में या कार्बनिक विलेयन में घुलनशीलता पर निर्भर करता है। परासरण एक विशेष प्रकार का विसरण है, जिसमें जल अर्धपारगम्य झिल्ली के पार जाता है तथा दाब एवं सांद्रता प्रवणता पर निर्भर करता है। सक्रिय परिवहन में एटीपी की ऊर्जा, अणुओं को सांद्रण प्रवणता के विरूद्ध झिल्ली के पार पंप करती है। जल विभव पानी की स्थितिज ऊर्जा है जो जल की गति में सहायता करती है। यह विलेय अंत:शक्ति तथा दाब अंत:शक्ति द्वारा निर्धारित होती है। कोशिका का यह व्यवहार आस-पास के विलेयनों पर निर्भर करता है। यदि कोशिका के आस-पास का विलयन अतिपरासारी है तो जीवद्रव्य कुंचित हो जाता है। बीजों एवं शुष्क काष्ठों द्वारा जल

का अवशोषण विशेष प्रकार के विसरण से होता है जिसे अंत:शोषण कहते हैं।

उच्च पौधों में, वाहिका तंत्र जाइलम और फ्लोएम स्थानांतरण के लिए उत्तरदायी होता है। जल खनिज तथा पोषक पादप शरीर के अंदर केवल विसरण द्वारा संचारित नहीं हो सकते हैं, इसलिए ये सामूहिक प्रवाह तंत्र द्वारा संचरित होते हैं। तत्वों का सामूहिक रूप में एक जगह से दूसरी जगह परिवहन दो बिंदुओं के बीच दाब के अंतर के कारण होता है।

मूल रोमों द्वारा अवशोषित जल जड़ों की गहराई में दो अलग-अलग पथों से जाता है। उदाहरणार्थ - एपोप्लास्ट तथा सिमप्लास्ट। मृदा से विविध आयन तथा जल तने की कम ऊँचाई तक मूलदाब से परिवहित किए जाते हैं। वाष्पोत्सर्जन खिंचावमंडल पानी के परिवहन का सर्वाधिक स्वीकृत रूप है। वाष्प के रूप में पादप के विभिन्न भागों द्वारा पानी का क्षय रंध्रों द्वारा होता है। ताप, प्रकाश, आर्द्रता, वायु की गति वाष्पोत्सर्जन की दर को प्रभावित करती है। पानी की अधिक मात्रा पादप की पत्तियों के शीर्ष से बिंदुस्राव के द्वारा निकाला जाता है। पादपों में भोजन मुख्यत: शर्करा का परिवहन उद्गम से कुंड तक के लिए फ्लोएम जिम्मेवार होता है। फ्लोएम में स्थानांतरण द्विदिशायी होता है तथा उद्गम तथा कुंड संबंध वैविध्यपूर्ण होते हैं। फ्लोएम में स्थानांतरण दाब-प्रवाह परिकल्पना के द्वारा वर्णित किया गया है।

अभ्यास

1. विसरण की दर को कौन से कारक प्रभावित करते हैं?
2. *पोरीन्स क्या है? विसरण में ये क्या भूमिका निभाते हैं?*
3. पादपों में सक्रिय परिवहन के दौरान प्रोटीन पंप के द्वारा क्या भूमिका निभाई जाती है, व्याख्या करें?
4. शुद्ध जल का सबसे अधिक जल विभव क्यों होता है, वर्णन करें?
5. निम्न के बीच अंतर स्पष्ट करें:-
   (क) विसरण एवं परासरण (ख) पाष्पोत्सर्जन एवं वाष्पीकरण
   (ग) परासारी दाब तथा परासारी विभव (घ) विसरण एवं अंत:शोषण
   (च) पादपों में पानी के अवशोषण का एपोप्लास्ट और सिमप्लास्ट पथ
   (छ) बिंदुस्राव एवं परिवहन (अभिगमन)
6. जल विभव का संक्षिप्त वर्णन करें। कौन से कारक इसे प्रभावित करते हैं? जल, विभव, विलेय विभव तथा दाब विभव के आपसी संबंधों की व्याख्या करें।
7. तब क्या होता है जब शुद्ध जल या विलेयन पर पर्यावरण के दाब की अपेक्षा अधिक दाब लागू किया जाता है?
8. (क) रेखांकित चित्र की सहायता से पौधों जीवद्रव्य कुंचन की विधि का वर्णन उदाहरण देकर करें।
   (ख) यदि पौधे की कोशिका को उच्च जल विभव वाले विलेयन में रखा जाए तो क्या होगा?
9. पादप में जल एवं खनिज के अवशोषण में माइक्रोराइजलीय (कवकमूल सहजीवन) संबंध कितने सहायक हैं?
10. पादप में जल परिवहन हेतु मूलदाब क्या भूमिका निभाता है?
11. पादपों में जल परिवहन हेतु वाष्पोत्सर्जन खिंचावमंडल की व्याख्या करें। वाष्पोत्सर्जन क्रिया को कौन सा कारक प्रभावित करता है, पादपों के लिए कौन उपयोगी है?
12. पादपों में जाइलम रसारोहण के लिए जिम्मेदार कारकों की व्याख्या करें।
13. *पादपों में खनिजों के अवशोषण के दौरान अंत:त्वचा की आवश्यक भूमिका क्या होती है?*
14. जाइलम परिवहन एकदिशीय तथा फ्लोएम परिवहन द्विदिशीय होता है? व्याख्या करें।
15. पादपों में शर्करा के स्थानांतरण के दाब प्रवाह परिकल्पना की व्याख्या कीजिए।
16. पाष्पोत्सर्जन के दौरान रक्षकद्वार कोशिका खुलने एवं बंद होने के क्या कारण हैं?

अध्याय 12

खनिज पोषण

12.1 *पादपों में खनिज अनिवार्यताओं की अध्ययन विधि*

12.2 *अनिवार्य खनिज तत्व*

12.3 *तत्वों के अवशोषण की क्रियाविधि*

12.4 *विलेय का स्थानांतरण*

12.5 *मृदा अनिवार्य तत्वों के संचयिता के रूप में*

12.6 *नाइट्रोजन का उपापचय*

सभी जीवों की मूलभूत आवश्यकताएं अनिवार्य रूप से एक समान होती हैं। उनको अपनी वृद्धि एवं परिवर्धन के लिए वृहद् अणु जैसे कि कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा एवं खनिज लवणों की अनिवार्यता होती है।

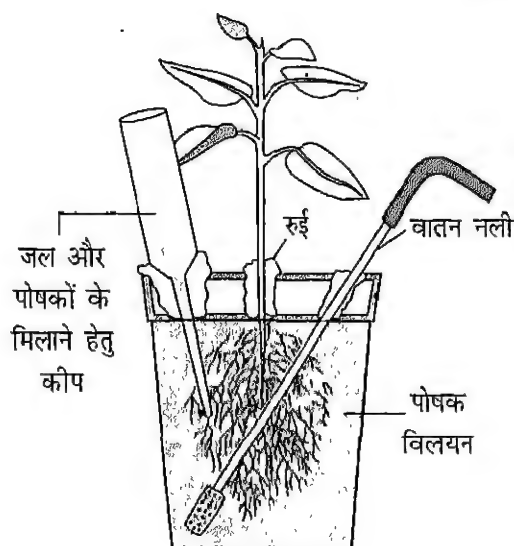
यह अध्याय मुख्यत: अकार्बनिक पादप पोषण की ओर केंद्रित है, जिसमें आप पौधों की वृद्धि एवं परिवर्धन के लिए अनिवार्य तत्वों को पहचानने के तरीकों और उनकी अनिवार्यता निर्धारित करने वाले मापदंडों का अध्ययन करेंगे। आप अनिवार्य तत्वों की भूमिका, उनकी कमी से होने वाले लक्षणों और उनकी अवशोषण क्रियाविधि का भी अध्ययन करेंगे। यह अध्याय आपको संक्षेप में जीव N_2 स्थिरीकरण के महत्व और क्रियाविधि से भी अवगत कराता है।

12.1 पादपों की खनिज अनिवार्यता के अध्ययन की विधि

जूलियस सैकस् (1860) एक प्रमुख जर्मन पादपविद् ने सर्वप्रथम यह प्रदर्शित किया कि पादपों को मृदा की अनुपस्थिति में, पोषक विलयन के घोल में वयस्क अवस्था तक उगाया जा सकता है। पादपों को पोषक विलयन के घोल में उगाने की यह तकनीक **जल-संवर्धन** (Hydroponics) के नाम से जानी जाती है। उसके बाद कई उन्नत विधियां प्रयोग में लाई गई हैं, जिससे पादपों के लिए खनिज पोषकों की अनिवार्यता तय की जा सके। उपरोक्त सभी विधियों के प्रयोग का निष्कर्ष पादपों को मृदा विहीन पोषक विलयन के घोल में उगाना है। इन विधियों में शुद्धिकृत जल एवं पोषक खनिज की अनिवार्यता होती है। *क्या आप समझा सकते हैं कि यह अति अनिवार्य क्यों है?*

शृंखलाबद्ध प्रयोगों के पश्चात जिसके अंतर्गत पादपों की जड़ों को पोषक विलयन में डुबाया गया और उसमें एक तत्व को डाला और हटाया गया तथा विभिन्न सांद्रताओं में

दिया गया तो एक खनिज विलयन (Mineral solution) प्राप्त हुआ, जो पादप वृद्धि के लिए उपयुक्त था। इस विधि के द्वारा अनिवार्य तत्वों को पहचाना गया और उनकी कमी से होने वाले लक्षणों की खोज की गई। जल संवर्धन की तकनीक को सब्जियों जैसे कि टमाटर, बीजविहीन खीरा और सलाद (Lettuce) के व्यापारिक उत्पादन हेतु सफलतापूर्वक लागू किया गया है। यह ध्यान देने योग्य है कि पादप की आदर्श वृद्धि के लिए पोषक विलयन को प्रचुर वायुवीय (aerated) रखा जाए। यदि घोल अल्प वायुवीय होगा तो क्या होगा? जल संवर्धन तकनीक को रेखा चित्र 12.1 और 12.2 में दर्शाया गया है।



चित्र 12.1 पोषक विलयन संवर्धन के लिए एक आदर्श अवस्था का आरेख

12.2 अनिवार्य खनिज तत्व

मृदा में उपस्थित अधिकांश खनिज तत्व जड़ों से पौधों में प्रवेश कर सकते हैं। तथ्यों के अनुसार अभी तक खोजे गए 105 खनिज तत्वों में से 60 से अधिक तत्व विभिन्न पौधों में पाए गए हैं। कुछ पौधों की प्रजातियाँ सिलिनियम का संग्रह करती है, कुछ गोल्ड का तथा नाभिकीय परीक्षण स्थलों के समीप उगने वाले पौधें रेडियोएक्टिव स्ट्रॉनशियम जम कर लेते हैं। पौधों में खनिज की न्यूनतम सांद्रता (10^{-8}g/mL) को भी पता करने की तकनीक आज उपलब्ध है। प्रश्न यह उठता है कि क्या सभी विभिन्न खनिज तत्व जो पौधों में पाए जाते हैं, उदाहरण के लिए ऊपर वर्णित स्वर्ण तथा स्ट्रॉनशियम वास्तव में पौधों के लिए अनिवार्य हैं? हम यह कैसे निर्धारित करें कि पौधों के लिए अनिवार्य हैं या नहीं?

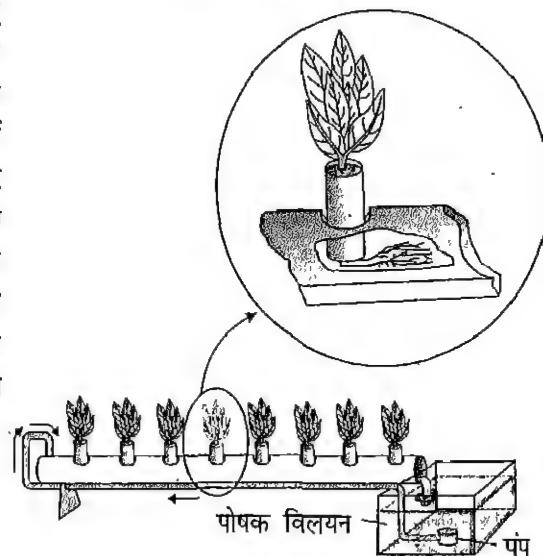
12.2.1 अनिवार्यता निर्धारण के मापदंड

किसी तत्व की अनिवार्यता के मापदंड निम्नानुसार हैं-

(अ) तत्व को पादप की सामान्य वृद्धि और जनन हेतु नितांत आवश्यक होना चाहिए। उस तत्व की अनुपस्थिति में पौधे अपना जीवनचक्र पूरा नहीं कर पाएं अथवा बीज भी धारण नहीं कर पाएं।

(ब) तत्व की अनिवार्यता 'विशिष्ट' होनी चाहिए और इसे किसी अन्य तत्व द्वारा प्रतिस्थापन करना संभव नहीं होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, किसी एक तत्व की कमी को किसी अन्य तत्व के द्वारा दूर नहीं किया जा सकता है।

(स) तत्व पादप के उपापचय में प्रत्यक्ष रूप में सम्मिलित हों।



चित्र 12.2 जल संवर्धन से पौधों का उत्पादन। पौधे थोड़ी आनत नली या नाली में रखे जाते हैं। एक पंप पोषक विलयन को संचयिता से उठे हुए भाग तक नली में परिसंचरित करता है। विलयन नली के नीचे जाता है और संचयिता तक गुरुत्व के कारण पहुँच जाता है। दी गई व्यवस्था में वे पौधे दिखाए गए हैं जिनका मूल सतत वायवीय पोषक विलयन में डूबा हुआ है। रेखा बहाव गति को दर्शाती है।

उपरोक्त मापदंडों के आधार पर केवल कुछ ही तत्व पौधों की वृद्धि एवं उपापचय के लिए नितांत रूप से अनिवार्य माने गए हैं। उनको आवश्यक मात्रा के आधार पर दो व्यापक श्रेणियों में बाँटा गया है।

(i) वृहत् पोषक (ii) सूक्ष्म पोषक

वृहत् पोषक: वृहत् पोषकों को सामान्यत: पादप के शुष्क पदार्थ का 1 से 10 मि. ग्राम/लीटर की सांद्रता से विद्यमान होना चाहिए। इस श्रेणी में आने वाले तत्व हैं- कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, फॉस्फोरस सल्फर, पोटैसियम, कैल्सियम और मैग्नेसियम। इनमें से कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन मुख्यतया CO_2 एवं H_2O से प्राप्त होते हैं जबकि दूसरे मृदा से खनिज के रूप में अवशोषित किए जाते हैं।

सूक्ष्म पोषक: सूक्ष्म पोषकों अथवा लेशमात्रिक तत्वों की अनिवार्यता अत्यंत सूक्ष्म मात्रा में होती है (0.1 मि.ग्राम/ लीटर शुष्क भार के बराबर या उससे कम)। इनके अंतर्गत लौह, मैग्नीज, तांबा, मोलिब्डेनम, जिंक, बोरोन, क्लोरीन और निकिल सम्मिलित हैं।

उपरोक्त वर्णित 17 अनिवार्य तत्वों के अतिरिक्त, कुछ लाभदायक तत्व भी हैं; जैसे कि सोडियम, सिलिकॉन, कोबाल्ट तथा सिलिनियम। ये उच्च श्रेणी के पौधों के लिए अनिवार्य होते हैं।

अनिवार्य तत्वों को उनके विविध कार्यो के आधार पर सामान्यत: चार श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। ये श्रेणियाँ हैं:

(i) अनिवार्य तत्व जैव अणुओं के घटक हैं, अत: कोशिका के रचनात्मक तत्व हैं (जैसे कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन और नाइट्रोजन)।

(ii) अनिवार्य तत्व जो पौधे की ऊर्जा से संबंधित रासायनिक यौगिकों के घटक हैं; जैसे पर्णहरित (chlorophyll) में मैग्नीसियम और एटीपी में फॉस्फोरस।

(iii) अनिवार्य तत्व जो एंजाइमों को सक्रिय या बाधित करते हैं जैसे Mg^{2+} राइबुलोज बिसफॉस्फेट कार्बोक्सिलेस-ऑक्सीजिनेस और फॉस्फोइनॉल पाइरुवेट कार्बोक्सिलेस दोनों को सक्रिय करता है। ये दोनों एंजाइम प्रकाश संश्लेषणीय कार्बन स्थिरीकरण में अति महत्वपूर्ण हैं। Zn^{2+} एल्कोहल डिहाइड्रोजिनेस को क्रियाशील करता है तथा Mo नाइट्रोजन उपापचय के दौरान नाइट्रोजिनेस को क्रियाशील करता है। क्या आप इस श्रेणी में कुछ और नाम जोड़ सकते हैं? इस काम के लिए, आप को पहले अध्ययन किए गए जीव रसायन पथों का संग्रहण अनिवार्य होगा।

(iv) कुछ अनिवार्य तत्व कोशिका के परासाणी विभव को बदलते हैं। पोटैसियम की रंध्रों के खुलने और बंद होने में महत्वपूर्ण भूमिका है। आप फिर से कोशिका के जल विभव को निर्धारित करने में खनिजों के विलेय के रूप में भूमिका को स्मरण करें।

12.2.2 वृहत् एवं सूक्ष्म पोषकों की भूमिका

अनिवार्य तत्वों को कई क्रिया करनी होती हैं। वे पौधों की कोशिकाओं की विभिन्न उपापचयी प्रक्रियाओं में भाग लेते हैं। उदाहरणार्थ कोशिका झिल्ली की पारगम्यता, कोशिक द्रव के परासरण दाब का नियंत्रण, इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र, बफर कार्य, एंजाइम से संबंधित कार्य और वृहद् अणु तथा सह एंजाइम्स के मुख्य संघटक का कार्य करते हैं। खनिज तत्वों के रूप व क्रियाएं निम्नानुसार हैं:

नाइट्रोजन: इस खनिज तत्व की अनिवार्यता पौधों में सर्वाधिक मात्रा में होती है। इसका अवशोषण मुख्यत: NO_3^- के रूप में होता है। लेकिन कुछ मात्रा NO_2^- अथवा NH_4^+ के रूप में भी ली जाती है। इसकी अनिवार्यता पौधों के सभी भागों विशेषत: विभज्योतक ऊतकों एवं सक्रिय उपापचयी कोशिकाओं में होती है। नाइट्रोजन प्रोटीन, न्यूक्लिक अम्लों, विटामिन और हार्मोन का एक मुख्य संघटक है।

फॉस्फोरस: पादपों द्वारा फॉस्फोरस मृदा से फॉस्फेट आयनों ($H_2PO_4^-$ अथवा HPO_4^{2-}) के रूप में अवशोषित किया जाता है। यह कोशिका झिल्ली, कुछ प्रोटीन, सभी न्यूक्लिक अम्लों एवं न्यूक्लियोटाइड के लिए संघटक है तथा सभी फॉस्फोराइलेशन क्रियाओं में इसका महत्व है।

पोटेशियम: पादपों द्वारा इसका अवशोषण पोटैशियम आयन (K^+) के रूप में होता है। इसकी पौधों के विभज्योतक ऊतकों, कलिकाओं, पर्णों, मूलशीर्षो में अधिक मात्रा जरूरत होती है। पोटैशियम कोशिकाओं में घनायन-ऋणायन संतुलन का निर्धारण करने में सहायक होता है। साथ ही यह प्रोटीन संश्लेषण, रंध्रों के खुलने और बंद होने, एंजाइम सक्रियता और कोशिकाओं को स्फीत अवस्था में बनाए रखने में शामिल होता है।

पादप कैल्शियम को मृदा से कैल्शियम आयनों (Ca^{2+}) के रूप में अवशोषित करते हैं। इसकी आवश्यकता विभज्योतक तथा विभेदित होते हुए ऊतकों को अधिक होती है। कोशिका विभाजन के दौरान कोशिका भित्ति के संश्लेषण में भी इसका उपयोग होता है विशेष रूप से मध्य पट्टिका में कैल्शियम पेक्टेट के रूप में। इसकी अनिवार्यता समसूत्री तर्कु निर्माण के दौरान भी होती है। यह पुरानी पत्तियों में एकत्रित हो जाता है। यह कोशिका झिल्लियों की सामान्य क्रियाओं में शामिल होता है। यह कुछ एंजाइम को सक्रिय करता है तथा उपापचय कार्यों के नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

यह पादपों द्वारा द्वियोजी मैग्नीशियम (Mg^{2+}) आयन के रूप में अवशोषित होता है। यह प्रकाश-संश्लेषण तथा श्वसन क्रिया के एंजाइमों को सक्रियता प्रदान करता है तथा डीएनए तथा आरएनए के संश्लेषण में भी शामिल होता है। Mg क्लोरोफिल के वलय संरचना का संघटक है और राइबोसोम के आकार को बनाए रखने में सहायक है।

पादप गंधक को सल्फेट (SO_4^{2-}) के रूप में लेता है। यह सिस्टीन (Cysteine) व मेथियोनीन (Methionine) नामक अमीनो अम्लों में पाया जाता है तथा अनेक विटामिनों (थायमीन, बायोटीन, कोएंजाईम ए) एवं फेरेडॉक्सिन का मुख्य संघटक है।

पादप लोहा को फेरिक आयन (Fe^{3+}) के रूप में लेता है। पौधों को इसकी अनिवार्यता किसी अन्य सूक्ष्ममात्रिक तत्व की अपेक्षा अधिक मात्रा में होती है। यह फेरेडॉक्सिन तथा साइटोक्रोम जैसे प्रोटीन का भाग है जो कि इलेक्ट्रॉन के स्थानांतरण में संलग्न रहता है। इनका इलेक्ट्रॉन स्थानांतरण के समय Fe^{2+} से Fe^{3+} के रूप में विपरीत ऑक्सीकरण होता है। यह केटेलैज एंजाइम को सक्रिय कर देता है और पर्णहरित के निर्माण के लिए अनिवार्य होता है।

यह मैंगनस आयन (Mn^{2+}) के रूप में अवशोषित किया जाता है। यह प्रकाशसंश्लेषण, श्वसन तथा नाइट्रोजन उपापचय के अनेक एंजाइमों को सक्रिय कर देता

है। मैगनीज का प्रमुख कार्य प्रकाश-संश्लेषण के दौरान जल के अणुओं को विखंडित कर ऑक्सीजन को उत्सर्जित करना है।

जिंक: पादप जिंक को, जिंक (Zn^{2+}) आयन के रूप में लेते हैं। यह विविध एंजाइमों को विशेषत: कार्बोक्सीलेस को सक्रिय करता है। इसकी अनिवार्यता ऑक्सिन संश्लेषण में भी होती है।

तांबा: यह क्यूप्रिक आयन (Cu^{2+}) के रूप में अवशोषित होता है। यह पादपों के समग्र उपापचय के लिए अनिवार्य होता है। लौह की तरह यह भी रेडॉक्स प्रतिक्रिया से जुड़े विशेष एंजाइमों के साथ संलग्न रहता है तथा यह भी विपरित दिशा में Cu^{+} से Cu^{2+} में ऑक्सीकृत होता है।

बोरोन: यह BO_3^{3-} अथवा $B_4O_7^{2-}$ आयनों के रूप में अवशोषित होता है। इसकी अनिवार्यता Ca^{2+} को ग्रहण तथा उपयोग करने, झिल्ली की कार्यशीलता व पराग अंकुरण कोशिका दीर्घीकरण, कोशिका विभेदन एवं कार्बोहाइड्रेट के स्थानांतरण में होती है।

मॉलिब्डेनम: पादप इसे मॉलिब्डेट आयन (MoO_2^{2+}) के रूप में लेते हैं। यह नाइट्रोजन उपापचय के अनेक एंजाइमों, जैसे कि नाइट्रोजिनेस और नाइट्रेट रिडक्टेस तथा कई अन्य एंजाइमों का घटक है।

क्लोरीन: इसे क्लोराइड एनायन (Cl^-) के रूप में अवशोषित किया जाता है। पोटेशियम (K^+) एवं सोडियम (Na^+) के साथ मिलकर यह कोशिकाओं में विलेय की सांद्रता तथा एनायन केटायन संतुलन के निर्धारण करने में सहायता प्रदान करती है। यह प्रकाश-संश्लेषण में जल के विखंडन के लिए अनिवार्य है, जिससे ऑक्सीजन का निकास होता है।

12.2.3 अनिवार्य तत्वों की अपर्याप्तता के लक्षण

अनिवार्य तत्वों की सीमित आपूर्ति होने पर पादपों की वृद्धि अवरुद्ध होती है। अनिवार्य तत्वों की वह सांद्रता जिससे कम होने पर पादपों की वृद्धि अवरुद्ध होती है, वह क्रांतिक सांद्रता कहलाती है। इसलिए **क्रांतिक सांद्रता** के कम होने पर तत्व भिन्न हो जाता है। प्रत्येक तत्व की पौधों में एक या अधिक विशेष संरचनात्मक और कार्यात्मक भूमिका होती है, अत: उक्त तत्व की कमी से पादपों में कुछ आकारिकीय बदलाव आते हैं। ये आकारिकीय बदलाव तत्व की अपर्याप्तता को दर्शाते हैं जिसे अपर्याप्तता संबंधी लक्षण कहते हैं। अपर्याप्तता लक्षण, तत्व के अनुसार भिन्न-भिन्न होते हैं और पौधों में इस तत्व की आपूर्ति कराने पर ये लक्षण विलुप्त हो जाते हैं। यदि यह कमी बनी रहे तो अंतत: पादप की मृत्यु हो जाती है। पादपों के भाग जो अपर्याप्तता के लक्षण दर्शाते हैं, उक्त तत्व की गतिशीलता पर भी निर्भर करते हैं। पादप में जहां तत्व सक्रियता से गतिशील रहते हैं तथा तरुण विकासशील ऊतकों में निर्यातित होते हैं, वहां अपर्याप्तता के लक्षण पुराने ऊतकों में पहले प्रकट होते हैं।

उदाहरण के लिए नाइट्रोजन, पोटेशियम और मैग्नीशियम अपर्याप्तता के लक्षण सर्वप्रथम जीर्यमान पत्तियों में प्रकट होते हैं। पुरानी पत्तियों के जिन जैव अणुओं में ये तत्व होते हैं, विखंडित होकर नई पत्तियों तक गतिशील किया जाता है। जब तत्व अगतिशील होते हैं और वयस्क अंगों से बाहर अभिगमित नहीं होते, तो अपर्याप्तता लक्षण नई पत्तियों

में प्रकट होते हैं। उदाहरण के लिए तत्व गंधक और कैल्शियम कोशिका की संरचनात्मक इकाई के भाग हैं अत: ये आसानी से रूपांतरित नहीं होते हैं।

पौधों के खनिज पोषण का यह पहलू कृषि और उद्यान विज्ञान के लिए आवश्यक तथा महत्वपूर्ण है। पौधों द्वारा दर्शाए जाने वाले अपर्याप्तता लक्षणों के अंतर्गत क्लोरोसिस, नेक्रोसीस, अवरुद्ध पादप वृद्धि, अपरिपक्व पत्तियों व कलिकाओं का झड़ना और कोशिका विभाजन का रुकना आदि आते हैं। पत्तियों के क्लोरोफिल के ह्रास से पीलापन आना क्लोरोसिस कहलाता है। ये लक्षण N, K, Mg, S, Fe, Mn, Zn और Mo की कमी से होते हैं। Ca, Mg, Cu और K की कमी से नेक्रोसिस या ऊतकों या मुख्य रूप से पत्तियों की मृत्यु होती है। N, K, S एवं Mo की अनुपस्थिति या इनके निम्न स्तर के कारण कोशिका का विभाजन रुक जाता है। कुछ तत्व जैसे कि N, S, एवं Mo की सांद्रता कम होने के कारण पुष्पन में देरी होती है।

उपरोक्त विवरण से आप देख सकते हैं कि किसी तत्व की अपर्याप्तता से कई लक्षण प्रकट होते हैं। और यह लक्षण एक या विभिन्न तत्वों की अपर्याप्तता से हो सकते हैं। अत: अपर्याप्त तत्व को पहचानने के लिए पौधे के विभिन्न भागों में प्रकट होने वाले लक्षणों का अध्ययन करना पड़ता हैं और उपलब्ध तथा मान्य तालिका से तुलना करनी होती है। हमें इस बात से भी अवगत रहना चाहिए कि समान तत्व की कमी होने पर भिन्न-भिन्न पौधे, भिन्न प्रतिक्रिया देते हैं

12.2.4 सूक्ष्म पोषकों की आविषता

सूक्ष्म पोषकों की अनिवार्यता न्यून मात्रा में होती है, लेकिन मामूली कमी से भी अपर्याप्तता के लक्षण और अल्प वृद्धि आविषता उत्पन्न होती हैं। दूसरे शब्दों में, सांद्रताओं के सकीर्ण परिसर में ही कोई तत्व अनुकूलतम होता है। किसी खनिज़ आयन की वह सांद्रता जो ऊतकों के शुष्क भार में 10 प्रतिशत की कमी करे, उसे आविष माना गया है। इस तरह की क्रांतिक सांद्रता (Critical Concentration) विभिन्न सूक्ष्ममात्रिक तत्वों के बीच भिन्न होती है। आविषता के लक्षणों की पहचान मुश्किल होती है। अलग-अलग पादपों के तत्वों की आविषता स्तर भिन्न होती है। कई बार किसी एक तत्व की अधिकता दूसरे तत्व के अधिग्रहण को अवरुद्ध करती है। उदाहरण के लिए, मैंगनीज की आविषता के मुख्य लक्षण हैं- भूरे धब्बों का आविर्भाव, जो कि क्लोरिटिक शिराओं द्वारा घिरी रहती है। यह जानना अनिवार्य है कि लौह एवं मैग्नीशियम के साथ मैगनीज अंतर्ग्रहण तथा मैग्नीशियम के साथ एंजाइम्स में जुड़ने के लिए प्रतियोगिता करता है। मैगनीज स्तंभशीर्ष में कैल्शियम स्थानांतरण को भी बाधित करता है। इसलिए मैगनीज की अधिकता से लौह, मैग्नीशियम और कैल्शियम की कमी हो जाती है। अत: जो लक्षण हमें मैगनीज की कमी से प्रतीत होते हैं, वे वास्तव में लौह, मैग्नीशियम और कैल्शियम की कमी से होते हैं। क्या यह ज्ञान किसानों, बागवानों या आपके किचन-गार्डन में आपके लिए कुछ लाभदायक हो सकता है?

12.3 तत्वों के अवशोषण की क्रियाविधि

पौधों से तत्वों के अवशोषण की क्रिया विधि का अध्ययन अलग कोशिकाओं, ऊतकों तथा अंगों में किया गया है। ये अध्ययन व्यक्त करते हैं कि अवशोषण की प्रक्रिया को दो मुख्य

अवस्थाओं में सीमांकित किया जा सकता है। प्रथम अवस्था में कोशिकाओं के मुक्त अथवा बाह्य स्थान (ऐपोप्लास्ट) में तीव्र गति से आयन का अंतर्ग्रहण होना निष्क्रिय अवशोषण है। दूसरी अवस्था में कोशिकाओं की आंतरिक स्थान (सिम्प्लास्ट) में आयन धीमी गति से अंतर्ग्रहण किये जाते हैं। ऐपोप्लास्ट में आयनों की **निष्क्रिय** गति साधारणतया आयन चैनलों के द्वारा होती है जो कि ट्रांस झिल्ली प्रोटीन होते हैं और चयनात्मक छिद्रों का कार्य करते हैं। दूसरी तरफ सिमप्लास्ट में आयनों के प्रवेश और निष्कासन में उपापचयी ऊर्जा की अनिवार्यता होती है। यह एक सक्रिय प्रक्रिया है। आयनों की गति को प्राय: **अभिवाह** (Flux) कहते हैं। कोशिका के अंदर की गति को **अंतर्वाह** (Influx) और बाहर की गति को **बहिर्वाह** (Efflux) कहते हैं। आपने यह 11 वें अध्याय में पढ़ा है कि पादपों में खनिज लवणों का अंतर्ग्रहण तथा स्थानांतरण कैसे होता है?

12.4 विलेयों का स्थानांतरण

खनिज लवण जाइलम या दारू के माध्यम से जल की आरोही धारा के साथ संवहित किए जाते हैं, जो पादप में वाष्पोत्सर्जनाकर्षण द्वारा ऊपर खिंचते हैं। जाइलम द्रव के विश्लेषण से ज्ञात हुआ है कि इसमें खनिज लवण विद्यमान होते हैं। पादपों में रेडियो-समस्थानिक (Radioisotope) के प्रयोग से भी यह प्रमाणित किया गया है कि खनिज तत्व पादपों में दारू के माध्यम से परिवहित किए जाते हैं। आप दारू के माध्यम से जल के परिवहन की चर्चा अध्याय 11 में कर चुके हैं।

12.5 मृदा अनिवार्य तत्व के भंडार के रूप में

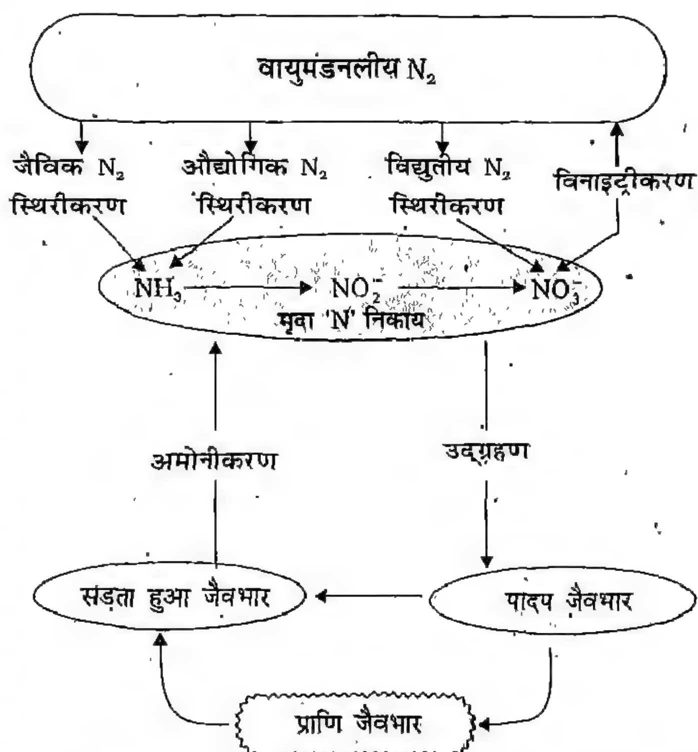
अधिकांश खनिज जो कि पौधों की वृद्धि व परिवर्धन के लिए अनिवार्य है; वे चट्टानों के टूटने एवं क्षरण से पौधों की जड़ों को उपलब्ध होते हैं। ये प्रक्रियाएं मृदा को विलेय आयनों और अकार्बनिक लवण से संपन्न बनाती हैं। चूँकि ये चट्टानों में उपस्थित खनिजों से प्राप्त होते हैं, इसलिए पादप पोषण में इनकी भूमिका को खनिज पोषण कहा जाता है। मृदा में कई प्रकार के पदार्थ पाए जाते हैं। मृदा केवल खनिज ही उपलब्ध नहीं करातीं, बल्कि नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु और अन्य सूक्ष्म जीवों को भी संरक्षण देती है। यह जल धारण करती है एवं जड़ों को हवा उपलब्ध कराती है और पौधों को स्थिर करने के लिए आधार प्रदान करती है। चूंकि खनिजों की कमी फसलों की उत्पादकता को प्रभावित करती हैं, अत: कृत्रिम उर्वरकों की अनिवार्यता प्राय: होती है।

12.6 नाइट्रोजन उपापचय

12.6.1 नाइट्रोजन चक्र

जीवित प्राणियों में कार्बन, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन के अतिरिक्त नाइट्रोजन प्रमुखतम तत्व है। नाइट्रोजन एमीनो अम्लों, प्रोटीन, न्युक्लिक अम्लों, वृद्धि नियंत्रकों, पर्णहरितों एवं बहुतायत विटामिनों का संघटक है। मृदा में उपस्थित सीमित नाइट्रोजन के लिए पादप

सूक्ष्म जीवों से प्रतिस्पर्धा करते हैं, अतः नाइट्रोजन प्राकृतिक एवं कृषि परितंत्र के लिए नियंत्रक पोषक तत्व है। नाइट्रोजन में दो नाइट्रोजन परमाणु शक्तिशाली त्रिसहसंयोजी आबंध से जुड़े रहते हैं, N≡N नाइट्रोजन (N_2) के अमोनिया में बदलने की प्रक्रिया को **नाइट्रोजन स्थिरीकरण** कहते हैं। प्रकृति में बिजली चमकने से और पराबैंगनी विकिरणों के द्वारा नाइट्रोजन को नाइट्रोजन ऑक्साइड (NO_2, NO_2, N_2O) में बदलने के लिए ऊर्जा प्राप्त होती है। औद्योगिक दहन, जंगल में लगी आग, वाहनों का धुंआ तथा बिजली उत्पादन केंद्र भी वातावरणीय नाइट्रोजन ऑक्साइड के स्रोत हैं। मृत पादपों व जंतुओं में उपस्थित कार्बनिक नाइट्रोजन का अमोनिया में अपघटन आमोनीकरण कहलाता है। इसमें से कुछ अमोनिया वाष्पीकृत होकर पुनः वायुमंडल में लौट जाती है, लेकिन अधिकांश मृदा में उपस्थित सूक्ष्मजीवों द्वारा निम्न अनुसार नाइट्रेट में बदल दी जाती है।



चित्र 12.3 जीन मुख्य नाइट्रोजन निकायों-वायुमंडलीय, मृदा और जैवभार से संबंध दिखाता हुआ नाइट्रोजन चक्र



$$2NH_3 + 3O_2 \longrightarrow 2NO_2^- + 2H^+ + 2H_2O \quad .... (i)$$



$$2NO_2^- + O_2 \longrightarrow 2NO_3^- \quad ...... (ii)$$

अमोनिया पहले *नाइट्रोसोमोनास* और/या *नाइट्रोकोकस* जीवाणु द्वारा नाइट्राइट में बदल दी जाती है। नाइट्राइट *नाइट्रोबेक्टर* जीवाणु की मदद से नाइट्रेट में बदल दिया जाता है। ये प्रतिक्रियाएं **नाइट्रीकरण** कहलाती हैं (चित्र 12.3)। ये नाइट्रिफाइंग जीवाणु **रसायनपोषी** (Chemoautotrophs) होते हैं।

पादप इस प्रकार निर्मित नाइट्रेट का अवशोषण कर पत्तियों में भेज देते हैं। पत्तियों में यह अपचित होकर अमोनिया बनाता है जो कि अमीनो अम्ल का अमीनो समूह बनाता है। मृदा में उपस्थित नाइट्रेट भी डिनाइट्रीकरण द्वारा नाइट्रोजन में अपचित हो जाते हैं डिनाइट्रीकरण प्रक्रिया *स्यूडोमोनास* एवं *थायोबेसीलस* जीवाणु संपन्न करते हैं।

12.6.2 जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण

वायु में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होने पर भी केवल कुछ ही जीव नाइट्रोजन का उपयोग कर पाते हैं। केवल कुछ ही प्रोकैरियोटिक जातियाँ नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर पाती हैं। जीवित प्राणियों द्वारा नाइट्रोजन का अमोनिया में अपचयन **जैविक नाइट्रोजन**

स्थिरीकरण कहलाता है। नाइट्रोजन अपचयन करने वाला नाइट्रोजिनेस एंजाइम मात्रा प्रोकेरियोट में पाया जाता है। ये सूक्ष्म जीव N_2- स्थिरकारक कहलाते हैं।



$$N \equiv N \xrightarrow{\text{नाइट्रोजिनेस}} NH_3$$

नाइट्रोजन स्थिरकारक सूक्ष्म जीव स्वतंत्र या सहजीवी जीवनयापन करने वाले हो सकते हैं। उदाहरण के लिए स्वतंत्र जीवी नाइट्रोजन स्थितिकारक ऑक्सी सूक्ष्मजीव हैं– *ऐजेटोवेक्टर (Azotobacter)* और *विजरिनिकिया (Beijernikia)* जबकि *रोडोस्पाइरलियम (Rhodospirilum)* अऑक्सी है और *बैसीलस* (Bacillus) स्वतंत्र जीवी है। इसके साथ ही कई नील हरित जीवाणु जैसे कि *एनाबीना* (Anabaena), *नोस्टोक* (Nostoc) भी स्वतंत्र जीवी नाइट्रोजन स्थिरीकारक हैं।

सहजीवी जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण

आज सहजीवी जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण के कई प्रकार के संघ ज्ञात हैं। इन सब में प्रमुख लेग्यूम (Legume) जीवाणु संबंध है। *राइजोबियम* जीवाणु लेग्यूम एल्फाल्फा, स्वीट क्लोवर, मीठा मटर, मसूर, उद्यान मटर, बाकला एवं क्लोवर, सेम आदि की जड़ों में, इस तरह का संबंध बनाते हैं। सबसे सामान्य सहजीवन जड़ों की गांठों के रूप में होता है। ये ग्रंथिकाएं जड़ों पर छोटे उभार के रूप में होती हैं। अलेग्यूमिनोस पादपों (जैसे एल्नस) की जड़ों पर सूक्ष्म जीव *फ्रैंकिया (Frankia)* N_2 स्थितिकारक ग्रंथियां उत्पन्न करता है। *राइजोबियम* और *फ्रैंकिया* दोनों ही मृदा में स्वतंत्र जीवी हैं, लेकिन सहजीवी के रूप में वातावरणीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करते हैं।

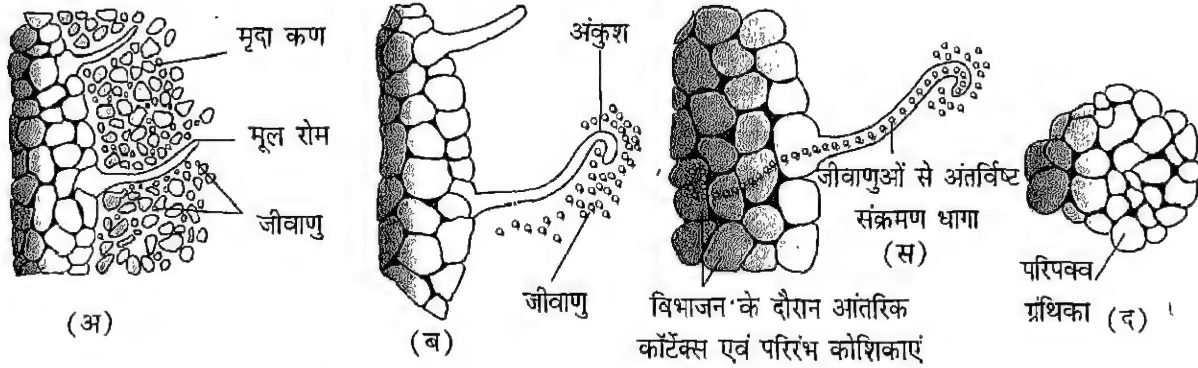
पुष्पन से पहले किसी सामान्य दाल के एक पौधे को जड़ से उखाड़ें। आप जड़ों पर लगभग गोलाकार अतिवृद्धियां देखेंगे। ये ग्रंथिकाएं हैं। यदि आप इन्हें काटेंगे तो पाएंगे कि केंद्र भाग में ये लाल या गुलाबी रंग की हैं। ग्रंथिकाओं को गुलाबी कौन बनाता है? यह रंग लेग्हेमोग्लोबीन की वजह से होता है।

ग्रंथिका निर्माण

ग्रंथिका निर्माण मेजबान पौधों की जड़ एवं *राइजोबियम* में पारस्परिक प्रक्रिया के कारण होता है। ग्रंथिका निर्माण के मुख्य चरण इस प्रकार हैं–

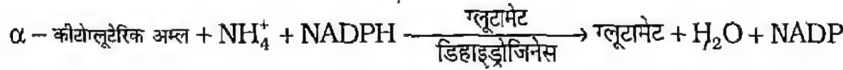
राइजोपियो बहुगुणित होकर जड़ों के चारों ओर एकत्र हो जाते हैं तथा उपत्वचीय और मूल रोम कोशिकाओं से जुड़ जाते हैं। मूल रोम मुड़ जाते हैं तथा जीवाणु मूल रोम पर आक्रमण करते हैं। एक संक्रमित सूत्र पैदा होते हैं जो जीवाणु को जड़ों के कॉर्टेक्स (Cortex) तक ले जाता है, जहाँ वे ग्रंथिका निर्माण प्रारंभ करते हैं। तब जीवाणु सूत्र से मुक्त होकर कोशिकाओं में चले जाते हैं जो विशिष्टि नाइट्रोजन स्थिरीकरण कोशिकाओं के विभेदीकरण का कार्य करते हैं। इस प्रकार ग्रंथिका का निर्माण होता है और मेजबान से पोषक तत्व के आदान प्रदान के लिए संवहनी संबंध बन जाता है। ये घटनाएं चित्र 12.4 में दर्शायी गई हैं।

इन ग्रंथिकाओं में नाइट्रोजिनेस एंजाइम एवं लेग्हेमोग्लोबीन जैसे सभी जैव रासायनिक संघटक विद्यामन होते हैं। नाइट्रोजिनेस एंजाइम तक Mo-Fe प्रोटीन है जो वातावरणीय नाइट्रोजन के अमोनिया में परिर्वतन को उत्प्रेरित करता है (चित्र 12.5)। यह नाइट्रोजन



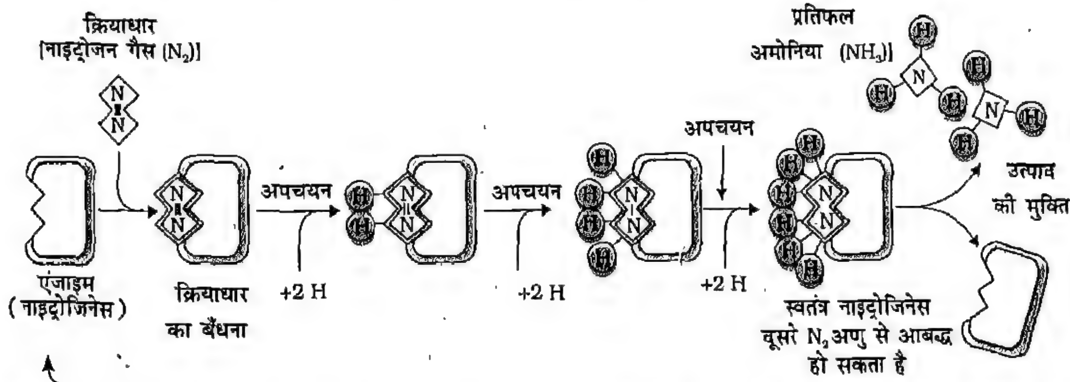
चित्र 12.4 सोयाबीन में मूल ग्रंथिका का विकास (अ) राइजोबियम जीवाणु सुग्राही मूल रोम स्पर्श से उसके नजदीक विभाजित होता है। (ब) संक्रमण के बाद मूल रोम में कुंचन प्रेरित होता है। (स) संक्रमित (धागा) जीवाणुओं को भीतरी कॉर्टेक्स में ले जाता है। जीवाणु दंड के आकार के जीवाणु सम रचनाओं में रुपांतरित हो जाते हैं और भीतरी कॉर्टेक्स एवं परिरंभ कोशिकाएं विभाजित होने लगती हैं। कॉर्टिकल एवं परिरंभ की कोशिकाओं का विभाजन एवं वृद्धि ग्रंथिका निर्माण की ओर ले जाती है। (द) संवहनी ऊतकों से पूर्ण एक परिपक्व ग्रंथिका मूल से अविच्छिन्न होती है।

स्थिरीकरण का प्रथम स्थायी उत्पाद हैं। इसका समीकरण इस प्रकार है–



$$\alpha - \text{कीटोग्लूटेरिक अम्ल} + NH_4^+ + NADPH \xrightarrow[\text{डिहाइड्रोजिनेस}]{\text{ग्लूटामेट}} \text{ग्लूटामेट} + H_2O + NADP$$

नाइट्रोजिनेस एंजाइम आण्विक ऑक्सीजन के प्रति अत्यं. संवेदी होता है। इसे अनॉक्सी वातावरण की अनिवार्यता होती है। ग्रंथियों में यह अनुकूलता होती है कि उसके एंजाइम को ऑक्सीजन से बचाया जा सके। इन एंजाइम्स की सुरक्षा के लिए ग्रंथिकाओं में एक ऑक्सीजन अपमार्जक होता है जिसे लेग्हमोग्लोबिन (Lb) कहते हैं। यह एक रोचक तथ्य है कि स्वतंत्रजीवी अवस्थाओं में ये सूक्ष्मजीव ऑक्सी होते हैं, जहाँ नाइट्रोजिनेस क्रियाशील नहीं होता है, लेकिन नाइट्रोजन स्थिरीकरण के दौरान ये अनॉक्सी हो जाते हैं और नाइट्रोजिनेस एंजाइम की सुरक्षा करते हैं। ऊपर दिए गए समीकरण में आपने देखा होगा कि नाइट्रोजिनेस के द्वारा अमोनिया संश्लेषण के दौरान अत्यधिक ऊर्जा की अनिवार्यता



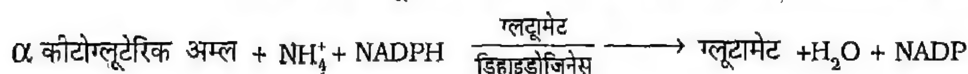
चित्र 12.5 नाइट्रोजिनेस एक जीवाण्विक एंजाइम कांपलेक्स है। यह नाइट्रोजन स्थिरीकरण वाले जीवाणुओं में पाया जाता है जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन गैस (N_2) को अमोनिया (NH_3) में बदलता है। अमोनिया उपापचयित होकर अमीनो अम्ल एवं अन्य नाइट्रोजन युक्त यौगिकों का निर्माण करता है।

होती है (एक NH_3 अणु हेतु 8ATP)। इस ऊर्जा की आपूर्ति मेजबान कोशिका के ऑक्सी श्वसन से होती है।

अमोनिया की नियति

अमोनिया कार्यकीय pH पर प्रोटोनीकरण के बाद अमोनियम आयन का निर्माण करती है। जबकि अधिकांश पादप नाइट्रेट की तरह अमोनियम का भी स्वांगीरण कर सकते हैं, लेकिन अमोनियम आयन पादपों के लिए विषाक्त होते हैं जिसके कारण उनमें एकत्र नही हो पाते हैं। आइए, देखते हैं कि इस तरह संश्लेषित अमोनियम आयन (NH_4^+) का किस प्रकार से पादपों में अमीनो अम्लों के संश्लेषण हेतु उपयोग होता है। इसके लिए दो मुख्य क्रियाएं हैं–

(i) **अपचयित एमीनीकरण–** इस प्रक्रिया में अमोनिया कीटोग्लूटेरिक अम्ल के साथ क्रिया करके ग्लूटेमिक अम्ल बनाते हैं जैसा कि नीचे समीकरण में दिया गया है:



$$\alpha \text{ कीटोग्लूटेरिक अम्ल} + NH_4^+ + NADPH \xrightarrow[\text{डिहाइड्रोजिनेस}]{\text{ग्लटूमेट}} \text{ग्लूटामेट} + H_2O + NADP$$

(ii) **पार एमीनन या विपक्ष एमीनन–** इसमें अमीनो अम्ल से अमीनो समूह का कीटो अम्ल के कीटो समूह में स्थानांतरण होता है। ग्लूटेमिक अम्ल मुख्य अमीनो अम्ल है जिससे अमीनो भाग (NH_2) स्थानांतरित होता है और दूसरे अमीनो अम्ल का निर्माण विपक्ष एमीनन द्वारा होता है। **ट्रांसएमिनेस** एंजाइम इस तरह की सारी क्रियाओं को उत्प्रेरित करते हैं।



$$R_1-\underset{NH_3^+}{\overset{H}{C}}-COO + R_2-\underset{O}{\overset{\|}{C}}-COO \rightleftharpoons R_1-\underset{O}{\overset{\|}{C}}-COO + R_2-\underset{NH_3^+}{\overset{H}{C}}-COO$$

अमीनो दाता — अमीनो संग्राहक

पौधों में एस्पेरजिन एवं ग्लूटेमिन दो अति मुख्य अमाइड पाए जाते हैं जो प्रोटीन के रचनात्मक भाग हैं। ये दो अमीनो अम्ल क्रमशः एस्पारटिक अम्ल और ग्लूटेमिक अम्ल से प्रत्येक के साथ अमीनो समूह के जोड़ने से बनते हैं। इस प्रक्रिया में अम्ल का हाइड्रॉक्सिल भाग NH_2 मूलक से विस्थापित हो जाता है। एमाइड्स में; चूँकि अमीनो अम्ल से ज्यादा नाइट्रोजन पाया जाता है। अतः ये दारू वाहिकाओं द्वारा पौधे के अन्य भागों में स्थानांतरित कर दिए जाते हैं। इसके साथ ही कुछ पौधे (जैसे सोयाबीन) को ग्रंथिकाएं वाष्पोत्सर्जन प्रवाह के साथ स्थिर नाइट्रोजन को युरिड्स (Ureides) के रूप में भेज देती हैं। इन यौगिकों में भी कार्बन की अपेक्षा नाइट्रोजन का अनुपात अधिक होता है।

सारांश

पादप अपना अकार्बनिक पोषण वायु, जल और मृदा से प्राप्त करते हैं। पौधे कई प्रकार के खनिज तत्वों का अवशोषण करते हैं। पौधों को उनके द्वारा अवशोषित सभी प्रकार के खनिज तत्वों की अनिवार्यता नहीं होती है। अब तक खोजे गए 105 से अधिक तत्वों में से 21 तत्व पादपों की साधारण वृद्धि एवं परिवर्धन के लिए

अनिवार्य व लाभदायक होते हैं। अधिक मात्रा में अनिवार्य तत्व वृहत्पोषक तथा कम मात्रा में अनिवार्य तत्व सूक्ष्म मात्रिक तत्व या सूक्ष्म पोषक कहलाते हैं। ये तत्व प्रोटीन कार्बोहाइड्रेट, वसा, न्यूक्लिक अम्लों के अनिवार्य संघटक होते हैं और पौधों की विविध उपापचयी प्रक्रियाओं में भाग लेते हैं। इनमें से किसी एक अनिवार्य तत्वों में कमी से अपर्याप्तता लक्षण प्रकट हो सकते हैं। अपर्याप्तता संबंधी लक्षणों में क्लोरोसिस, नेक्रासिस, अवरुद्ध वृद्धि, अयुग्मी कोशिका विभाजन आदि मुख्य हैं। पादप इन खनिजों को सक्रिय एवं निष्क्रिय अवशोषण विधि द्वारा ग्रहण करते हैं। ये दारू ऊतकों द्वारा जल परिवहन के साथ पौधों के विभिन्न भागों में पहुँचाए जाते हैं।

नाइट्रोजन जीवन के अस्तित्व के लिए अति अनिवार्य है। पौधों वातावरणीय नाइट्रोजन का उपयोग प्रत्यक्ष नहीं कर पाते हैं। लेकिन कुछ पादप मुख्यत: लेग्यूम की जड़ें वातावरणीय N_2 को जैविक उपयोगी रूपों में बदल देते हैं। नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए शक्तिशाली अपचायक और एटीपी(ATP) के रूप में ऊर्जा की अनिवार्यता होती है। नाइट्रोजन स्थिरीकरण सूक्ष्मजीवों मुख्यत: राइजोबियम से होता है। एंजाइम डिनाइट्रोजिनेस जो कि जैविक N_2 स्थिरीकरण में मुख्य भूमिका निभाता है, ऑक्सीजन के प्रति अत्यंत संवेदी होता है। अधिकांश प्रक्रियाएं अनॉक्सी वातावरण में होती हैं। ऊर्जा (ATP) की अनिवार्यता की आपूर्ति पोषक कोशिकाओं के ऑक्सी श्वसन से होती है। नाइट्रोजन स्थिरीकरण के द्वारा निर्मित अमोनिया अमीनो अम्ल में अमीनो समूह के रूप में समाविष्ट हो जाता है।

अभ्यास

1. 'पौधे में उत्तरजीविता के लिए उपस्थित सभी तत्वों की अनिवार्यता नहीं है' टिप्पणी करें।
2. जलसंवर्धन में खनिज पोषण हेतु अध्ययन में जल और पोषक लवणों की शुद्धता जरूरी क्यों है?
3. उदाहरण के साथ व्याख्या करें: वृहत् पोषक, सूक्ष्म पोषक, हितकारी पोषक, आविष तत्व और अनिवार्य तत्व।
4. पौधों में कम से कम पाँच अपर्याप्तता के लक्षण दें। उसे वर्णित करें और खनिजों की कमी से उसका सहसंबंध बनाएं।
5. अगर एक पौधे में एक से ज्यादा तत्वों की कमी के लक्षण प्रकट हो रहे हैं तो प्रायोगिक तौर पर आप कैसे पता करेंगे कि अपर्याप्त खनिज तत्व कौन से है?
6. कुछ निश्चित पौधों में अपर्याप्तता लक्षण सबसे पहले नवजात भाग में क्यों पैदा होता है जबकि कुछ अन्य में परिपक्व अंगों में?
7. पौधों के द्वारा खनिजों का अवशोषण कैसे होता है?
8. राइजोबियम के द्वारा वातावरणीय नाइट्रोजन के स्थिरीकरण के लिए क्या शर्तें हैं तथा N_2-स्थिरीकरण में इनकी क्या भूमिका है?
9. मूल ग्रंथिका के निर्माण हेतु कौन-कौन से चरण भागीदार हैं?
10. निम्नांकित कथनों में कौन सही हैं? अगर गलत तो उन्हें सही करें:
    (क) बोरोन की अपर्याप्तता से स्थूलकाय अक्ष बनता है।
    (ख) कोशिका में उपस्थित प्रत्येक खनिज तत्त्व उसके लिए अनिवार्य हैं।
    (ग) नाइट्रोजन पोषक तत्व के रूप में पौधे में अत्यधिक अचल है।
    (घ) सूक्ष्म पोषकों की अनिवार्यता निश्चित करना अत्यंत ही आसान है; क्योंकि ये बहुत ही सूक्ष्म मात्रा में लिए जाते हैं।

अध्याय 13

उच्च पादपों में प्रकाश-संश्लेषण

13.1 हम क्या जानते हैं?

13.2 प्रारंभिक प्रयोग

13.3 प्रकाश-संश्लेषण कहाँ संपन्न होता है?

13.4 प्रकाश-संश्लेषण में कितने वर्णक भाग लेते हैं?

13.5 प्रकाश अभिक्रिया क्या है?

13.6 इलेक्ट्रॉन परिवहन

13.7 एटीपी तथा एनएडीपीएच कहाँ प्रयोग होते हैं?

13.8 पथ

13.9 प्रकाश श्वसन

13.10 प्रकाश-संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक

सभी प्राणी, यहाँ तक कि मानव भी आहार के लिए पौधों पर निर्भर हैं। क्या आपने कभी सोचा है कि पौधे अपना आहार कहाँ से प्राप्त करते हैं? वास्तव में, हरे पौधे अपना आहार संश्लेषित करते हैं तथा अन्य सभी जीव अपनी आवश्यकता के लिए उन पर निर्भर रहते हैं। हरे पौधे 'प्रकाश-संश्लेषण' करते हैं यह एक ऐसी भौतिक-रासायनिक प्रक्रिया है, जसमें कार्बनिक यौगिकों को संश्लेषित करने के लिए प्रकाश-ऊर्जा का उपयोग करते हैं। अंत: कुल मिलाकर पृथ्वी पर रहने वाले सारे जीव ऊर्जा के लिए सूर्य के प्रकाश पर निर्भर करते हैं। पौधों द्वारा प्रकाश-संश्लेषण में उपयोग की गई सूर्य-ऊर्जा पृथ्वी पर जीवन का आधार है। प्रकाश-संश्लेषण के महत्वपूर्ण होने के दो कारण हैं: यह पृथ्वी पर समस्त खाद्य पदार्थों का प्राथमिक स्रोत है तथा यह वायुमंडल में ऑक्सीजन छोड़ता है। *क्या आपने कभी सोचा है कि यदि साँस लेने के लिए ऑक्सीजन न हो, तो क्या होगा?* इस अध्याय में प्रकाश-संश्लेषी (मशीनरी) तथा विभिन्न प्रतिक्रियाओं के विषय में बताया जाएगा जो प्रकाश-ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में रूपांतरित करती है।

13.1 हम क्या जानते हैं?

आइए, पहले यह पता करें कि हम प्रकाश-संश्लेषण के विषय में क्या जानते हैं। पिछली कक्षाओं में आपने कुछ सरल प्रयोग किए होंगे। जिनसे पता लगा होगा कि क्लोरोफिल (पत्तियों का हरा वर्णक), प्रकाश तथा कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) प्रकाश-संश्लेषण के लिए आवश्यक है।

आपने शायद शबलित (वेरीगेट) पत्तियों अथवा उस पत्ती में जिसे आंशिक रूप से काले कागज से ढक दिया हो और अन्य पत्ती का प्रकाश में रखा हो, जिससे स्टार्च (मंड)

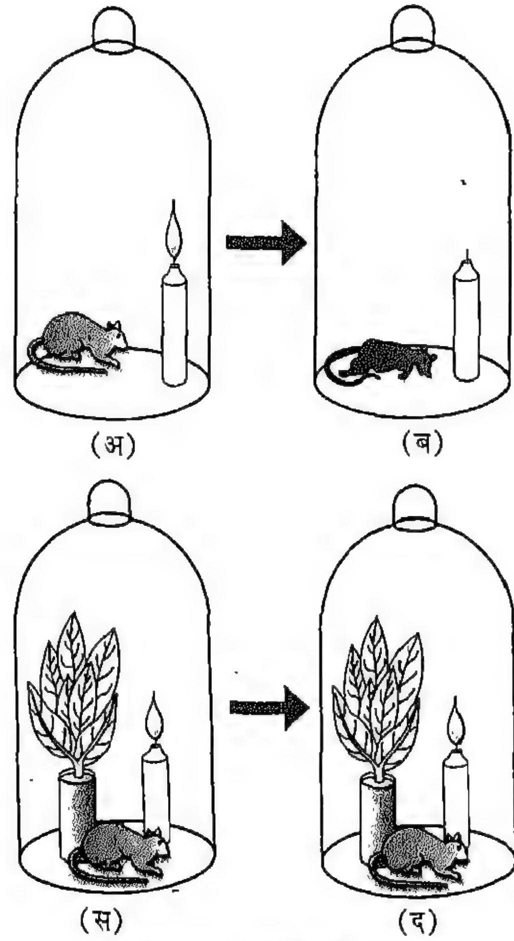
बनाने का प्रयोग को किया होगा। स्टार्च के लिए इन पत्तियों के परीक्षण से यह बात प्रकट होती है कि प्रकाश-संश्लेषण क्रिया सूर्य के प्रकाश में पेड़ के केवल हरे भाग में संपन्न होती है।

आपने एक अन्य प्रयोग आधी पत्ती से किया होगा जिसमें एक पत्ती का आंशिक भाग परखनली के अंदर रखा होगा और इसमें koh से भीगी हुई रूई भी रखी होगी (KOH CO_2 को अवशोषित करता है) जबकि शेष भाग को प्रकाश में रहने दिया होगा। इसके बाद इस उपकरण को कुछ समय के लिए धूप में रखा जाता है। कुछ समय के बाद आप स्टार्च के लिए पत्ती का परीक्षण करते हों। इस परीक्षण से आपको पता लगा कि पत्ती का जो भाग परखनली में था, उसने स्टार्च की पुष्टि नहीं की और जो भाग प्रकाश में था, उसने स्टार्च की पुष्टि की। इस प्रयोग से यह सिद्ध होता है कि प्रकाश-संश्लेषण के लिए कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) आवश्यक है। *क्या आप इसका वर्णन कर सकते हो कि ऐसा निष्कर्ष किस प्रकार निकाला जा सकता है?*

13.2 प्रारंभिक प्रयोग

उन साधारण प्रयोगों के विषय में जानना काफी रुचिकर होगा जिनसे प्रकाशसंश्लेषण की प्रक्रिया क्रमिक विकसित हुई है।

जोसेफ प्रीस्टले (1733-1804) ने 1770 में बहुत से प्रयोग किए जिनसे पता लगा कि हरे पौधों की वृद्धि में हवा की एक अनिवार्य भूमिका है। आप को याद होगा कि प्रीस्टले ने 1774 में ऑक्सीजन की खोज की थी। प्रीस्टले ने देखा कि एक बंद स्थान-जैसे कि एक बेलजार में जलने वाली मोमबत्ती जल्दी ही बुझ जाती है (चित्र 13.1 अ,ब,स,द)। इसी प्रकार किसी चूहे का सीमित स्थान में जल्दी ही दम घुट जाएगा। इन अवलोकनों के आधार पर उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि चाहे जलती मोमबत्ती हो अथवा कोई प्राणी जो वायु से साँस लेते हैं, वे हवा को क्षति पहुँचाते हैं। लेकिन जब उसने उसी बेल जार में एक पुदीने का पौधा रखा तो उसने पाया कि चूहा जीवित रहा और मोमबत्ती भी सतत जलती रही। इस आधार पर प्रीस्टले ने निम्न परिकल्पना की: ''पौधे उस वायु की क्षतिपूर्ति करते हैं, जिन्हें साँस लेने वाले प्राणी और जलती हुई मोमबत्ती कम कर देती है।''



चित्र 13.1 प्रीस्टले का प्रयोग

क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि प्रीस्टले ने प्रयोग करने के लिए एक मोमबत्ती एवं पौधे का उपयोग कैसे किया होगा? याद रखें कि उसे मोमबत्ती को कुछ दिनों बाद पुनः जलाने की आवश्यकता होगी ताकि यह पता कर सके कि कुछ दिनों बाद वह जलेगी अथवा नहीं। *सेटअप को बिना बाधित किए आप मोमबत्ती को जलाने के लिए कितनी विधियों के बारे में सोच सकते हो?*

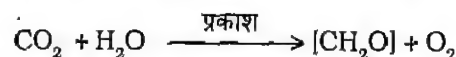
जॉन इंजेनहाउज (1730-1799) ने प्रीस्टले द्वारा निर्मित जैसे सेटअप का उपयोग किया जिसमें उसने उसे एक बार अंधेरे में और फिर एक बार सूर्य की रोशनी में रखा।

इससे यह पता लगा कि पौधों की इस प्रक्रिया में सूर्य का प्रकाश अनिवार्य है। यह जलती हुई मोमबत्ती या सांस लेने वाले प्राणियों द्वारा खराब हुई वायु को शुद्ध बनाता है। इंजेनहाउज ने अपने एक परिष्कृत प्रयोग में एक जलीय पौधे के साथ यह दिखाया कि तेज धूप में पौधे के हरे भाग के आस-पास छोटे-छोटे बुलबुले बन गए थे, जबकि अंधेरे में रखे गए पौधे के आस-पास बुलबुले नहीं बने थे। बाद में उसने इन बुलबुलों की पहचान ऑक्सीजन के रूप में की थी। अत: उसने यह दिखा दिया कि पौधे का केवल हरा भाग ही ऑक्सीजन को छोड़ सकता है।

1854 से पहले तक इसकी जानकारी नहीं थी, किंतु जूलियस वोन सैचस् ने यह प्रमाण दिया कि जब पौधा वृद्धि करता है तब ग्लूकोज (शर्करा) बनती है। ग्लूकोज प्राय: स्टार्च के रूप में संचित होता है। उसके बाद के अध्ययनों से यह पता लगा कि पौधे का हरा पदार्थ-जिसे क्लोरोफिल कहते हैं। पौधों की कोशिकाओं में स्थित विशिष्ट भाग (जिसे क्लोरोप्लास्क कहते हैं) में होता है। उसने बताया कि पौधों के हरे भाग में ग्लूकोज बनाता है और ग्लूकोज प्राय: स्टार्च के रूप में संचित होता है।

अब आप टी.डब्ल्यू एंजिलमैन (1843-1909) द्वारा किए गए रोचक प्रयोग पर ध्यान दें। उसने प्रिज्म की सहायता से प्रकाश को स्पेक्ट्रमी घटकों में अलग किया और और फिर एक हरे शैवाल *क्लैडोफोरा* को जिसे ऑक्सी बैक्टीरिया के निलंबन में रखा गया था, को प्रदीप्त किया गया। बैक्टीरिया का उपयोग ऑक्सीजन निकलने का केंद्र पता लगाने के लिए था। उसने पाया कि बैक्टीरिया प्रमुखत: लाल एवं नीले प्रकाश क्षेत्रों में एकत्र हो गए थे। इस तरह से प्रकाश-संश्लेषण का पहला सक्रिय स्पेक्ट्रम (एक्शन स्पेक्ट्रम) वर्णित किया गया। यह मोटे तौर पर क्लोरोफिल *'a'* एवं *'b'* के अवशोषण स्पेक्ट्रा से मेल खाता है (13.4 खंड में इसका वर्णन किया गया है)।

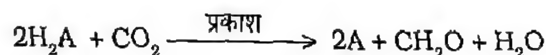
उन्नीसवीं सदी के मध्य तक पादप प्रकाश-संश्लेषण की सभी मुख्य विशिष्टताओं के बारे में पता चल चुका था। जैसे कि, पौधे CO_2 तथा पानी से प्रकाश ऊर्जा का उपयोग कर कॅार्बोहाइड्रेट्स बनाते हैं। ऑक्सीजन उत्पन्न करने वाले जीवों में प्रकाश-संश्लेषण की कुल प्रतिक्रिया को आनुभविक समीकरण द्वारा प्रस्तुत किया गया।



$$CO_2 + H_2O \xrightarrow{\text{प्रकाश}} [CH_2O] + O_2$$

जहाँ पर (CH_2O) एक कार्बोहाइड्रेट (जैसे ग्लूकोज- एक छह (6) कार्बन शुगर) का प्रतिनिधित्व करता है।

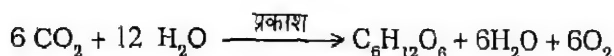
एक सूक्ष्मजीव विज्ञानी कोर्नेलियस वैन नील (1897-1985) के प्रयोग ने प्रकाश-संश्लेषण को समझने में मील के पत्थर का काम किया। उसका अध्ययन बैंगनी (पर्पल) एवं हरे बैक्टीरिया पर आधारित था। उन्होंने बताया कि प्रकाश-संश्लेषण एक प्रकाश आधारित प्रतिक्रिया है जिसमें ऑक्सीकरणीय यौगिक से प्राप्त हाइड्रोजन कार्बनडाइऑक्साइड को अपचयित करके कार्बोहाइड्रेट बनाते हैं। इसे निम्नलिखित रूप से व्यक्त किया जा सकता है:



$$2H_2A + CO_2 \xrightarrow{\text{प्रकाश}} 2A + CH_2O + H_2O$$

हरे पौधों में H_2O हाइड्रोजन दाता है और ऑक्सीकृत होकर O_2 देता है। कुछ जीव प्रकाश-संश्लेषण के दौरान O_2 मुक्त नहीं करते हैं जब H_2S बैंगनी एवं हरे बैक्टीरिया

के लिए हाइड्रोजन दाता होता है तो 'ऑक्सीकरण' उत्पाद जीवों के अनुसार सल्फर अथवा सल्फेट होता है न कि ऑक्सीजन। इससे उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि हरे पौधों द्वारा निकाली गई ऑक्सीजन H_2Oसे आती है, न कि कार्बनडाइऑक्साइड से। बाद में यह बात रेडियो आइसोटोपिक तकनीक के उपयोग से सही प्रमाणित हुई। इसलिए कुल प्रकाश-संश्लेषण को प्रस्तुत करने वाला सही समीकरण निम्न है:



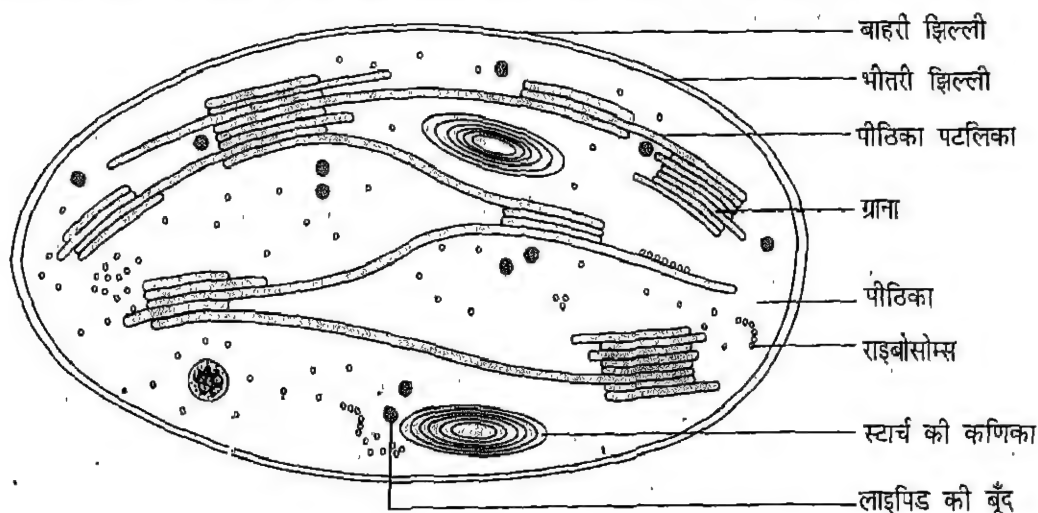
$$6\,CO_2 + 12\;H_2O \xrightarrow{\text{प्रकाश}} C_6H_{12}O_6 + 6H_2O + 6O_2$$

यहाँ पर $C_6H_{12}O_6$ ग्लूकोज का प्रतिनिधित्व करता है। जल से निकलने वाली O_2 को रेडियो आइसोटोपिक तकनीक से सिद्ध किया जा चुका है। यह एक एकल क्रिया नहीं है, बल्कि बहुचरणी प्रक्रम का वर्णन है जिसे प्रकाश-संश्लेषण कहते हैं। क्या आप यह वर्णन करेंगे कि उपरोक्त समीकरण में जल के 12 अणुओं का क्रियाधार के रूप में क्यों प्रयोग किया गया है?

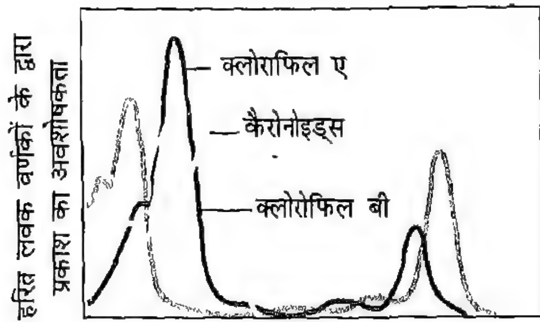
13.3 प्रकाश-संश्लेषण कहाँ संपन्न होता है?

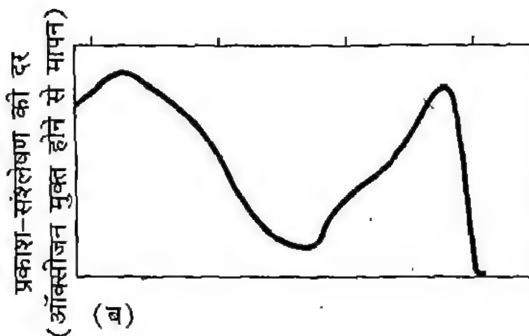
अध्याय 8 में पढ़ने के बाद निश्चित ही आपका उत्तर होगा: हरी पत्तियों में अथवा आप कह सकते हैं क्लोरोप्लास्ट में, निश्चित ही आपका उत्तर सही है। प्रकाश-संश्लेषण क्रिया हरी पत्तियों में तो संपादित होती ही है लेकिन यह पौधों के अन्य सभी हरे भागों में भी होती है। *क्या आप पौधे के कुछ अन्य भागों के नाम बता सकते हैं, जहाँ प्रकाश-संश्लेषण संपादित हो सकता है?*

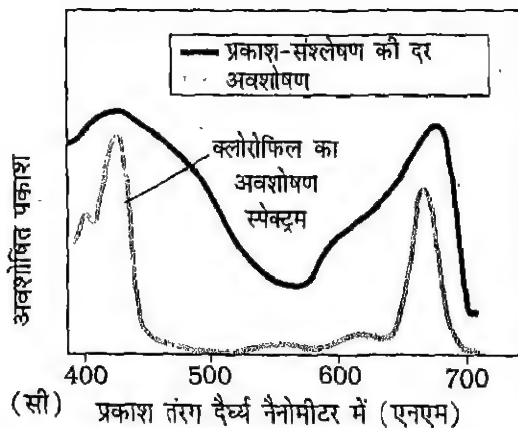
आपने पिछली इकाई में पढ़ा होगा कि पत्तियों में मेसोफिल कोशिकाएं होती हैं। जिनमें अत्यधिक मात्रा में क्लोरोप्लास्ट होते हैं। सामान्यत: क्लोरोप्लास्ट मेसोफिल कोशिकाओं की भित्ति के साथ पंक्तिबद्ध होता है जिससे कि वे ईष्टतम मात्रा में आपतित प्रकाश प्राप्त कर सकें। *आपके विचार से हरित लवक कब अपने सपाट पटल भित्ति के समानांतर*



चित्र 13.2 इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी के द्वारा दिखाया गया हरित लवक की काट का आरेख प्रस्तुतीकरण







चित्र 13.3.अ क्लोरोफिल *ए,बी* तथा केरोटेनोइड्स का अवशोषित वर्णक्रम प्रदर्शित करता हुआ ग्राफ

चित्र 13.3.ब प्रकाश-संश्लेषण क्रियात्मक वर्णक्रम प्रदर्शित करता हुआ ग्राफ

चित्र 13.3.स क्लोरोफिल *ए* के अवशोषित वर्णक्रम पर प्रकाश-संश्लेषण के क्रियात्मक वर्णक्रम का अध्यारोपित दृश्य का ग्राफ

पंक्तिबद्ध होते हैं? वे आपतित सूर्य के प्रकाश से कब लंबित होते होंगे?

आपने अध्याय 8 में क्लोरोप्लास्ट की संरचना के बारे में पढ़ा है। क्लोरोप्लास्ट में एक झिल्ली तंत्र होता है जिसमें ग्रैना, स्ट्रोमा लैमेले और स्ट्रोमा तरल होता है (चित्र 13. 2)। क्लोरोप्लास्ट में सुस्पष्ट श्रम विभाजन होता है। झिल्ली तंत्र प्रकाश-ऊर्जा को ग्रहण करता है और एटीपी एवं एनएडीपीएच का संश्लेषण करता है। स्ट्रोमा में एंजाइमैटिक प्रतिक्रिया होती है जो CO_2 से शर्करा का संश्लेषण करता है जो बाद में स्टार्च में परिवर्तित हो जाता है। पहली वाली प्रतिक्रिया को **प्रकाश अभिक्रिया** कहा जाता है, चूँकि यह पूर्णत: प्रकाश पर आधारित है। दूसरी प्रतिक्रिया प्रकाश अभिक्रिया के उत्पाद पर निर्भर होती है अर्थात् एटीपी तथा एनएडीपीएच, जो सैद्धांतिक रूप में अंधेरे में संपन्न होती हैं अत: इसे **अप्रकाशी अभिक्रिया** कहते हैं। (इसके विषय का विस्तृत अध्ययन बाद में इसी अध्याय में किया जाएगा)

13.4 प्रकाश-संश्लेषण में कितने वर्णक भाग लेते हैं?

जब आप किसी पौधे को देख रहे होते हैं तो क्या कभी आश्चर्य हुआ है कि उसी पौधे में पत्तियों के हरे रंग में सूक्ष्म अंतर क्यों और कैसे है? हम इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए किसी भी हरे पादप के पर्णवर्णकों को पेपर क्रोमेटोग्राफी (कागज वर्णलेखिकी) द्वारा अलग कर सकते हैं। क्रोमेटोग्राफी से पता लगता है कि पत्तियों में स्थित वर्णक के कारण जो हरापन दिखाई देता है, वह किसी एक वर्णक के कारण नहीं, बल्कि चार वर्णकों: **क्लोरोफिल ए** (क्रोमेटोग्राफी में चमकीला अथवा नीला हरा), **क्लोरोफिल *बी*** (पीला हरा), **जैन्थोफिल** (पीला) तथा **कारटीनोएड** (पीले से नारंगी पीले) के कारण होता है। आइए, अब देखें कि प्रकाश-संश्लेषण में विभिन्न वर्णकों की क्या भूमिका है।

वर्णक वे पदार्थ हैं जिनमें प्रकाश की विशिष्ट तरंगदैर्घ्यों को अवशोषित करने की क्षमता होती है। *क्या आप अनुमान लगा सकते हैं कि विश्व में कौन सा पादप वर्णक सर्वाधिक है?* आइए, अब क्लोरोफिल ए वर्णक को ग्राफ में विभिन्न तरंगदैर्ध्यता में प्रकाश अवशोषण का अध्ययन

करें (चित्र 13.3-अ)। आप स्पष्टतः प्रकाश के दृश्य स्पेक्ट्रम की तरंगदैर्ध्यता एवं विबग्योर (**vibgyor**) से परिचित हैं।

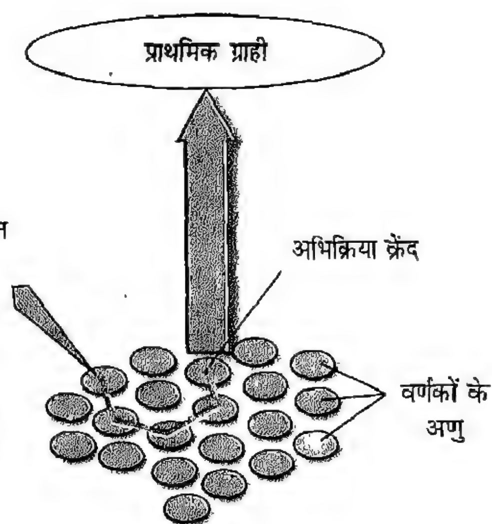
चित्र 13.3 अ को देखकर क्या आप बता सकते हैं कि किस तरंगदैर्ध्य पर क्लोरोफिल 'ए' अधिकतम अवशोषण करेगा? क्या यह किसी अन्य तरंगदैर्ध्यता पर कोई अन्य अवशोषण चोटी दिखाते हैं? यदि हाँ तो वे कौन हैं?

अब आप चित्र 13.3 (ब) को देखें जिसमें उन तरंगदैर्ध्यों को दिखाया गया है, जहाँ पर पादप में अधिकतम प्रकाश-संश्लेषण होता है। क्या आप देख रहे हैं कि तरंगदैर्ध्य क्लोरोफिल *'ए'* अर्थात् नीला तथा लाल क्षेत्र में अवशोषण करता है, उस क्षेत्र में प्रकाश-संश्लेषण की दर भी अधिकतम है। अतः हम कह सकते हैं कि क्लोरोफिल *'ए'* प्रकाश-संश्लेषण के लिए एक प्रमुख वर्णक है *लेकिन चित्र 13.3(स) देखने पर क्या आप कह सकते हैं कि क्लोरोफिल 'ए' के अवशोषण स्पेक्ट्रम तथा प्रकाश-संश्लेषण के क्रियात्मक स्पेक्ट्रम के बीच पूर्णतः परस्पर व्यापन है?*

ये ग्राफ, एक साथ यह बता रहे हैं कि अधिकतम प्रकाश-संश्लेषण स्पेक्ट्रम के नीले एवं लाल क्षेत्र में संपन्न होती है, और कुछ प्रकाश-संश्लेषण स्पेक्ट्रम की अन्य तरंगदैर्ध्यों पर भी संपन्न होती है। आइए, देखें कि यह कैसे होता है। यद्यपि क्लोरोफिल *'ए'* प्रकाश को अवशोषित करने का मुख्य वर्णक है, फिर भी अन्य थाइलेकोइड में वर्णक जैसे क्लोरोफिल *बी*, जैन्थोफिल तथा केरोटिन, जिन्हें सहायक वर्णक कहते हैं, वे प्रकाश को अवशोषित करते हैं तथा अवशोषित ऊर्जा को क्लोरोफिल ए में स्थानांतरित कर देते हैं। वास्तव में ये वर्णक न केवल प्रकाश-संश्लेषण को प्रेरित करने वाली उपयोगी तरंगदैर्ध्य के क्षेत्र को बढ़ाते हैं बल्कि ये क्लोरोफिल *'ए'* को फोटोऑक्सीडेसन से भी बचाते हैं।

13.5 प्रकाश अभिक्रिया क्या है?

प्रकाश अभिक्रिया अथवा 'प्रकाशरसायन' चरण में प्रकाश अवशोषण, जल विघटन, ऑक्सीजन निष्कर्षण तथा उच्च-ऊर्जा रसायन माध्यमिकों, जैसे एटीपी तथा एनएडीपीएच का निर्माण शामिल है। इस प्रक्रिया में अनेक कॉम्पलेक्स सम्मिलित होते हैं। यहाँ वर्णक दो सुस्पष्ट प्रकाश रसायन **लाइट हार्वेस्टिंग कॉम्पलेक्स (एलएचसी)** जिन्हें **फोटोसिस्टम I (पीएस I)** तथा **फोटोसिस्टम II (पीएस II)** कहते हैं - में गठित होता है। इन्हें खोज के क्रम में ये नाम दिए गए हैं न कि प्रकाश अभिक्रिया के दौरान उनके काम करने के अनुक्रम में। एलएचसी प्रोटीन से आबद्ध हजारों वर्णक अणुओं से बने होते हैं। प्रत्येक फोटोसिस्टम में सभी वर्णक होते हैं, (सिवाय क्लोरोफिल *'ए'* के एक अणु के) तथा एलएचसी का निर्माण करते हैं जिन्हें **ऐन्टेनी** कहते हैं (चित्र 13.4)। ये वर्णक विभिन्न तरंगदैर्घ्यों के प्रकाश को अवशोषित कर प्रकाश-संश्लेषण को अधिक दक्ष बनाते हैं। क्लोरोफिल

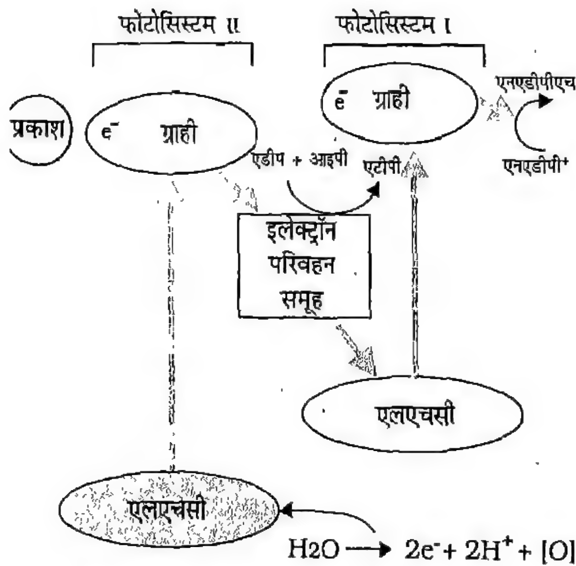


चित्र 13.4 प्रकाश संग्रहण तंतुजाल

'ए' का एक अकेला अणु **अभिक्रिया केंद्र** बनाना है। दोनों फोटोसिस्टम में प्रतिक्रिया केंद्र पृथक् होते हैं। पीएस I में अभिक्रिया केंद्र क्लोरोफिल 'ए' का अवशोषण शीर्ष 700 एनएम (nm) पर होता है अत: इसे **पी 700** कहते हैं। पीएस II में अवशोषण शीर्ष 680 एनएम (nm) पर होता है अत: इसे **पी 680** कहते हैं।

13.6 इलेक्ट्रॉन परिवहन

फोटोसिस्टम II में अभिक्रिया केंद्र में मौजूद क्लोरोफिल 'ए' 680 एनएम वाले लाल प्रकाश को अवशोषित करता है, जिससे इलेक्ट्रॉन उत्तेजित होकर परमाणु नाभिक से दूर चला जाता है। इसे इलेक्ट्रॉन को एक इलेक्ट्रॉन ग्राही ले लेता है और इन्हें **इलेक्ट्रॉन्स ट्रांसपोर्ट सिस्टम** जिसमें साइटोक्रोम होते हैं, पहुँचा दिया जाता है (चित्र 13.5)। इलेक्ट्रॉन की यह गतिविधि अधोगामी है जो अपचयोपचय विभव मापन (रिडैक्स पोटेंशियल स्केल) के रूप में है। जब इलेक्ट्रॉन्स परिवहन श्रृंखला से इलेक्ट्रॉन्स गुजरते हैं तब उनका उपयोग नहीं होता बल्कि उन्हें फोटोसिस्टम पीएस I के वर्णकों को दे दिया जाता है। इसके साथ ही साथ, पीएस I का अभिक्रिया केंद्र के इलेक्ट्रॉन भी लाल प्रकाश की 700 एनएम तरंगदैर्ध्य को अवशोषित कर उत्तेजित होता है और यह अन्य ग्राही अणु में जिसका अपचयोपचय (रिडौक्स) विभव अधिक हो, स्थानांतरित होता है। ये इलेक्ट्रॉन्स पुन: अधोगामी गति करते हैं, परंतु इस बार वे ऊर्जा से प्रचुर एनएडीपी$^+$ अणु की ओर जाते हैं। ये इलेक्ट्रॉन्स एनएडीपी$^+$ को अपचयित कर एनएडीपीएच$^+$ H^+ को बनाते हैं। इलेक्ट्रॉन के स्थानांतरण की यह सारी योजना पीएस II से शुरू होकर शिखरोपरिग्राही की ओर, इलेक्ट्रॉन परिवहन श्रृंखला से होते हुए पीएस I तक, इलेक्ट्रॉन की उत्तेजना, अन्य ग्राही में स्थानांतरण और अंत: में अधोगामी होकर एनएडीपी$^+$ को अपचयित कर एनएडीपीएच$^+$ H^+ के बनने तक होती हैं। यह सारी योजना Z के आकार की होती है, इसलिए इसे **Z स्कीम** कहते हैं (चित्र 13.5)। यह आकृति तब बनती है जब सभी वाहक क्रमानुसार एक अपचयोपचय विभव माप पर हों।



चित्र 13.5 प्रकाश अभिक्रिया की Z-स्कीम

13.6.1 जल का विघटन

अब आप पूछेंगे कि *पीएस II कैसे इलेक्ट्रॉन की आपूर्ति निरंतर करता है?* वे इलेक्ट्रॉन जो फोटोसिस्टम II में निकलते हैं, उनकी जगह निश्चित ही दूसरों को लेनी चाहिए। जल विघटन का संबंध पीएस II से है। जल H^+, [O] तथा इलेक्ट्रॉन में विघटित होता है। इससे ऑक्सीजन उत्पन्न होती है, जो प्रकाश-संश्लेषण का एक शुद्ध उत्पाद है। फोटोसिस्टम I से निकलने वाले इलेक्ट्रॉन, फोटोसिस्टम II से उपलब्ध कराए जाते हैं।

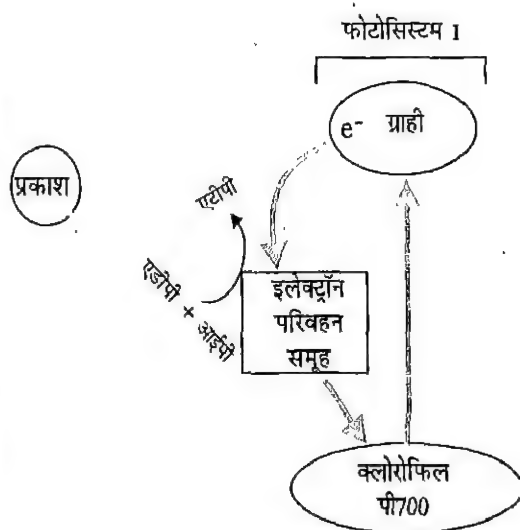


$$2H_2O \longrightarrow 4H^+ + O_2 + 4e^-$$

हमें यह अच्छी प्रकार जान लेना चाहिए कि जल विघटन पीएस II से संबंधित है जो थाइलेकोइड की झिल्ली की भीतरी ओर होता है। *तब इस दौरान बनने वाले प्रोटोन्स एवं O_2 कहां मुक्त होते हैं- अवकाशिका (ल्युमेन)में अथवा झिल्लिका के बाहर की ओर?*

13.6.2 चक्रीय एवं अचक्रीय फोटो-फोस्फोरीलेशन

जीवों में ऑक्सीकरणीय पदार्थों से ऊर्जा निकालने तथा उसे बंध-ऊर्जा के रूप में संचय करने की क्षमता होती है। विशेष पदार्थ जैसे एटीपी, इस ऊर्जा को अपने रासायनिक बंध में संजोये रखती हैं। कोशिकाओं द्वारा (माइटोकोंड्रिया तथा क्लोरोप्लास्ट में) एटीपी के संश्लेषण की प्रक्रिया को फोस्फोरीलेशन कहते हैं। फोटो-फोस्फोरीलेशन वह प्रक्रिया है जिसमें प्रकाश की उपस्थिति में एडीपी तथा अकार्बनिक फोस्फेट से एटीपी का संश्लेषण होता है। जब दो फोटोसिस्टम क्रमिक कार्य करते हैं जिसमें पीएस II पहले और पीएस I दूसरे क्रम में कार्य करें तो इस प्रक्रिया को अचक्रीय फोटो-फॉस्फोरीलेशन कहते हैं। ये दोनों फोटोसिस्टम एक इलेक्ट्रॉन परिवहन शृंखला से जुड़े होते हैं जैसे कि पहले Z स्कीम में देख चुके हैं। एटीपी तथा एनएडीपीएच + H+ दोनों ही इस प्रकार के इलेक्ट्रॉन प्रवाह द्वारा संश्लेषित होते हैं (चित्र 13.5)।



चित्र 13.6 प्रकाश अभिक्रिया की Z-स्कीम

जब केवल पीएस I क्रियाशील होता है, तब इलेक्ट्रॉन फोटोसिस्टम में ही घूमता रहता है और फोस्फोरीलेशन इलेक्ट्रॉन चक्रीय प्रवाह के कारण होता है (चित्र 13.6)। यह प्रवाह संभवत: स्ट्रोमा लैमिली में होती है। ग्राना की झिल्ली अथवा लैमिला में पीएस I एवं पीएस II, दोनों ही होते हैं, जबकि स्ट्रोमा लैमिली झिल्लियों में पीएस II एवं एनएडीपी रिडक्टेस एंजाइम नहीं होते हैं। उत्तेजित इलेक्ट्रॉन एनएडीपी+ में पारित नहीं होता, बल्कि वापस पीएस I कॉम्पलेक्स में इलेक्ट्रॉन प्रवाह शृंखला द्वारा चक्रित होता रहता है (चित्र 13.6)। अत: चक्रीय प्रवाह में केवल एटीपी का संश्लेषण होता है न कि एनएडीपीएच + एच+ का। चक्रीय फोटो-फॉस्फोरीलेशन तभी होता है जब उत्तेजना के लिए प्रकाश का तरंगदैर्ध्य 680nm से अधिक हो।

13.6.3 रसोपरासरणी परिकल्पना (केमिओस्मोटिक हाइपोथेसिस)

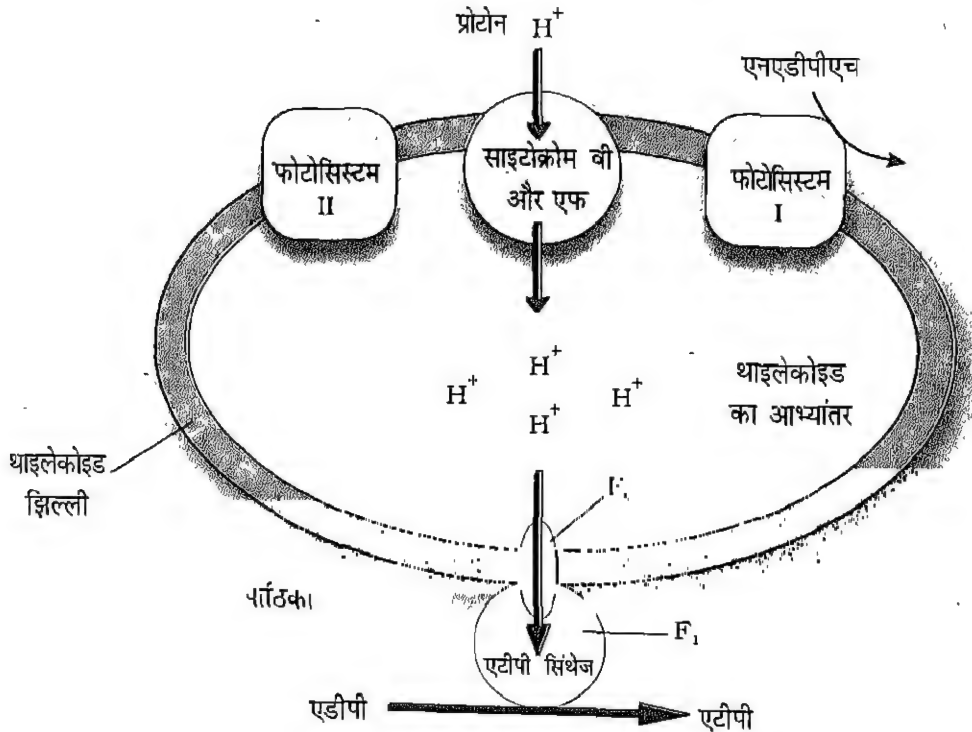
आइए, अब हम यह समझने का प्रयत्न करें कि क्लोरोप्लास्ट में एटीपी कैसे संश्लेषित होता है? इस प्रक्रम का वर्णन रसोपरासरणी परिकल्पना द्वारा कर सकते हैं। श्वसन की भाँति ही प्रकाश-संश्लेषण में भी, एटीपी का संश्लेषण एक झिल्लिका के आर-पार प्रोटोन प्रवणता के कारण होता है। यहाँ पर ये झिल्लिकाएं थाइलेकोइड की होती हैं। यहाँ पर एक अंतर यह है कि प्रोटोन झिल्लिका के अंदर की ओर अर्थात् अवकोशिका (ल्यूमेन) में संचित होता है। श्वसन में प्रोटोन माइटोकांड्रिया की अंतरा झिल्ली अवकोशिका में संचित होती है, जब इलेक्ट्रॉन इटीएस (अध्याय 14) से गुजरते हैं।

आइए, यह समझें कि किन कारणों से प्रोटोन प्रवणता झिल्लिका के आर-पार होती है? हमें पुनः उन प्रक्रियाओं पर ध्यान देना होगा जो इलेक्ट्रॉन के सक्रियता और उनके परिवहन के समय संपन्न होता है, ताकि उन चरणों को सुनिश्चित किया जा सके जिनके कारण प्रोटोन प्रवणता का विकास होता (चित्र 13.7) है।

(अ) चूँकि जल के अणु का विघटन झिल्लिका के अंदर की तरफ होता है अतः जल के विघटन से उत्पन्न हाइड्रोजन आयन अथवा प्रोटोन थाइलाकोइड अवकाशिका (ल्यूमेन) में संचित होते हैं।

(ब) जैसे ही इलेक्ट्रॉन्स फोटोसिस्टम के माध्यम से गति करते हैं, प्रोटोन झिल्लिका के पार चला जाता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि इलेक्ट्रॉन का प्राथमिक ग्राही, जो कि झिल्लिका के बाहर की ओर स्थित होता है, यह अपने इलेक्ट्रॉन को एक इलेक्ट्रॉन वाहक को स्थानांतरित नहीं करता, बल्कि एक हाइड्रोजन वाहक को करता है। अतः इलेक्ट्रॉन प्रवाह के समय यह अणु स्ट्रोमा से एक प्रोटोन को ले लेता है, जब यह अणु अपने इलेक्ट्रॉन को झिल्ली के भीतरी ओर स्थित इलेक्ट्रॉन वाहक को देता है, तब प्रोटोन के अंदर ओर अथवा झिल्ली की अवकाशिका की ओर मुक्त होता है।

(स) एनएडीपी रिडक्टेस एंजाइम झिल्ली के स्ट्रोमा की ओर होता है। पीएस I के इलेक्ट्रॉन ग्राही से आने वाले इलेक्ट्रॉन्स के साथ-साथ प्रोटोन एनएडीपी+ को एनएडीपी एच + एच+ में अपचयित करने के लिए आवश्यक होता है। ये प्रोटोन स्ट्रोमा पीठिका से ही आते हैं।



चित्र 13.7 रस परासरण के द्वारा एटीपी का निर्माण

अतः क्लोरोप्लास्ट में स्थित स्ट्रोमा में प्रोटोन की संख्या घटती है, जबकि ल्यूमेन (अवकाशिका) में प्रोटोन का संचयन होता है। इस प्रकार यह थाइलाकोइड झिल्ली के आर-पार एक प्रोटोन प्रवणता उत्पन्न होती है और साथ ही साथ ल्यूमेन में पी.एच (pH) भी कम हो जाता है।

हमारे लिए प्रोटोन प्रवणता इतना महत्वपूर्ण क्यों है? प्रोटोन प्रवणता इसलिए महत्वपूर्ण है; चूँकि प्रवणता टूटने पर ऊर्जा मुक्त होती है। यह प्रवणता इसलिए भंग होती है; क्योंकि प्रोटोन झिल्लिका में मौजूद एटीपीएज के पारगमन वाहिका (F_0) के माध्यम से स्ट्रोमा में गतिशील होता है। आपने अध्याय 12 में एटीपी तथा एटीपीएज एंजाइम के बारे में पढ़ा है। आपको याद होगा कि एटीपीएज एंजाइम में दो भाग होते हैं: इसमें एक एफ शॅन्य(F_0) कहलाता है, जो झिल्लिका में अतः स्थापित होता है तथा एक पारगमन झिल्लिका चैनल की रचना करता है जो कि झिल्लिका के आर-पार प्रोटोन के विसरण को आगे बढ़ाता है। इसका दूसरा भाग एफ वन (F_1) कहलाता है और थाइलेकोइड की बाहरी सतह जो स्ट्रोमा की ओर होती है पर उद्धर्व के रूप में होता है प्रवणता का भंजन पर्याप्त ऊर्जा प्रदान करता है, जिसके कारण एटीपीएज के कण एफ वन (F_1) में संरूपण परिवर्तन आता है। जिससे कि एंजाइम ऊर्जा से प्रचूर एटीपी का संश्लेषण कर सकें।

रसोपरासरण (केमिओस्मोसिस) के लिए एक झिल्लिका, एक प्रोटोन पंप, एक प्रोटोन प्रवणता तथा एटीपीएज की आवश्यकता होती है। प्रोटोन को एक झिल्लिका के आर-पार पंप करने के लिए ऊर्जा का उपयोग होता है, ताकि थाइलेकोइड ल्यूमेन में एक प्रवणता अथवा प्रोटोन की उच्च सांद्रता पैदा हो सके। एटीपीएज के पास एक चैनल अथवा नलिका होता है, जो झिल्लिका के आर-पार प्रोटोन को विसरण का अवसर देता है। यह एटीपीएज एंजाइम को सक्रिय करने के लिए पर्याप्त ऊर्जा छोड़ता है जो एटीपी संश्लेषण को उत्प्रेरित करता है।

इलेक्ट्रॉन की गतिशीलता से उत्पादित एनएडीपीएच के साथ एटीपी भी स्ट्रोमा (पीठिका) में संपन्न होने वाले जैव संश्लेषण में तुरंत उपयोग कर लिए जाएंगे, जो CO_2 के स्थिरण एवं शर्करा के संश्लेषण के लिए आवश्यक है।

13.7 एटीपी तथा एनएडीपीएच कहाँ उपयोग होते हैं?

हमने पढ़ा है कि प्रकाश अभिक्रियाँ के उत्पाद एटीपी, एनएडीपीएच तथा O_2 हैं। इनमें से O_2 क्लोराप्लास्ट के बाहर विसरित होती है; जबकि एटीपी तथा एनएडीपीएच का उपयोग आहार अथवा शर्करा को संश्लेषित करने वाली प्रक्रिया में होता है। यह प्रकाश-संश्लेषण का **जैव संश्लेषण चरण** होता है। यह प्रक्रिया परोक्ष रूप से प्रकाश पर निर्भर नहीं होती; बल्कि यह प्रकाश के प्रक्रियाओं के उत्पादों अर्थात् एटीपी तथा एनएडीपीएच के अतिरिक्त CO_2 तथा H_2O (जल) पर निर्भर होती है। आप शायद यह आश्चर्य कर सकते हैं कि इसकी सत्यता की जाँच कैसे की जा सकती है? यह बहुत ही सरल है। प्रकाश उपलब्ध न होने के तुरंत बाद कुछ समय तक के लिए जैव संश्लेषण प्रक्रिया जारी रहती है और इसके बाद बंद हो जाती है। यदि इसके बाद पुनः प्रकाश उपलब्ध होता है तो संश्लेषण पुनः आरंभ हो जाता है।

*अत: जैव संश्लेषण चरण को **अप्रकाशी अभिक्रिया** (डार्क रिएक्शन) कहना क्या एक मिथ्या है? अपने साथियों के बीच इसकी चर्चा करें।*

आइए अब देखें कि जैव संश्लेषण चरण में एटीपी तथा एनएडीपीएच का उपयोग कैसे होता है? हम पहले देख चुकें हैं कि H_2O के साथ CO_2 के मिलने से $(CH_2O)_n$ अथवा शर्करा उत्पादित होती है। यह वैज्ञानिकों की रुचि थी कि उन्होंने यह खोजा कि यह प्रतिक्रिया कैसे संपन्न होती है अथवा यह जाना कि CO_2 के प्रतिक्रिया में आने से अथवा यौगिकीकृत होने से कौन सा पहला उत्पाद बनता है। द्वितीय विश्व युद्ध के ठीक बाद, लाभदायी उपयोग हेतु रेडियो आइसोटोपिक का उपयोग किया गया। इस उपयोग में मेलविन केल्विन का कार्य सराहनीय था। उन्होंने शैवाल में रेडियो एक्टिव 14_C का उपयोग प्रकाश-संश्लेषण अध्ययन में किया, जिससे पता लगा कि CO_2यौगिकीकरण (फिक्सेशन) पहला उत्पाद एक 3 कार्बन वाला कार्बनिक अम्ल था। इसके साथ ही उसने संपूर्ण जैव संश्लेषण पथ की खोज की अत: इसे **केल्विन चक्र** कहते हैं। इस पहले उत्पाद का नाम 3-**फोस्फोग्लिसेरिक** अम्ल अथवा संक्षेप में **पीजीए** है। *इसमें कितने कार्बन परमाणु होते हैं?*

वैज्ञानिकों ने जानने का यह भी प्रयत्न किया कि क्या सभी पौधे CO_2यौगिकीकरण (स्थिरीकरण) के बाद पहला उत्पाद पीजीए ही बनाते हैं अथवा फिर अन्य पौधों में कोई अन्य उत्पाद हैं। बहुत सारे पौधों में व्यापक शोध किए गए, जहाँ पर CO_2 के यौगिकीकरण का पहला स्थायी उत्पाद पुन: एक कार्बनिक अम्ल था, जिसमें कार्बन के चार परमाणु थे। यह अम्ल **ओक्सैलोएसिटिक अम्ल** अथवा ओएए था। तब से प्रकाश-संश्लेषण के दौरान CO_2के स्वांगीकरण (एसिमिलेशन) को दो मुख्य विधियों से बताया गया। जिन पौधों में, CO_2यौगिकीकरण का पहला उत्पाद C_3 अम्ल (PGA) था उसे **C_3पथ** और जिनका पहला उत्पाद C_4 अम्ल (ओएए) था, उसे **C_4 पथ** कहते हैं। इन दोनों समूह के पौधों में कुछ अन्य अभिलक्षण भी होते हैं, जिनकी चर्चा हम बाद में करेंगे।

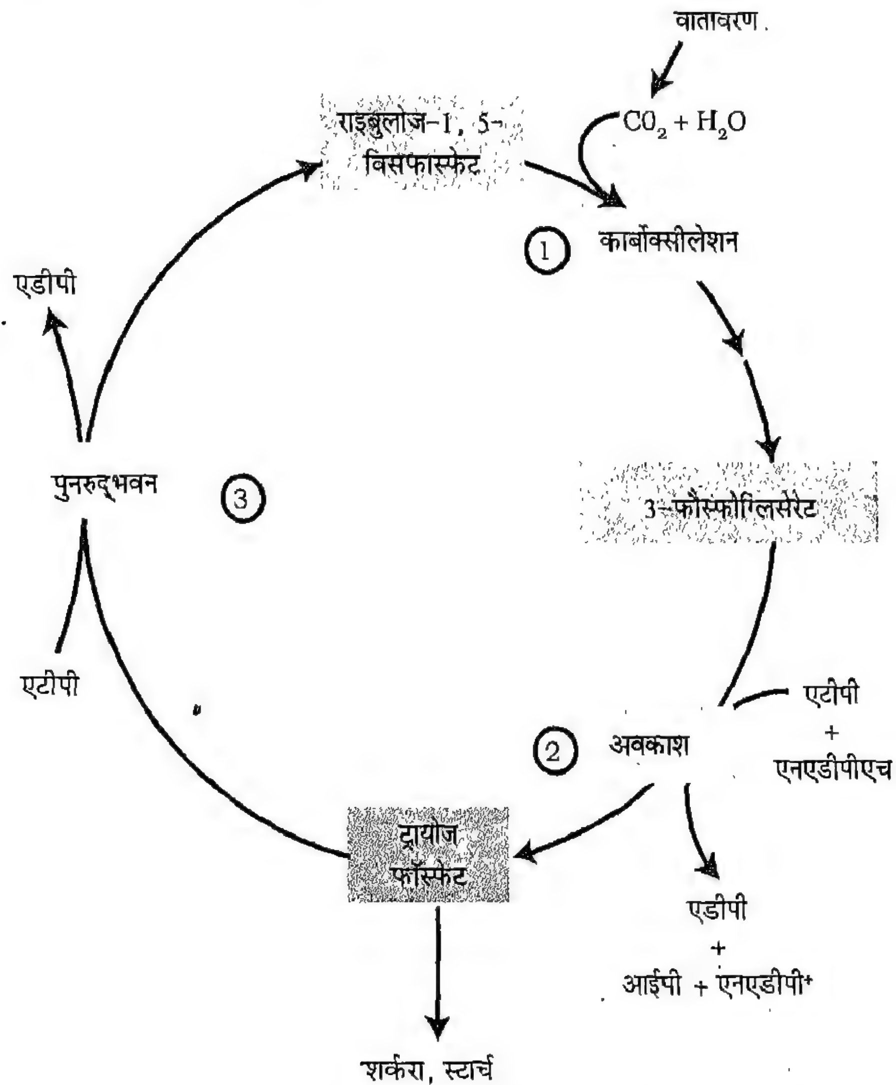
13.7.1 CO_2 के प्राथमिकग्राही

आइए, अब हम अपने आप से एक प्रश्न पूछें, जिसे कि उन वैज्ञानिकों द्वारा पूछा गया था जो अप्रकाशी अभिक्रिया को समझने के लिए संघर्ष कर रहे थे। *उस अणु में कितने कार्बन परमाणु हैं जो CO_2 को ग्राह्य करने के बाद तीन कार्बन यौगिक (अर्थात् पीजीए) बनाते हैं?*

अध्ययनों से पता लगा कि ग्राही अणु एक पाँच कार्बन वाला कीटोज शुगर (शर्करा) था, यह रिब्यूलोज 1-5 बिसफोस्फेट (RuBP) था। *क्या आपमें से किसी ने इस संभावना के बारे में सोचा था?* परेशान मत होइए; वैज्ञानिकों को भी इसे जानने में बहुत समय लगा और किसी निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले बहुत सारे प्रयोग किए गए थे। उन्हें यह भी यकीन था कि, चूँकि पहला उत्पाद C_3अम्ल था, अत: प्राथमिकग्राही 2 कार्बन कंपाउंड (यौगिक) होगा। उन्होंने पहले 2 कार्बन कम्पाउंड को पहचानने के लिए कई वर्ष तक प्रयत्न किए। अंतत: उन्होंने पाँच कार्बन वाले RuBP की खोज करने में सफलता प्राप्त की।

13.7.2 केल्विन चक्र

केल्विन तथा उसके सहकर्मियों ने संपूर्ण पथ का पता लगाया और बताया कि यह पथ एक चक्रीय क्रम में संचालित होता है; जिसमें RuBP पुनः उत्पादित होता है। आइए, अब यह देखें कि केल्विन पथ कैसे संचालित होता है और शर्करा कहाँ पर संश्लेषित होती है। आइए, शुरू में ही हम स्पष्ट रूप से समझ लें कि केल्विन चक्र उन सभी पौधों में होता है जो प्रकाश-संश्लेषण करते हैं। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उनमें चाहे पथ C_3 अथवा C_4 (अथवा कोई अन्य) हो (चित्र 13.8)।



चित्र 13.8 कैल्विन चक्र तीन भागों में बांटा जा सकता है। (1)कार्बोक्सिलेशन जिसमें CO_2 राइबुलोज-1, 5 विसफास्फेट से योग करता है (2) अवकरण, जिसमें कार्बोहाइड्रेट का निर्माण प्रकाश रासायनिक ग्राही तथा एनएडीपीएच की मदद से होता है तथा (3) पुनरुद्भवन जिसमें CO_2 ग्राही राइबुलोज-1, 5 विसफॉस्फेट का फिर से निर्माण होता है तथा चक्र चलता रहता है।

केल्विन चक्र को आसानी से समझने के लिए इसको तीन चरणों - कार्बोक्सिलीकरण (कार्बोक्सीलेशन), रिडक्शन तथा रिजनरेशन में वर्णन करते हैं।

1. **कार्बोक्सिलीकरण**- CO_2 के यौगिकीकरण से एक स्थिर कार्बनिक मध्यस्थ बनता है। केल्विन चक्र में कार्बोक्सिलीकरण एक अत्यधिक निर्णायक चरण है जहाँ RuBP के कार्बोक्सिलीकरण के लिए CO_2 का उपयोग किया जाता है। यह प्रतिक्रिया एंजाइम RuBP कार्बोक्सिलेस के द्वारा उत्प्रेरित होती है, जिसके परिणामस्वरूप 3-P GA के दो अणु बनते हैं। चूँकि इस एंजाइम में एक ऑक्सीजिनेशन (ऑक्सीकरण) क्षमता भी होती है, अतः यह ज्यादा उचित होगा कि हम इस एंजाइम को RuBP कार्बोक्सीलेस-ऑक्सीजिनेस अथवा **रुबिस्को** कहें।
2. **रिड्क्शन (अपचयन)** यह प्रतिक्रियाओं की एक शृंखला है जिसमें ग्लूकोज बनता है। इस चरण में प्रत्येक CO_2 अणु के स्थिरण हेतु एटीपी के 2 अणुओं का उपयोग फॉस्फोरिलेशन के लिए तथा एनएडीपीएच के दो अणुओं का उपयोग अपचयन हेतु होता है। **पथ** से ग्लूकोज के एक अणु को बनाने के लिए CO_2 के 6 अणुओं के यौगिकीकरण तथा चक्करों की आवश्यकता होती है।
3. **रिजेनरेशन (पुनरुद्भवन)** यदि चक्र को बिना बाधा के जारी रहना है तो CO_2 ग्राही अणु RuBP का पुनरुद्भवन बहुत ही आवश्यक होता है। पुनरुद्भवन के चरण में RuBP गठन हेतु फॉस्फोरीलेशन के लिए एक एटीपी की आवश्यकता होती है।

इसलिए, केल्विन चक्र में CO_2 के प्रत्येक अणु को प्रवेश के लिए एटीपी के 3 अणु तथा एनएडीपीएच के 2 अणुओं की आवश्यकता होती है। अप्रकाश अभिक्रिया में उपयोग होने वाले एटीपी और एनएडीपीएच की संख्याओं में यह अंतर ही चक्रीय फॉस्फोरीलेशन को संपन्न कराने का कारण है।

ग्लूकोस के एक अणु की रचना के लिए इस चक्र के 6 चक्करों की आवश्यकता होती है। *यह पता करें कि केल्विन पथ के माध्यम से ग्लूकोस के एक अणु की रचना के लिए कितने एटीपी तथा एनएडीपीएच के अणुओं की आवश्यकता होती है।*
आपको यह बात शायद समझने में मदद करेगी कि केल्विन चक्र में क्या अंदर जाता है और क्या बाहर निकलता है।

अंदर	बाहर
6 CO_2	एक ग्लूकोज
18 एटीपी	18 एडीपी
12 एनएडीपीएच	12 एनएडीपी

13.8 पथ C_4

C_4 पथ जैसा कि पहले बताया गया है कि पौधे जो शुष्क उष्णकटिबंधी क्षेत्र में पाए जाते हैं उनमें C_4 पथ होता है। इन पौधों में CO_2 को यौगिकीकरण का पहला उत्पाद यद्यपि C_4 औक्जेलोएसिटिक अम्ल होता है फिर भी इनके मुख्य जैव संश्लेषण पथ में C_3 पथ

अथवा केल्विन चक्र ही होता है। तब फिर से C_3 पौधों से किस प्रकार में भिन्न हैं? यह एक प्रश्न है जिसे आप पूछ सकते हैं।

C_4 पौधे विशिष्ट हैं: इनकी पत्तियों में एक विशेष प्रकार की शारीरिकी होती है। ये उच्च ताप को सह सकते हैं। ये उच्च प्रकाश तीव्रता के प्रति अनुक्रिया करते हैं। उनमें प्रकाश श्वसन प्रक्रिया नहीं होती और उनमें जैव भार अधिक उत्पन्न होता है। आइए, इन्हें एक-एक करके समझें।

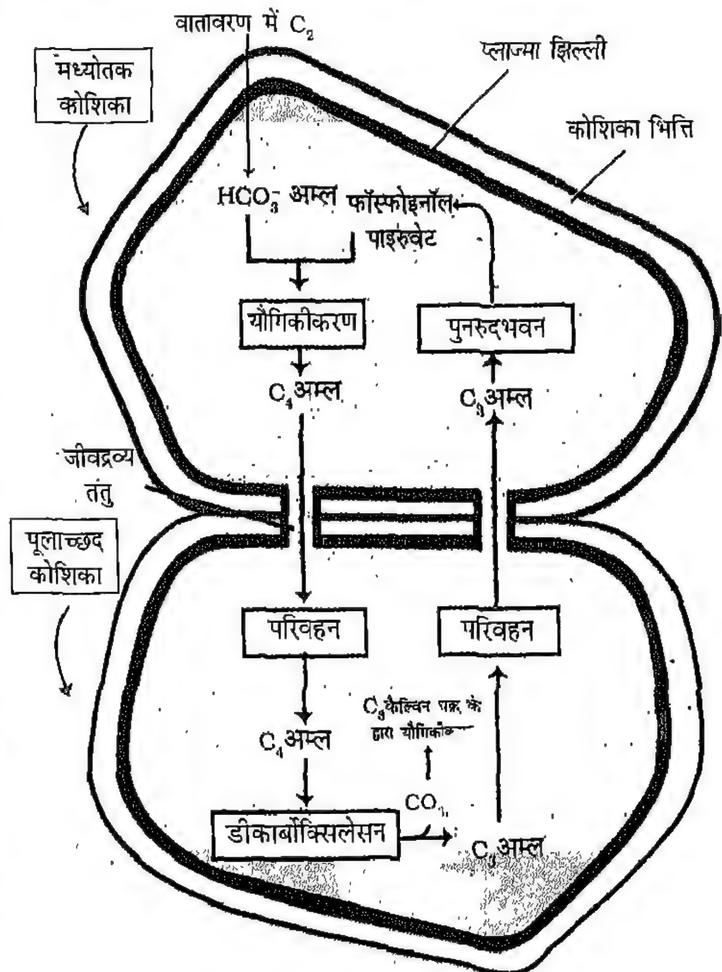
आओ, C_3 तथा C_4 पत्तियों की खड़ी काट का अध्ययन करें। *क्या आपने इन दोनों में कोई अंतर देखा है? क्या दोनों में एक ही प्रकार के पर्णमध्योतक हैं? क्या इनके संवहनी पूलाच्छद के आस-पास एक ही प्रकार की कोशिकाएं हैं?*

C_4 पथ पौधों की संवहन बंडल के चारों ओर स्थित बृहद् **कोशिकाएं पूलाच्छद** (बंडल शीथ) कोशिकाएं कहलाती है और पत्तियाँ जिनमें ऐसी शारीर होती है, उन्हें **क्रैंजी शारीर** वाली पत्तियाँ कहते हैं। यहाँ, क्रैंज का अर्थ है छल्ला अथवा घेरा, चूँकि कोशिकाओं की व्यवस्था एक छल्ले के रूप में होती है। संवहन बंडल के आस-पास पूलाच्छद कोशिकाओं की **अनेकों परतें** होती हैं, इनमें बहुत अधिक संख्या में क्लोरोप्लास्ट होते हैं, इसकी मोटी भित्तियाँ गैस से अप्रवेश्य होती हैं और इनमें अंतरकोशीय स्थान नहीं होता। आप C_4 पौधों जैसे मक्का अथवा ज्वार की पत्तियों का एक भाग काटो, ताकि क्रैंज शारीर एवं पर्णमध्योतक देख सकें।

अपने आस-पास के विभिन्न स्पेशीज के पेड़ों की पत्तियाँ एकत्र करें और उनकी पत्तियों की खड़ी काट लें। सूक्ष्मदर्शी से इसके संवहन बंडल पूल के आस-पास पूलाच्छद को देखें। पूलाच्छद की उपस्थिति C_4 पौधों को पहचानने में आपकी सहायता करेगा।

अब चित्र 13.9 में दिखाए गए पथ का अध्ययन करें। इस पथ को हैच एवं स्लैल पथ कहते हैं। यह भी एक चक्रीय प्रक्रिया है। आइए, हम चरणों को समझते हुए पथ का अध्ययन करें।

CO_2 का प्राथमिक ग्राही एक 3 कार्बन अणु **फोस्फोइनोल पाइरुवेट (PEP)** है और वह पर्णमध्योतक कोशिका में स्थित होता है। इस यौगिकीकरण को **पेप कार्बोक्सीलेस** अथवा पेप केस (PEP) नामक एंजाइम संपन्न करता है। पर्णमध्योतक कोशिकाओं में रुबिस्को एंजाइम नहीं होता है। C_4 अम्ल ओएए पर्णमध्योतक कोशिका में निर्मित होता है।



चित्र 13.9 हैच एवं स्लैक पाथवे

इसके बाद ये पर्णमध्योतक कोशिका में अन्य 4-कार्बन वाले अम्ल जैसे मैलिक अम्ल और एस्पार्टिक अम्ल बनते हैं, जोकि पूलाच्छद कोशिका में चले जाते हैं। पूलाच्छद कोशिका में यह C_4 अम्ल विघटित हो जाता है जिससे CO_2 तथा एक 3-कार्बन अणु मुक्त होते हैं।

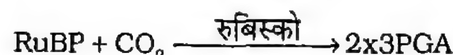
3-कार्बन अणु पुन: पर्णमध्योतक में वापस आ जाता है, जहाँ यह पुन: पेप में बदला जाता है और इस तरह से यह चक्र पूरा होता है।

पूलाच्छद कोशिका से निकली CO_2 केल्विन पथ अथवा C_3 में प्रवेश करती है केल्विन एक ऐसा पथ जो सभी पौधों में समान रूप से होता है। पूलाच्छद कोशिका रुबिस्को से भरपूर होती है, परंतु पेप केस से रहित होती है। अत: मौलिक पथ केल्विन पथ जिसके परिणामस्वरूप शर्करा बनती है, वह C_3 एवं C_4 पौधों में सामान्य रूप से होता है।

क्या आपने ध्यान दिया है कि केल्विन पथ सभी C_3 पौधों की पर्णमध्योतक कोशिकाओं में पाया जाता है? C_4 पौधों में पर्णमध्योतक कोशिकाओं में यह संपन्न नहीं होता है, किंतु पूलाच्छद कोशिकाओं में केवल कारगर होता है।

13.9 प्रकाश श्वसन (फोटोरेस्पिरेशन)

आइए, हम एक और प्रक्रिया- प्रकाश श्वसन को जानने का प्रयत्न करते हैं, जो C_3 एवं C_4 पौधों में महत्वपूर्ण अंतर करती है। **प्रकाश श्वसन** समझने के लिए, हमें केल्विन पथ के प्रथम चरण अर्थात् CO_2 स्थिरीकरण के पहले चरण के विषय में कुछ अधिक जानकारी करनी होगी। यह वह अभिक्रिया है जहाँ RuBP कार्बन डाईऑक्साइड से संयोजित कर 3 पीजीए के 2 अणुओं का गठन करता है और एक एंजाइम रिबूलोज विसफोस्फेट कार्बोक्सीलेस ऑक्सीजिनेस (RuBisCO) के द्वारा उत्प्रेरित होता है।



$$RuBP + CO_2 \xrightarrow{\text{रुबिस्को}} 2x3PGA$$

रुबिस्को नामक एंजाइम विश्व में सबसे ज्यादा प्रचुर है (आपको आश्चर्य होता है क्यों?) और इसका यह गुण है कि इसकी सक्रिय जगह CO_2 एवं O_2 दोनों से बंधित हो सकता है। इसलिए इसे रुबिस्को कहते हैं। *क्या आप सोच सकते हैं कि यह कैसे संभव है?* रुबिस्को में O_2 की अपेक्षा CO_2 के लिए अधिक बंधुता है। कल्पना कीजिए कि यदि ऐसा नहीं होता तो क्या होता! यह आबंधता प्रतियोगितात्मक है। O_2 अथवा CO_2 इनमें से कौन आबंध होगा, यह उनकी सापेक्ष सांद्रता पर निर्भर करता है।

C_3 पौधों में कुछ O_2 रुबिस्को से बंधित होती है अत: CO_2 का यौगिकीकरण कम हो जाता है। यहाँ पर आरयुबीपी 3-PGA के अणुओं में पतिवर्तित होने की बजाय ऑक्सीजन से संयोजित होकर चक्र में फॉस्फोग्लाइकोलेट का एक अणु बनाते हैं जिसे प्रकाश श्वसन कहते हैं। प्रकाश श्वसन पथ में शर्करा और एटीपी का संश्लेषण नहीं होता; बल्कि इसमें एटीपी के उपयोग के साथ CO_2 भी निकलती है। प्रकाश श्वसन पथ में एटीपी अथवा एनएडीपीएच का संश्लेषण नहीं होता। अत: प्रकाश श्वसन एक निरर्थक प्रक्रिया है।

तालिका 13.1 C_3 एवं C_4 पौधों के बीच अंतर करने के लिए इस तालिका के कालम 2 और 3 को भरो।

विशिष्टताएं	C_3 पौधे	C_4 पौधे	इनमें से चुनिए
वह कोशिका प्रकार जिसमें केल्विन चक्र संपन्न होता है			पर्णमध्योतक/पूलाच्छद/दोनों
वह कोशिका प्रकार जिसमें प्रारंभिक कार्बोक्सिलेशन प्रतिक्रिया घटित होता है।			पर्णमध्योतक/पूलाच्छद/दोनों
एक पत्ती में कितने प्रकार की कोशिकाएं होती है जो CO_2 का यौगिकीकरण करती है।			एकः पर्णमध्योतक, दोः पूलाच्छद एवं पर्णमध्योतक तीनः पूलाच्छद, पैलिसेड (खंभ), स्पंजी पर्णमध्योतक
CO_2 का प्राथमिक ग्राही कौन सा है?			आरयुबीपी/पीईपी/पीजीए
प्राथमिक CO_2 ग्राही में कितनी संख्या में कार्बन होते हैं?			5/4/3
CO_2 स्थिरीकरण का प्राथमिक उत्पाद कौन सा है?			पीजीए/ओएए/आरयुबीपी
CO_2 स्थिरीकरण के प्राथमिक उत्पाद में कितने कार्बन हैं?			3/4/5
क्या पौधे में रुबिस्को (RuBisCO) होता है?			हाँ/नहीं/सदैव नहीं
क्या पौधे में पेपकेस (PEPCase) होता है?			हाँ/नहीं/सदैव नहीं
पौधे में किन कोशिकाओं में रुबिस्को (Rubisco) होता है?			पर्णमध्योतक/पूलाच्छद कोई नहीं
उच्च प्रकाश स्थिति में CO_2 के यौगिकीकरण की दर			निम्न/उच्च/मध्यम
क्या निम्न प्रकाश तीव्रता में प्रकाश श्वसन होता है?			उच्च/नगण्य/कभी-कभी
क्या उच्च प्रकाश तीव्रता में प्रकाश श्वसन होता है?			उच्च/नगण्य/कभी-कभी
क्या निम्न CO_2 सांद्रता में प्रकाश श्वसन होगा?			उच्च/नगण्य/कभी-कभी
क्या उच्च CO_2 सांद्रता में प्रकाश श्वसन होगा?			उच्च/नगण्य/कभी-कभी
अनुकूलतम तापमान			30-40^{0}C /20-25^{0}C 40^{0}C से ऊपर
उदाहरण			विभिन्न पौधों की पत्तियों के खडे सेक्सन काटें तथा सूक्ष्मदर्शी के नीचे रखकर क्रैंज शरीर देखें तथा उन्हें उपयुक्त खाने (कॉलम) में भरें।

C4 पौधे में प्रकाश श्वसन नहीं होता है। इसका कारण यह है कि इनमें एक ऐसी प्रणाली होती है जो एंजाइम स्थल पर CO_2 की साद्रंता बढ़ा देती है। ऐसा तब होता है जब पर्णमध्योतक का C_4 अम्ल पूलाच्छद में टूटकर CO_2 को मुक्त करता है, जिसके परिणामस्वरूप CO_2 की अंतरकोशिकीय सांद्रता बढ़ जाती है। इससे यह सुनिश्चित हो जाता है कि रुबिस्को कार्बोक्सीलेस के रूप में कार्य करता है, जिससे इसकी ऑक्सीजिनेस के रूप में कार्य करने की क्षमता कम हो जाती है।

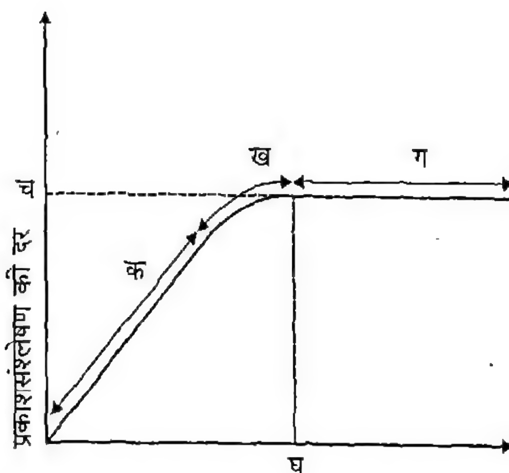
अब, आप जानते है कि C_4 पौधों में प्रकाश श्वसन नहीं होता। अब संभवत: आप समझ गए होंगे कि इन पौधों में उत्पादकता एवं उत्पादन क्यों अच्छा होता है। इसके अतिरिक्त ये पौधे उच्च ताप को भी सहन कर सकते हैं।

उपर्युक्त परिचर्चा के आधार पर क्या आप उन पौधों की तुलना कर सकते हो जिसमें C_3 तथा C_4 पथ होता है। आप दी गई तालिका का उपयोग कर आवश्यक सूचनाओं को भरें।

13.10 प्रकाश-संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक

प्रकाश-संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारकों के विषय में जानना आवश्यक है। प्रकाश-संश्लेषण की दर पौधों एवं फसली पादपों के उत्पादन जानने में अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। प्रकाश-संश्लेषण कई कारकों से प्रभावित होता है जो बाह्य तथा आंतरिक दोनों ही हो सकते हैं। पादप कारकों में संख्या, आकृति, आयु तथा पत्तियों का विन्यास, पर्णमध्योतक कोशिकाएं तथा क्लोराप्लास्ट आंतरिक CO_2 की सांद्रता और क्लोराफिल की मात्रा आदि है। पादप अथवा आंतरिक कारक पौधे की वृद्धि तथा आनुवंशिक पूर्वानुकूलता पर निर्भर करते हैं।

बाह्य कारक हैं सूर्य का प्रकाश, ताप, CO_2 की सांद्रता तथा जल। पादप की प्रकाश-संश्लेषण प्रक्रिया में ये सभी कारक एक समय में साथ-साथ ही प्रभाव डालते हैं। यद्यपि, बहुत सारे कारक परस्पर क्रिया करते हैं तथा साथ-साथ प्रकाश-संश्लेषण अथवा CO_2 के यौगिकीकरण को प्रभावित करते हैं, फिर भी प्राय: इनमें से कोई भी एक कारक इस की दर को प्रभावित अथवा सीमित करने का मुख्य कारण बन जाता है। अत: किसी भी समय पर उपानुकूलतम स्तर पर उपलब्ध कारक द्वारा प्रकाश-संश्लेषण की दर का निर्धारण होगा।



चित्र 13.10 प्रकाश की तीव्रता का प्रकाशसंश्लेषण के प्रति दर पर प्रभाव का ग्राफ

जब अनेक कारक किसी (जैव) रासायनिक प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं तो ब्लैकमैन का (1905) **लॉ ऑफ लिमिटिंग फैक्टर्स** प्रभाव में आता है। इसके अनुसार: *यदि कोई रासायनिक प्रक्रिया एक से अधिक कारकों द्वारा प्रभावित होती है तो इसकी दर का निर्धारण उस समीपस्थ कारक द्वारा होगा जो कि न्यूनतम मान (मूल्य) वाला हो।*

अगर उस कारक की मात्रा बदल दी जाए तो कारक प्रक्रिया को सीधे प्रभावित करता है।

उदाहरण के लिए एक हरी पत्ती, अधिकतम अनुकूल प्रकाश तथा CO_2 की उपस्थिति के बावजूद, यदि ताप बहुत कम हो तो प्रकाश-संश्लेषण नहीं करेगी। इस पत्ती में प्रकाश-संश्लेषण तभी शुरु होगा, यदि उसे ईष्टतम ताप प्रदान किया जाए।

13.10.1 प्रकाश

जब हम प्रकाश को प्रकाश-संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक के रूप में लेते हैं तो हमें प्रकाश की गुणवत्ता, प्रकाश की तीव्रता तथा दीप्तिकाल के बीच अंतर करने की आवश्यकता है। यहाँ कम प्रकाश तीव्रता पर आपतित प्रकाश तथा CO_2 के यौगिकीरण की दर के बीच एक रैखीय संबंध है। उच्च प्रकाश तीव्रता होने पर, इस दर में कोई वृद्धि नहीं होती है, अन्य कारक सीमित हो जाते हैं (चित्र 13.10)। इसमें ध्यान देने वाली रोचक बात यह है कि प्रकाश संतृप्ति पूर्ण प्रकाश के 10 प्रतिशत पर होती है। छाया अथवा सघन जंगलों में उगने वाले पौधों को छोड़कर प्रकाश शायद ही प्रकृति में सीमाकारी कारक हो। एक सीमा के बाद आपतित प्रकाश क्लोरोफिल के विघटन का कारण होती है, जिससे प्रकाश-संश्लेषण की दर कम हो जाती है।

13.10.2 कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता

प्रकाशसंश्लेषण में कार्बन डाइऑक्साइड एक प्रमुख सीमाकारी कारक है। वायुमंडल में CO_2 की सांद्रता बहुत ही कम है (0.03 और 0.04 प्रतिशत के बीच)। CO_2 की सांद्रता में 0.05 प्रतिशत तक वृद्धि के कारण CO_2 की यौगिकीकरण दर में वृद्धि हो सकती है, लेकिन इससे अधिक की मात्रा लंबे समय तक के लिए क्षतिकारक बन सकता है।

C_3 एवं C_4 पौधे CO_2 की सांद्रता में भिन्न अनुक्रिया करते हैं। निम्न प्रकाश स्थितियों में दोनों में से कोई भी समूह उच्च CO_2 सांद्रता के प्रति अनुक्रिया नहीं करते हैं। उच्च प्रकाश तीव्रता में C_3 तथा C_4 दोनों ही तरह के पादपों में प्रकाश-संश्लेषण की बढ़ी दर अधिक हो जाती है। यहाँ पर यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि C_4 पौधे लगभग 360 μlL^{-1} पर संतृप्त हो जाते हैं जबकि C_3 बढ़ी हुई CO_2 सांद्रता पर अनुक्रिया करता है तथा संतृप्तन केवल 450 μlL^{-1} के बाद ही दिखाती है। अत: उपलब्ध CO_2 का स्तर C_3 पादपों के लिए सीमाकारी है।

सच यह है कि C_3 पौधे उच्चतर CO_2 सांद्रता में अनुक्रिया करते हैं और इससे प्रकाश-संश्लेषण की दर में वृद्धि होती है, जिसके फलस्वरूप उत्पादन अधिक होता है और सिद्धांत का उपयोग ग्रीन हाउस फसलों, जैसे टमाटर एवं बेल मिर्च में किया गया है। इन्हें कार्बन-डाइऑक्साइड से भरपूर वातावरण में बढ़ने का अवसर दिया जाता है ताकि उच्च पैदावार प्राप्त हो।

13.10.3 ताप

अप्रकाशी अभिक्रिया एंजाइम पर निर्भर करती है, इसलिए ताप द्वारा नियंत्रित होती है। यद्यपि प्रकाश अभिक्रिया भी ताप संवेदी होती है, लेकिन उस पर ताप का काफी कम

प्रभाव होता है। C_4 पौधे उच्च ताप पर अनुक्रिया करते हैं तथा उनमें प्रकाश-संश्लेषण की दर भी ऊँची होती है, जबकि C_3 पौधे के लिए ईष्टतम ताप कम होता है।

विभिन्न पौधों के प्रकाश-संश्लेषण लिए इष्टतम ताप उनके अनुकूलित आवास पर निर्भर करता है। उष्णकटिबंधी पौधों के लिए ईष्टतम ताप उच्च होता है। समशीतोष्ण जलवायु में उगने वाले पौधों के लिए एक अपेक्षाकृत कम ताप की आवश्यकता होती है।

13.10.4 जल

यद्यपि प्रकाश अभिक्रिया में जल एक महत्वपूर्ण प्रतिक्रिया अभिकारक है, तथापि, कारक के रूप में जल का प्रभाव पूरे पादप पर पड़ता है, न कि सीधे प्रकाश-संश्लेषण पर। जल तनाव रंध्र को बंद कर देता है अत: CO_2 की उपलब्धता घट जाती है। इसके साथ ही, जल तनाव से पत्तियाँ मुरझा जाती हैं, जिससे पत्ती का क्षेत्रफल कम हो जाता है और इसके साथ ही साथ उपापचयी क्रियाएं भी कम हो जाती हैं।

सारांश

पौधे अपने भोजन को प्रकाश-संश्लेषण द्वारा स्वयं तैयार करते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान वायुमंडल में उपलब्ध कार्बनडाइऑक्साइड पत्तियों के रंध्रों द्वारा ली जाती है और कार्बोहाइड्रेट्स- मुख्यत: ग्लूकोज (शर्करा) एवं स्टार्च बनाने में उपयोग की जाती है। प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया पौधों के हरे भागों, मुख्यत: पत्तियों में संपन्न होती है। पत्तियों के अंतर्गत पर्णमध्योतक कोशिकाओं में भारी मात्रा में क्लोरोप्लास्ट होता है जोकि CO_2 के यौगिकीकरण (फिक्सेशन) के लिए उत्तरदायी होता है। क्लोरोप्लास्ट के अंतर्गत, प्रकाश अभिक्रिया के लिए, झिल्लिकाएं वह स्थल होती हैं, जबकि केमोसिंथेटिक पथ स्ट्रोमा में स्थित होता है। प्रकाश-संश्लेषण में दो चरण होते हैं: प्रकाश अभिक्रिया तथा कार्बन फिक्सिंग रिएक्शन (कार्बन यौगिकीकरण अभिक्रिया)। प्रकाश अभिक्रिया में प्रकाश ऊर्जा एंटेना में मौजूद वर्णकों द्वारा अवशोषित किए जाते हैं तथा अभिक्रिया केंद्र में मौजूद क्लोरोफिल ए के अणुओं को भेज दिए जाते हैं। यहाँ पर दो फोटोसिस्टम (प्रकाश प्रणाली) पीएस I तथा पीएस II होते हैं। पीएस I के अभिक्रिया केंद्र में क्लोरोफिल ए पी 700 के अणु जो प्रकाश तरंगदैर्ध्य 700 एनएम को अवशोषित करते हैं, जबकि पीएस II में एक पी 680 अभिक्रिया केंद्र होता है जो लाल प्रकाश को 680 एनएम पर अवशोषित करता है। प्रकाश अवशोषण के बाद इलेक्ट्रॉन उत्तेजित होते हैं और PS II तथा PS I से स्थानांतरित होते हुए अंत में एनएडीपी (NADP) में पहुँच एनएडीपीएच (NADPH) की रचना करते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान एक प्रोटोन प्रवणता थाइलेकोइड की झिल्लिका के आर-पार पैदा की जाती है। एटीपी एंजाइम के हिस्से F_0 से प्रोटोन की गति के कारण प्रवणता भंग हो जाती है तथा एटीपी के संश्लेषण हेतु पर्याप्त ऊर्जा मुक्त की जाती है। पानी के अणु का विघटन PS II के साथ जुड़ा होता है, परिणामत: O_2, और प्रोटोन की रिहाई होती है और PS II में इलेक्ट्रॉन का स्थानांतरण होता है।

कार्बन यौगिकीकरण में, एंजाइम रुबिस्को द्वारा CO_2 एक 5 कार्बन यौगिक RuBP से जोड़ा जाता है तथा 3 कार्बन पीजीए के 2 अणु में बदलता है। इसके बाद केल्विन चक्र द्वारा यह शर्करा में परिवर्तित होता है और RuBP पुनरुद्भवित होता है। इस प्रक्रिया के दौरान प्रकाश अभिक्रिया द्वारा संश्लेषित एटीपी एवं एनएडीपी एच इस्तेमाल होता है। इसके साथ ही C_3 पौधों में रुबिस्को एक निरर्थक ऑक्सीजिनेशन प्रतिक्रिया: प्रकाश श्वसन को उत्प्रेरित करता है।

कुछ उष्णकटिबंधीय पौधे विशेष प्रकार का प्रकाश-संश्लेषण करते हैं जिसे C_4 कहते हैं। इन पौधों के पर्णमध्योतक में संपन्न होने वाले CO_2 यौगिकीकरण के उत्पाद एक 4 कार्बन यौगिक हैं। पूलाच्छद कोशिका में केल्विन पथ चलाया जाता है, जिससे कार्बोहाइड्रेटस का संश्लेषण होता है।

अभ्यास

1. एक पौधे को बाहर से देखकर क्या आप बता सकते हैं कि वह C_3 है अथवा C_4? कैसे और क्यों?
2. एक पौधे की आंतरिक संरचना को देखकर क्या आप बता सकते हैं कि वह C_3 है अथवा C_4? वर्णन करें?
3. हालांकि C_4 पौधे में बहुत कम कोशिकाएं जैव-संश्लेषण – केल्विन पथ को वहन करते हैं, फिर भी वे उच्च उत्पादकता वाले होते हैं। क्या इस पर चर्चा कर सकते हो कि ऐसा क्यों हैं?
4. रुबिस्को (RuBisCO) एक एंजाइम है जो कार्बोक्सिलेस और ऑक्सीजिनेस के रूप में काम करता है। आप ऐसा क्यों मानते हैं कि C_4 पौधों में, रुबिस्को अधिक मात्रा में कार्बोक्सिलेशन करता है?
5. मान लीजिए, यहाँ पर क्लोरोफिल बी की उच्च सांद्रता युक्त, मगर क्लोरोफिल *ए* की कमी वाले पेड़ थे। क्या ये प्रकाश-संश्लेषण करते होंगे? तब पौधों में क्लोरोफिल *बी* क्यों होता हैं? और फिर दूसरे गौण वर्णकों की क्या जरूरत है?
6. यदि पत्ती को अंधेरे में रख दिया गया हो तो उसका रंग क्रमशः पीला एवं हरा पीला हो जाता है? कौन से वर्णक आपकी सोच में अधिक स्थायी हैं?
7. एक ही पौधे की पत्ती का छाया वाला (उल्टा) भाग देखें और उसके चमक वाले (सीधे) भाग से तुलना करें अथवा गमले में लगे धूप में रखे हुए तथा छाया में रखे हुए पौधों के बीच तुलना करें। कौन सा गहरे हरे रंग का होता है, और क्यों?
8. प्रकाश-संश्लेषण की दर पर प्रकाश का प्रभाव पड़ता है (चित्र 13.10)। ग्राफ के आधार पर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें:
   (अ) वक्र के किस बिंदु अथवा बिंदुओं पर (क, ख, अथवा ग) प्रकाश एक नियामक कारक है?
   (ब) क बिंदु पर नियामक कारक कौन से हैं?
   (स) वक्र में ग और घ क्या निरूपित करता है?
9. निम्नांकित में तुलना करें-
   (अ) C_3 एवं C_4 पथ
   (ब) चक्रीय एवं अचक्रीय फोटोफॉस्फोरिलेसन
   (स) C_3 एवं C_4 पादपों की पत्ती की शारीरिकी

अध्याय 14

पादप में श्वसन

हम सभी जीवित रहने के लिए साँस लेते हैं, लेकिन जीवन के लिए साँस लेना इतना आवश्यक क्यों है? जब हम साँस लेते हैं, तब क्या होता है। क्या सभी जीवधारी, चाहे पादप हों या सूक्ष्म जीव साँस लेते हैं? यदि ऐसा है तो कैसे?

सभी जीवधारियों को अपने दैनिक जीवन में अवशोषण, परिवहन, गति, प्रजनन जैसे कार्य करने हेतु और यहाँ तक की साँस लेने हेतु भी ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह सभी ऊर्जा कहाँ से आती है? हम जानते हैं कि ऊर्जा के लिए हम भोजन करते हैं, लेकिन ये ऊर्जा भोजन से कैसे प्राप्त होती है? यह ऊर्जा कैसे उपयोग में आती है? क्या सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों से समान प्रकार की ऊर्जा मिलती है? क्या पादप भोजन करते हैं? पादप यह ऊर्जा कहाँ से प्राप्त करते हैं? और सूक्ष्मजीव इस ऊर्जा की आवश्यकता के लिए क्या भोजन करते हैं?

उपरोक्त किए गए अनेक प्रश्नों से आपको आश्चर्य हो रहा होगा कि इनमें बहुत अधिक सामंजस्य नहीं है। लेकिन वास्तव में साँस लेने की प्रक्रिया व खाद्य पदार्थ से मुक्त होने वाली ऊर्जा की प्रक्रिया में बहुत अधिक संबद्धता होती है। हम यह समझने का प्रयास करें कि यह कैसे होता है?

जीवन विधि के लिए आवश्यक सभी ऊर्जा कुछ वृहत् अणुओं के ऑक्सीकरण से प्राप्त होती है, जिसे खाद्य पदार्थ कहते हैं। केवल हरे पादप व नीले हरित जीवाणु अपना भोजन स्वयं बना सकते हैं। ये प्रकाश-संश्लेषण विधि, द्वारा प्रकाशीय ऊर्जा को रसायनिक ऊर्जा में परिवर्तित कर कार्बोहाइड्रेट-ग्लूकोज, सुक्रोज व स्टार्च के रूप में संचित करते हैं। हमें यह याद रखना चाहिए कि हरे पादपों में भी सभी कोशिकाओं, ऊतकों, अंगों में प्रकाश-संश्लेषण नहीं होता है, केवल वे कोशिकाएं, जिनमें क्लोरोप्लास्ट होता है, वे ही

प्रकाश-संश्लेषण करती हैं। चूंकि हरे पादपों में सभी अंग, ऊतक व कोशिकाएं हरी नहीं होती हैं, इसलिए इनमें ऑक्सीकरण के लिए खाद्य पदार्थ की आवश्यकता होती है। इसलिए खाद्य पदार्थ का अहरित भागों में परिवहन होता है। प्राणी परपोषित होते हैं, इसलिए वे अपना भोजन पादपों से परोक्ष (शाकाहारी), या अपरोक्ष (माँसाहारी) रूप में प्राप्त करते हैं। मृतजीवी जैसे कवक, मृत या सड़े गले पदार्थों पर निर्भर रहते हैं। यह जान लेना अति महत्वपूर्ण है कि जीवन में साँस हेतु आवश्यक सभी खाद्य पदार्थ प्रकाश-संश्लेषण द्वारा प्राप्त होते हैं। इस अध्याय में **कोशिकीय साँस** अथवा कोशिका में खाद्य पदार्थों के टूटने से निकलने वाली ऊर्जा की क्रियाविधि तथा एटीपी के संश्लेषण को समझाया गया है।

निसंदेह, प्रकाश-संश्लेषण क्लोरोप्लास्ट में संपन्न होता है (यूकैरियोट में), जबकि ऊर्जा प्राप्त करने के लिए कॉम्पलेक्स अणुओं का विघटन से कोशिका द्रव्य तथा माइटोकोंड्रिया में होता है (वह भी केवल यूकैरियोट में) जबकि कोशिकाओं में कॉम्पलेक्स अणुओं के **C-C** (कार्बन-कार्बन) आबंध के, ऑक्सीकरण होने पर पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा का मुक्त होना **साँस** कहलाता है। इस प्रक्रिया में जिस यौगिक का ऑक्सीकरण होता है उसे **श्वसनी क्रियाधार** कहते हैं। प्रायः कार्बोहाइड्रेट के ऑक्सीकरण से ऊर्जा मुक्त होती है, किंतु कुछ पादपों में विशेष परिस्थितियों में प्रोटीन,वसा तथा यहाँ तक कि कार्बनिक अम्ल भी श्वसनी क्रियाधार के रूप में प्रयोग में आ सकते हैं। कोशिका के अंदर ऑक्सीकरण के दौरान श्वसनी क्रियाधार में स्थित संपूर्ण ऊर्जा कोशिका में एक साथ मुक्त नहीं होती है। यह एंजाइम द्वारा नियंत्रित चरणबद्ध धीमी अभिक्रियाओं के रूप में मुक्त होती है, जो रासायनिक ऊर्जा एटीपी के रूप मे एकत्रित हो जाती है। यहाँ यह समझ लेना आवश्यक है कि साँस में ऑक्सीकरण द्वारा निकलने वाली ऊर्जा सीधे उपयोग में नहीं आती (या संभवतया नहीं भी हो सकती) किंतु यह एटीपी के संश्लेषण के उपयोग में आती है तथा इस ऊर्जा की जब भी (तथा जहाँ भी) आवश्यकता होती है, ये टूट जाती हैं इस कारण से एटीपी कोशिका के लिए ऊर्जा मुद्रा का कार्य करती है। एटीपी में संचित उर्जा, जीवधारियों की विभिन्न ऊर्जा आवश्यक प्रक्रियाओं में उपयोग में आती है। साँस के दौरान निर्मित कार्बनिक पदार्थ कोशिका में दूसरे अणुओं के संश्लेषण के लिए पूर्वगामी के रूप काम आते हैं।

14.1 क्या पादप साँस लेते हैं?

इस प्रश्न का कोई परोक्ष उत्तर नहीं है। हाँ पादपों में साँस हेतु ऑक्सीजन (O_2)की आवश्यकता होती है और वे कार्बन-डाइऑक्साइड (CO_2)को मुक्त करते हैं। इस कारण से पादपों में ऐसी व्यवस्था है, जिससे ऑक्सीजन(O_2)की उपलब्धता सुनिश्चित होती है। पादपों में प्राणियों की तरह गैसीय आदान-प्रदान हेतु विशिष्ट अंग नहीं होते, बल्कि उनमें इस उद्देश्य हेतु रंध्र व वातरंध्र मिलते हैं। पौधे बिना श्वसन अंग के कैसे श्वसन करते हैं, इसके कई कारण हो सकते हैं। प्रथम कारण यह है कि पादपों का प्रत्येक भाग अपनी गैसीय आदान-प्रदान की आवश्यकता का ध्यान रखता है। पादपों के एक भाग से दूसरे भाग में गैसों का परिवहन बहुत कम होता है। दूसरा कारण यह है कि पादपों में गैसों के

आदान-प्रदान की बहुत अधिक मांग नहीं होती। मूल, तना व पत्ती में श्वसन, जंतुओं की अपेक्षा बहुत ही धीमी दर से होता है। केवल प्रकाश-संश्लेषण के दौरान गैसों का अत्यधिक आदान-प्रदान होता है तथा प्रत्येक पत्ती, पूर्णतया इस प्रकार से अनुकूलित होती है कि इस अवधि के दौरान अपनी आवश्यकता का ध्यान रखती है। जब कोशिका श्वसन करती है। ऑक्सीजन की उपलब्धता की कोई समस्या नहीं होती है, क्योंकि कोशिका में प्रकाश-संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन निकलती है। तृतीय कारण यह है कि बड़े, स्थूल पादपों में गैसें अधिक दूरी तक विसरित नहीं होती हैं। पादपों में प्रत्येक सजीव कोशिका पादपों की सतह के बिल्कुल पास स्थित होती है। यह 'पत्ती के लिए सत्य कथन' है। आप यह पूछ सकते हैं कि मोटे, काष्ठीय तनों और मूल के लिए क्या होता है? तना में सजीव कोशिकाएं छाल व छाल के नीचे पतली सतह के रूप में व्यवस्थित रहती हैं। इनमें भी छिद्र होते हैं, जिन्हें वातरंध्र कहते हैं। भीतर की कोशिकाएं मृत होती हैं तथा यांत्रिक सहायता प्रदान करती हैं। अत: पादपों की अधिकांश कोशिकाओं की सतह हवा के संपर्क में होती है। यह पैरेंकाइमा कोशिकाओं के द्वारा इस कार्य को आगे बढ़ाते हैं जो कि वायु रिक्तकाओं के आपस में जुड़े हुए जालरूपी रचना के कारण संभव होता है।

ग्लूकोज के संपूर्ण दहन से अंतिम उत्पाद के रूप में कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2), तथा जल (H_2O) के साथ ऊर्जा निकलती है जिसका सर्वाधिक भाग ऊष्मा के रूप में निकल जाता है। यदि यह ऊर्जा कोशिका के लिए आवश्यक है तो इसका उपयोग कोशिका में दूसरे अणुओं के संश्लेषण में होना चाहिए।



$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \longrightarrow 6\,CO_2 + 6H_2O + \text{ऊर्जा}$$

पादप कोशिकाएं इस तरह से भोजन बनाती हैं कि ग्लूकोज अणु के अपचय से निकलने वाली संपूर्ण ऊर्जा मुक्त उष्मा के रूप में न निकल पाए। मुख्य बात यह है कि ग्लूकोज का ऑक्सीकरण एक चरण में न होकर छोटे-छोटे अनेक चरणों में होता है, जिनमें कुछ चरण इतने बड़े होते हैं कि इनसे निकलने वाली पर्याप्त ऊर्जा एटीपी के संश्लेषण में उपयोग में आ जाती है। यह कैसे होता है, वास्तव में यही साँस का इतिहास है। साँस की क्रियाविधि के दौरान ऑक्सीजन का उपयोग होता है तथा कार्बनडाइऑक्साइड, जल तथा ऊर्जा उत्पाद के रूप में निकलती है। दहन अभिक्रिया के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। परंतु कुछ कोशिकाएं ऑक्सीजन की उपस्थिति और अनुपस्थिति में भी जीवित रहती हैं। *क्या आप ऐसी परिस्थतियों के बारे (और जीवों) में सोच सकते हैं जहाँ ऑक्सीजन उपलब्ध नहीं होती है।* विश्वास करने के लिए पर्याप्त कारण है कि प्रथम कोशिका इस ग्रह पर ऐसे वातावरण में मिली थी, जहाँ ऑक्सीजन उपलब्ध नहीं थी। आज भी उपलब्ध सजीवों में हम जानते हैं कि कुछ अनाक्सी (ऑक्सीजन रहित) वातावरण हेतु अपने को अनुकूलित कर चुके हैं। इनमें से कुछ विकल्पीय अनाक्सी हैं जबकि कुछ के लिए अनॉक्सी स्थिति की आवश्यकता अविकल्पीय होती है। हर स्थिति में सभी जीवों में एंजाइम तंत्र होता है जो ग्लूकोज को बिना ऑक्सीजन की सहायता से आंशिक रूप से ऑक्सीकृत करता है। इस प्रकार ग्लूकोज का पाइरुविक अम्ल में विघटन **ग्लाइकोलिसिस** कहलाता है।

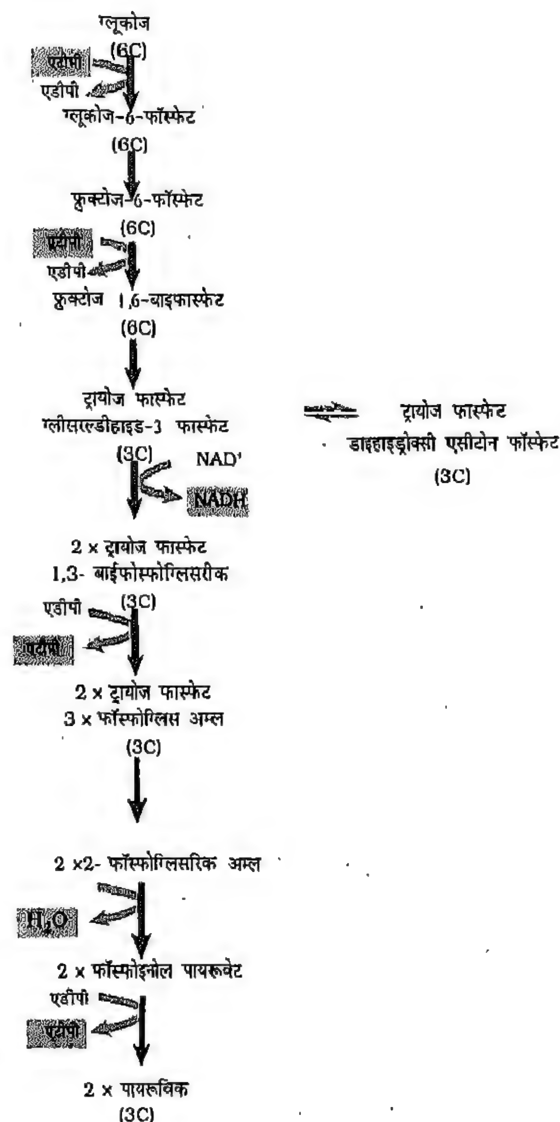
14.2 ग्लाइकोलिसिस

ग्लाइकोलिसिस शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द ग्लाइकोस अर्थात् शर्करा एवं लाइसिस अर्थात् टूटना से हुआ है। ग्लाइकोलिसिस की प्रक्रिया गुस्ताव इंबेडेन, ओटो मेयर हॉफ तथा जे पारानास द्वारा दिया गया तथा इसे सामान्यत: इएमपी पाथ कहते हैं। अनाक्सी जीवों में साँस की केवल यही प्रक्रिया है। ग्लाइकोलिसिस कोशिका द्रव्य में संपन्न होता है और यह सभी सजीवों में मिलता है । इस प्रक्रिया में ग्लूकोज आंशिक ऑक्सीकरण द्वारा पाइरुविक अम्ल के दो अणुओं में बदल जाता है। पादपों में यह ग्लूकोज सुक्रोज से प्राप्त होता है जो कि प्रकाश संश्लेषित कार्बन अभिक्रियाओं का अंतिम उत्पाद है या संचयित कार्बोहाइड्रेट से प्राप्त होता है। सुक्रोस इंवर्टेस नामक एंजाइम की सहायता से ग्लूकोज तथा फ्रुक्टोज में परिवर्तित हो जाता है। ये दोनों मोनोसैकेराइड्स सरलता से ग्लाइकोलाइटिक चक्र में प्रवेश कर जाते हैं।

ग्लूकोज एवं फ्रुक्टोज, हेक्सोकाइनेज एंजाइम द्वारा फॉस्फरिकृत होकर ग्लूकोज-6 फॉस्फेट बनाते हैं। ग्लूकोज का फॉस्फरिकृत रूप समायवीकरण द्वारा फ्रुक्टोज-6 फॉस्फेट में परिवर्तित हो जाता है। ग्लूकोज एवं फ्रुक्टोज के उपापचय के बाद के क्रम एक समान होते हैं। ग्लाइकोलिसिस के विभिन्न चरण चित्र 14.1 में दर्शाए गए हैं। ग्लाइकोलिसस में दस शृंखलाबद्ध अभिक्रियाओं में विभिन्न एंजाइम द्वारा ग्लूकोज से पाइरुवेट का निर्माण होता है। ग्लाइकोलिसिस के विभिन्न चरणों के अध्ययन के दौरान उन चरणों पर ध्यान दें जिसमें एटीपी का उपयोग (एटीपी ऊर्जा) अथवा संश्लेषण (इस मामले में $NADH+H^+$) होता है।

एटीपी का उपयोग दो चरणों में होता है: पहले चरण में जब ग्लूकोज-6 फॉस्फेट में परिवर्तन होता है तथा दूसरे चरण में व दूसरे फ्रुक्टोज-6 फॉस्फेट का फ्रुक्टोज 1, 6, डाइफॉस्फेट में परिवर्तन होता है।

फ्रुक्टोज 1, 6 डाइफॉस्फेट टूटकर डाइहाइड्रोक्सीएसीटोन फॉस्फेट तथा 3-फॉस्फोग्लिासरिल्डहाइड (पीजीएएल) बनाता है। जब 3-फॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड (पीजीएएल) का 1, 3-बाई फॉस्फोग्लिसरेट (डीपीजीए) में परिवर्तन होता है तो NAD^+ से $NADH + H^+$ का निर्माण होता है। पीजीएएल से दो समान अपचयोपचय (रिडॉक्स) दो हाइड्रोजन अणुं



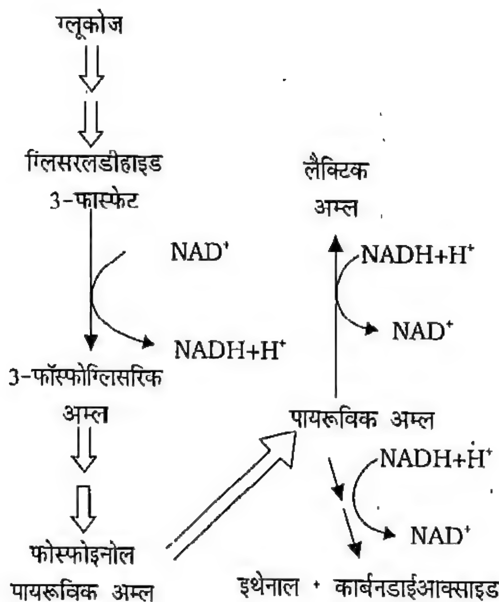
चित्र 14.1 ग्लाइकोलिसिस के चरण

पृथक होकर NAD के एक अणु की ओर स्थानांतरित होता है। पीजीएएल ऑक्सीकृत होकर अकार्बनिक फॉस्फेट से मिलकर डीपीजीए में परिवर्तित हो जाता है। डीपीजीए का 3- फॉस्फोग्लिसरीक अम्ल में परिवर्तन ऊर्जा उत्पादन करने वाली प्रक्रिया है। इस ऊर्जा का उपयोग एटीपी (ATP) निर्माण में होता है। पीईपी (P.E.P.) का पायरुविक अम्ल में परिवर्तन के दौरान भी एटीपी का निर्माण होता है। *क्या तुम यह गणना कर सकते हो कि एक अणु से कितने एटीपी के अणुओं का प्रत्यक्ष रूप से संश्लेषण होता है?*

पायरुविक अम्ल ग्लाइकोलिसिस का मुख्य उत्पाद है। पायरुवेट का उपापचयी भविष्य क्या है? यह कोशिकीय आवश्यकता पर निर्भर है। यहाँ तीन प्रमुख तरीके हैं- जिसमें विभिन्न कोशिकाएं ग्लाइकोलिसिस द्वारा उत्पन्न पायरुविक अम्ल का उपयोग करती हैं। ये लैक्टिक अम्ल किण्वन, एल्कोहलिक किण्वन और ऑक्सी साँस है। अधिकांश प्रोकैरियोट तथा एक कोशिका यूकैरियोट में किण्वन अनाक्सी परिस्थितियों में होता है। ग्लूकोज के पूर्ण ऑक्सीकरण के फलस्वरूप कार्बनडाइऑक्साइड तथा जल बनने हेतु जीवधारियों में क्रेब्स चक्र के द्वारा होता है, जिसे **ऑक्सी श्वसन** या साँस कहते हैं, जिसमें ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है।

14.3 किण्वन

किण्वन में यीस्ट द्वारा ग्लूकोज का अनाक्सी परिस्थितियों में अपूर्ण ऑक्सीकरण होता है। जिसमें अभिक्रियाओं के विभिन्न चरणों द्वारा पायरुविक अम्ल, कार्बनडाइऑक्साइड तथा इथेनोल में परिवर्तित हो जाता है। एंजाइम पायरुविक अम्ल डिकार्बोक्सिलेज एवं एल्कोहल डिहाइड्रोजिनेस इस अभिक्रिया को उत्प्रेरित करता है। दूसरे जीव जैसे कुछ बैक्टीरिया पायरुविक अम्ल से लैक्टिक अम्ल का निर्माण करते हैं। ये चरण चित्र 14.2 में दर्शाए गए हैं। प्राणी की मांसपेशियों की कोशिकाओं में शारीरिक अभ्यास के दौरान जब कोशिकीय साँस के लिए अपर्याप्त ऑक्सीजन होती है तब पायरुविक अम्ल लैक्टिक डिहाइड्रोजिनेस द्वारा लैक्टिक अम्ल में अपचयित हो जाता है। अपचयीकारक NADH + H^+ होता है जो पुनः दोनों प्रक्रियाओं में NAD^+ में ऑक्सीकृत हो जाता है।



चित्र 14.2 श्वसन के प्रमुख पथ

दोनों लैक्टिक अम्ल तथा एल्कोहल किण्वन में पर्याप्त ऊर्जा मुक्त नहीं होती है। ग्लूकोज से 7 प्रतिशत से कम ऊर्जा मुक्त होती है और इसकी संपूर्ण ऊर्जा का उपयोग उच्च ऊर्जा बंध वाले एटीपी (ATP) के निर्माण में नहीं होता है। अम्ल व एल्कोहल बनने वाली उत्पाद की प्रक्रिया खतरनाक होती है। ग्लूकोज के एक अणु से किण्वन के बाद एल्कोहल या लैक्टिक अम्ल बनने के दौरान कितने शुद्ध एटीपी का संश्लेषण होता है। (अर्थात् ग्लाइकोलिसिस

के दौरान उपयोग में आने वाले एटीपी (ATP) की संख्या घटाकर गणना करें कि कितने एटीपी (ATP) का संश्लेषण होता है)। जब एल्कोहल की मात्रा 13 प्रतिशत या अधि क होती है, तो यीस्ट के लिए यह विषाक्तता व मृत्यु का कारण बनती है। *प्राकृतिक किण्वत पेय में एल्कोहल की अधिकतम सांद्रता कितनी होगी? क्या आप सोच सकते हैं कि मादक पेय में एल्कोहल की मात्रा इसमें स्थित एल्कोहल की सांद्रता से अधिक कैसे प्राप्त की जा सकती है?*

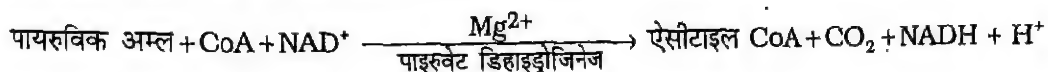
वह क्या प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव में ग्लूकोज का पूर्ण ऑक्सीकरण होता है,और इस दौरान मुक्त ऊर्जा कोशिकीय उपापचय की आवश्यकता के अनुसार बहुत से एटीपी अणुओं का संश्लेषण करती है। यूकैरियोट में ये सभी चरण माइटोकोन्ड्रिया में संपन्न होते हैं। जिसके लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। **ऑक्सी साँस** वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा रासायनिक पदार्थों का ऑक्सीजन की उपस्थिति में पूर्ण ऑक्सीकरण होता है तथा जिसके पश्चात् कार्बनडाइऑक्साइड, जल तथा ऊर्जा निकलती हैं। इस प्रकार का साँस सामान्यतया उच्च जीवों में मिलता है। हम इन प्रक्रियाओं को अगले खंड में पढ़ेंगे।

14.4 ऑक्सी श्वसन (साँस)

माइटोकोंड्रिया में होने वाले ऑक्सी श्वसन के दौरान ग्लाइकोलिसिस का अंतिम उत्पाद पायरुवेट कोशिका द्रव्य से माइटोकोंड्रिया में परिवहन किया जाता है। ऑक्सी श्वसन की मुख्य घटनाएं निम्नलिखित हैं–

- पायरुवेट का चरणबद्ध क्रम में पूर्ण ऑक्सीकरण के उपरांत सभी हाइड्रोजन परमाणु पृथक होते हैं जिससे 3 कार्बनडाइऑक्साइड के अणु भी मुक्त होते हैं।
- हाइड्रोजन परमाणुओं से पृथक् हुए इलेक्ट्रॉन ऑक्सीजन अणु की ओर जाते हैं। जिसके परिणामस्वरूप एटीपी का संश्लेषण होता है।

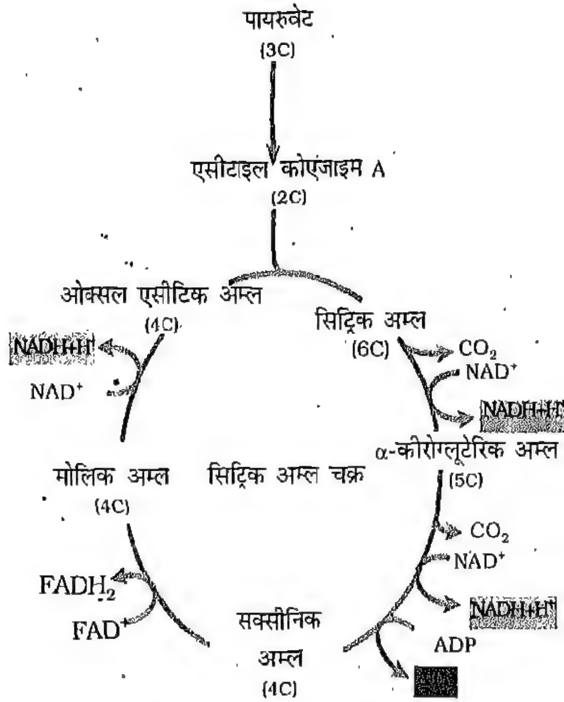
सबसे अधिक रोचक बात यह है कि इसकी पहली प्रक्रिया माइटोकोंड्रिया के आधात्री में संपन्न होती है जब कि द्वितीय प्रक्रिया माइटोकोंड्रिया की भीतरी झिल्ली पर संपन्न होती है। कोशिका द्रव्य में उपस्थित कार्बोहाइड्रेट के ग्लाइकोलिटिक अपचय द्वारा बनने वाले पायरुवेट माइटोकोंड्रिया की आधात्री में प्रवेश करता है जो ऑक्सीकृत कार्बोक्सिलिकरण की कॉम्पलेक्स सामूहिक क्रिया द्वारा पायरुवेट डिहाइड्रोजिनेस एंजाइम द्वारा उत्प्रेरित होता है। पायरुविक डिहाइड्रोजिनेस अभिक्रियाओं में कई सह एंजाइम भाग लेते हैं। जैसे NAD^+ तथा A सहएंजाइम।



$$\text{पायरुविक अम्ल} + CoA + NAD^+ \xrightarrow[\text{पाइरुवेट डिहाइड्रोजिनेज}]{Mg^{2+}} \text{ऐसीटाइल } CoA + CO_2 + NADH + H^+$$

इस प्रक्रिया के दौरान पायरुविक अम्ल के दो अणुओं के उपापचय से NADH के दो अणुओं का निर्माण होता है। (ग्लाकोलिसिस के दौरान ग्लूकोज के एक अणु से निर्मित होते हैं)

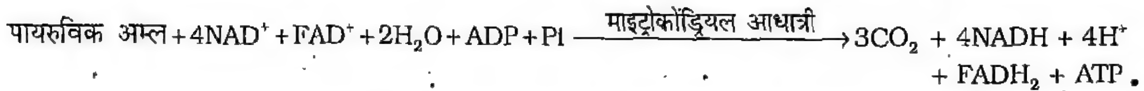
ऐसीटाइल CoA चक्रीय पथ, ट्राइकार्बोक्सिलिक अम्ल चक्र में प्रवेश करता है। जिसे साधारणतया वैज्ञानिक हैन्से क्रेब की खोज के कारण क्रेब्स चक्र कहते हैं।



चित्र 14.3 सिट्रिक अम्ल चक्र

14.4.1 ट्राइकार्बोक्सिलिक अम्ल चक्र (टीसीए)

TCA चक्र का प्रारंभ एसीटाइल समूह के ओक्सेलो ऐसिटिक अम्ल (OAA) तथा जल के साथ संघनन से होता है और सिट्रिक अम्ल का निर्माण होता है (चित्र 14.3) यह अभिक्रिया सिट्रेट सिंथेटेज एंजाइम द्वारा होती है तथा CoA का एक अणु मुक्त होता है। तब सिट्रेट, आइसोसिट्रेट में समायवित हो जाता है। यह डिकार्बोक्सिलीकरण के दो लगातार चरणों के रूप में होता है। इसके उपरांत एल्फाकीटो ग्लूटेरिक अम्ल, तत्पश्चात् सक्सीनाइल CoA का निर्माण होता है। सिट्रिक अम्ल के बचे हुए चरणों में सक्सीनाइल CoA, OAA (ओक्सेलोऐसीटिक अम्ल) में ऑक्सीकृत होकर चक्र को आगे बढ़ाने में सहायक होता है। सक्सीनाइल (CoA) से सक्सीनिक अम्ल के रूपांतरण के दौरान जीटीपी के एक अणु का निर्माण होता है। इसे क्रियाधार स्तरीय फॉस्फोरिलिकरण कहते हैं। इन युग्मित अभिक्रियाओं में जीटीपी, जीडीपी में रूपांतरित हो जाता है तथा एडीपी से एटीपी का निर्माण होता है। चक्र में तीन स्थान ऐसे होते हैं जिसमें NAD^+ का $NADH + H^+$ में अपचयन होता है और एक स्थान पर FAD^+ का $FADH_2$ में अपयचन होता है। टीसीए चक्र द्वारा एसिटिक अम्ल के निरंतर ऑक्सीकरण हेतु ऑक्सेलोऐसीटेट अम्ल के पुनर्निमाण की आवश्यकता होती है, जो चक्र का प्रथम सदस्य है। इसके साथ-साथ NAD^+ तथा FAD^+ का NADH व $FADH_2$ से क्रमश: पुन:उत्पादन होता है। अत: साँस की इस अवस्था के समीकरण को संक्षेप में निम्नवत लिखा जा सकता है:



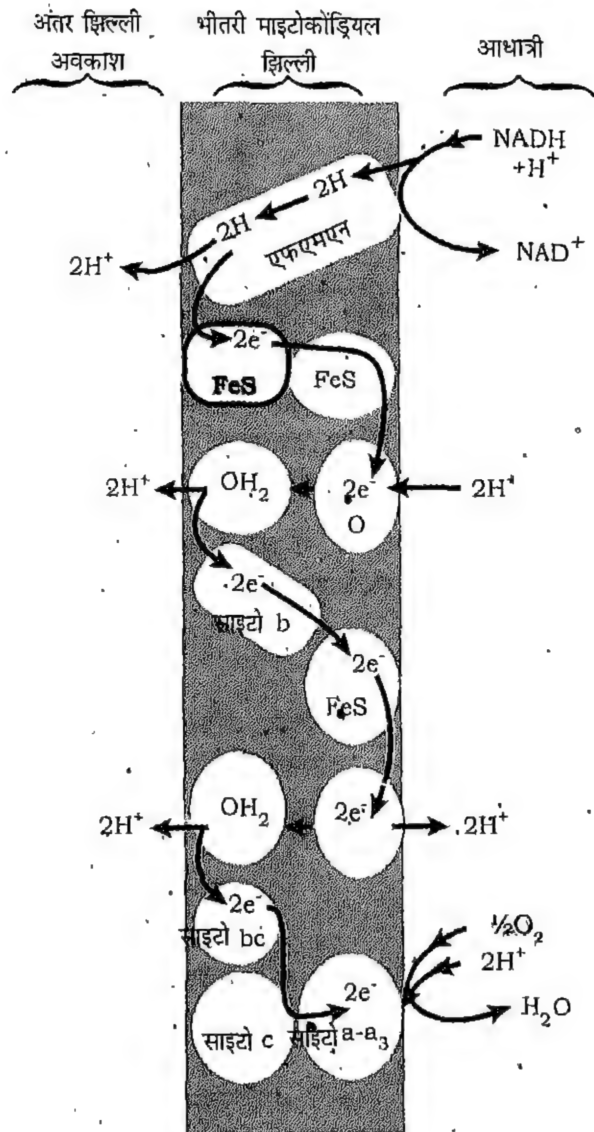
$$\text{पायरुविक अम्ल} + 4NAD^+ + FAD^+ + 2H_2O + ADP + Pi \xrightarrow{\text{माइट्रोकोंड्रियल आधात्री}} 3CO_2 + 4NADH + 4H^+ + FADH_2 + ATP.$$

अब तक हम देख चुके हैं कि ग्लूकोज के विखंडन से कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) निकलती है, $NADH + H^+$ के आठ अणु, $FADH_2$ के दो अणु तथा दो एटीपी अणुओं का निर्माण होता है। आपको आश्चर्य हो रहा होगा कि अभी तक साँस की चर्चा के दौरान न ही कहीं पर ऑक्सीजन का तथा न ही कहीं पर एटीपी के बहुत सारे अणुओं के निर्माण की चर्चा हुई है। अब संश्लेषित $NADH + H^+$ तथा $FADH_2$ की क्या भूमिका होगी। हमें अब समझना होगा कि साँस में ऑक्सीजन की भूमिका तथा एटीपी का निर्माण कैसे होता है?

14.4.2 इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र अथवा ऑक्सीकरणी फॉस्फोरिलिकरण

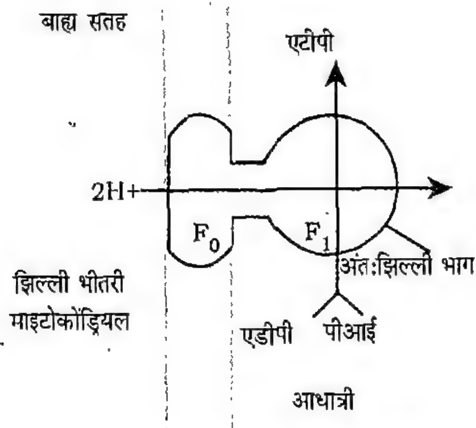
साँस प्रक्रिया के अगले चरण में $NADH + H^+$ तथा $FADH_2$ में संचित ऊर्जा मुक्त व उपयोग में लाना है। यह तब संपादित होता है। जब उनका ऑक्सीकरण इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र द्वारा होता है तथा इलेक्ट्रॉन ऑक्सीजन पर चला जाता है तथा पानी का निर्माण होता

है। उपापचयी पथ जिसके द्वारा इलेक्ट्रॉन एक वाहक से अन्य वाहक की ओर गुजरता है इसे **इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र (ETS)** कहते हैं, (चित्र 14.4) जो माइटोकोंड्रिया के भितरी झिल्ली पर संपन्न होता है। माइटोकोंड्रिया के आधात्री में टीसीए चक्र के दौरान NADH से बनने वाले इलेक्ट्रॉन, एंजाइम NADH डिहाइड्रोजिनेंज द्वारा ऑक्सीकृत होता है (कॉम्पलेक्स-I), तत्पश्चात् इलेक्ट्रॉन भीतरी झिल्ली में उपस्थित यूबीक्वीनोन की ओर स्थानांतरित होता है। यूबीक्विनोन अपचयी समतुल्य $FADH_2$ द्वारा प्राप्त करता है (कॉम्पलेक्स-II) जो सिट्रिक अम्ल चक्र में सक्सीन के ऑक्सीकरण के दौरान उत्पन्न होते हैं। अपचयित यूबिक्विनोन (यूबिक्विनोल) इलेक्ट्रॉन को साइटोक्रोम bc_1 साइटोक्रोम C की ओर स्थानांतरित कर ऑक्सीकृत हो जाता है (कॉम्पलेक्स-III)। साइटोक्रोम C एक छोटा प्रोटीन है जो, भीतरी झिल्ली की बाह्य सतह पर चिपका होता है जो इलेक्ट्रॉन को कॉम्पलेक्स-III तथा कॉम्पलेक्स-IV के बीच स्थानांतरण का कार्य गतिशील वाहक के रूप में करता है। कॉम्पलेक्स-IV साइटोक्रोम C ऑक्सीडेज कॉम्पलेक्स है, जिसमें साइटोक्रोम a, a_3 तथा दो तांबा केंद्र मिलते हैं।



चित्र 14.4 इलेक्ट्रॉन तंत्र

जब इलेक्ट्रॉन, इलेक्ट्रॉन परिवहन शृंखला में एक वाहक से दूसरे वाहक तक कॉम्पलेक्स-I से कॉम्पलेक्स-IV द्वारा गुजरते हैं, तब वे एटीपी सिंथेज (कॉम्पलेक्स-V) से युग्मित होकर एडीपी व अकार्बनिक फॉस्फेट से एटीपी का निर्माण करते हैं। इस दौरान संश्लेषित होने वाली एटीपी अणुओं की संख्या इलेक्ट्रॉन दाता पर निर्भर है। NADH के एक अणु के ऑक्सीकरण से एटीपी के तीन अणुओं का निर्माण होता है जबकि $FADH_2$ का एक अणु से एटीपी का दो अणु बनता है जबकि साँस की ऑक्सी प्रक्रिया ऑक्सीजन की उपस्थिति में ही संपन्न होती है। प्रक्रिया के अंतिम चरण में ऑक्सीजन की भूमिका सीमित होती है। यद्यपि ऑक्सीजन की उपस्थिति अत्यावश्यक है; क्योंकि यह पूरे तंत्र से H_2 (हाइड्रोजन) को मुक्त कर पूरी प्रक्रिया को संचालित करती है। ऑक्सीजन अंतिम हाइड्रोजन ग्राही के रूप में कार्य करता है। प्रकाश फॉस्फोरिलिकरण के विपरीत, जहाँ प्रोटीन प्रवणता के निर्माण में प्रकाश ऊर्जा का उपयोग फॉस्फोरिलिकरण के लिए होता है, साँस में इसी प्रकार की प्रक्रिया में ऑक्सीकरण अपचयन द्वारा ऊर्जा की पूर्ति होती है। फलस्वरूप इस कारण से हुई क्रियाविधि को ऑक्सीकारी-फॉस्फोरिलिकरण कहते हैं।



चित्र 14.5 माइटोकोंड्रिया में एटीपी संश्लेषण का चित्रात्मक प्रदर्शन

झिल्ली से जुड़े एटीपी संश्लेषण की क्रियाविधि के बारे में आप पहले ही पढ़ चुके हैं जिसे पिछले अंध्याय में रसोपरासरण परिकल्पना (केमियोओस्मोटिक हाइपोथिसिस) के आधार पर बताया गया है। जैसा कि पहले वर्णित है कि इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र के दौरान मुक्त ऊर्जा का उपयोग एटीपी सिंथेज (कॉम्पलेक्स-V) की सहायता से एटीपी के संश्लेषण में होता है। यह कॉम्पलेक्स, दो प्रमुख घटकों F_0 व F_1 से बनते हैं (चित्र 14.5) F_1 शीर्ष परिधीय झिल्ली प्रोटीन कॉम्पलेक्स है, जहाँ पर अकार्बनिक फास्फेट तथा एडीपी से एटीपी का संश्लेषण होता है। वैद्युत रसायन प्रोटोन प्रवणता के फलस्वरूप $2H^+$ आयन अंतर झिल्ली अवकाश से F_0 में होकर आधात्री की ओर गति करता है जिससे एक एटीपी का संश्लेषण होता है।

14.5 श्वसनीय संतुलन चार्ट

प्रत्येक ऑक्सीकृत ग्लूकोज अणु से बनने वाले प्राप्त शुद्ध एटीपी की गणना करना अब संभव है, किंतु वास्तविकता में यह एक सैद्धांतिक अभ्यास ही रह गया है। यह गणना कुछ निश्चित कल्पनाओं के आधार पर ही की जा सकती हैं।

- यह एक क्रमिक, सुव्यवस्थित, क्रियात्मक पाथ है जिसमें एक क्रियाधार से दूसरे क्रियाधार का निर्माण होता है जिसमें ग्लाइकोलिसिस से शुरू होकर टीसीए चक्र तथा पथ (ETS) एक के बाद एक आती है।
- ग्लाइकोलिसिस में संश्लेषित NADH माइटोकोंड्रिया में आता है, जहाँ उसका फॉस्फोरिलीकरण होता है।
- पथ का कोई भी मध्यवर्ती दूसरे यौगिक के निर्माण के उपयोग में नहीं आते हैं।
- श्वसन में केवल ग्लूकोज का ही उपयोग होता है– कोई दूसरा वैकल्पिक क्रियाधार पथ के किसी भी मध्यवर्ती चरण में प्रवेश नहीं करता है।

हालांकि इस प्रकार की कल्पना सजीव तंत्र में वास्तव में तर्कसंगत नहीं होती है; सभी पथ एक के बाद एक नहीं, बल्कि एक साथ कार्य करते हैं। पथ में क्रियाधार आवश्यकता अनुसार बाहर तथा अंदर आ जा सकते हैं; आवश्यकतानुसार एटीपी का उपयोग हो सकता है; एंजाइम की क्रिया की दर को अनेकों विधियों द्वारा नियंत्रित किया जाता है। फिर भी यह क्रिया करना उपयोगी है; क्योंकि सजीव तंत्र में ऊर्जा का निष्कर्षण एवं संग्रहण हेतु इसकी दक्षता सराहनीय है। अत: ऑक्सी श्वसन के दौरान ग्लूकोज के एक अणु से एटीपी के 36 अणुओं की शुद्ध प्राप्ति होती है।

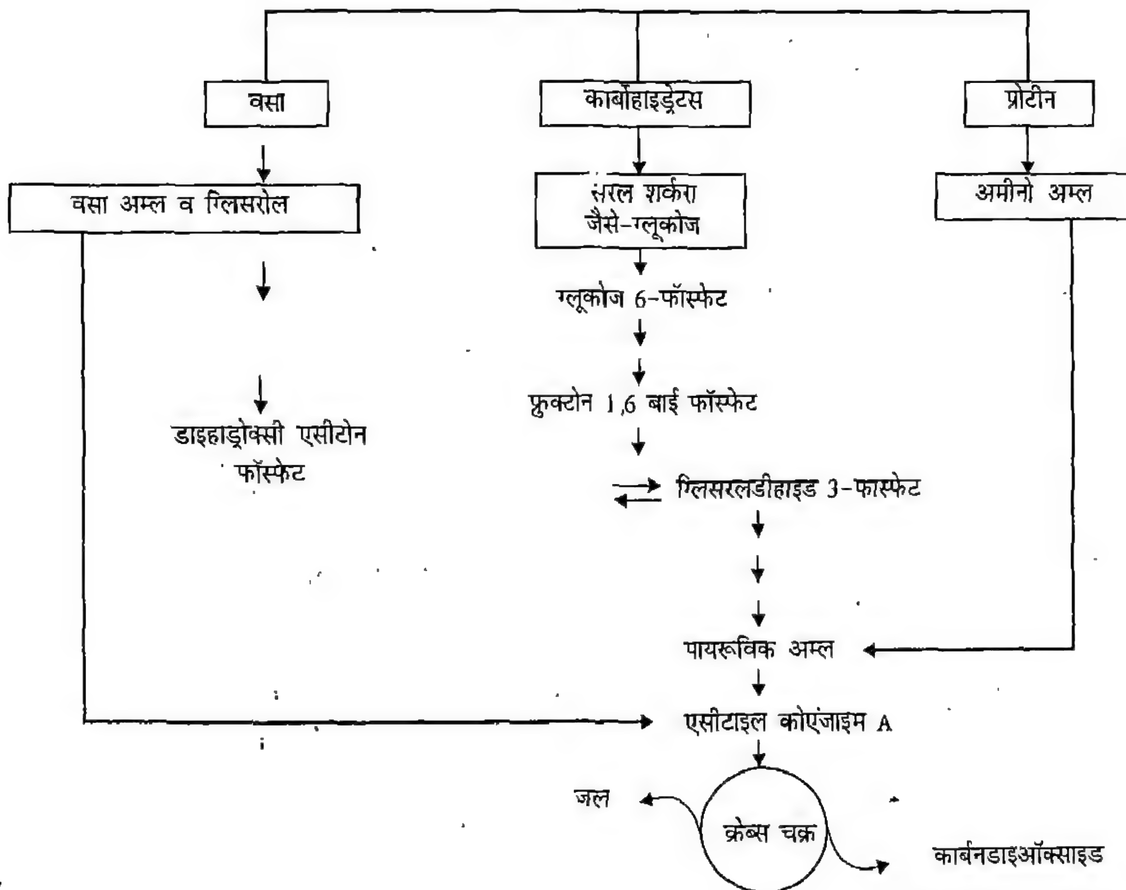
अब हम किण्वन तथा ऑक्सी श्वसन की तुलना करें।

- किण्वन में ग्लूकोज का आंशिक विघटन होता है जबकि ऑक्सी श्वसन में पूर्ण विघटन होता है तथा कार्बनडाइऑक्साइड एवं जल बनते हैं।

- किण्वन में ग्लूकोज के एक अणु से पायरुविक अम्ल बनने के दौरान एटीपी के शुद्ध 2 अणुओं की प्राप्ति होती है, जबकि ऑक्सी श्वसन में बहुत अधिक एटीपी के अणु बनते हैं।
- किण्वन में NADH का NAD^+ में ऑक्सीकरण मंद गति से होता है, जबकि ऑक्सी श्वसन में यह अभिक्रिया तीव्र गति से होती है।

14.6 ऐंफीबोलिक पथ

साँस के लिए ग्लूकोज अनुकूल क्रियाधार है श्वसन में सभी कार्बोहाइड्रेट उपयोग में लाने से पहले ग्लूकोज में परिवर्तित होते हैं। जैसे कि पहले बताया जा चुका है कि दूसरे क्रियाधार भी साँस में प्रयोग किए जा सकते हैं। किंतु तब वे साँस के पहले चरण में उपयोग में नहीं आते हैं। चित्र 14.6 को देखिए कि विभिन्न क्रियाधार श्वसन पथ में कहाँ उपयोग करते हैं। वसा सबसे पहले ग्लिसरेल तथा वसीय अम्ल में विघटित होता है। यदि



चित्र 14.6 श्वसन मध्यस्थता के दौरान विभिन्न कार्बनिक अणुओं का व जल में विखंडन को दर्शाने वाला उपापचय पाथक्रम के आपसी संबंध का प्रदर्शन

वसीय अम्ल साँस के उपयोग में आता है तो वह पहले एसीटाइल सह-एंजाइम बनकर पथ में प्रवेश करता है। ग्लिसरेल पहले पीजीएएल (PGAL) में परिवर्तित होकर श्वसन पथ में प्रवेश करता है। प्रोटीन प्रोटिएज एंजाइम द्वारा विघटित होकर अमीनो अम्ल बनाता है। प्रत्येक अमीनो अम्ल (विऐमीनीकरण के बाद) अपनी संरचना के आधार पर क्रेब्स चक्र के अंदर विभिन्न चरणों में प्रवेश करता है।

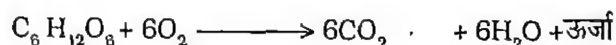
चूंकि साँस के दौरान क्रियाधारक टूटते हैं, अतः साँस प्रक्रिया परंपरागत अपचयी प्रक्रिया है और श्वसन पथ श्वसनीय अपचयी पथ है। किंतु आप क्या इसे ठीक समझते हैं? ऊपर वर्णित है कि विभिन्न क्रियाधार ऊर्जा हेतु श्वसन पथ में कहाँ प्रवेश करते हैं। यह जानना महत्वपूर्ण है कि ये यौगिक उपरोक्त क्रियाधार बनाने के लिए श्वसनीय पथ से अलग होंगे। अतः पथ में प्रवेश करने से पहले वसा अम्ल जब क्रियाधार के रूप में उपयोग में आते हैं तो श्वसनीय पथ में उपयोग में आने से पूर्व एसीटाइल CoA में विखंडित हो जाता है। जब जीवधारी को वसा अम्ल का संश्लेषण करना होता है तो श्वसनी पथ एसीटाइल CoA अलग हो जाता है। इसलिए वसा अम्ल के संश्लेषण तथा विखंडन के दौरान श्वसनीय पथ का उपयोग होता है। इसी प्रकार से प्रोटीन के संश्लेषण व विखंडन के दौरान भी होता है। इस प्रकार विघटन की प्रक्रिया कम करता है। सजीवों में अपचय कहलाती है तथा संश्लेषण उपचय कहलाती है; चूँकि श्वसनी पथ में अपचय तथा उपचय दोनों ही होते हैं। इसलिए श्वसनी पथ को **ऐंफीबोलिक पथ** कहना उचित होगा न कि उपचय पथ; क्योंकि यह अपचयी व उपचयी दोनों में भाग लेती है।

14.7 साँस गुणांक

अब साँस के दूसरे पक्ष को देखते हैं। जैसा कि आप जानते हैं कि ऑक्सी श्वसन के दौरान ऑक्सीजन का उपयोग होता है और कार्बनडाइऑक्साइड निकलती है। साँस के दौरान मुक्त हुई कार्बनडाइऑक्साइड तथा उपयोग में लाई गई ऑक्सीजन का अनुपात को **साँस गुणांक** (R.Q.) या **श्वसनीय अनुपात** कहते हैं।

$$\text{साँस गुणांक} = \frac{\text{मुक्त हुई } CO_2 \text{ का आयतन}}{\text{उपयोग में लाई गई } O_2 \text{ का आयतन}}$$

साँस गुणांक, साँस के दौरान उपयोग में आने वाले श्वसनी क्रियाधार पर निर्भर करता है। जब कार्बोहाइड्रेड क्रियाधार के रूप में आकर पूर्ण ऑक्सीकृत हो जाते हैं तो साँस गुणांक 1 होगा; क्योंकि समान मात्रा में CO_2 व O_2 क्रमशः मुक्त होती हैं एवं उपयोग में लाई जाती हैं, जैसा कि समीकरण से स्पष्ट है:



$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \longrightarrow 6CO_2 + 6H_2O + \text{ऊर्जा}$$

$$\text{साँस गुणांक (R.Q.)} = \frac{6\,CO_2}{6O_2} = 1.0$$



$$2(C_{51}H_{98}O_6) + 145\,O_2 \longrightarrow 102\,CO_2 + 98\,H_2O + \text{उर्जा}$$

$$\text{साँस गुणांक (R.Q.)} = \frac{102\,CO_2}{145\,O_2} = 0.7$$

जब वसा साँस में प्रयुक्त होती है तो साँस गुणांक 1.00 से कम होता है। वसा अम्ल ट्राइपामाटिन के रूप में उपयोग में आता है तब इसकी गणना निम्नवत होगी:

जब प्रोटीन श्वसनी क्रियाधार के रूप में प्रयुक्त होता है तब अनुपात 0.9 के लगभग होते है।

यहाँ, यह जानना अतिमहत्वपूर्ण है कि सजीवों में श्वसनीय क्रियाधार अक्सर एक से अधिक होते हैं; किंतु शुद्ध प्रोटीन व वसा श्वसनी क्रियाधारों के रूप में प्रयुक्त नहीं होते हैं।

सारांश

प्राणियों की तरह पादपों में श्वसन या गैसीय आदान प्रदान हेतु कोई विशिष्ट तंत्र नहीं होता है। रंध्र व वातरंध्र द्वारा विसरण से गैसों का आदान प्रदान होता है। पौधों में लगभग सभी सजीव कोशिकाएं वायु के संपर्क में होती हैं।

जटिल कार्बनिक अणुओं के ऑक्सीकरण द्वारा C-C आवंधों के टूटने के उपरांत जब कोशिका से ऊर्जा की अत्यधिक मात्रा निकलती है तो उसे कोशिकीय साँस कहते हैं। साँस के लिए ग्लूकोज सर्वाधिक उपयोगी क्रियाधार है। वसा एवं प्रोटीन के टूटने के बाद भी ऊर्जा निकलती है। कोशिकीय साँस की प्रारंभिक प्रक्रिया कोशिका द्रव्य में संपन्न होती है। प्रत्येक ग्लूकोज का अणु एंजाइम उत्प्रेरित शृंखलाओं की अभिक्रियाओं द्वारा पायरुविक अम्ल के 2 अणुओं में टूट जाता है, इस प्रक्रिया को ग्लाइकोलिसिस कहते हैं। पायरुवेट का भविष्य O_2 की उपलब्धता तथा जीव पर निर्भर करता है। अनॉक्सी परिस्थितियों में किण्वन द्वारा लैक्टिक अम्ल या एल्कोहल बनते हैं। किण्वन बहुत सारे प्रोकैरियोटिक, एक कोशिक यूकैरियोट व अंकुरित बीजों में अनॉक्सी परिस्थितियों में संपन्न होता है। यूकैरियोट जीवों में O_2 की उपस्थिति में ऑक्सी साँस होता है। पायरुविक अम्ल का माइटोकोंड्रिया में परिवहन के बाद एसीटाइल CoA में रूपांतरण होता है साथ ही CO_2 निकलती है। तत्पश्चात एसीटाइल CoA टीसीए पथ अथवा क्रेब्स चक्र में प्रवेश करता है जो माइटोकोंड्रिया के आधात्री में होता है। क्रेब्स चक्र में $NADH + H^+$ तथा $NADH_2$ बनते हैं। इन अणुओं व $NADH + H^+$ जो ग्लाइकोलिसिस के दौरान बनता है। इनकी ऊर्जा का उपयोग एटीपी के संश्लेषण में होता है। यह सूक्ष्मकणिका के अंत: झिल्ली पर स्थित वाहकों के तंत्र, जिसे इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र कहते हैं, के द्वारा संपन्न होती है जब इलेक्ट्रॉन इस तंत्र से होकर गति करता है, तो निकलने वाली पर्याप्त ऊर्जा एटीपी का संश्लेषण होता है, इसे ऑक्सीकारी फॉस्फोरिलीकरण कहते हैं, इस प्रक्रिया में अंतत: अंतिम इलेक्ट्रॉन ग्राही O_2 होता है, जो पानी में अपचयित हो जाता है।

श्वसनी पथ में उपचयी अथवा अपचयी दोनों भाग लेते हैं, इसलिए इसे ऐंफीबेलिक पथ कहते हैं। साँस गुणांक साँस के दौरान में आने वाले श्वसनी क्रियाधार पर निर्भर करता है।

अभ्यास

1. इनमें अंतर करिए?
   (अ) साँस (श्वसन) और दहन
   (ब) ग्लाइकोलिसिस तथा क्रेब्स चक्र
   (स) ऑक्सी श्वसन तथा किण्वन
2. श्वसनीय क्रियाधार क्या है? सर्वाधिक साधारण क्रियाधार का नाम बताइए?
3. ग्लाइकोलिसिस को रेखा द्वारा बनाइए?
4. 'ऑक्सी श्वसन के मुख्य चरण कौन-कौन से हैं? यह कहाँ संपन्न होती है?
5. क्रेब्स चक्र का समग्र रेखा चित्र बनाइए?
6. इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र का वर्णन कीजिए?
7. निम्न के मध्य अंतर कीजिए?
   (अ) ऑक्सी श्वसन तथा अनॉक्सी श्वसन
   (ब) ग्लाइकोलिसिस तथा किण्वन
   (स) ग्लाइकोलिसिस तथा सिट्रिक अम्ल चक्र
8. शुद्ध एटीपी के अणुओं की प्राप्ति की गणना के दौरान आप क्या कल्पनाएं करते हैं?
9. 'श्वसनीय पथ एक ऐंफीबोलिक पथ होता है', इसकी चर्चा करें।
10. साँस गुणांक को पारिभाषित कीजिए, वसा के लिए इसका क्या मान है?
11. ऑक्सीकारी फॉस्फोरिलीकरण क्या है?
12. साँस के प्रत्येक चरण में मुक्त होने वाली ऊर्जा का क्या महत्व है?

अध्याय 15

पादप वृद्धि एवं परिवर्धन

15.1 *वृद्धि*

15.2 *विभेदन, निर्विभेदन तथा पुनर्विभेदन*

15.3 *परिवर्धन*

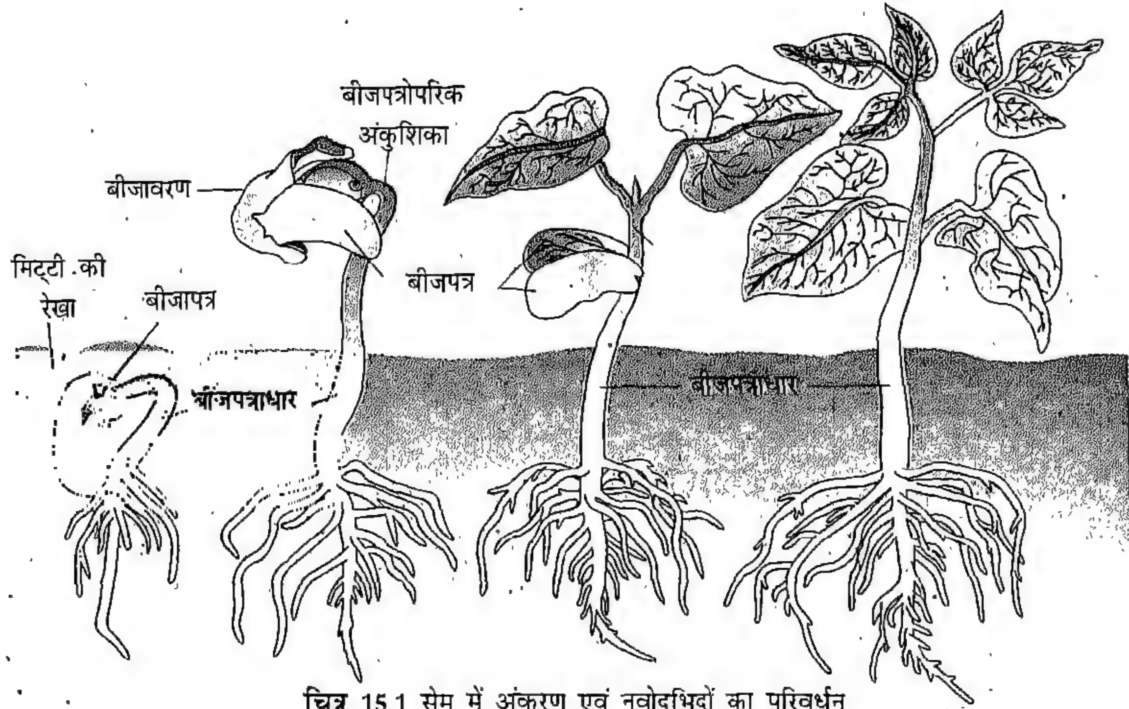
15.4 *पादप वृद्धि नियामक*

15.5 *दीप्तिकालिता*

15.6 *वसंतीकरण*

आपने पहले ही इस इकाई के अध्याय 5 के अंतर्गत फूल वाले पौधे के संगठन के बारे में अध्ययन किया है। क्या आपने कभी सोचा है कि मूल, तना, पत्तियां, फूल तथा बीज जैसी संरचनाएं कहाँ और कैसे पैदा होती हैं और वह भी एक क्रमबद्ध तरीके से? अब आप बीज, पौध (नव अंकुरित पौधा), पादपक (छोटा पौधा) तथा परिपक्व पौधे जैसे शब्दों से परिचित हो गए हैं। आपने यह भी देखा है कि सभी पेड़ समय के अंतराल में ऊंचाई एवं गोलाई (चौड़ाई) में लगातार वृद्धि करते हैं। हालाँकि उसी वृक्ष की पत्तियां, फूल एवं फल आदि न केवल एक सीमित लंबाई-चौड़ाई के होते हैं, बल्कि समयानुकूल वृक्ष से निकलते एवं गिर जाते हैं। यही प्रक्रिया लगातार दोहराई जाती है। एक पौधे में फूल आने की प्रक्रिया कायिक वृद्धि के बाद क्यों होती है? सभी पौधों के अंग विभिन्न तरह के ऊतकों से बने होते हैं। क्या एक कोशिका/ऊतक/अंग की संरचना और उसके द्वारा संपन्न जाने वाली क्रियाकलाप के बीच कोई संबंध है? पौधे की सभी कोशिकाएं युग्मज की संतति या वंशज होती है। तब सवाल यह उठता है कि क्यों और कैसे उनमें भिन्न-भिन्न संरचनात्मक एवं क्रियात्मक विशेषताएं होती हैं? परिवर्धन दो प्रक्रियाओं का योग है: वृद्धि एवं विभेदन। शुरुआत में यह जानना अनिवार्य है कि एक परिपक्व वृक्ष का परिवर्धन एक युग्मक (एक निषेचित अंडा) से शुरू होकर एक सुनिश्चित एवं उच्च नियमित वंशानुक्रम की घटना है। इस प्रक्रिया के दौरान एक जटिल शरीर संरचना का गठन होता है जो जड़ों, पत्तियों, शाखाओं, फूलों, फलों एवं बीजों को उत्पादित करता हैं और अंततः वे मर जाते हैं। (चित्र 15.1)

इस अध्याय में; आप कुछ उन कारकों के बारे में पढ़ेंगे जो कि इस परिवर्धन प्रक्रिया को संचालित एवं नियंत्रित करते हैं। ये कारक एक पौधे के लिए आंतरिक एवं बाहरी होते हैं।



चित्र 15.1 सेम में अंकुरण एवं नवोद्भिदों का परिवर्धन

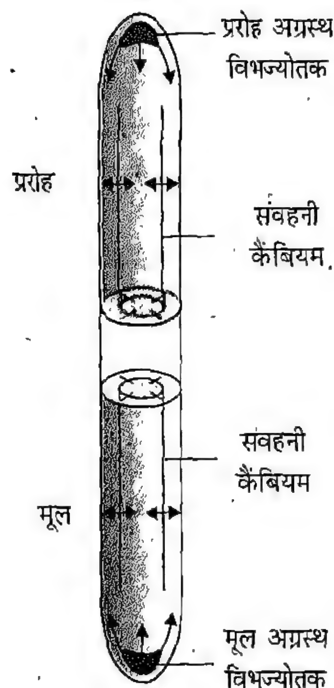
15.1 वृद्धि

एक जीवित वस्तु के लिए वृद्धि को सर्वाधिक आधारभूत एवं सुस्पष्ट विशिष्टता के रूम में जाना जाता है। वृद्धि क्या है? वृद्धि को एक अवयव या अंग या इसके किसी भाग या यहाँ तक कि एक कोशिका के आधार में अनिवर्त्य (अनपलट) स्थाई बढ़त के रूप में पारिभाषित किया जा सकता है। सामान्यत: वृद्धि उपापचयी प्रक्रियाओं (उपचय एवं अपचय दोनों सें) से जुड़ा होता है जो ऊर्जा के व्यय पर आधारित होता है। इसलिए एक पत्ती का विस्तार वृद्धि है। आप एक लकड़ी के टुकड़े को पानी में डालने से हुए फैलाव या विस्तार का वर्णन कैसे करेंगे?

15.1.1 पादप वृद्धि प्राय: अपरिमित है

पादप वृद्धि अनूठे ढंग से होती है; क्योंकि पौधे जीवन भर असीमित वृद्धि की क्षमता को अर्जित किए होते हैं। इस क्षमता का कारण उनके शरीर में कुछ खास जगहों पर विभज्योतक (मेरिस्टेम) ऊतकों की उपस्थिति है। ऐसे विभज्योतकों की कोशिकाओं में विभाजन एवं स्वशाश्वतता (निरंतरता) की क्षमता होती है। हालाँकि यह उत्पाद जल्द ही विभाजन की क्षमता खो देते हैं और ऐसी कोशिकाएं जो विभाजन की क्षमता खो देती है, वे पादप शरीर की रचना करती है। इस प्रकार की वृद्धि जहाँ पर विभज्योतक की क्रियात्मकता से पौधे के शरीर में सदैव नई कोशिकाओं को जोड़ा जाता है, उसे वृद्धि का खुला स्वरूप कहा जाता है। क्या होगा जब विभज्योतक का विभाजन बंद हो जाए? क्या कभी ऐसा होता है?

आपने अध्याय 6 में मूल शिखाग्र विभज्योतक तथा प्रोह शिखाग्र विभज्योतक के स्तर पर विभज्योतक के बारे में पढ़ा है। ये पौधों की प्राथमिक वृद्धि के लिए जिम्मेदार होते हैं और मुख्यतया पौधे के अक्ष के समानांतर दीर्घीकरण में भागीदारी करते हैं। द्विबीज पत्ती तथा नग्नबीजी पौधों में पार्श्व विभज्योतक, संवहनी कैंबियम तथा कार्क कैंबियम जीवन में बाद में प्रकट होते हैं। ये विभज्योतक उन अंग की चौड़ाई को बढ़ाते हैं, जहाँ ये क्रियाशील होते हैं। इसे द्वितीयक वृद्धि के नाम से जाना जाता है (चित्र-15.2 देखें)।



चित्र 15.2 मूल अग्रस्थ विभज्योतक, प्रोह अग्रस्थ विभज्योतक तथा संवहनी कैंबियम का आरेख निरुपण। कोशिका और वृद्धि की दिशा को दिखाते हुए तीर।

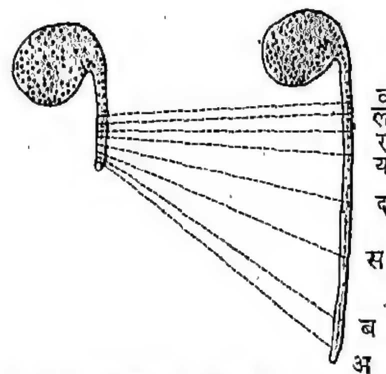
15.1.2 वृद्धि माप योग्य है

कोशिकीय स्तर पर वृद्धि मुख्यत: जीवद्रव्य मात्रा में वृद्धि का परिणाम है। चूँकि जीवद्रव्य की वृद्धि को सीधे मापना कठिन है; अत: कुछ दूसरी मात्राओं को मापा जाता है जो कम या ज्यादा इसी के अनुपात में होता है। इसलिए, वृद्धि को विभिन्न मापदंडों द्वारा मापा जाता है। कुछेक मापदंड ये हैं: ताज़ी भार वृद्धि, शुष्क भार, लंबाई क्षेत्रफल, आयतन तथा कोशिकाओं की संख्या आदि। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि एक मक्के की मूल शिखाग्र विभज्योतक में प्रति घंटे 17, 500 या अधिक नई कोशकाएं पैदा हो सकती हैं, जबकि एक तरबूज में कोशिकाओं की आकार में वृद्धि 3, 50, 000 गुना तक हो सकती है। पहले वाले उदाहरण में वृद्धि को कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि के रूप व्यक्त किया गया है, जबकि बाद वाले में वृद्धि को कोशिका के आकार में बढ़ोत्तरी के रूप में किया गया है। एक पराग नलिका की वृद्धि, लंबाई में बढ़त का एक अच्छा मापदंड है, जबकि पृष्ठाधार पत्ती की वृद्धि को उसके पृष्ठीय क्षेत्रफल की बढ़त के रूप में मापा जा सकता है।

15.1.3 वृद्धि के चरण

वृद्धि की अवधि को मुख्यत: तीन चरणों में बाँटा गया है; विभज्योतकीय, दीर्घीकरण एवं परिपक्वता (चित्र-15.3)। आओ, हम इसे मूलाग्र को देख कर समझें।

विभज्योतकीय चरण में कोशिकाएं मूल शिखाग्र तथा प्रोह शिखाग्र दोनों में लगातार विभाजित होती हैं। इन क्षेत्रों की कोशिकाएं जीवद्रव्य से भरपूर होती हैं और व्यापक संलक्ष्य केंद्रक को अधिकृत किए होती हैं। उनकी कोशिका भित्ति प्राथमिक, पतली तथा प्रचुर जीवद्रव्य तंतु संयोजन के साथ सेलुलाजिक होती है। विभज्योतक क्षेत्र के समीपस्थ (ठीक

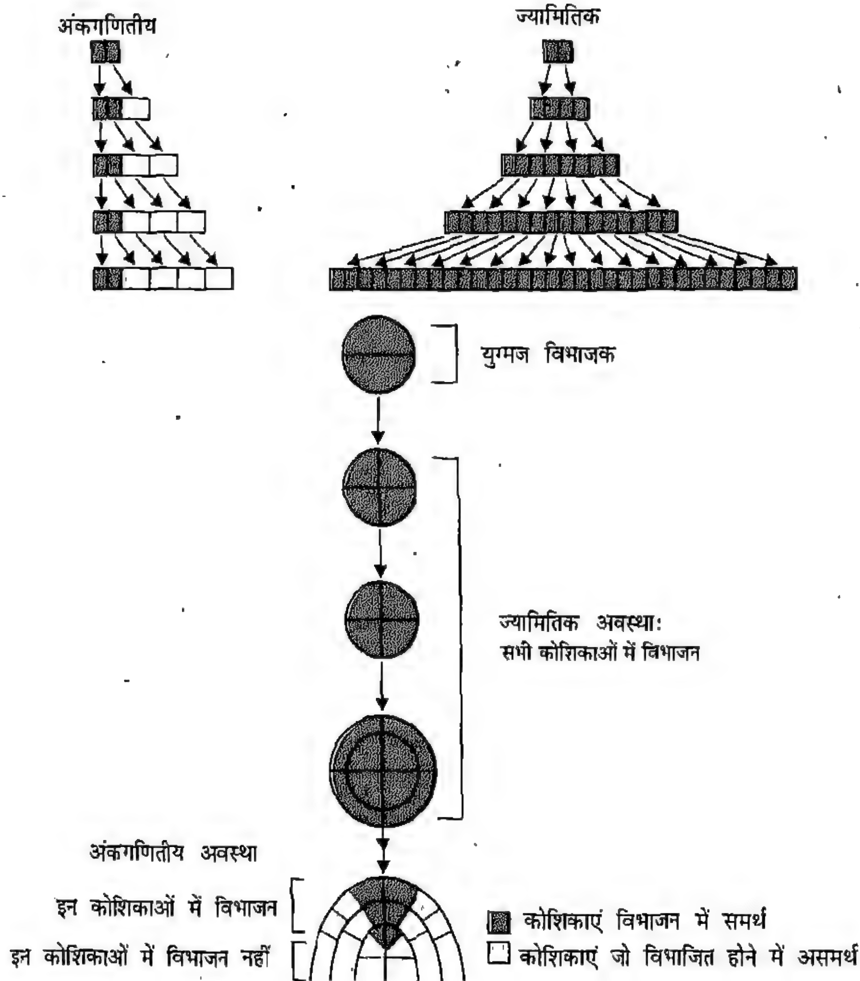


चित्र 15.3 दीर्घीकरण क्षेत्र का पहचान समानांतर रेखा तकनीक द्वारा। क्षेत्र अ, ब, स, द जो शीर्ष के पीछे हैं सबसे ज्यादा दीर्घीकृत हुए हैं।

अगला, नोक से दूर) कोशिका दीर्घीकरण के चरण का प्रतिनिधित्व करता है। इस चरण में कोशिकाओं का बड़ा हुआ रसधानी भवन, कोशिका विशालीकरण तथा नव कोशिका भित्ति निक्षेपण आदि विशिष्टताएं हैं। पुनः शिखाग्र से आगे अर्थात् दीर्घीकरण के अधिक समीपस्थ अक्ष का वह भाग स्थित होता है जो कि परिपक्वता के चरण में जा रहा होता है। इस परिक्षेत्र में स्थित होने वाली कोशिकाएं अपने अंतिम आकार को प्राप्त किए होती हैं तथा उनकी भित्ति की मोटाई एवं रसधानी चरम पर होता है। अध्याय 6 में आपने अधिकतर जिन ऊतकों/कोशिकाओं के प्रकार का अध्ययन किया; वे इसी चरण का प्रतिनिधित्त्व करती है।

15.1.4 वृद्धि दर

समय की प्रति इकाई के दौरान बढ़ी हुई वृद्धि को वृद्धि दर कहा जाता है। अतः वृद्धि की दर को गणितीय ढंग से (चित्र 15.4) व्यक्त किया जा सकता है। एक जीव या उसके अंग कई तरीकों से अधिक कोशिकाएं पैदा कर सकता है।



चित्र 15.4 (अ) अंकगणितीय और (ब) ज्यामितिक वृद्धि

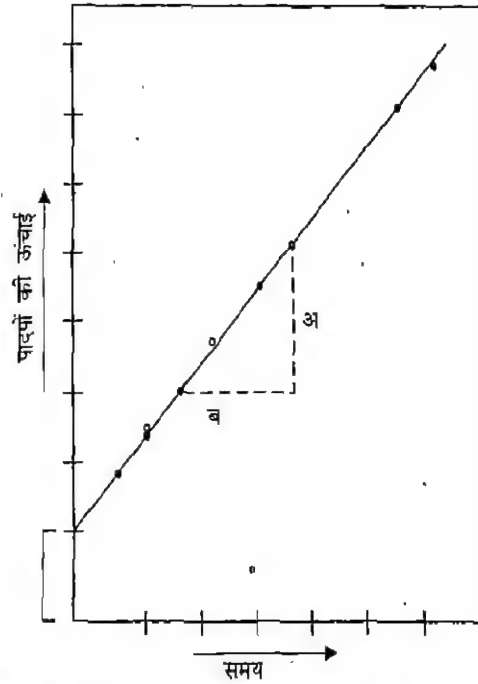
वृद्धि दर अंकगणितीय या ज्यामितीय (रेखागणितीय) संवंर्धन हो सकती है। अंकगणितीय वृद्धि में, समसूत्री विभाजन के बाद केवल एक पुत्री कोशिका लगातार विभाजित होती रहती है तो जब कि दूसरी विभेदित एवं परिपक्व होती रहती हैं। अंकगणितिय वृद्धि एक सरलतम अभिव्यक्ति है जिसे हम निश्चित दर पर दीर्घीकृत होते मूल में देख सकते हैं। (चित्र 15.5) को देखें जिसमें अंग की लंबाई समय के विरूद्ध अलिखित की गई है जिसके फलस्वरूप रेखीय वक्र पाया गया है। इसे हम गणितीय रूप में इस प्रकार चक्र कर सकते हैं–

$L_t = L_0 + rt$

L_t = टाइम टी के समय लंबाई

L_0 = टाइम शून्य के समय लंबाई

r = वृद्धि दर दीर्घीकरण प्रति इकाई समय



चित्र 15.5 नियत रेखीय वृद्धि, लंबाई और समय के विरूद्ध आलेख

आइए, अब देखें, ज्यामितीय वृद्धि में क्या होती है। हालाँकि अधिकतर प्रणालियों में प्रारंभिक वृद्धि (लैगफेस) धीमी होती है और यह इसके बाद तीव्र गति से एक चरघातांकी दर (लॉग या चरघातांकी चरण) में बढ़ती है। यहाँ पर दोनों संतति कोशिकाएं एक समसूत्री कोशिका के विभाजन का अनुकरण करती है तथा विभाजित होने पर लगातार ऐसा करते रहने के काबिलियत बनाएं रखती हैं। हालाँकि, सीमित पोषण आपूर्ति के साथ वृद्धि धीमी पड़ती हुई स्थिर चरण की ओर बढ़ जाती है। यदि हम समय के प्रति वृद्धि के मापदंड को नियोजित करते हैं तो हम एक विशिष्ट सिगमोइड या एस-वक्र पाते हैं (चित्र 15.6)। एस वक्र सभी जीवित प्राणियों की विशिष्टता है जो स्वाभाविक पर्यावरण में बढ़ रहे होते हैं। यह सभी कोशिकाओं, ऊतकों एवं एक पौधों के विशेष अंगों के लिए आदर्श है। *क्या आप अन्य ऐसे ही अधिक उदाहरणों के बारे में सोच सकते हैं? मौसमी क्रियाकलाप प्रकट करने वाले एक वृक्ष से आप किस तरह के वक्र की अपेक्षा कर सकते हैं?* चरघातांकीय वृद्धि को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है:

$W_1 = W_0 e^{rt}$

W_1= अंतिम आकार (भार, ऊंचाई, संख्या आदि)

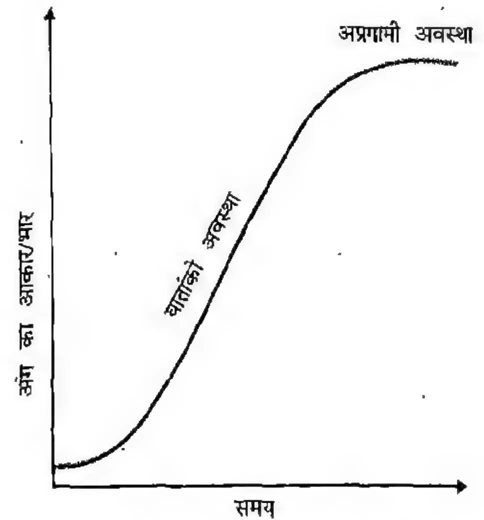
W_0= प्रथम आकार प्रारंभिक समय में

r = वृद्धि दर

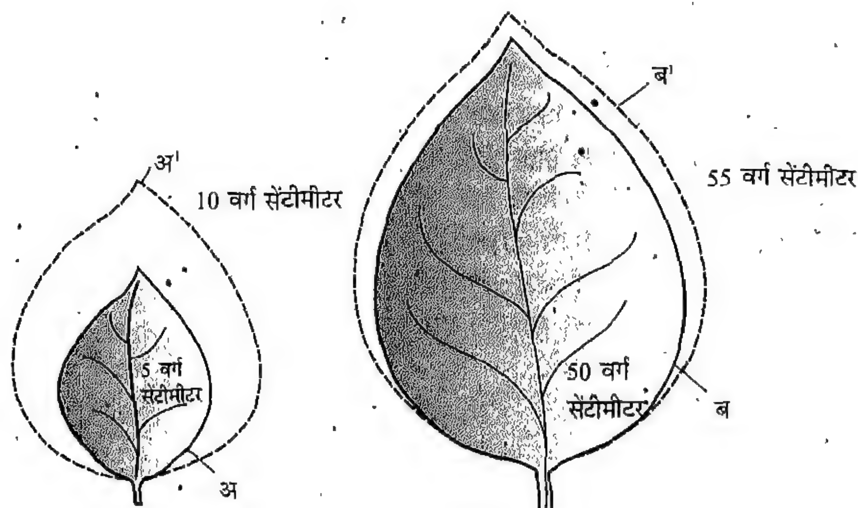
t = समय में वृद्धि

e = स्वाभाविक लघुगाणिक का आधार

यहाँ r = एक सापेक्ष वृद्धि दर है; तथा साथ ही पौधे द्वारा नई पादप सामग्री को पैदा करने की क्षमता को मापने के लिए है,



चित्र 15.6 एक आदर्श सिग्मायड वृद्धि वक्र, संवर्धित कोशिकाओं एवं उच्च पादपों और पादप अंगों के लिए प्रारुपिक



चित्र 15.7 निरपेक्ष और सापेक्ष वृद्धि दर (अ और ब पंक्तियों को देखें)। दोनों ने अपने क्षेत्रफल दिए हुए समय में अ 'अ' 'ब' ब पंक्तियां बनाने के लिए 5 से.मी.$^{-2}$ बढ़ा लिए हैं।

जिसे एक दक्षता सूचकांक के रूप में संदर्भित किया जाता है। अतः W_1 का अंतिम आकार, W_0 के प्रारंभिक आकार पर निर्भर करता है।

जीवित प्रणाली की वृद्धि के बीच मात्रात्मक तुलना भी दो तरीकों से की जा सकती है: (I) मापन और प्रति यूनिट टाइम की कुल वृद्धि की तुलना, जिसे परम वृद्धि दर कहते हैं। (II) दी गई प्रणाली की प्रति यूनिट समय पर वृद्धि को सामान्य आधार पर प्रकट करना, उदाहरणार्थ- प्रति यूनिट प्रारंभिक मापदंड या पैमाइश को सापेक्षिक वृद्धि दर कहते हैं। देखें चित्र 15.7 जहाँ दो पत्तियां 'अ' और 'ब' विभिन्न आकारों की दिखाई गई है लेकिन एक दिए गए समय में उनके संपूर्ण क्षेत्रफल में वृद्धि समान है। फिर भी उनमें से एक की सापेक्षिक वृद्धि दर ज्यादा है। यह कौन सी है और क्यों?

15.1.5 वृद्धि के लिए दशाएं

आप यह लिखने की कोशिश क्यों नहीं करते कि पौधों की वृद्धि के लिए जरूरी चीजें क्या हैं? इस सूची में जल, ऑक्सीजन तथा पोषक तत्व अवश्य होने चाहिए जो वृद्धि के लिए अनिवार्य हैं। पौधों की कोशिकाएं अपने आकार में बड़ी होकर वृद्धि करती है जिसके लिए जल की आवश्यकता होती है। इसलिए एक पादप की वृद्धि और उसका परिवर्धन उसमें पानी की स्थिति या उपलब्धता से जुड़ी है। वृद्धि के लिए आवश्यक एंजाइमों की क्रियाशीलता के लिए जल एक माध्यम उपलब्ध करता है तथा ऑक्सीजन उपाचयी ऊर्जा को मुक्त करने में मदद करती है। पौधों द्वारा पोषकों (स्थूल एवं सूक्ष्म आवश्यक तत्व) की आवश्यकता जीवद्रव्य के संश्लेषण तथा ऊर्जा के स्रोत्र के रूप में काम करने के लिए होती है।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक पादप जीव के लिए इष्टतम ताप परिसर होता है, जो उसकी वृद्धि के लिए अत्यंत ही अनुकूल होता है। इस ताप के दायरे से किसी प्रकार का

विलगाव उसकी उत्तरजीविता के लिए हानिकारक हो सकता है। इसके साथ ही पर्यावरणीय संकेत जैसे कि प्रकाश एवं गुरुत्वाकर्षण भी वृद्धि की कुछ अवस्थाओं या चरणों को प्रभावित करता है।

15.2 विभेदन, निर्विभेदन तथा पुनर्विभेदन

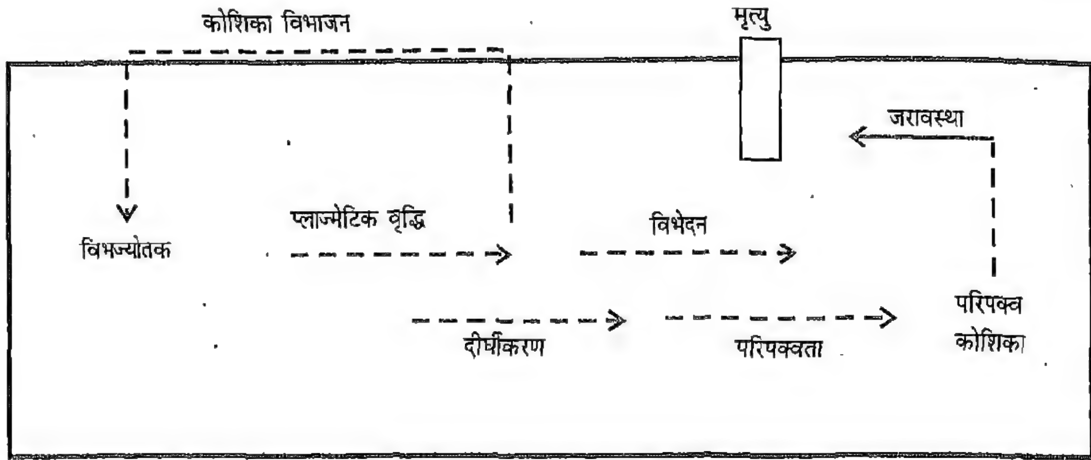
मूल शिखाग्र विभज्योतक तथा प्ररोह शिखाग्र विभज्योतक से आने वाली कोशिकाएं और कैंबियम विभेदित होती है। तथा विशिष्ट क्रियाकलाप को संपन्न करने के लिए परिपक्व होती है। यह परिपक्वता की ओर अग्रसर होने वाली कार्यवाही **विभेदन** कहलाती है। वे अपनी कोशिकाभित्ति एवं जीवद्रव्य दोनों में ही या कुछ व्यापक संरचनात्मक बदलावों से गुजरती है। उदाहरणस्वरूप एक वाहिकीय तत्व के बनने में कोशिका अपने जीव द्रव्य को खो देती है और बाद में एक बहुत सुदृढ़ तन्यतापूर्ण लिग्नोसेल्युलोसिक (काष्ठ कोशिका सधानी) द्वितीय कोशिका भित्ति विकसित होती है, जो लंबी दूरी तक सर्वोच्च तनाव में भी जल को वहन करने के लिए उपर्युक्त होता है। आप पौधों के शरीर की विभिन्न रचनात्मक विशिष्टताओं एवं उसकी संबंधित क्रियाशीलता से संबंध स्थापित करने की कोशिश करें।

पौधे अन्य रोचक तथ्य दिखाते हैं। जीवित विभेदित कोशिकाएं कुछ खास परिस्थितियों में विभाजन की क्षमता पुनः प्राप्त कर सकती हैं। इस क्षमता को **निर्विभेदन** कहते हैं। उदाहरण के तौर पर अंतरापूलय वाहिकी कैंबियम, एवं कार्क कैंबियम। निर्विभेदित कोशिकाओं/ऊतकों के द्वारा उत्पादित कोशिका बाद में फिर से विभाजन की क्षमता खो देती है ताकि विशिष्ट कार्यों को संपादित किया जा सके अर्थात् **पुनर्विभेदित** हो जाती है। एक काष्ठीय द्विबीजपत्ती पादप के कुछ ऊतकों की सूची बनाएं जो पुनर्विभेदन के उत्पाद हों। आप अर्वुद का कैसे वर्णन करेंगे? आप उस मृदूतक कोशिका को जिसे प्रयोगशाला के नियंत्रित क्षेत्र में पादप ऊतक संवर्धन के दौरान विभाजित कराया जा रहा हो, उसे क्या कहेंगे?

अनुभाग 15.1.1 को याद कीजिए; हमने बताया थां कि पौधों में वृद्धि उन्मुक्त होती है अर्थात् यह परिमित या अपरिमित हो सकता है। अब, हम कह सकते हैं कि पादपों में विभेदन भी उन्मुक्त होता है; क्योंकि ठीक उसी विभज्योतक से पैदा हुए ऊतक/कोशिकाएं परिपक्व होने पर भिन्न संरचनाएं तैयार करती हैं। कोशिका/ऊतक की परिपक्वता के समय अंतिम संरचना कोशिका के आंतरिक स्थान पर भी निर्भर करता है। उदाहरण के लिए शिखाग्र विभज्योतक से दूरस्थ कोशिकाएं मूल गोप कोशिका के रूप में विभेदित होती हैं. जबकि जिन्हें बाहरी वलय की ओर ढकेल दिया जाता है। बाह्य त्वचा के रूप में परिपक्व होती हैं। क्या आप उन्मुक्त विभेदन का कुछ और उदाहरण जोड़ना चाहेंगे जो कोशिकीय स्थिति तथा पादप अंगों में उनके स्थान के संबंधों को दर्शाता हो?

15.3 परिवर्धन

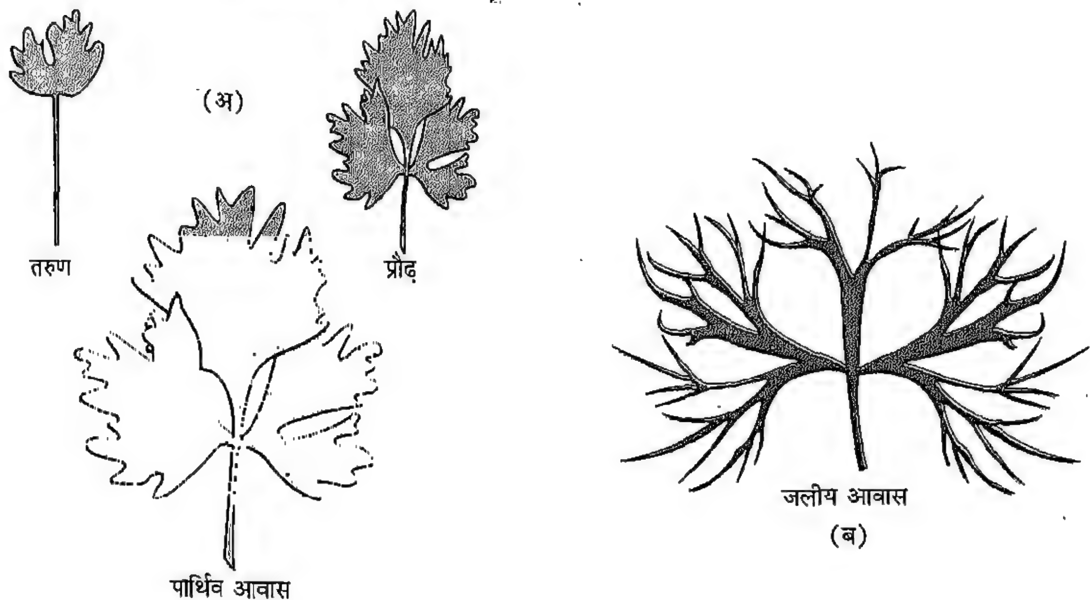
परिवर्धन वह शब्द है जिसके अंतर्गत एक जीव के जीवन चक्र में आने वाले वे सारे बदलाव शामिल हैं, जो बीजांकुरण एवं जरावस्था के बीच आते हैं। चित्र 15.8 में उच्च



चित्र 15.8 एक पादप कोशिका के विकासात्मक प्रक्रम का अनुक्रम

पादप की कोशिकाओं में होने वाले परिवर्धन की क्रमिक प्रतिक्रियाओं को रेखा चित्र के द्वारा प्रस्तुत किया गया है। यह ऊतकों/अवयवों (अंगों) पर भी लागू होता है।

पौधे पर्यावरण के प्रभाव के कारण या जीवन के विभिन्न चरणों में भिन्न पथों का अनुसरण करते हैं, ताकि विभिन्न तरह की संरचनाओं का गठन कर सकें। इस क्षमता को **प्लास्टिसिटी** कहते हैं। उदाहरण के तौर पर कपास, धनिया एवं लार्कस्पर में विभिन्न आकार की पत्तियाँ इन पौधों में पत्तियों का आकार किशोरावस्था एवं परिपक्व अवस्था में भिन्न होते हैं। दूसरी तरफ बटरकप में पत्तियों का आकार वायवीय भागों में अलग होता है (चित्र 15.9)। विषमपर्णता का यह दृश्य प्लास्टिकता या सुघट्यता का एक उदाहरण है।



चित्र 15.9 लार्कस्पर (अ) एवं (ब) बटरकप में विषमपर्णी

अत: एक पौधे के जीवन में वृद्धि, विभेदन और परिवर्धन बहुत ही निकट संबंध रखने वाली घटनाएं हैं। व्यापक तौर पर परिवर्धन को वृद्धि एवं विभेदन के योग के रूप में माना जाता है। पौधों में परिवर्धन अर्थात् वृद्धि एवं विभेदन दोनों आंतरिक एवं बाह्य कारकों से नियंत्रित है। आंतरिक कारकों में अंतरकोशिकीय आनुवंशिक तथा अंतर कोशिकी कारक (जैसे की पादप वृद्धि नियामक रसायन) शामिल होते हैं, जबकि बाह्य कारकों के अंतगर्त प्रकाश, तापक्रम, जल, ऑक्सीजन तथा पोषक आदि शामिल होते हैं।

15.4 पादप वृद्धि नियामक

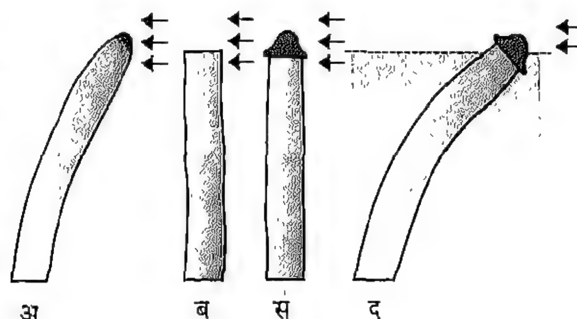
15.4.1 विशिष्टताएं

पादप वृद्धि नियामक विविध रासायनिक संघटनों वाले साधारण तथा लघु अणु होते हैं। ये इंडोल सम्मिश्रण (इंडोल-3 एसिटिक अम्ल, आई ए ए); ऐडनीन व्युत्पन्न फरफ्युराइल ऐमिनो प्युरीन काइनटिन) केराटिनायड तथा वसा अम्लों के व्युत्पन्नक (एंसीसिक एसिड, ए बी ए), टर्पीन (जिबेरेलिक एसिड, जी ए) या गैसेस (एथीलिन C_2H_4) आदि हो सकते हैं। पादप वृद्धि नियामक को पाठय सामग्री में, पादप वृद्धि तत्व, पादप हार्मोन तथा फाइटोहार्मोन के नाम से वर्णित किया गया है।

पादप वृद्धि नियामक (पी जी आर) को व्यापक रूप से एक जीवित पौधे में उनकी कार्यशीलता के आधार पर दो समूहों में बाँटा जा सकता है। पीजीआर का एक समूह वृद्धि उन्नयन क्रियाकलापों में लगा होता है जैसे कि कोशिका विभाजन, कोशिका प्रसार, प्रतिमान संरचना, ट्रापिक (अनुवर्तनी) वृद्धि, पुष्पन, फलीकरण तथा बीज संरचना आदि। इन्हें पादप वृद्धि नियामक भी कहा जाता है जैसे कि ऑक्सिंस, जिब्बेरेलिंस तथा साइटोकिनिंस। उनके समूह के दूसरे पीजीआर तथा दवाब के प्रति पादपों की अनुक्रिया समूह के दूसरे पीजीआर में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके साथ ही वे विभिन्न वृद्धि वाधक कियाकलापों जैसे प्रसुप्ति एवं विलगन में भी शामिल होते हैं। एबसीसिक एसिड पीजीआर इसी समुह का सदस्य है। गैसीय पी जी आर, एथीलिन किसी भी समूह के साथ बैठ जाता है लेकिन व्यापक तौर पर यह एक वृद्धि बाधक क्रिया कलापों में आता है।

15.4.2 पादप वृद्धि नियामकों की खोज

रोचक बात यह है कि पीजीआर के पाँच प्रमुख समूहों में प्रत्येक की खोज मात्र एक संयोग है। इसकी शुरूआत चार्ल्स डारविन और उनके पुत्र फ्रांसिस डारविन के अवलोकन से हुई जब उन्होंने देखा कि कनारी घास का प्रांकुर चोल (कोलियोपटाइल) एकपार्श्वी प्रदीपन के प्रति अनुक्रिया करता है और प्रकाश के उद्गम की तरफ वृद्धि (प्रकाशानुवर्तन) करता है। प्रयोगों की एक लंबी श्रृंखला के पश्चात, यह निष्कर्ष निकाला गया कि प्रांकुर चोल की नोक संचारणीय प्रवाह की जगह है जो संपूर्ण प्रांकुर चोल के मुड़ने का कारण है (चित्र 15.10)। ऑक्सिन की



चित्र 15.10 प्रांकुर चोल का अग्रभाग पादप वृद्धि नियामक ऑक्सीजन का उद्गम

खोज एफ डवल्यू वेंट (F.W. Went) के द्वारा जई के अंकुर के प्रांकुरचोल शिखर से की गई है।

'बैकेन' (फूलिश सीडलिंग) धान के पौध (नवोद्भिद्) की बीमारी है जो रोगजनक कवक जिबेरेला फूजीकोराइ के द्वारा होती है। ई. कुरोसोवा (जापानी वैज्ञानिक) ने रोगरहित धान की पौध में रोग लक्षण को बताया, जब उन्हें कवक के जीवाणुहीन निस्यंदों (फिल्ट्रेट) के साथ उपचारित किया। सक्रिय तत्व की पहचान बाद में जिब्बेरेलिक अम्ल के रूप में हुई।

एफ स्कूग (F. Skoog) तथा उनके सहकर्मियों ने देखा कि तंबाकू के तने के अंतरपर्व (इंट्रानोडल) खंड से (अविभेदित कोशिकाओं का समूह) तभी प्रचुरित हुआ जब ऑक्सिंस के अलावा मीडियम में, वाहिका ऊतकों के सत्व या यीस्ट सत्व या नारियल दूध या डीएनए पूरक रूप में दिया गया। स्कूग और मिलर ने साइटोकाइनेसिस को बढ़ावा देने वाले इस तत्व को पहचाना और इसका क्रिस्टलीकरण किया तथा काइनेटिन नाम दिया।

1960 के मध्य में तीन अलग-अलग वैज्ञानिकों ने स्वतंत्र रूप से तीन तरह के निरोधक का शुद्धिकरण एवं उसका रासायनिक स्वरूप प्रस्तुत किया। वे निरोधक बी, बिलगन II एवं डोरमिन है। बाद में ये तीनों रासायनिक रूप से समान पाए गए। इसका नामकरण एबसिसिक अम्ल के रूप में किया गया।

कौसइंस ने यह सुनिश्चित किया कि पके हुए संतरों से निकला हुआ एक वाष्पशील तत्व पास में रखे बिना पके हुए केलों को शीघ्रता में पकाता है। बाद में यह वाष्पशील तत्व एथीलिन के नाम से जाना गया जो एक गैसीय पीजीआर है। आइए, अब हम इन पाँच तरह के पीजीआर के कायिकीय प्रभाव का अगले भाग में अध्ययन करते हैं।

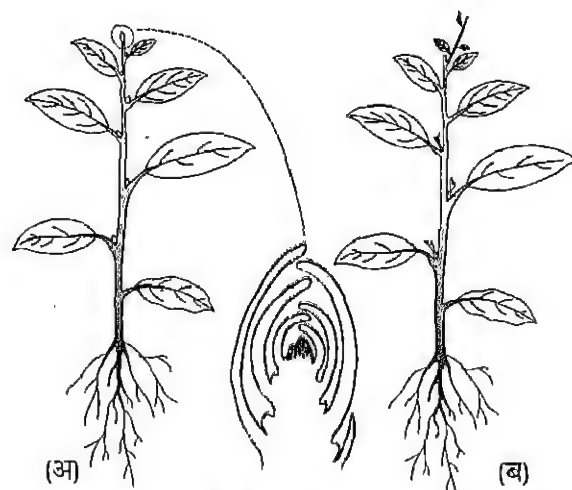
15.4.3 पादप वृद्धि नियामकों का कायिकीय शरीरक्रियात्मक प्रभाव

15.4.3.1 ऑक्सिंस

(ग्रीक शब्द *आक्सेन* : बढ़ना) सर्वप्रथम मनुष्य के मूत्र से निकाला गया। शब्द ऑक्सिंस इनडोल-3 एसेटिक अम्ल (आई ए ए) तथा अन्य प्राकृतिक एवं कृत्रिम यौगिक, जिसमें वृद्धि करने की क्षमता हो, के लिए प्रयोग किया जाता है। ये प्राय: तने एवं मूल के बढ़ते हुए शिखर पर बनते हैं तथा वहाँ से क्रियाशीलता वाले भाग में जाता हैं। ऑक्सिंस जैसे आईएए एवं इनडोल ब्यूटेरिक अम्ल पौधे से निकाला गया है। एनएए (नैफथेलिन एसेटिक अम्ल) तथा 2, 4 डी (2,4 डाईक्लोरो फिनोक्सी एसेटिक अम्ल) कृत्रिम आक्सिंस हैं। ऑक्सिंस के उपयोग का एक विस्तृत दायरा है और ये बागवानी एवं खेती में प्रयोग किए गए हैं। ये तनों की कटिंग (कलमों) में जड़ फूटने (रूटिंग) में सहायता करती है जो पादप प्रवर्धन में व्यापकता से इस्तेमाल होती है। आक्सिंस पुष्पन को बढ़ा देती है; जैसे अनानास में। ये पौधों के पत्तों एवं फलों को शुरूआती अवस्था में गिरने से बचाते हैं तथा पुरानी एवं परिपक्व पत्तियों एवं फलों के विलगन को बढ़ावा देते हैं। उच्च पादपों में वृद्धि करती अग्रस्थ कलिका पार्श्व (कक्षस्थ) कलियों की वृद्धि को अवरोधित करते हैं। जिसे **शिखाग्र प्रधान्यता** (apical dominance) कहते हैं। प्ररोह सिरों को हटाने (शिरच्छेदन)

से प्राय: पार्श्व कलियों की वृद्धि होती है (देखें चित्र 15.11)। यह बात व्यापक रूप से चाय रोपण एवं बाड़ बनाने (हेज मेकिंग) में लागू होती है। क्या आप बता सकते हैं, क्यों?

इसके साथ ही आक्सिंस अनिषेकफलन को प्रेरित करता है जैसे कि टमाटर में। इन्हें व्यापक रूप से शाकनाशी के रूप में उपयोग किया जाता है। 2, 4-डी, व्यापक रूप से द्विबीजपत्ती खरपतवारों का नाश कर देता है; लेकिन एकबीजपत्ती परिपक्व पौधों को प्रभावित नहीं करता है। इसका उपयोग मालियों के द्वारा लॉन को तैयार करने में किया जाता है। इसके साथ ही ऑक्सिंस जाइलम विभेदन को नियंत्रित करने तथा कोशिका के विभाजन में मदद करता है।



चित्र 15.11 पादपों में शीर्षस्थ प्रभाविता (अ) अग्रस्थ कलिका की उपस्थिति कक्षस्थ कलिका में वृद्धि को रोकती है (ब) अग्रस्थ कलिका का लंबवत काट, कक्षस्थ कलिका से छत्रक हटाने के बाद शाखाओं के रूप में वृद्धि

15.4.3.2 जिब्बेरेलिंस

जिब्बेरेलिंस एक अन्य प्रकार का प्रोत्साहक पी जी आर है। सौ से अधिक जिब्बेरेलिंस की सूचना विभिन्न जीवों से आ चुकी है जैसे कि कवकों और उच्च पादपों से। इन्हें जी ए$_1$ (GA_1)जी ए$_2$ (GA_2)जी ए$_3$ (GA_3)और इसी तरह से नामित किया गया है। हालांकि जी ए$_3$ वह जिबेरलिंस है जिसकी सबसे पहले खोज की गई थी और अभी भी सभी से अधिक सघनता से अध्ययन किया जाने वाला स्वरूप है। सभी जी ए एस (GAs) अम्लीय होते हैं। ये पौधों में एक व्यापक दायरे की कायिकीय अनुक्रिया देते हैं। ये अक्ष की लंबाई बढ़ाने की क्षमता रखते हैं, अत: अंगूर के डंठल की लंबाई बढ़ाने में प्रयोग किये जाते हैं। जिब्बेरेलिंस सेब जैसे फलों को लंबा बनाते हैं ताकि वे उचित रूप ले सकें। ये जरावस्था को भी रोकते हैं, ताकि फल पेड़ पर अधिक समय तक लगे रह सकें और बाजार में मिल सकें। जी ए$_3$ (GA_3) को आसव (शराब) उद्योग में माल्टिंग की गति बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है। गन्ने के तने में कार्बोहाइड्रेट्स चीनी या शर्करा के रूप में एकत्र रहता है। गन्ने की खेती में जिब्बेरेलिंस छिड़कने पर तनों की लंबाई बढ़ती है। इससे 20 टन प्रति एकड़ ज्यादा उपज बढ़ जाती है। जी ए छिड़कने पर किशोर शंकुवृक्षों में परिपक्वता तीव्र गति से होती है अत: बीज जल्दी ही तैयार हो जाता है। जिब्बेरेलिंस चुकंदर, पत्तागोभी एवं अन्य रोजेटी स्वभाव वाले पादपों में वोल्टिंग (पुष्पन से पहले अंत:पर्व का दीर्घीकरण) को बढ़ा देता है।

15.4.3.3 साइटोकिनिंस

साइटोकिनिंस अपना विशेष प्रभाव साइटोकिनेसिस (कोशिकाद्रव्य विभाजन) में डालता है और इसे काइनेटिन(एडेनिन का रूपांतरित रूप एक प्युरीन) के रूप में आटोक्लेबड् हेरिंग के शुक्राणु से खोजा गया था। काइनेटिन पौधों में प्राकृतिक रूप से नहीं पाया जाता है। साइटोकिनिन जैसे पदार्थों की खोज के क्रम में मक्का की अष्ठि तथा नारियल दूध से

जियाटीन अलग किया जा सका। जियाटिन के खोज के बाद अनेकों प्राकृतिक रूप से प्राप्त साइटोकिनिंस तथा कोशिका विभाजन प्रोत्साहक पहचाने गए। प्राकृतिक साइटोकिनिंस उन क्षेत्रों में संश्लेषित होता है, जहाँ तीव्र कोशिका विभाजन संपन्न होता है, उदाहरण के लिए मूल शिखाग्र, विकासशील प्ररोह कलिकाएं तथा तरुणफल आदि। यह नई पत्तियों में हरितलवक पार्श्व प्ररोह वृद्धि तथा आपस्थानिक प्ररोह संरचना में मदद करता है। साइटोकिनिंस शिखाग्र प्राधान्यता से छुटकारा दिलाता है। वे पोषकों के संचारण को बढ़ावा देते हैं जिससे पत्तियों की जरावस्था को देरी करने में मदद मिलती है।

15.4.3.4 एथीलिन

एथीलिन एक साधारण गैसीय पी जी आर है यह जरावस्था को प्राप्त होते ऊतकों तथा पकते हुए फलों के द्वारा भारी मात्रा में संश्लेषित की जाती है। एथीलिन पौधों की अनुप्रस्थ (क्षैतिज) वृद्धि, अक्षों में फुलाव एवं द्विबीजी निवेद्‌भिदों में अंकुश संरचना को प्रभावित करती है। एथीलिन जरावस्था एवं विलगन को मुख्यत: पत्तियों एवं फूलों में बढ़ाती है। यह फलों को पकाने में बहुत प्रभावी है। फलों के पकने के दौरान यह श्वसन की गति की वृद्धि करता है। श्वसन वृद्धि में गति की इस बढ़त को क्लाइमैक्टिक श्वसन कहते हैं।

एथीलिन बीज तथा कलिका प्रसुप्ति को तोड़ती है, मूंगफली के बीज में अंकुरण को शुरू करती है तथा आलू के कंदों को अंकुरित करती है। एथीलिन गहरे पानी के धान के पौधों में पर्णवृंत को तीव्र दीर्घीकरण के लिए प्रोत्साहित करता है। यह पत्तियों तथा प्ररोह के ऊपरी भाग को पानी से ऊपर रखने में मदद करता है। इसके साथ ही एथीलिन मूल वृद्धि तथा मूल रोमों को प्रोत्साहित करती है; अत: पौधे को अधिक अवशोषण क्षेत्र प्रदान करने में मदद करती है।

एथीलिन अनानास को फूलने तथा फल समकालिकता में सहायता करता है। इसके साथ ही आम को पुष्पित होने में प्रेरित करता है। एथीलिन अनेकानेक कार्यिकी प्रक्रियाओं को नियमित करता है, अतः यह कृषि में सर्वाधिक इस्तेमाल होने वाली पी जी आर है। सर्वाधिक व्यापक तौर पर इस्तेमाल होने वाला यौगिक एथिफॉन है। एथिफॉन जलीय घोल में आसानी से अवशोषित तथा पौधे के अंतर्गत संचारित होता है तथा धीरे-धीरे एथीलिन मुक्त करता है। एथिफॉन टमाटर एवं सेव के फलों के पकाने की गति को बढ़ाता है तथा फूलों एवं फलों में विलगन को तीव्रता प्रदान करता है (कपास, चेरी तथा अखरोट में विरलन)। यह खीरों में मादा पुष्पों का बढ़ाता है जिससे फसल की पैदावार में वृद्धि होती है।

15.4.3.5 एबसिसिक एसिड

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि एबसिसिक एसिड (ABA); की खोज विलगन एवं प्रसुप्ति को नियामित करने में उसकी भूमिका के लिए हुई थी। लेकिन अन्य दूसरे पी जी आर की भांति यह भी पादप वृद्धि एवं परिवर्धन में व्यापक दायरे में प्रभाव डालता है। यह एक सामान्य पादप वृद्धि तथा पादप उपापचय के निरोधक का काम करता है।

ए बी ए बीज के अंकुरण का निरोध करता है। यह बाह्यत्वचीय पट्टिकाओं में रंध्रों के बंद होने को प्रोत्साहित करता है तथा पौधों को विभिन्न प्रकार के तनावों को सहने हेतु क्षमता प्रदान करता है। इसी कारण इसे तनाव हार्मोन भी कहा जाता है। ए बी ए बीज के विकास, परिपक्वता, प्रसुप्ति आदि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रसुप्ति को प्रेरित करने के द्वारा ए बी ए बीज को जल शुष्कन तथा वृद्धि के लिए अन्य प्रतिकूल परिस्थिति से बचाव देता है। बहुत सारी परिस्थतियों में, एबीए, जीएएस (GAs) के लिए एक विरोधक की भूमिका निभाता है।

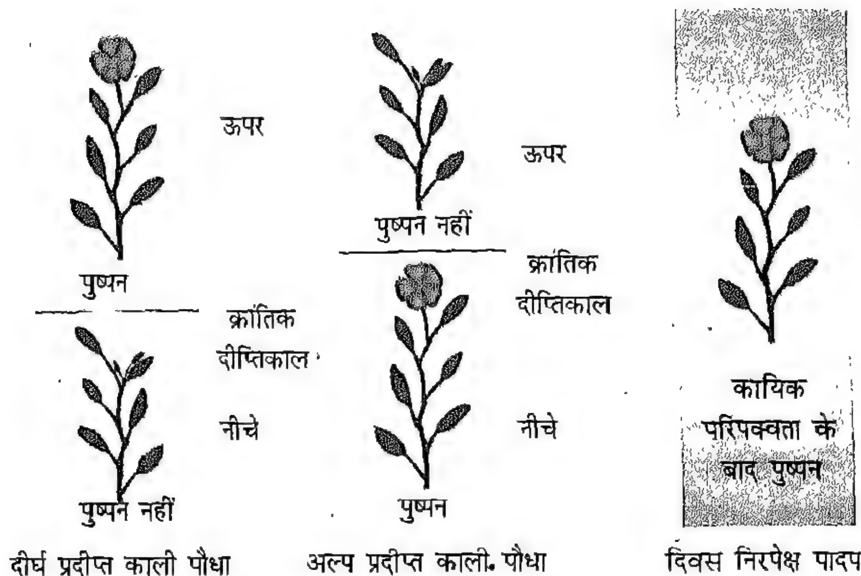
हम संक्षेप में कह सकते हैं कि पादपों की वृद्धि, विभेदन तथा परिवर्धन के लिए एक या कई अन्य पी जी आर कुछ न कुछ भूमिका निभाते हैं। यह भूमिकाएं संपूरक की या फिर विरोधक की भी हो सकती है। ये भूमिकाएं वैयक्तिक (निजी) या योगवाही हो सकती हैं। इसी तरह पौधे के जीवन में कई घटनाएं होती हैं जहाँ एक से ज्यादा पीजीआर मिलकर घटनाओं को प्रभावित करती हैं, उदाहरण के तौर पर बीज या कली का प्रसुप्तीकरण, विलगन, जरावस्था, शिखर प्रभुत्व आदि।

पीजीआर की भूमिका एक तरह के आंतरिक नियंत्रण में है। याद करें, जीनोमिक नियंत्रण एवं बाह्य कारक के साथ ये पौधे की वृद्धि एवं परिवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बहुत सारे बाह्य कारक जैसे कि तापक्रम एवं प्रकाश पौधे की वृद्धि एवं परिवर्धन को पीजीआर के माध्यम से नियंत्रण करते हैं। ऐसी कुछ घटनाओं का उदाहरण हैं: वसंतीकरण पुष्पन, प्रसुप्तीकरण, बीज अंकुरण, पौधे में गति आदि।

हम लोग संक्षेप में प्रकाश और ताप (दोनों बाह्य कारक है) के पुष्पन आरंभ करने की भूमिका को पढ़ेंगे।

15.5 दीप्तिकालिता

ऐसा देखा गया है कि कुछ पौधों में पुष्पन को प्रेरित/प्रवृत करने में प्रकाश की नियतकालिकता की आवश्यकता होती है। ऐसे पौधे प्रकाश की नियतकालिकता की अवधि को माप सकते हैं, उदाहरण स्वरूप : कुछ पौधों में क्रांतिक अवधि से ज्यादा प्रकाश की अवधि चाहिए, जबकि दूसरे पौधों में प्रकाश की अवधि संकट क्रांतिक अवधि से कम चाहिए, जिससे कि दोनों तरह के पौधों में पुष्पन की शुरूआत हो सके। प्रथम तरह के पौधों के समूह को **अल्प प्रदीप्तकाली पौधा** कहते हैं तथा बाद वाले पौधों को **दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधा** कहते हैं। बहुत सारे ऐसे पौधे होते हैं, जिसमें प्रकाश की अवधि एवं पुष्पन प्रेरित करने में कोई संबंध नहीं होता है। ऐसे पौधों को **तटस्थ प्रदीप्तकाली** पौधा कहते हैं (चित्र 15.12)। यह भी ज्ञातव्य है कि सिर्फ प्रकाश की अवधि ही नहीं; बल्कि अंधकार की अवधि भी महत्वपूर्ण है। अतः कुछ पौधों में पुष्पन सिर्फ प्रकाश और अंधकार के अवधि पर ही निर्भर नहीं करता, बल्कि उसकी सापेक्षित अवधि पर निर्भर करता है। इस घटना को **दीप्तिकालिता** कहते हैं। यह भी बहुत मजेदार बात है कि तने की शीर्षस्थ कलिका पुष्पन के पहले पुष्पन शीर्षस्थ कलिका में बदलती है, परंतु वे (तने की शीर्षस्थ कलिका) खुद से प्रकाश काल को नहीं महसूस कर पाती है। प्रकाश/अंधकार



चित्र 15.12 दीप्तिकालिता – दीर्घ प्रदीप्त काली, अल्प प्रदीप्त काली एवं दिवस निरपेक्ष पादप

काल का अनुभव पत्तियां करती हैं। परिकल्पना यह है कि हार्मोनल तत्व (फ्लोरिजन) पुष्पन के लिए जिम्मेदार है। फ्लोरिजन पत्ती से तना कलिका में पुष्पन प्रेरित करने के लिए तभी जाती है जब पौधे आवश्यक प्रेरित दीप्तिकाल में अनावृत होते हैं।

15.6 वसंतीकरण

कुछ पौधों में पुष्पन गुणात्मक या मात्रात्मक तौर पर कम तापक्रम में अनावृत होने पर निर्भर करता है। इसे ही **वसंतीकरण** कहा जाता है। यह अकालिक प्रजनन परिवर्धन को वृद्धि के मौसम में तब तक रोकता है जब तक पौधे परिपक्व न हो जाएं। वसंतीकरण कम ताप काल में पुष्पन के प्रोत्साहन को कहते हैं। उदाहरण के तौर पर भोजन वाले पौधे गेहूँ, जौ, तथा राई की दो किस्में होती हैं: जाड़े तथा वसंत की किस्में। वसंत की किस्में साधारणतया वसंत में बोई जाती है, जो बढ़ते मौसम की समाप्ति के पहले फूलती एवं फलती हैं। जाड़े की किस्में यदि वसंत में बोई जाती हैं तो वह मौसम के पहले न तो पुष्पित होती हैं और न फलती है। इसीलिए वह शरदकाल में बोई जाती हैं। ये अंकुरित होते हैं और नवोद्भिदों के रूप में जाड़े को बिताते हैं, फिर बसंत में फूलते एवं फलते हैं तथा मध्य ग्रीष्म के दौरान काट लिए जाते हैं।

वसंतीकरण के कुछ उदाहरण द्विवर्षी पौधों में भी पाए जाते हैं। द्विवर्षी पौधे एक सकृत्फली पौधे होते हैं जो साधारणतया दूसरे मौसम/ऋतु में फूलते एवं मरते हैं। चुकंदर, पत्ता गोभी, गाजर कुछ द्विवर्षी पौधे हैं। एक द्विवर्षी पौधे को कम तापक्रम में अनावृत कर दिए जाने पर; पादपों में बाद में दीप्तिकालिता के कारण पुष्पन की अनुक्रिया बढ़ जाती है।

सारांश

किसी भी जीवित प्राणी के लिए वृद्धि एक अत्यंत उत्कृष्ट घटना है। यह एक अनपलट, बढ़तयुक्त तथा मापदंड में प्रकट होने वाली है जैसे कि आकार, क्षेत्रफल, लंबाई, ऊंचाई, आयतन, कोशिका संख्या आदि। इसमें बढ़ा हुआ जीव द्रव्य पदार्थ शामिल है। पौधों में विभज्योतक/मेरिस्टेम वृद्धि की जगहें होती हैं। मूलशिखाग्र विभज्योतक तथा प्ररोह शिखाग्र विभज्योतक के साथ-साथ कई बार, अंतरवाहिका विभज्योतक पौधे के अक्ष की दीर्घगामी वृद्धि में भागीदारी करते हैं। उच्च पेड़ों में वृद्धि अनियत होती है। मूल शिखाग्र एवं प्ररोह शिखाग्र में कोशिका विभाजन का अनुपालन करते हुए वृद्धि अंकगणितीय या ज्यामितीय हो सकती है। कोशिका/ऊतक/अंग जीवों में वृद्धि दर सामान्यत: पूरे जीवन काल में उच्च दर पर नहीं टिकी रहती है। वृद्धि को तीन प्रमुख चरणों, लैग, लॉग तथा जरावस्था में बाँटा जा सकता है। जब कोशिका अपनी विभाजन क्षमता खो देती है तो यह विभेदन की ओर बढ़ जाती है। विभेदन संरचनाएं प्रदान करता है जो उत्पाद की क्रियात्मकता के साथ जुड़ी होती है। कोशिकाओं, ऊतकों तथा संबंधी अंगों के लिए विभेदन के लिए सामान्य नियम एक समान होते हैं। एक विभेदित कोशिका फिर विभेदित हो सकती है या फिर पुन:विभेदित हो सकती है। पादपों में विभेदन चूँकि खुला होता है, अत: परिवर्धन लचीला हो सकता है। दूसरे शब्दों में है परिवर्धन वृद्धि एवं विभेदन का योग है।

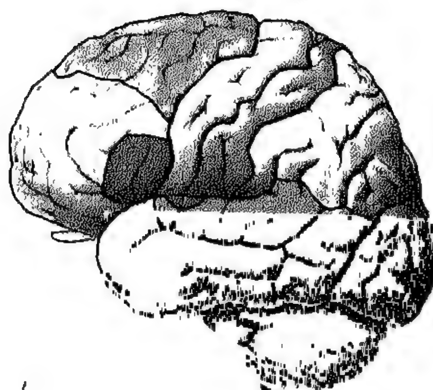
पादप वृद्धि एवं परिवर्धन बाह्य एवं आंतरिक दोनों कारकों द्वारा नियंत्रित होते हैं। अंतरकोशीय आंतरिक कारक रासायनिक तत्व होते हैं जिन्हें पादप वृद्धि नियामक (पीजीआर) कहा जाता है। पौधों में पीजीआर के विभिन्न समूह होते हैं, जो मुख्यत: पाँच समूह के नाम से जाने जाते हैं: आक्सिन, जिब्बेरेलिंस, साइटोकिनिंस, एबसीसिक एसिड तथा एथीलिन। ये पीजीआर पौधे के विभिन्न हिस्सों में उत्पादित किए जाते हैं। ये विभिन्न विभेदन एवं परिवर्धन की घटनाओं को नियंत्रित करते हैं। कोई भी पीजीआर पादपों के कार्यिकी पर प्रभाव डाल सकता है। ठीक इसी प्रकार से ये प्रभाव विविध प्रकार की पीजीआर से प्रकट होते हैं। ये पीजीआर सहक्रियाशील योगवाही अथवा प्रतिरोधात्मक के रूप में कार्य कर सकते हैं। इसके साथ पादप वृद्धि एवं परिवर्धन प्रकाश, तापक्रम, ऑक्सीजन स्तर, गुरुत्व तथा अन्य ऐसे ही बाहरी घटकों द्वारा भी प्रभावित होते हैं।

कुछ पादपों में पुष्पन दीप्तिकालिता पर निर्भर करता है। दीप्तिकालिता के आधार पर पौधों को तीन भागों में बाँटा गया है– अल्प प्रदीप्तकाली पौधे, दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधे एवं तटस्थप्रदीप्त काली पौधे। कुछ पौधों को कम ताप से अनावृत करने की जरूरत होती है, ताकि वे जीवन के अंत में पुष्पन कर सकें। इसे ही वसंतीकरण कहते हैं।

अभ्यास

1. वृद्धि, विभेदन, परिवर्धन, निर्विभेदन, पुनर्विभेदन, सीमित वृद्धि, मेरिस्टेम तथा वृद्धि दर की परिभाषा दें।
2. पुष्पित पौधों के जीवन में किसी एक प्राचालिक (Parameter) से वृद्धि को वर्णित नहीं किया जा सकता है, क्यों?

3. संक्षिप्त वर्णित करें–
   (अ) अंकगणितीय वृद्धि
   (ब) ज्यामितीय वृद्धि
   (स) सिग्माइड वृद्धि वक्र
   (द) संपूर्ण एवं सापेक्ष वृद्धि दर
4. प्राकृतिक पादप वृद्धि नियामकों के पाँच मुख्य समूहों के बारे में लिखें। इनके आविष्कार, कार्यिकी प्रभाव तथा कृषि/बागवानी में इनका प्रयोग के बारे में लिखें।
5. दीप्तिकालिता तथा वसंतीकरण क्या हैं? इनके महत्व का वर्णन करें।
6. एबसिसिक एसिड को तनाव हार्मोन कहते हैं, क्यों?
7. उच्च पादपों में वृद्धि एवं विभेदन खुला होता है, टिप्पणी करें?
8. अल्प प्रदीप्तकाली पौधे और दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधे किसी एक स्थान पर साथ-साथ फूलते हैं। विस्तृत व्याख्या करें।
9. अगर आपको ऐसा करने को कहा जाए तो एक पादप वृद्धि नियामक का नाम दें–
   (क) किसी टहनी में जड़ पैदा करने हेतु
   (ख) फल को जल्दी पकाने हेतु
   (ग) पत्तियों की जरावस्था को रोकने हेतु
   (घ) कक्षस्थ कलिकाओं में वृद्धि कराने हेतु
   (ड) एक रोजेट पौधे में 'बोल्ट' हेतु
   (च) पत्तियों के रंध्र को तुरंत बंद करने हेतु
10. क्या एक पर्णरहित पादप दीप्तिकलिता के चक्र से अनुक्रिया कर सकता है? यदि हां या नहीं तो क्यों?
11. क्या हो सकता है, अगर:
   (क) जी ए$_3$ (GA_3) को धान के नवोद्भिदों पर दिया जाए
   (ख) विभाजित कोशिका विभेदन करना बंद कर दें
   (ग) एक सड़ा फल कच्चे फलों के साथ मिला दिया जाए।
   (घ) अगर आप संवर्धन माध्यम में साइटोकीनिंस डालना भूल जाएं।



इकाई पाँच

मानव शरीर विज्ञान

न्युनीकरणकर्ता जीवन के स्वरूपों के अध्ययन का उपागम करते हैं, परिणामस्वरूप भौतिक-रसायन संकल्पना एवं तकनीकी के उपयोग में वृद्धि होती है। ऐसे अध्ययनों में बहुतायत से या तो जीवद्-ऊतक मॉडल का उपयोग करते हैं या फिर सीधे-सीधे कोशिकामुक्त प्रणाली का उपयोग करते हैं। एक ज्ञान की अभिवृद्धि के परिणामस्वरूप आण्विक जीव विज्ञान का जन्म हुआ। आज जैव-रसायनशास्त्र एवं जैव-भौतिकी के साथ आण्विक शरीर विज्ञान लगभग पर्यायवाची बन चुका है। हालांकि, अब तीव्र वृद्धि के साथ यह महसूस किया जा रहा है कि न तो शुद्ध रूप से जैविक उपागम और न ही शुद्ध रूप से न्यूनीकरण आण्विक उपागम जैव वैज्ञानिक प्रक्रम या जीवित प्रत्याभासों के सत्य को उद्घाटित कर पाएगा। वर्गिकी जीव विज्ञान हमें यह विश्वास दिलाता है कि सभी जैविक प्रत्याभास अध्ययन के अंतर्गत सभी कारकों की परस्पर क्रिया के कारण निर्गत विशिष्टाएं या गुणधर्म है। अणुओं का नियामक नेटवर्क, सुप्रा आण्विक जनसंख्या एवं समुदाय हर एक निर्गत गुणधर्म को पैदा करते हैं। इस खंड के अंतर्गत आने वाले अध्यायों में प्रमुख मानव शरीर वैज्ञानिक प्रक्रमों, जैसे पाचन, गैसों का विनिमय, रक्त परिसंचरण, गमन एवं संचलन के बारे में कोशिकीय एवं आण्विक भाषा में वर्णन किया गया है। अंतिम दो अध्यायों के अंतर्गत जैविक समन्वय के बिंदुओं पर चर्चा की गई है।



अलफोन्सो कार्टी
(1822 - 1888)

अध्याय 16

पाचन एवं अवशोषण

भोजन सभी सजीवों की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है। हमारे भोजन के मुख्य अवयव कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं वसा हैं। अल्प मात्रा में विटामिन एवं खनिज लवणों की भी आवश्यकता होती है। भोजन से ऊर्जा एवं कई कच्चे कायिक पदार्थ प्राप्त होते हैं जो वृद्धि एवं ऊतकों के मरम्मत के काम आते हैं। जो जल हम ग्रहण करते हैं, वह उपापचयी प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है एवं शरीर के निर्जलीकरण को भी रोकता है। हमारा शरीर भोजन में उपलब्ध जैव-रसायनों को उनके मूल रूप में उपयोग नहीं कर सकता। अतः पाचन तंत्र में छोटे अणुओं में विभाजित कर साधारण पदार्थों में परिवर्तित किया जाता है। जटिल पोषक पदार्थों को अवशोषण योग्य सरल रूप में परिवर्तित करने की इसी क्रिया को **पाचन** कहते हैं और हमारा पाचन तंत्र इसे यांत्रिक एवं रासायनिक विधियों द्वारा संपन्न करता है। मनुष्य का पाचन तंत्र चित्र 16.1 में दर्शाया गया है।

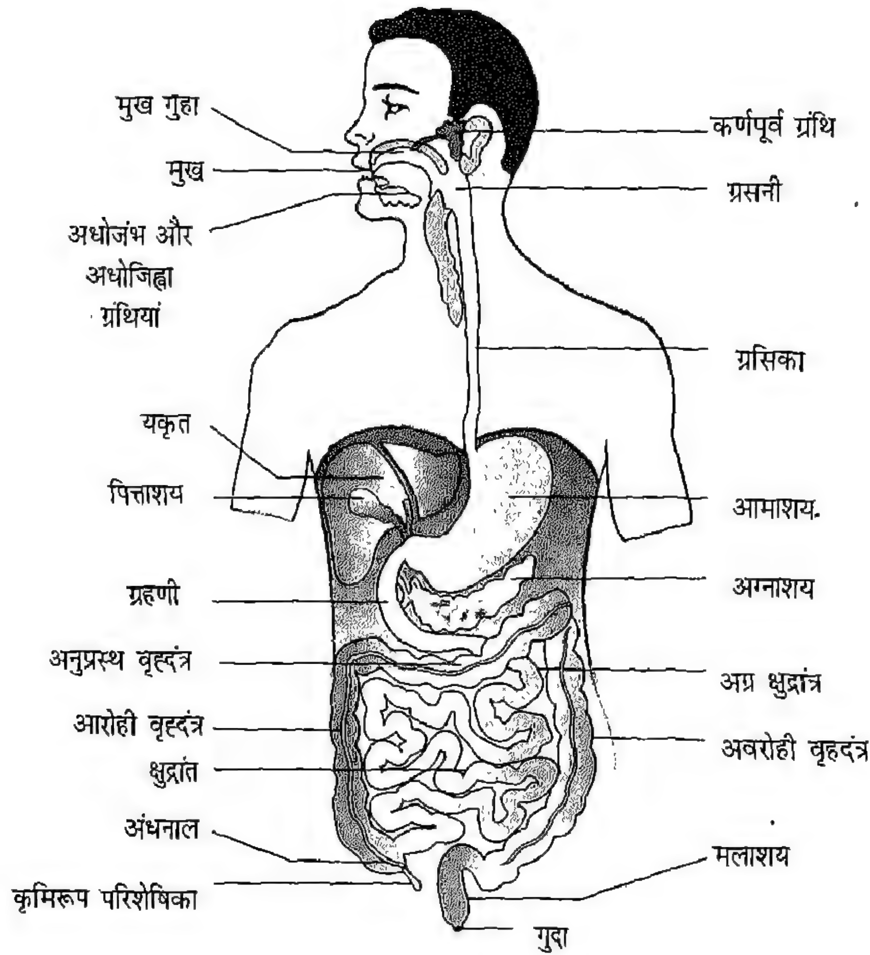
16.1 पाचन तंत्र

मनुष्य का पाचन तंत्र आहार नाल एवं सहायक ग्रंथियों से मिलकर बना होता है।

16.1.1 आहार नाल

आहार नाल अग्र भाग में मुख से प्रारंभ होकर पश्च भाग में स्थित गुदा द्वारा बाहर की ओर खुलती है।

मुख, मुखगुहा में खुलता है। मुखगुहा में कई दांत और एक पेशीय जिह्वा होती है। प्रत्येक दांत जबड़े में बने एक सांचे में स्थित होता है। (चित्र 16.2) इस तरह की व्यवस्था को **गर्तदंती** (thecodont) कहते हैं। मनुष्य सहित अधिकांश स्तनधारियों के जीवन काल में दो तरह के दांत आते हैं- अस्थायी दांत-समूह अथवा दूध के दांत जो वयस्कों में स्थायी दांतों से प्रतिस्थापित हो जाते हैं। इस तरह की दांत (दंत) व्यवस्था को **द्विबारदंती**



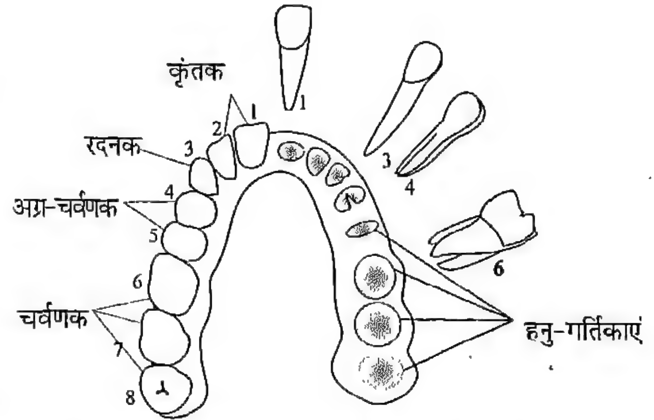
चित्र 16.1 मानव पाचन तंत्र

(Diphyodont) कहते हैं। वयस्क मनुष्य में 32 स्थायी दांत होते हैं, जिनके चार प्रकार हैं जैसे- कृंतक (I), रदनक (C) अग्र–चर्वणक (PM) और चर्वणक (M)। ऊपरी एवं निचले जबड़े के प्रत्येक आधे भाग में दांतों की व्यवस्था I, C, PM, M क्रम में एक दंतसूत्र के अनुसार होती है जो मनुष्य के लिए $\frac{2123}{2123}$ है। इनैमल से बनी दांतों की चबाने वाली कठोर सतह भोजन को चबाने में मदद करती है। जिह्वा स्वतंत्र रूप से घूमने योग्य एक पेशीय अंग है जो फ्रेनुलम (frenulum) द्वारा मुखगुहा की आधार से जुड़ी होती है। जिह्वा की ऊपरी सतह पर छोटे-छोटे उभार के रूप में पिप्पल (पैपिला) होते हैं, जिनमें कुछ पर स्वाद कलिकाएं होती हैं।

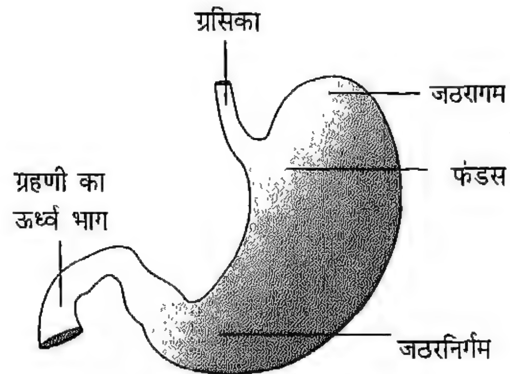
मुखगुहा एक छोटी ग्रसनी में खुलती है जो वायु एवं भोजन, दोनों का ही पथ है। उपास्थिमय घाँटी ढक्कन, भोजन को निगलते समय श्वासनली में प्रवेश करने से रोकती है। ग्रसिका (oesophagus) एक पतली लंबी नली है, जो गर्दन, वक्ष एवं मध्यपट से होते हुए पश्च भाग में 'J' आकार के थैलीनुमा आमाशय में खुलती है। ग्रसिका का आमाशय

में खुलना एक पेशीय (आमाशय-ग्रसिका) अवरोधिनी द्वारा नियंत्रित होता है। आमाशय (गुहा के ऊपरी बाएं भाग में स्थित होता है), को मुख्यत: तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है- **जठरागम भाग** जिसमें ग्रसिका खुलती है, **फंडिस** क्षेत्र और **जठरनिर्गमी** भाग जिसका छोटी आंत में निकास होता है (चित्र 16.3)। छोटी आंत के तीन भाग होते हैं- 'U' आकार की ग्रहणी, कुंडलित मध्यभाग अग्रक्षुद्रांत्र और लंबी कुंडलित क्षुद्रांत्र। आमाशय का ग्रहणी में निकास जठरनिर्गम अवरोधिनी द्वारा नियंत्रित होता है। क्षुद्रांत्र बड़ी आंत में खुलती है जो अंधनाल, वृहदांत्र और मलाशय से बनी होती है। अंधनाल एक छोटा थैला है जिसमें कुछ सहजीवीय सूक्ष्मजीव रहते हैं। अंधनाल से एक अंगुली जैसा प्रर्वध, परिशेषिका निकलता है जो एक अवशेषी अंग है। अंधनाल, बड़ी आंत में खुलती है। वृहदांत्र तीन भागों में विभाजित होता है- आरोही, अनुप्रस्थ एवं अवरोही भाग। अवरोही भाग मलाशय में खुलता है जो मलद्वार (anus) द्वारा बाहर खुलता है।

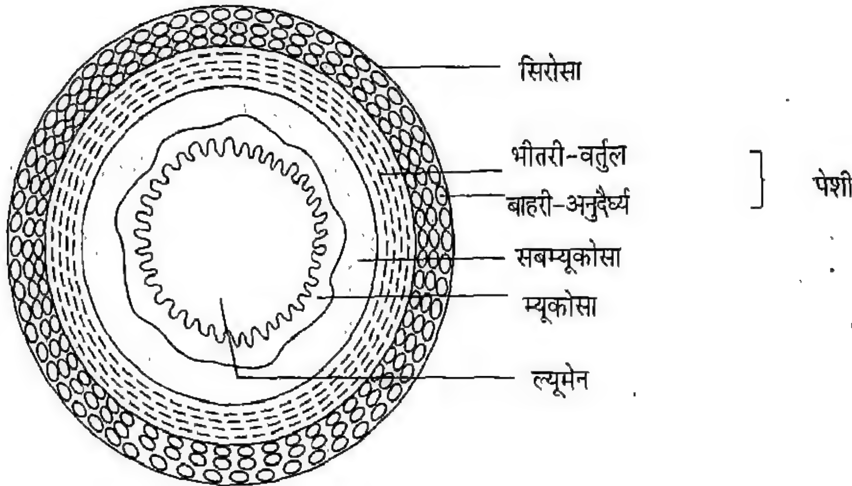
आहार नाल की दीवार में ग्रसिका से मलाशय तक, चार स्तर होते हैं (चित्र 16.4) जैसे सिरोसा, मस्कुलेरिस, सबम्यूकोसा और म्युकोसा। सिरोसा सबसे बाहरी परत है और एक पतली मेजोथिलियम (अंतरंग अंगों की उपकला) और कुछ संयोजी ऊतकों से बनी होती है। मस्कुलेरिस प्राय: आंतरिक वर्तुल पेशियों एवं बाह्य अनुदैर्ध्य पेशियों की बनी होती है। कुछ भागों में एक तिर्यक पेशी स्तर होता है। सबम्यूकोसा स्तर रुधिर, लसीका व तंत्रिकाओं युक्त मुलायम संयोजी ऊतक की बनी होती है। ग्रहणी में, कुछ ग्रंथियाँ भी सबम्यूकोसा में पाई जाती हैं। आहार नाल की ल्यूमेन की सबसे भीतरी परत म्यूकोसा है। यह स्तर आमाशय में अनियमित वलय एवं छोटी आंत में अंगुलीनुमा प्रवर्ध बनाता है जिसे **अंकुर** (villi) कहते हैं (चित्र 16.5)। अंकुर की सतह पर स्थित कोशिकाओं से असंख्य सूक्ष्म प्रवर्ध निकलते हैं जिन्हें सूक्ष्म अंकुर कहते हैं, जिससे ब्रस-बार्डर जैसा लगता है। यह रूपांतरण सतही क्षेत्र को अत्यधिक बढ़ा देता है। अंकुरों में केशिकाओं का जाल फैला रहता है और एक बड़ी लसीका वाहिका (vessel) होती है जिसे



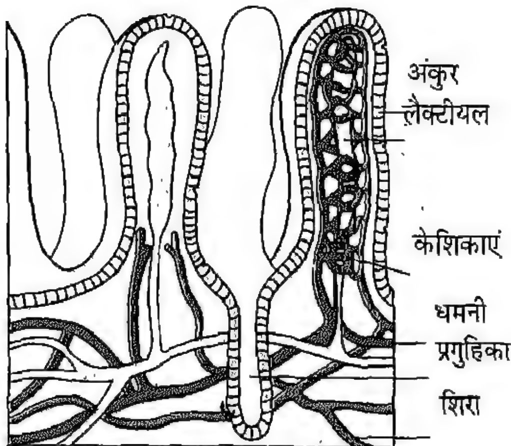
चित्र 16.2 एक ओर हनु में विभिन्न प्रकार के दंत-विन्यास और दूसरी ओर हनु-गर्तिकाओं को दर्शाते हुए।



चित्र 16.3 एक ओर हनु में विभिन्न प्रकार के दंत-विन्यास और दूसरी ओर हनु-गर्तिकाओं को दर्शाते हुए।



चित्र 16.4 आंत्र की अनुप्रस्थ काट का आरेखीय निरूपण



चित्र 16.5 अंकुर दर्शाते हुए क्षुद्रांत्र म्यूकोसा का एक भाग

लैक्टीयल कहते हैं। म्यूकोसा की उपकला पर कलश-कोशिकाएं होती हैं, जो स्नेहन के लिए म्यूकस का स्राव करती हैं। म्यूकोसा आमाशय और आंत में स्थित अंकुरों के आधारों के बीच लीबरकुन-प्रगुहिका (crypts of Lieberkuhn) भी कुछ ग्रंथियों का निर्माण करती है। सभी चारों परतें आहार नाल के विभिन्न भागों में रूपांतरण दर्शाती हैं।

16.1.2 पाचन ग्रंथियाँ

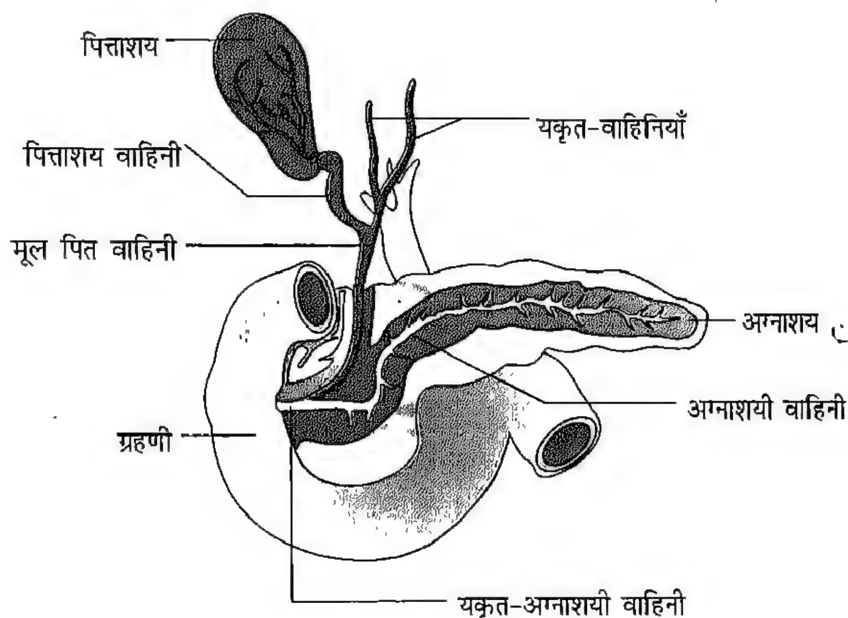
आहार नाल से संबंधित पाचन ग्रंथियों में लार ग्रंथियाँ, यकृत और अग्नाशय शामिल हैं।

लार का निर्माण तीन जोड़ी ग्रंथियों द्वारा होता है। ये हैं गाल में कर्णपूर्व, निचले जबड़े में अधोजंभ/अवचिबुकीय तथा जिह्वा के नीचे स्थित अधोजिह्वा। इन ग्रंथियों से लार मुखगुहा में पहुँचती है।

यकृत (liver) मनुष्य के शरीर की सबसे बड़ी ग्रंथि है जिसका वयस्क में भार लगभग 1.2 से 1.5 किलोग्राम होता है। यह उदर में मध्यपट के ठीक नीचे स्थित होता है और इसकी दो पालियाँ (lobes) होती हैं। यकृत पालिकाएं यकृत की संरचनात्मक और कार्यात्मक इकाइयां हैं जिनके अंदर यकृत कोशिकाएं रज्जु की तरह व्यवस्थित रहती हैं। प्रत्येक पालिका संयोजी ऊतक की एक पतली परत से ढकी होती है जिसे ग्लिसंस केपसूल कहते हैं। यकृत की कोशिकाओं से पित्त का स्राव होता है जो यकृत नलिका से

होते हुए एक पतली पेशीय थैली- पित्ताशय में सांद्रित एवं जमा होता है। पित्ताशय की नलिका यकृतीय नलिका से मिलकर एक मूल पित्त वाहिनी बनाती है (चित्र 16.6)। पित्ताशयी नलिका एवं अग्नाशयी नलिका, दोनों मिलकर यकृतअग्नाशयी वाहिनी द्वारा ग्रहणी में खुलती है जो ओडी अवरोधिनी से नियंत्रित होती हैं।

अग्नाशय U आकार के ग्रहणी के बीच स्थित एक लंबी ग्रंथि है जो बहि: स्रावी और अंत: स्रावी, दोनों ही ग्रंथियों की तरह कार्य करती है। बहि: स्रावी भाग से क्षारीय अग्नाशयी स्राव निकलता है, जिसमें एंजाइम होते हैं और अंत: स्रावी भाग से इंसुलिन और ग्लुकेगोन नामक हार्मोन का स्राव होता है।

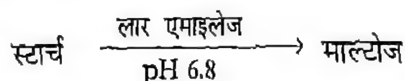


चित्र 16.6 यकृत, पित्ताशय और अनाशय का वाहिनी-तंत्र

16.2 भोजन का पाचन

पाचन की प्रक्रिया यांत्रिक एवं रासायनिक विधियों द्वारा संपन्न होती है। मुखगुहा के मुख्यत: दो प्रकार्य हैं, भोजन का चर्वण और निगलने की क्रिया। लार की मदद से दांत और जिह्वा भोजन को अच्छी तरह चबाने एवं मिलाने का कार्य करते हैं। लार का श्लेषम भोजन कणों को चिपकाने एवं उन्हें बोलस में रूपांतरित करने में मदद करता है। इसके उपरांत **निगलने की क्रिया** द्वारा **बोलस** ग्रसनी से ग्रसिका में चला जाता है। **बोलस** पेशीय संकुचन के क्रमाकुंचन (peristalsis) द्वारा ग्रसिका में आगे बढ़ता है। जठर-ग्रसिका अवरोधिनी भोजन के अमाशय में प्रवेश को नियंत्रित करती है। लार (मुखगुहा) में विद्युत-अपघट्य (electrolytes) (Na^+, K^+, Cl^-, HCO_3) और एंजाइम (लार एमाइलेज या टायलिन तथा लाइसोजाइम) होते हैं। पाचन की रासायनिक प्रक्रिया

मुखगुहा में कार्बोहाइड्रेट को जल अपघटित करने वाली एंजाइम टायलिन या लार एमाइलेज की सक्रियता से प्रारंभ होती है। लगभग 30 प्रतिशत स्टार्च इसी एंजाइम की सक्रियता (pH 6.8) से द्विशर्करा माल्टोज में अपघटित होती है। लार में उपस्थित लाइसोजाइम जीवाणुओं के संक्रमण को रोकता है।



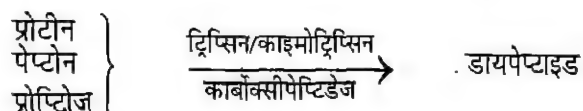
आमाशय की म्यूकोसा में जठर ग्रंथियाँ स्थित होती हैं। जठर ग्रंथियों में मुख्य रूप से तीन प्रकार की कोशिकाएं होती हैं, यथा- (i) म्यूकस का स्राव करने वाली श्लेषमा ग्रीवा कोशिकाएं (ii) पेप्टिक या मुख्य कोशिकाएं जो प्रोएंजाइम पेप्सिनोजेन का स्राव करती हैं तथा (iii) भित्तीय या ऑक्सिन्टिक कोशिकाएं जो हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और नैज कारक स्रवित करती हैं (नैज कारक विटामिन B_{12} के अवशोषण के लिए आवश्यक है)। अमाशय 4-5 घंटे तक भोजन का संग्रहण करता है। आमाशय की पेशीय दीवार के संकुचन द्वारा भोजन अम्लीय जठर रस से पूरी तरह मिल जाता है जिसे **काइम** (chyme) कहते हैं। प्रोएंजाइम पेप्सिनोजेन हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के संपर्क में आने से सक्रिय एंजाइम पेप्सिन में परिवर्तित हो जाता है; जो आमाशय का प्रोटीन-अपघटनीय एंजाइम है। पेप्सिन प्रोटीनों को प्रोटियोज तथा पेप्टोंस (पेप्टाइडों) में बदल देता है। जठर रस में उपस्थित श्लेष्म एवं बाइकार्बोनेट श्लेष्म उपकला स्तर का स्नेहन और अत्यधिक सांद्रित हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से उसका बचाव करते हैं। हाइड्रोक्लोरिक अम्ल पेप्सिनों के लिए उचित अम्लीय माध्यम (pH 1.8) तैयार करता है। नवजातों के जठर रस में रेनिन नामक प्रोटीन अपघटनीय एंजाइम होता है जो दूध के प्रोटीन को पचाने में सहायक होता है। जठर ग्रंथियाँ थोड़ी मात्रा में लाइपेज भी स्रवित करती हैं।

छोटी आंत का पेशीय स्तर कई तरह की गतियां उत्पन करता है। इन गतियों से भोजन विभिन्न स्रावों से अच्छी तरह मिल जाता है और पाचन की क्रिया सरल हो जाती है। यकृत अग्नाशयी नलिका द्वारा पित्त, अग्नाशयी रस और आंत्र-रस छोटी आंत में छोड़े जाते हैं। अग्नाशयी रस में ट्रिप्सिनोजन, काइमोट्रिप्सिनोजन, प्रोकार्बोक्सीपेप्टिडेस, एमाइलेज और न्युक्लिएज एंजाइम निष्क्रिय रूप में होते हैं। आंत्र म्यूकोसा द्वारा स्रावित ऐंटेरोकाइनेज द्वारा ट्रिप्सिनोजन सक्रिय ट्रिप्सिन में बदला जाता है जो अग्नाशयी रस के अन्य एंजाइमों को सक्रिय करता है। ग्रहणी में प्रवेश करने वाले पित्त में पित्त वर्णक (विलिरूबिन एवं विलिवर्डिन), पित्त लवण, कोलेस्टेरॉल और फास्फोलिपिड होते हैं, लेकिन कोई एंजाइम नहीं होता। पित्त वसा के इमल्सीकरण में मदद करता है और उसे बहुत छोटे मिसेल कणों में तोड़ता है। पित्त लाइपेज एंजाइम को भी सक्रिय करता है।

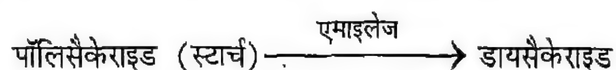
आंत्र श्लेषमा उपकला में **गोब्लेट कोशिकाएं** होती हैं जो श्लेषमा का स्राव करती है। म्यूकोसा के ब्रस बॉर्डर कोशिकाओं और गोब्लेट कोशिकाओं के स्राव आपस में मिलकर आंत्र स्राव अथवा **सक्कस एंटेरिकस** बनाते हैं। इस रस में कई तरह के एंजाइम होते हैं, जैसे-ग्लाइकोसिडेज डायपेप्टिडेज, एस्टरेज, न्यूक्लियोसिडेज आदि। म्यूकस अग्नाशय के बाइकार्बोनेट के साथ मिलकर आंत्र म्यूकोसा की अम्ल के दुष्प्रभाव से रक्षा करता है तथा

एंजाइमों की सक्रियता के लिए आवश्यक क्षारीय माध्यम (pH 7.8) तैयार करता है। इस प्रक्रिया में सब-म्यूकोसल ब्रूनर ग्रंथि भी मदद करती है।

आंत में पहुँचने वाले काइम में उपस्थित प्रोटीन, प्रोटियोज और पेप्टोन (आंशिक अपघटित प्रोटीन) अग्नाशय रस के प्रोटीन अपघटनीय एंजाइम निम्न रूप से क्रिया करते हैं:



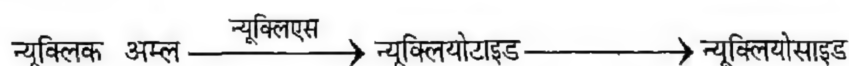
काइम के कार्बोहाइड्रेट अग्नाशयी एमाइलेज द्वारा डायसैकेराइड में जलापघटित होते हैं।



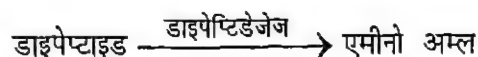
वसा पित्त की मदद से लाइपेजेज द्वारा क्रमशः डाई और मोनोग्लिसेराइड में टूटते हैं।



अग्नाशयी रस के न्यूक्लिएस न्यूक्लिक अम्लों को न्यूक्लियोटाइड और न्यूक्लियोसाइड में पाचित करते हैं।



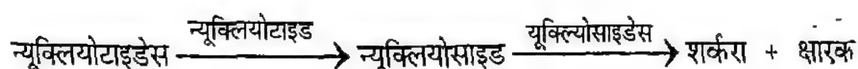
आंत्र रस के एंजाइम उपर्युक्त अभिक्रियाओं के अंतिम उत्पादों को पाचित कर अवशोषण योग्य सरल रूप में बदल देते हैं। पाचन के ये अंतिम चरण आंत के म्यूकोसल उपकला कोशिकाओं के बहुत समीप संपन्न होते हैं।

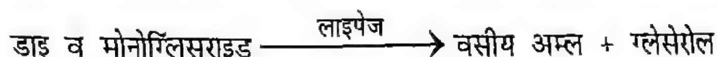












ऊपर वर्णित जैव वृहत् अणुओं के पाचन की क्रिया आंत्र के ग्रहणी भाग में संपन्न होती हैं। इस तरह निर्मित सरल पदार्थ छोटी आंत के अग्रक्षुद्रांत्र और क्षुद्रांत्र भागों में अवशोषित होते हैं। अपचित तथा अनावशोषित पदार्थ बड़ी आंत में चले जाते हैं।

बड़ी आंत में कोई महत्वपूर्ण पाचन क्रिया नहीं होती है। बड़ी आंत का कार्य है- (1) कुछ जल, खनिज एवं औषध का अवशोषण (2) श्लेष्म का स्राव जो अपचित उत्सर्जी पदार्थ कणों को चिपकाने और स्नेहन होने के कारण उनका बाह्य निकास आसान बनाता है। अपचित और अवशोषित पदार्थों को मल कहते हैं, जो अस्थायी रूप से मल त्यागने से पहले तक मलाशय में रहता है।

जठरांत्रिक पथ की क्रियाएं विभिन्न अंगों के उचित समन्वय के लिए तंत्रिका और हॉर्मोन के नियंत्रण से होती है। भोजन के भोज्य पदार्थों को देखने, उनकी गंध और/अथवा मुखगुहा नली में उपस्थिति लार ग्रंथियों को स्राव के लिए उद्दीपित कर सकती हैं। इसी प्रकार जठर और आंत्रिक स्राव भी तंत्रिका संकेतों से उद्दीप्त होते हैं। आहार नाल के विभिन्न भागों की पेशियों की सक्रियता भी स्थानीय एवं केंद्रीय तंत्रिकीय क्रियाओं द्वारा नियमित होती हैं। हार्मोनल नियंत्रण के अंतर्गत, जठर और यॉंत्रिक म्यूकोसा से निकलने वाले हार्मोन पाचक रसों के स्राव को नियंत्रित करते हैं।

16.3 पाचित उत्पादों का अवशोषण

अवशोषण वह प्रक्रिया है, जिसमें पाचन से प्राप्त उत्पाद यांत्रिक म्यूकोसा से निकलकर रक्त या लसीका में प्रवेश करते हैं। यह निष्क्रिय, सक्रिय अथवा सुसाध्य परिवहन क्रियाविधियों द्वारा संपादित होता है। ग्लुकोज, ऐमीनो अम्ल, क्लोराइड आयन आदि की थोड़ी मात्रा सरल विसरण प्रक्रिया द्वारा रक्त में पहुंच जाती हैं। इन पदार्थों का रक्त में पहुंचना सांद्रण-प्रवणता (concentration gradient) पर निर्भर है। जबकि फ्रक्टोज और कुछ अन्य ऐमीना अम्लों का परिवहन वाहक अणुओं जैसे सोडियम आयन की मदद से पूरा होता है। इस क्रियाविधि को सुसाध्य परिवहन कहते हैं।

जल का परिवहन परासरणी प्रवणता पर निर्भर करता है। सक्रिय परिवहन सांद्रण-प्रवणता के विरुद्ध होता है जिसके लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। विभिन्न पोषक तत्वों जैसे ऐमीनो अम्ल, ग्लुकोस (मोनोसैकेराइड) और सोडियम आयन (विद्युत-अपघट्य) का रक्त में अवशोषण इसी क्रियाविधि द्वारा होता है।

वसाम्ल और ग्लिसेरॉल अविलेय होने के कारण रक्त में अवशोषित नहीं हो पाते। सर्वप्रथम वे विलेय सूक्ष्म बूंदों में समाविष्ट होकर आंत्रिक म्यूकोसा में चले जाते हैं जिन्हें मिसेल (micelles) कहते हैं। ये यहाँ प्रोटीन आस्तरित सूक्ष्म वसा गोलिका में पुनः संरचित होकर अंकुरों की लसीका वाहिनियों (लेक्टियल) में चले जाते हैं। ये लसीका वाहिकाएं अंततः अवशोषित पदार्थों को रक्त प्रवाह में छोड़ देती हैं।

पदार्थों का अवशोषण आहारनाल के विभिन्न भागों जैसे-मुख, आमाशय, छोटी आंत और बड़ी आंत में होता है। परंतु सबसे अधिक अवशोषण छोटी आंत में होता है। अवशोषण सारांश (अवशोषण- स्थल और पदार्थ) तालिका 16.1 में दिया गया है।

तालिका 16.1 पाचन तंत्र के विभिन्न भागों में अवशोषण का सारांश

मुख	आमाशय	छोटी आंत	बड़ी आंत
कुछ औषधियाँ जो मुख और जिह्वा की निचली सतह के म्यूकोसा के संपर्क में आती हैं। वे आस्तरित करने वाली रुधिर कोशिकाओं में अवशोषित हो जाती हैं।	जल, सरल शर्करा, एल्कोहॉल, आदि का अवशोषण होता है।	पोषक तत्वों के अवशोषण का प्रमुख अंग। यहां पर पाचन की क्रिया पूरी होती है और पाचन के अंतिम उत्पाद, जैसे-ग्लूकोस, फ्रक्टोस, वसीय अम्ल, ग्लिसेराल, और ऐमीनो अम्ल का म्यूकोसा द्वारा रक्त प्रवाह और लसीका में अवशोषण होता है।	जल, कुछ खनिजों और औषधि का अवशोषण होता है।

अवशोषित पदार्थ अंत में ऊतकों में पहुंचते हैं जहाँ वे विभिन्न क्रियाओं के उपयोग में लाए जाते हैं। इस प्रक्रिया को स्वांगीकरण (assimilation) कहते हैं।

पाचक अवशिष्ट मलाशय में कठोर होकर संबद्ध मल वन जाता है जो तांत्रिक प्रतिवर्ती (neural reflex) क्रिया को शुरू करता है जिससे मलत्याग की इच्छा पैदा होती है। मलद्वार से मल का बहिक्षेपण एक ऐच्छिक क्रिया है जो एक बृहत् क्रमाकुंचन गति से पूरी होती है।

16.4 पाचन तंत्र के विकार (Disorder) और अनियमितताएं

आंत्र नलिका का शोथ जीवाणुओं और विषाणुओं के संक्रमण से होने वाला एक सामान्य विकार है। आंत्र का संक्रमण परजीवियों, जैसे- फीता कृमि, गोलकृमि, सूत्रकृमि, हुकवर्म, पिनवर्म, आदि से भी होता है।

***पीलिया** (Jaundice)* : इसमें यकृत प्रभावित होता है। पीलिया में त्वचा और आंख पित्त वर्णकों के जमा होने से पीले रंग के दिखाई देते हैं।

वमन *(Vomiting)* : यह आमाशय में संगृहीत पदार्थों की मुख से बाहर निकलने की क्रिया है। यह प्रतिवर्ती क्रिया मेडुला में स्थित वमन केंद्र से नियंत्रित होती है। उल्टी से पहले बेचैनी की अनुभूति होती है।

***प्रवाहिका** (Diarrhoea)* : आंत्र (bowel) की अपसामान्य गति की बारंबारता और मल का अत्यधिक पतला हो जाना प्रवाहिका (diarrhoea) कहलाता है। इसमें भोजन अवशोषण की क्रिया घट जाती है।

***कोष्ठबद्धता (कब्ज)** (Constipation)* : कब्ज में, मलाशय में मल रुक जाता है और आंत्र की गतिशीलता अनियमित हो जाती है।

***अपच** (Indigestion)* : इस स्थिति में, भोजन पूरी तरह नहीं पचता है और पेट भरा-भरा महसूस होता है। अपच एंजाइमों के स्राव में कमी, व्यग्रता, खाद्य विषाक्तता, अधिक भोजन करने, एवं मसालेदार भोजन करने के कारण होती है।

सारांश

मानव के पाचन तंत्र में एक आहार नाल और सहयोगी ग्रंथियाँ होती हैं। आहर नाल मुख, मुखगुहा, ग्रसनी, ग्रसिका, आमाशय, क्षुद्रांत्र, वृहदांत्र, मलाशय और मलद्वार से बनी होती है। सहायक पाचन ग्रंथियों में लार ग्रंथि, यकृत (पित्ताशय सहित) और अग्नाशय हैं। मुख के अंदर दाँत भोजन को चबाते हैं, जीभ स्वाद को पहचानती है और भोजन को लार के साथ मिलाकर इसे अच्छी तरह से चबाने के लिए सुगम बनाती है। लार में मंड या मांड (स्टार्च) पचाने वाली पाचक एंजाइम, लार एमिलेज होती है जो मांड को पचाकर माल्टोस (डाइसैकेराइड) में बदल देती हैं। इसके बाद भोजन ग्रसनी से होकर बोलस के रूप में ग्रसिका में प्रवेश करता है, जो आगे क्रमाकुंचन द्वारा आमाशय तक ले जाया जाता है। आमाशय में मुख्यत: प्रोटीन का पाचन होता है। सरल शर्कराओं, अल्कोहल और दवाओं का भी आमाशय में अवशोषण होता है।

काइम क्षुद्रांत्र के ग्रहणी भाग में प्रवेश करता है जहाँ अग्नाशयी रस, पित्त और अंत में आंत्र रस के एंजाइमों द्वारा कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और वसा का पाचन पूरा होता है। इसके बाद भोजन छोटी आँत के अग्र क्षुद्रांत्र (जेजुनम) और क्षुद्रांत्र (इलियम) भाग में जाता है।

पाचन के पश्चात कार्बोहाइड्रट, ग्लुकोस जैसे- मोनोसैकेराइड में परिवर्तित हो जाते हैं। अंतत: प्रोटीन टूटकर ऐमीनो अम्लों में तथा वसा, वसीय अम्लों और ग्लिसेराल में परिवर्तित हो जाते हैं। आँत-उत्पादों का पाचित आँत अंकुरों के उपकला स्तर द्वारा शरीर में अवशोषित हो जाता है। अपचित भोजन (मल) त्रिकांत्र (ileoceacal) कपाट द्वारा वृहदांत्र की अंधनाल (caecum) में प्रवेश करता है। इलियो सीकल कपाट मल को वापस नहीं जाने देता। अधिकांश जल बड़ी आँत में अवशोषित हो जाता है। अपचित भोजन अर्ध ठोस होकर मलाशय और गुदा नाल में पहुँचता है और अंतत: गुदा द्वारा बहि:क्षेपित हो जाता है।

अभ्यास

1. निम्नलिखित में से सही उत्तर छाँटें :

(क) आमाशय रस में होता है-

(अ) पेप्सिन, लाइपेस और रेनिन

(ब) ट्रिप्सिन, लाइपेस और रेनिन

(स) ट्रिप्सिन, पेप्सिन और लाइपेस

(द) ट्रिप्सिन, पेप्सिन और रेनिन

(ख) सक्कस एंटेरिकस नाम दिया गया है-

(अ) क्षुद्रांत्र (illum) और बड़ी आँत के संधिस्थल के लिए

(ब) आंत्रिक रस के लिए

(स) आहार नाल में सूजन के लिए

(द) परिशेषिका (appendix) के लिए

2. स्तंभ I का स्तंभ II से मिलान कीजिए।

स्तंभ I	स्तंभ II
बिलिरुबिन और बिलिवर्डिन	पैरोटिड
मंड (स्टार्च) का जल-अपघटन	पित्त
वसा का पाचन	लाइपेस
लार ग्रंथि	एमाइलेस

3. संक्षेप में उत्तर दें :
   (क) अंकुर (villi) छोटी आंत में होते हैं, आमाशय में क्यों नहीं ?
   (ख) पेप्सिनोजेन अपने सक्रिय रूप में कैसे परिवर्तित होता है ?
   (ग) आहार नाल की दीवार के मूल स्तर क्या हैं ?
   (घ) वसा के पाचन में पित्त कैसे मदद करता है?
4. प्रोटीन के पाचन में अग्नाशयी रस की भूमिका स्पष्ट करें।
5. आमाशय में प्रोटीन के पाचन की क्रिया का वर्णन करें।
6. मनुष्य का दंत-सूत्र बताइए।
7. पित्त रस में कोई पाचक एंजाइम नहीं होते, फिर भी यह पाचन के लिए महत्वपूर्ण हैं; क्यों?
8. पाचन में काइमोट्रिप्सिन की भूमिका वर्णित करें। जिस ग्रंथि से यह स्रवित होता है, इसी श्रेणी के दो अन्य एंजाइम कौन से हैं?
9. पॉलि सैकेराइड और डाइसैकेराइड का पाचन कैसे होता है?
10. यदि आमाशय में हाइड्रोक्लोरिक अम्ल का स्राव नहीं होगा तो तब क्या होगा?
11. आपके द्वारा खाए गए मक्खन का पाचन और उसका शरीर में अवशोषण कैसे होता है? विस्तार से वर्णन करें।
12. आहार नाल के विभिन्न भागों में प्रोटीन के पाचन के मुख्य चरणों का विस्तार से वर्णन करें।
13. 'गर्तदंती' (thocodont) और 'द्विबारदंती' (diphyodont) शब्दों की व्याख्या करें।
14. विभिन्न प्रकार के दाँतों का नाम और एक वयस्क मनुष्य में दाँतों की संख्या बताएं।
15. यकृत के क्या कार्य हैं ?

अध्याय 17

श्वसन और गैसों का विनिमय

जैसाकि आप पहले पढ़ चुके हैं, सजीव पोषक तत्वों जैसे- ग्लूकोज को तोड़ने के लिए ऑक्सीजन (O_2) का परोक्ष रूप से उपयोग करते हैं, जिससे विभिन्न क्रियाओं को संपादित करने के लिए आवश्यक ऊर्जा प्राप्त होती है उपरोक्त अपचयी क्रियायों में कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) भी मुक्त होती है जो हानिकारक है। इसलिए यह आवश्यक है कि कोशिकाओं को लगातार O_2 उपलब्ध कराई जाए और CO_2 को बाहर मुक्त किया जाए। वायुमंडलीय O_2 और कोशिकाओं में उत्पन्न CO_2 के आदान-प्रदान (विनिमय)की इस प्रक्रिया को **श्वासन** (Breathing) समान्यतया **श्वसन** (Respiration) कहते हैं। अपने हाथों को अपने सीने पर रखिए, आप सीने को ऊपर नीचे होते हुए अनुभव कर सकते हैं। आप जानते हैं कि यह श्वसन के कारण है। हम श्वास कैसे लेते हैं? इस अध्याय के निम्नलिखित खंडों में श्वसन अंगों और श्वसन की क्रियाविधि का वर्णन किया गया है।

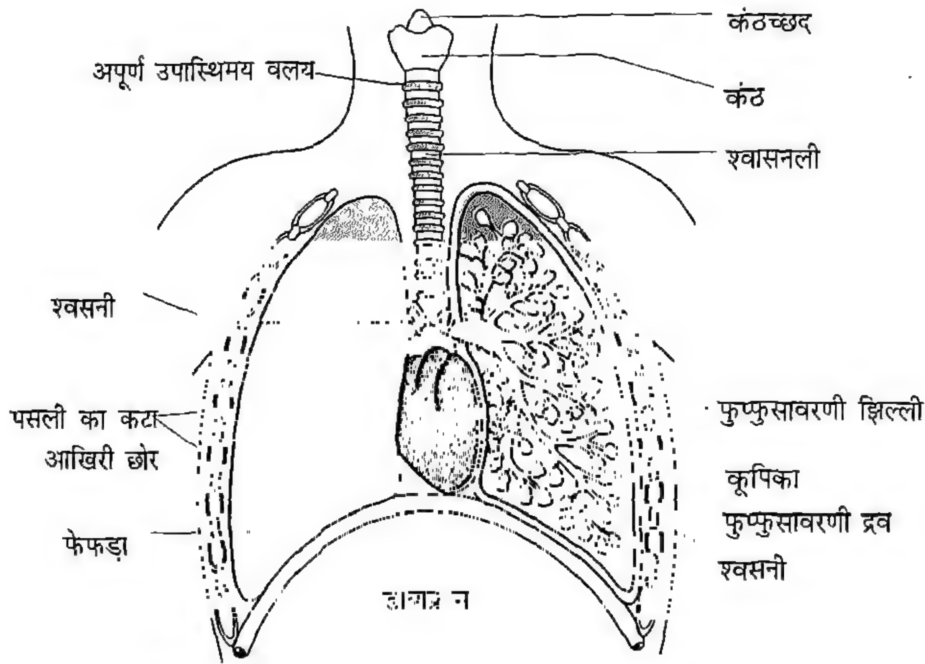
17.1 श्वसन के अंग

प्राणियों के विभिन्न वर्गों के बीच श्वसन की क्रियाविधि उनके निवास और संगठन के अनुसार बदलती है। निम्न अकशेरुकी जैसे स्पंज, सीलंटेरेटा चपटेकृमि आदि O_2 और CO_2 का आदान-प्रदान अपने सारे शरीर की सतह से सरल विसरण द्वारा करते हैं। केंचुए अपनी आर्द्र क्यूटिकल को श्वसन के लिए उपयोग करते हैं। कीटों के शरीर में नलिकाओं का एक जाल (श्वसन नलिकाएं) होता है; जिनसे वातावरण की वायु का उनके शरीर

में विभिन्न स्थान पर पहुँचती है; ताकि कोशिकाएं सीधे गैसों का आदान-प्रदान कर सकें। जलीय आर्थोपोडा तथा मौलस्का में श्वसन विशेष संवहनीय संरचना **क्लोम** (गिल) द्वारा होता है, जबकि स्थलचर प्राणियों में श्वसन विशेष संवहनीय थैली फुप्फुस/**फेफड़े** द्वारा होता है। कशेरुकों में मछलियाँ क्लोम (गिल) द्वारा श्वसन करती हैं जबकि सरीसृप,पक्षी और स्तनधारी फेफड़ों द्वारा श्वसन करते हैं। उभयचर जैसे मेंढक अपनी आर्द्र त्वचा (नम त्वचा) द्वारा भी श्वसन कर सकते हैं। स्तनधारियों में एक पूर्ण विकसित श्वसन प्रणाली होती है।

17.1.1 मानव श्वसन तंत्र

हमारे एक जोड़ी बाह्य नासाद्वार होते हैं, जो होठों के ऊपर बाहर की तरफ खुलते हैं। ये नासा मार्ग द्वारा नासा कक्ष तक पहुँचते हैं। नासा कक्ष ग्रसनी के एक भाग, **नासा ग्रसनी** में खुलते हैं। ग्रसनी आहार और वायु दोनों के लिए उभयनिष्ठ मार्ग है। नासा ग्रसनी कंठक्षेत्र स्थित घाँटी द्वारा **श्वासनली** में खुलती है। कंठ एक उपास्थिमय पेटिका है जो ध्वनि उत्पादन में सहायता करती है इसीलिए इसे **ध्वनि पेटिका** भी कहा जाता है। भोजन निगलते समय घाँटी एक पतली लोचदार उपास्थिल पल्ले/फ्लैप **कंठच्छद**(epiglottis) से ढक जाती है, जिससे आहार ग्रसनी से कंठ में प्रवेश न कर सके। श्वासनली एक सीधी नलिका है जो वक्ष गुहा के मध्य तक 5वीं वक्षीय कशेरुकी तक, जाकर दाईं और बाईं दो प्राथमिक **श्वसनियों** में विभाजित हो जाती है। प्रत्येक श्वसनी कई बार विभाजित होते हुए द्वितीयक एवं तृतीयक स्तर की श्वसनी, श्वसनिका और बहुत पतली अंतस्थ श्वसनिकाओं में समाप्त होती हैं। श्वासनली, प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक श्वसनी तथा प्रारंभिक श्वसनिकाएं अपूर्ण उपास्थिल वलयों से आलंबित होती हैं। प्रत्येक अंतस्थ श्वसनिका बहुत सारी पतली अनियमित भित्ति युक्त वाहिकायित थैली जैसी संरचना कूपिकाओं में खुलती है, जिसे **वायु कूपिका** कहते हैं। श्वसनी, श्वसनिकाओं और कूपिकाओं का शाखित जाल फेफड़ों (lungs) की रचना करते हैं (चित्र 17.1)। हमारे दो फेफड़े हैं जो एक द्विस्तरीय फुप्फुसावरण (pleura) से ढके रहते हैं और जिनके बीच फुप्फुसावरणी द्रव भरा होता है। यह फेफड़े की सतह पर घर्षण कम करता है। बाहरी फुप्फुसावरणी झिल्ली वक्षीय पर्त के निकट संपर्क में रहती है; जबकि आंतरिक फुप्फुसावरणी झिल्ली फेफड़े की सतह के संपर्क में होती है। बाह्य नासारंध्र से अंतस्थ श्वसनिकाओं तक का भाग चालन भाग; जबकि कूपिकाएं एवं उनकी नलिकाएं श्वसन तंत्र का श्वसन या विनिमय भाग गठित करती हैं। चालन भाग वायुमंडलीय वायु को कूपिकाओं तक संचारित करता है, इसे बाहरी कणों से मुक्त करता है, आर्द्र करता है तथा वायु को शरीर के तापक्रम तक लाता है। विनिमय भाग (आदान-प्रदान इकाई) रक्त एवं वायुमंडलीय वायु के बीच O_2 और CO_2 का वास्तविक विसरण स्थल है। फेफड़े वक्ष-गुहा में स्थित होते हैं जो शारीरतः एक वायुरोधी कक्ष है। वक्ष-गुहा कक्ष पृष्ठ भाग में कशेरुक दंड, अधर भाग में उरोस्थि, पार्श्व में पसलियों और नीचे से गुंबदाकर डायाफ्राम (diaphragm) द्वारा बनता है। वक्ष में फेफड़ों की शारीरिक व्यवस्था ऐसी होती है कि वक्ष गुहा के आयतन में कोई भी परिवर्तन फेफड़े (फुप्फुसी) की गुहा में प्रतिबिंबित हो जाएगा। श्वसन के लिए ऐसी व्यवस्था आवश्यक है, क्योंकि हम लोग सीधे फेफड़ों का आयतन नहीं बदल सकते।



चित्र 17.1 मानव श्वसन तंत्र का आरेखीय दृश्य (साथ ही बाएं फेफड़े का अनुप्रस्थ काट दिखाया गया है)

श्वसन में निम्नलिखित चरण सम्मिलित हैं:

(i) श्वसन या फुप्फुसी संवातन जिससे वायुमंडलीय वायु अंदर खींची जाती है और CO_2 से भरपूर कूपिका की वायु को बाहर मुक्त किया जाता है।

(ii) कूपिका झिल्ली के आर-पार गैसों (O_2 और CO_2) का विसरण।

(iii) रुधिर द्वारा गैसों का परिवहन (अभिगमन)

(iv) रुधिर और ऊतकों के बीच O_2 और CO_2 का विसरण।

(v) अपचयी क्रियायों के लिए कोशिकाओं द्वारा O_2 का उपयोग और उसके फलस्वरूप CO_2 का उत्पन्न होना (कोशिकीय श्वसन,जैसे कि अध्याय 14-श्वसन में बताया गया है)।

17.2 श्वासन की क्रियाविधि

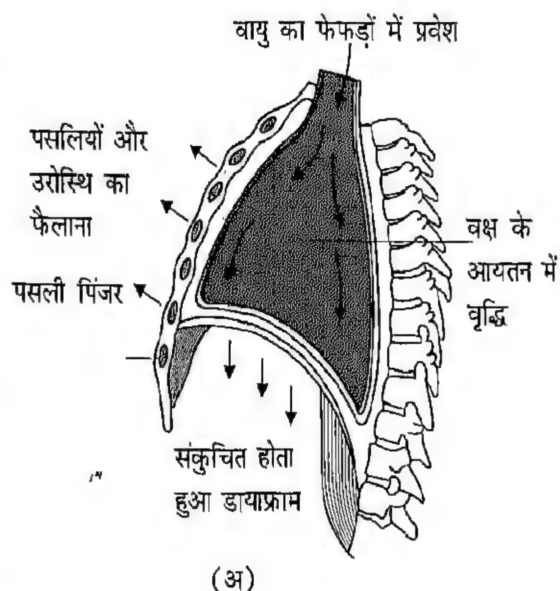
श्वासन में दो चरण सम्मिलित हैः **अंतःश्वसन** (श्वासन) जिसके दौरान वायुमंडलीय वायु को अंदर खीचा जाता है और **निःश्वसन** जिसके द्वारा फुफ्फुसी वायु को बाहर मुक्त किया जाता है। वायु को फेफड़ों के अंदर ले जाने के लिए फेफड़ों एवं वायुमंडल के बीच दाब प्रवणता निर्मित की जाती है।

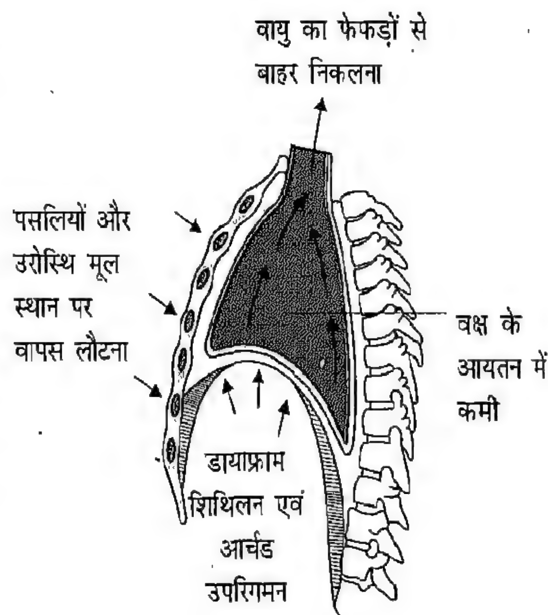
अंतःश्वसन तभी हो सकता है जब वायुमंडलीय दाब से फेफड़ों की वायु का दाब (आंतर फुप्फुसी दाब) कम हो अर्थात् फेफड़ों का दाब वायुमंडलीय दाब के सापेक्ष कम होता है। इस तरह निःश्वसन तब होता है, जब आंतर फुप्फुसी दाब वायुमंडलीय दाब से

अधिक होता है। डायाफ्राम और एक विशिष्ट पेशी समूह (पसलियों के बीच स्थित बाह्य एवं अंत: अंतरापर्शुक /इंटरकोस्टल) इस तरह की प्रवणताएं उत्पन्न करते हैं। अंत:श्वसन डायाफ्राम के संकुचन से प्रारंभ होता है जो अग्र पश्च अक्ष (antero posterior axis) में वक्ष गुहा का आयतन बढ़ा देता है। बाह्य अंतरापर्शुक पेशियों का संकुचन पसलियों और उरोस्थि को ऊपर उठा देता है, जिससे पृष्ठधार अक्ष (dorso ventral axis) में वक्ष-गुहा कक्ष का आयतन बढ़ जाता है। वक्ष गुहा के आयतन में किसी प्रकार से भी हुई वृद्धि के कारण फुप्फुस के आयतन में भी समान वृद्धि होती है। यह समान तरह की वृद्धि फुप्फुसी दाब को वायुमंडलीय दाब से कम कर देती है, जिससे बाहर की वायु बलपूर्वक फेफड़ों के अंदर आ जाती है अर्थात् अंत:श्वसन की क्रिया होती है (चित्र-17.2अ)। डायाफ्राम और अंतरापर्शुक पेशियों का शिथिलन (relaxation) डायाफ्रम और उरोस्थि को उनके सामान्य स्थान पर वापस कर देता है और वृक्षीय आयतन को घटाता है जिससे फुप्फुसी आयतन भी घट जाता है। इसके परिणामस्वरूप अंतर फुप्फुसी दाब वायुमंडलीय दाब से थोड़ा अधिक हो जाता है, जिससे फेफड़ों की हवा बाहर निकल जाती है अर्थात् नि:श्वसन हो जाता है (चित्र 17.2 ब)। हम अपनी अतिरिक्त उदरीय पेशियों की सहायता से अंत:श्वसन और नि:श्वसन की क्षमता को बढ़ा सकते हैं। औसतन एक स्वस्थ मनुष्य प्रति मिनट 12-16 बार श्वसन करता है। श्वसन गतिविधियों में सम्मिलित वायु के आयतन का आकलन स्पाइरोमीटर की सहायता से किया जा सकता है जो फुप्फुसी कार्यकलापों का नैदानिक मूल्यांकन करने में सहायक होता है।

17.2.1 श्वसन संबंधी आयतन और क्षमताएं

ज्वारीय आयतन (Tidal Volume/ TV): सामान्य श्वसन क्रिया के समय प्रति श्वास अंत: श्वासित या नि:श्वासित वायु का आयतन यह लगभग 500 मिली. होता है अर्थात् स्वस्थ मनुष्य लगभग 6000 से 8000 मिली. वायु प्रति मिनट की दर से अंत: श्वासित/नि:श्वासित कर सकता है।





चित्र 17.2 (अ) अंत: श्वसन (ब) नि:श्वसन दर्शाते हुए श्वसन की क्रियाविधि

अंतःश्वसन सुरक्षित आयतन (Inspiratory Reserve Volume IRV): वायु आयतन की वह अतिरिक्त मात्रा जो एक व्यक्ति बलपूर्वक अंतः श्वासित कर सकता है। यह औसतन 2500 मिली. से 3000 मिली. होता है।

निःश्वसन सुरक्षित आयतन (Expiratory reserve volume, ERV): वायु आयतन की वह अतिरिक्त मात्रा जो एक व्यक्ति बलपूर्वक निःश्वासित कर सकता है। औसतन यह 1000 मिली. से 1100 मिली. होती है।

अवशिष्ट आयतन (Residual Volume RV): वायु का वह आयतन जो बलपूर्वक निःश्वसन के बाद भी फेफड़ों में शेष रह जाता है। इसका औसत 1100 मिली. से 1200 मिली. होता है।

ऊपर वर्णित कुछ श्वसन संबंधी आयतनों को जोड़कर फुप्फुसी क्षमताएं (फुप्फुसी धारिताएं) निकाली जा सकती हैं जिनका नैदानिक उद्देश्यों में उपयोग किया जा सकता है।

अंतःश्वसन क्षमता (Inspiratory Capacity, IC): सामान्य निःश्वसन उपरांत वायु की कुल मात्रा (आयतन)जो एक व्यक्ति अंतःश्वासित कर सकता है। इसमें ज्वारीय आयतन तथा अंतःश्वसन सुरक्षित आयतन सम्मिलित है (TV+IRV)।

निःश्वसन क्षमता (Expiratory Capacity, EC): सामान्य अंतःश्वसन उपरांत वायु की कुल मात्रा (आयतन) जिसे एक व्यक्ति निःश्वासित कर सकता है। इसमें ज्वारीय आयतन और निःश्वसन सुरक्षित आयतन सम्मिलित होते हैं (TV+ERV)।

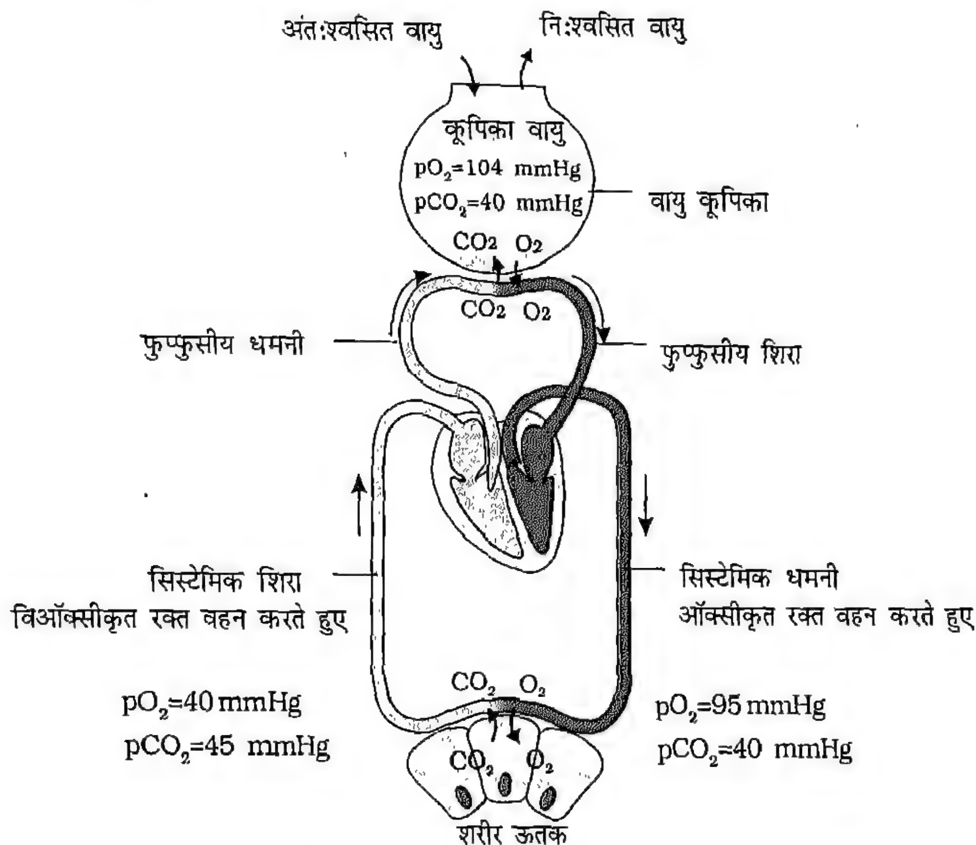
क्रियाशील अवशिष्ट क्षमता (Functional Residual Capacity, FRC): सामान्य निःश्वसन उपरांत वायु की वह मात्रा (आयतन)जो फेफड़ों में शेष रह जाती है। इसमें निःश्वसन सुरक्षित आयतन और अवशिष्ट आयतन सम्मिलित होते हैं (ERV+RV)।

जैव क्षमता (Vital Capacity, VC): बलपूर्वक निःश्वसन के बाद वायु की वह अधिकतम मात्रा (आयतन)जो एक व्यक्ति अंतःश्वासित कर सकता है। इसमें ERV, TV और IRV सम्मिलित है अथवा वायु की वह अधिकतम मात्रा जो एक व्यक्ति बलपूर्वक अंतःश्वसन के बाद निःश्वासित कर सकता है।

फेफड़ों की कुल क्षमता (Total Lung Capacity): बलपूर्वक निःश्वसन के पश्चात फेफड़ों में समायोजित (उपस्थित) वायु की कुल मात्रा । इसमें RV,ERV,TV और IRV सम्मिलित है। यानि जैव क्षमता + अवशिष्ट क्षमता (VC+RV)।

17.3 गैसों का विनिमय

कुपिकाएं गैसों के विनिमय के लिए प्राथमिक स्थल होती हैं। गैसों का विनिमय रक्त और ऊतकों के बीच भी होता है। इन स्थलों पर O_2 और CO_2 का विनिमय दाब अथवा सांद्रता प्रवणता के आधार पर सरल विसरण द्वारा होता है। गैसों की घुलनशीलता के साथ-साथ विसरण में सम्मिलित झिल्लियों की मोटाई भी विसरण की दर को प्रभावित करने वाले कुछ महत्वपूर्ण घटक हैं।

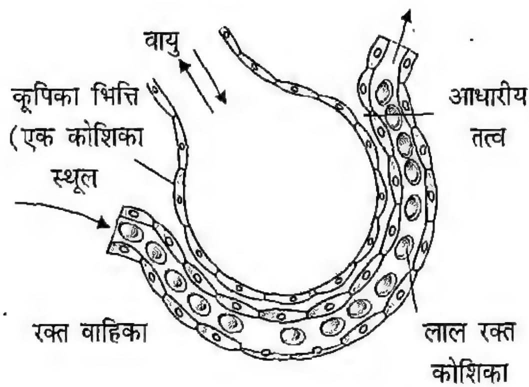


चित्र 17.3 वायु कूपिका एवं शरीर ऊतकों के बीच गैसों का विनिमय जो ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड का रक्त के साथ वहन का आरेखीय चित्र

गैसों के मिश्रण में किसी विशेष गैस की दाब में भागीदारी को आंशिक दाब कहते हैं और उसे ऑक्सीजन तथा कार्बनडाइऑक्साइड के लिए क्रमश: pO_2 तथा pCO_2 द्वारा दर्शाते हैं। वायुमंडलीय वायु और दोनों विसरण स्थलों में इन दो गैसों के आंशिक दाब तालिका 17.1 और चित्र 17.3 में दर्शाए गए है। सारणी में दिए गए आँकड़ें स्पष्ट रूप से कूपिकाओं से रक्त और रक्त से ऊतकों में ऑक्सीजन के लिए सांद्रता प्रवणता का संकेत देते हैं। इसी प्रकार CO_2 के लिए विपरीत दिशा में प्रवणता दर्शाई गई है, अर्थात् ऊतकों से रक्त और रक्त से कूपिकाओं की तरफ। चूँकि CO_2की घुनलशीलता O_2की

तालिका 17.1 वातावरण की तुलना में विसरण में सम्मिलित विभिन्न भागों पर ऑक्सीजन एवं कार्बनडाइऑक्साइड का आंशिक दबाव

श्वसन	वातावरणीय वायु	वायु कूपिका	अनॉक्सीकृत रक्त	ऑक्सीकृत रक्त	ऊतक
O_2	159	104	40	95	40
CO_2	0.3	40	45	40	45

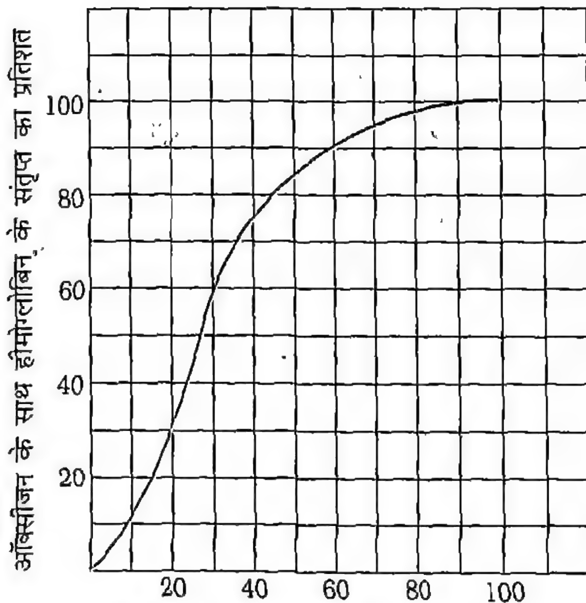


चित्र 17.4 एक फुप्फुसीय वाहिका की एक वायुकूपिका का अनुप्रस्थ काट

घुलनशीलता से 20-25 गुना अधिक होती है, अंत:विसरण झिल्लिका में से प्रति इकाई आंशिक दाब के अंतर की विसरित होने वाली CO_2 मात्रा O_2 की तुलना में बहुत अधिक होती है। विसरण झिल्लिका मुख्य रूप से तीन स्तरों की बनी होती है, (चित्र 17.4), यथा कूपिका की पतली शल्की उपकला (शल्की एपिथिलियम), कूपिकाओं की कोशिकाओं की अंत:कला और उनके बीच स्थित आधारी तत्व । फिर भी, इनकी कुल मोटाई एक मिलीमीटर से बहुत कम होती है। इसलिए हमारे शरीर में सभी कारक O_2 के कूपिकाओं से ऊतकों और CO_2 के ऊतकों से कूपिकाओं में विसरण के लिए अनुकूल होते हैं।

17.4 गैसों का परिवहन (Transport of Gases)

O_2 और CO_2 के परिवहन का माध्यम रक्त होता है। लगभग 97 प्रतिशत O_2 का परिवहन रक्त में लाल रक्त कणिकाओं द्वारा होता है। शेष 3 प्रतिशत O_2 का प्लाजमा द्वारा घुल्य अवस्था में होता हैं। लगभग 20-25 प्रतिशत CO_2 का परिवहन लाल रक्त कणिकाओं द्वारा है, जबकि 70 प्रतिशत का बाईकार्बोनेट के रूप में अभिगमित होती है। लगभग 7 प्रतिशत CO_2 प्लाजमा द्वारा घुल्य अवस्था होता हैं।



चित्र 17.5 ऑक्सीजन वियोजन वक्र

17.4.1 ऑक्सीजन का परिवहन (Transport of Oxygen)

हीमोग्लोबिन लाल रक्त कणिकाओं में स्थित एक लाल रंग का लौहयुक्त वर्णक है। हीमोग्लोबिन के साथ उत्क्रमणीय (Rerersible) ढंग से बंधकर ऑक्सीजन **ऑक्सी-हीमोग्लोबिन** का गठन कर सकता है। प्रत्येक हीमोग्लोबिन अणु अधिकतम चार O_2 अणुओं के वहन कर सकते हैं। हीमोग्लोबिन के साथ ऑक्सीजन का बंधना प्राथमिक तौर पर O_2 के आंशिक दाब से संबंधित है। CO_2 का आंशिक दाब हाइड्रोजन आयन सांद्रता और तापक्रम कुछ अन्य कारक हैं जो इस बंधन को बाधित कर सकते हैं। हीमोग्लोबिन की ऑक्सीजन से प्रतिशत संतृप्ति को pO_2 के सापेक्ष आलेखित करने पर सिग्माभ वक्र (Sigmoid Curve) प्राप्त होता है। इस वक्र को *वियोजन वक्र (Dissociation Curve)* कहते हैं जो हीमोग्लोबिन से O_2 बंधन को प्रभावित करने वाले pCO_2, H^+ आयन सांद्रता, आदि घटकों के अध्ययन में अत्यधिक सहायक होता है (चित्र 17.5)। कूपिकाओं में जहाँ उच्च pO_2, निम्न pCO_2, कम H^+ सांद्रता और

निम्न तापक्रम होता है, वहाँ ऑक्सीहीमोग्लोबिन बनाने के लिए ये सभी घटक अनुकूल साबित होते हैं जबकि ऊतकों में निम्न pO_2, उच्च pCO_2, उच्च H^+ सांद्रता और उच्च तापक्रम की स्थितियाँ ऑक्सीहीमोग्लोबिन से ऑक्सीजन के वियोजन के लिए अनुकूल होती हैं। इससे स्पष्ट है कि O_2 हीमोग्लोबिन से फेफड़ों की सतह पर बँधता है और ऊतकों में वियोजित हो जाती है। प्रत्येक 100 मिली. ऑक्सीजनित रक्त सामान्य शरीर क्रियात्मक स्थितियों में ऊतकों को लगभग 5 मिली. O_2 प्रदान करता है।

17.4.2 कार्बनडाइऑक्साइड का परिवहन

कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) हीमोग्लोबिन द्वारा **कार्बामीनो-हीमोग्लोबिन** (लगभग 20-25 प्रतिशत) के रूप में वहन की जाती है। यह बंधनीयता (बंधन) CO_2 के आंशिक दाब से संबंधित होती है। pO_2 इस बंधन को प्रभावित करने वाला एक मुख्य कारक है ऊतकों में उच्च pCO_2 और निम्न pO_2 की अवस्था होने से हीमोग्लोबिन से CO_2 का बंधन होता है; जबकि कूपिका में, जहाँ pCO_2 निम्न और pO_2 उच्च होता है, कार्बामीनो-हीमोग्लोबिन से CO_2 का वियोजन होने लगता है अर्थात् ऊतकों में हीमोग्लोबिन से बंधित CO_2 कूपिका में मुक्त हो जाती है। एंजाइम कार्बोनिक एन्हाइड्रेज की सांद्रता लाल रक्त कणिकाओं में उच्च और प्लाज्मा में अल्प होती है। इस एंजाइम से निम्नलिखित प्रतिक्रिया दोनों दिशाओं में सुगम होती है।



ऊतकों में अपचय के कारण pCO_2 अधिक होने से CO_2 रक्त (RBCsऔर प्लाज्मा) में विसरित होती है और HCO_3 और H^+ बनाती है। कूपिका में pCO_2 कम होने से प्रतिक्रिया की दिशा विपरीत हो जाती है जिससे CO_2 और H_2O बनते हैं। इस तरह बाईकार्बोनेट के रूप में ऊतक स्तर पर ग्रहित (Trapped) और कूपिका तक परिवहित कार्बनडाइऑक्साइड बाहर की तरफ पुनः CO_2 के रूप में मुक्त हो जाती है (चित्र 17.4)। प्रति 100 मिलीलीटर विऑक्सीजनित रक्त द्वारा कूपिका में लगभग CO_2 की 4 मिली. मात्रा मुक्त होती है।

17.5 श्वसन का नियमन (Regulation of Respiration)

मानव में अपने शरीर के ऊतकों की माँग के अनुरूप श्वसन की लय को संतुलित और स्थिर बनाए रखने की एक महत्वपूर्ण क्षमता है। यह नियमन तंत्रिका तंत्र द्वारा संपन्न होता है। मस्तिष्क के मेड्यूला क्षेत्र में एक विशिष्ट श्वसन लयकेंद्र विद्यमान होता है, जो मुख्य रूप से श्वसन के नियमन के लिए उत्तरदायी होता है। मस्तिष्क के पोंस क्षेत्र में एक अन्य केंद्र स्थित होता है जिसे **श्वासप्रभावी** (श्वास अनुचन) (Pneumotaxic) केंद्र कहते हैं जो श्वसन लयकेंद्र के कार्यों को संयत (सुधार) कर सकता है। इस केंद्र के तंत्रिका संकेत अंतःश्वसन की अवधि को कम कर सकते हैं और इस प्रकार श्वसन दर (Respiratory rate) को परिवर्तित कर सकते हैं। लयकेंद्र के पास एक रसोसंवेदी (Chemosensitive) केंद्र लयकेंद्र के लिए अति संवेदी होता है, जो CO_2 और

हाइड्रोजन आयनों के लिए अति संवेदी होता है। इन पदार्थो की वृद्धि से यह केंद्र सक्रिय होकर श्वसन प्रक्रिया में आवश्यक समायोजन करता है, जिससे ये पदार्थ निष्कासित किए जा सकें। महाधमनी चाप (Aortic arch) और ग्रीवा धमनी (Carotid artery) से जुड़ी संवेदी संरचनाएं भी CO_2 और H^+ सांद्रता के परिवर्तन को पहचान सकते हैं तथा उपचारात्मक कार्यवाही हेतु लयकेंद्र को आवश्यक संकेत दे सकते हैं। श्वसन लय के नियमन में ऑक्सीजन की भूमिका बहुत ही महत्वहीन है।

17.6 श्वसन के विकार (Respiratory disorders)

दमा (Asthma) में श्वसनी और श्वसनिकाओं की शोथ के कारण श्वासन के समय घरघरहाट होती है तथा श्वास लेने में कठिनाई होती है।

श्वसनी शोथ (Bronchitis) : यह श्वसनी की शोथ है जिसके विशेष लक्षण श्वसनी में सूजन तथा जलन होना है जिससे लगातार खाँसी होती है।

वातस्फीति या एम्फाइसिमा(Emphysema) : एक चिरकालिक रोग है जिसमें कूपिका भित्ति क्षतिग्रस्त हो जाती है जिससे गैस विनिमय सतह घट जाती है। धूम्रपान इसके मुख्य कारकों में एक है।

व्यावसायिक श्वसन रोग (Occupational Respiratory Disease) : कुछ उद्योगों में विशेषकर जहाँ पत्थर की घिसाई - पिसाई या तोड़ने का कार्य होता है, वहाँ इतने धूल कण निकलते हैं कि शरीर की सुरक्षा प्रणाली उन्हें पूरी तरह निष्प्रभावी नहीं कर पाती। दीर्घकालीन प्रभावन शोथ उत्पन्न कर सकता है जिनसे रेशामयता (रेशीय ऊतकों की प्रचुरता) होती है, जिसके फलस्वरूप फेफड़ों को गंभीर नुकसान हो सकता है। इन उद्योगों के श्रमिकों को मुखावरण का प्रयोग करना चाहिए।

सारांश

कोशिकाएं अपापचयी क्रियाओं के लिए ऑक्सीजन का उपयोग करती हैं तथा ऊर्जा के साथ कार्बनडाइऑक्साइड जैसे हानिकारक पदार्थ भी उत्पन्न करती हैं। प्राणियों में कोशिकाओं तक ऑक्सीजन एवं वहाँ से कार्बनडाइऑक्साइड को भी बाहर करने के लिए कई तरह की क्रियाविधि विकसित हैं और जिनमें हमारे पास इस क्रिया के लिए एक पूर्ण विकसित श्वसन तंत्र है जिसके अंतर्गत दो फेफड़े और इनसे जुड़े वायु मार्ग है।

श्वसन का पहला चरण श्वासन है जिसमें वायुमंडलीय वायु कूपिकाओं में ली जाती है (अंतःश्वसन)और कूपिकाओं से वायु को बाहर निकाला जाता है (निःश्वसन)। ऑक्सीजनित रहित रक्त और कूपिका के बीच O_2 और CO_2 का विनिमय, इन गैसों का रक्त द्वारा पूरे शरीर में परिवहन ऑक्सीजन युक्त रक्त और ऊतकों के बीच O_2 और CO_2 का विनिमय और कोशिकाओं द्वारा ऑक्सीजन का उपयोग (कोशिकीय श्वसन) अन्य सम्मिलित चरण हैं। अंतःश्वसन और निःश्वसन के लिए वायुमंडल और कूपिका के बीच विशिष्ट अंतरापर्शक पेशियों, (इंटरकोस्टल) और डायाफ्राम की सहायता से दाब प्रवणता पैदा की जाती है। इन क्रियाओं में सम्मिलित वायु के विभिन्न आयतन को स्पाइरोमीटर की सहायता से मापा जा सकता है जिनका चिकित्सीय व नैदानिक महत्व है। कूपिका एवं ऊतकों में CO_2 और O_2 का विनिमय विसरण द्वारा होता है। विसरण दर O_2 (pO_2) और CO_2 (pCO_2) के आंशिक दाब प्रवणता उनकी घुलनशीलता और विसरण सतह की मोटाई पर निर्भर है। ये कारक हमारे शरीर में कूपिका से ऑक्सीजन का विऑक्सीजनित रक्त में तथा रक्त से ऊतकों में

विसरण सुगम बनाते हैं। ये कारक CO_2 के अर्थात् ऊतकों से कूपिका में विसरण के लिए भी अनुकूल होते हैं।

ऑक्सीजन का मुख्य रूप से ऑक्सीहीमोग्लोबिन के रूप में परिवहन होता है कूपिका में जहाँ pO_2 अधिक रहता है। ऑक्सीजन हीमोग्लोबिन से युग्मित हो जाती है तथा ऊतकों में जहाँ pO_2 कम, pO_2 एवं H^+ की सांद्रता अधिक होती है सरलता से वियोजित हो जाती है। लगभग 70 प्रतिशत कार्बनडाइऑक्साइड का परिवहन कार्बोनिक एनहाइड्रेज एंजाइम की सहायता से बाइकार्बोनेट (HCO_3^-) के रूप में होता है। 20-25 प्रतिशत कार्बनडाइऑक्साइड हीमोग्लोबिन द्वारा कार्बामीनो हीमोग्लोबिन के रूप में वहन की जाती है। ऊतकों में जहाँ pCO_2 उच्च और pO_2 निम्न होता है, वहाँ यह रक्त से युग्मित होता है; जबकि कूपिका में जहाँ pCO_2 निम्न और pO_2 उच्च रहता है यह रक्त से निष्कासित हो जाती है।

श्वसन लय मस्तिष्क के मेड्यूला क्षेत्र स्थित श्वसन केंद्र द्वारा बनाए रखी जाती है। मस्तिष्क के पोंस क्षेत्र स्थित श्वास अनुचन श्वास प्रभावी (न्यूमोटैक्सिक) केंद्र तथा एक रसो संवेदी क्षेत्र श्वसन क्रियाविधि को परिवर्तित कर सकते हैं।

अभ्यास

1. जैव क्षमता की परिभाषा दें और इसका महत्व बताएं?
2. सामान्य निःश्वसन के उपरांत फेफड़ों में शेष वायु के आयतन को बताएं।
3. गैसों का विसरण केवल कूपकीय क्षेत्र में होता है, श्वसन तंत्र के किसी अन्य भाग में नही। क्यों?
4. CO_2 के परिवहन (ट्रांसपोर्ट) की मुख्य क्रियाविधि क्या है; व्याख्या करें?
5. कूपिका वायु की तुलना में वायुमंडलीय वायु में pO_2 तथा pCO_2 कितनी होगी, मिलान करें?
   (i) pO_2 न्यून, pCO_2 उच्च (ii) pO_2 उच्च, pCO_2 न्यून
   (iii) pO_2 उच्च, pCO_2 उच्च (iv) pO_2 न्यून, pCO_2 न्यून
6. सामान्य स्थिति में अंतःश्वसन प्रक्रिया की व्याख्या करें?
7. श्वसन का नियमन कैसे होता है?
8. pCO_2 का ऑक्सीजन के परिवहन में क्या प्रभाव है?
9. पहाड़ पर चढ़ने वाले व्यक्ति की श्वसन प्रक्रिया में क्या प्रभाव पड़ता है?
10. कीटों में श्वसन क्रियाविधि कैसी होती है?
11. ऑक्सीजन वियोजन वक्र की परिभाषा दें, क्या आप इसकी सिग्माभ आकृति का कोई कारण बता सकते हैं?
12. क्या आप ने अवकॉसीयता (हाइपोक्सिया) (न्यून ऑक्सीजन) के बारे में सुना है? इस संबंध में जानकारी प्राप्त करने की कोशिश करें व साथियों के बीच चर्चा करें।
13. निम्न के बीच अंतर करें:
    (क) I R V (आई आर वी) ERV (इ आर वी)
    (ख) अंतः श्वसन क्षमता (IC) और निःश्वसन क्षमता
    (ग) जैव क्षमता तथा फेफड़ों की कुल धारिता
14. ज्वारीय आयतन क्या है? एक स्वस्थ मनुष्य के लिए एक घंटे के ज्वारीय आयतन (लगभग मात्रा) को आंकलित करें?

अध्याय 18

शरीर द्रव तथा परिसंचरण

18.1 *रुधिर*
18.2 *लसीका (ऊतक द्रव्य)*
18.3 *परिसंचरण पथ*
18.4 *द्विपरिसंचरण*
18.5 *हृद क्रिया का नियंत्रण*
18.6 *परिसंचरण से संबंधित रोग*

अब तक आप यह सीख चुके हैं कि जीवित कोशिकाओं को ऑक्सीजन पोषण अन्य आवश्यक पदार्थ उपलब्ध होने चाहिए। ऊतकों के सुचारु कार्य हेतु अपशिष्ट या हानिकारक पदार्थ जैसे कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) का लगातार निष्कासन आवश्यक है। अतः इन पदार्थों के कोशिकाओं तक से चलन हेतु एक प्रभावी क्रियाविधि का होना आवश्यक था। विभिन्न प्राणियों में इस हेतु अभिगमन के विभिन्न तरीके विकसित हुए हैं। सरल प्राणी जैसे स्पंज व सिलेंट्रेट बाहर से अपने शरीर में पानी का संचरण शारीरिक गुहाओं में करते हैं, जिससे कोशिकाओं के द्वारा इन पदार्थों का आदान-प्रदान सरलता से हो सके। जटिल प्राणी इन पदार्थों के परिवहन के लिए विशेष तरल का उपयोग करते हैं। मनुष्य सहित उच्च प्राणियों में **रक्त** इस उद्देश्य में काम आने वाला सर्वाधिक सामान्य तरल है। एक अन्य शरीर द्रव **लसीका** भी कुछ विशिष्ट तत्वों के परिवहन में सहायता करता है। इस अध्याय में आप रुधिर एवं लसीका (ऊतक द्रव्य) के संघटन एवं गुणों के बारे में पढ़ेंगे। इसमें रुधिर के परिसंचरण को भी समझाया गया है।

18.1 रुधिर

रक्त एक विशेष प्रकार का ऊतक है, जिसमें द्रव्य आधात्री (मैट्रिक्स) प्लाज्मा (प्लैज्मा) तथा अन्य संगठित संरचनाएं पाई जाती हैं।

18.1.1 प्लाज्मा (प्लैज्मा)

प्रद्रव्य एक हल्के पीले रंग का गाढ़ा तरल पदार्थ है, जो रक्त के आयतन लगभग 55 प्रतिशत होता है। प्रद्रव्य में 90-92 प्रतिशत जल तथा 6-8 प्रतिशत प्रोटीन पदार्थ होते हैं। फाइब्रिनोजन, ग्लोबुलिन तथा एल्बूमिन प्लाज्मा में उपस्थित मुख्य प्रोटीन हैं। फाइब्रिनोजेन की आवश्यकता रक्त थक्का बनाने या स्कंदन में होती है। ग्लोबुलिन का उपयोग शरीर

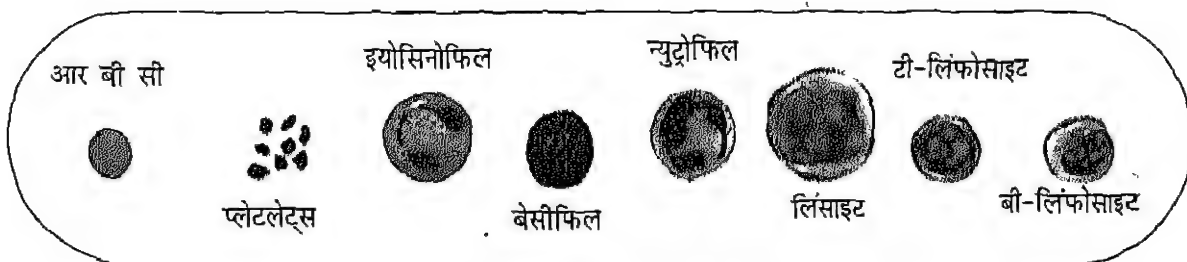
के प्रतिरक्षा तंत्र तथा एल्बूमिन का उपयोग परासरणी संतुलन के लिए होता है। प्लाज्मा में अनेक खनिज आयन जैसे Na^{+}, Ca^{++}, Mg^{++}, HCO_3, Cl^{-} इत्यादि भी पाए जाते हैं। शरीर में संक्रमण की अवस्था में होने के कारण ग्लूकोज, अमीनो अम्ल तथा लिपिड भी प्लाज्मा में पाए जाते हैं। रुधिर का थक्का बनाने अथवा स्कंदन के अनेक कारक प्रद्रव्य के साथ निष्क्रिय दशा में रहते हैं। *बिना थक्का /स्कंदन कारकों के प्लाज्मा को सीरम* कहते हैं।

18.1.2 संगठित पदार्थ

लाल रुधिर कणिका (इरिथ्रोसाइट),श्वेताणु (ल्युकोसाइट) तथा पट्टिकाणु (प्लेटलेट्स) को संयुक्त रूप से संगठित पदार्थ कहते हैं (चित्र 18.1) और ये रक्त के लगभग 45 प्रतिशत भाग बनाते हैं।

इरिथ्रोसाइट (रक्ताणु) या लाल रुधिर कणिकाएं अन्य सभी कोशिकाओं से संख्या में अधिक होती है। एक स्वस्थ मनुष्य में ये कणिकाएं लगभग 50 से 50 लाख प्रतिघन मिमी. रक्त (5 से 5.5 मिलियन प्रतिघन मिमी.) होती हैं। वयस्क अवस्था में लाल रुधिर कणिकाएं लाल अस्थि मज्जा में बनती हैं। अधिकतर स्तनधारियों की लाल रुधिर कणिकाओं में केंद्रक नहीं मिलते हैं तथा इनकी आकृति उभयावतल (बाईकोनकेव) होती है। इनका लाल रंग एक लौहयुक्त जटिल प्रोटीन हीमोग्लोबिन की उपस्थिति के कारण है। *एक स्वस्थ मनुष्य में प्रति 100 मिली. रक्त में लगभग 12 से 16 ग्राम हीमोग्लोबिन पाया* जाता है। इन पदार्थों की श्वसन गैसों के परिवहन में महत्वपूर्ण भूमिका है। लाल रक्त कणिकाओं की औसत आयु 120 दिन होती है। तत्पश्चात इनका विनाश प्लीहा (लाल रक्त कणिकाओं की कब्रिस्तान) में होता है।

ल्युकोसाइट को हीमोग्लोबिन के अभाव के कारण तथा रंगहीन होने से **श्वेत रुधिर कणिकाएं** भी कहते हैं। इसमें केंद्रक पाए जाते हैं तथा इनकी संख्या लाल रक्त कणिकाओं की अपेक्षा कम, औसतन 6000-8000 प्रति घन मिमी. रक्त होती है। सामान्यत: ये कम समय तक जीवित रहती हैं। इनको दो मुख्य श्रेणियों में बाँटा गया है-कणिकाणु (ग्रेन्यूलोसाइट) तथा अकण कोशिका (एग्रेन्यूलोसाइट)। न्यूट्रोफिल, इओसिनोफिल व बेसोफिल कणिकाणुओं के प्रकार हैं, जबकि लिंफोसाइट तथा मोनोसाइट अकणकोशिका के प्रकार हैं। श्वेत रुधिर कोशिकाओं में न्यूट्रोफिल संख्या में सबसे अधिक (लगभग 60-65 प्रतिशत) तथा बेसोफिल संख्या में सबसे कम (लगभग 0.5-1 प्रतिशत) होते हैं।



चित्र 18.1 रक्त में संगठित पदार्थ

न्यूट्रोफिल तथा मोनोसाइट (6-8 प्रतिशत) भक्षण कोशिका होती है जो अंदर प्रवेश करने वाले बाह्य जीवों को समाप्त करती है। बेसोफिल, हिस्टामिन, सिरोटोनिन, हिपैरिन आदि का स्राव करती है तथा शोथकारी क्रियाओं में सम्मिलित होती है। इओसिनोफिल (2-3 प्रतिशत) संक्रमण से बचाव करती है तथा एलर्जी प्रतिक्रिया में सम्मिलित रहती है। लिंफोसाइट (20-25 प्रतिशत) मुख्यत: दो प्रकार की हैं - बी तथा टी। बी और टी दोनों प्रकार की लिंफोसाइट शरीर की प्रतिरक्षा के लिए उत्तरदायी हैं।

पट्टिकाणु (प्लेटलेट्स) को **थ्रोम्बोसाइट** भी कहते हैं, ये मैगाकेरियो साइट (अस्थि मज्जा की विशेष कोशिका) के टुकड़ों में विखंडन से बनती हैं। रक्त में इनकी संख्या 1.5 से 3.5 लाख प्रति घन मिमी. होती हैं। प्लेटलेट्स कई प्रकार के पदार्थ स्रवित करती हैं जिनमें अधिकांश रुधिर का थक्का जमाने (स्कंदन) में सहायक हैं। प्लेटलेट्स की संख्या में कमी के कारण स्कंदन (जमाव) में विकृति हो जाती है तथा शरीर से अधिक रक्त स्राव हो जाता है।

18.1.3 रक्त समूह (ब्लड ग्रुप)

जैसा कि आप जानते हैं कि मनुष्य का रक्त एक जैसा दिखते हुए भी कुछ अर्थों में भिन्न होता है। रक्त का कई तरीके से समूहीकरण किया गया है। इनमें से दो मुख्य समूह ABO तथा Rh का उपयोग पूरे विश्व में होता है।

18.1.3.1 ABO समूह

ABO समूह मुख्यत: लाल रुधिर कणिकाओं की सतह पर दो प्रतिजन/एंटीजन की उपस्थिति या अनुपस्थित पर निर्भर होता है। ये ऐंटीजन A और B हैं जो प्रतिरक्षा अनुक्रिया को प्रेरित करते हैं। इसी प्रकार विभिन्न व्यक्तियों में दो प्रकार के प्राकृतिक प्रतिरक्षी/एंटीबोडी (शरीर प्रतिरोधी) मिलते हैं। प्रतिरक्षी वे प्रोटीन पदार्थ हैं जो प्रतिजन के विरुद्ध पैदा होते हैं। चार रक्त समूहों, **A, B, AB, और O** में प्रतिजन तथा प्रतिरक्षी की स्थिति को देखते हैं, जिसको तालिका 18.1 में दर्शाया गया है।

तालिका 18.1 रक्त समूह तथा रक्तदाता सुयोग्यता

रक्त समूह	लाल रुधिर कणिकाओं पर प्रतिजन	प्लाज्मा में प्रतिरक्षी (एंटिबोडीज)	रक्तदाता समूह
A	A	एंटी B	A, O
B	B	एंटी A	B, O
AB	AB	अनुपस्थित	AB, A, B,O
O	अनुपस्थित	एंटी A,B	O

दाता एवं ग्राही/आदाता के रक्त समूहों का रक्त चढाने से पहले सावधानीपूर्वक मिलान कर लेना चाहिए जिससे रक्त स्कंदन एवं RBC के नष्ट होने जैसी गंभीर परेशानियां न हों। दाता संयोज्यता (डोनर कंपेटिबिलिटी) तालिका 18.1 में दर्शायी गई है।

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि रक्त समूह O एक सर्वदाता है जो सभी समूहों को रक्त प्रदान कर सकता है। रक्त समूह AB सर्व आदाता (ग्राही) है जो सभी प्रकार के रक्त समूहों से रक्त ले सकता है।

18.1.3.2 Rh समूह

एक अन्य प्रतिजन/एंटीजन Rh है जो लगभग 80 प्रतिशत मनुष्यों में पाया जाता है तथा यह Rh एंटीजेन रीसेस बंदर में पाए जाने वाले एंटीजेन के समान है। ऐसे व्यक्ति को जिसमें Rh एंटीजेन होता है, को **Rh सहित** (Rh+ve) और जिसमें यह नहीं होता उसे **Rh हीन** (Rh-ve) कहते हैं। यदि Rh रहित (Rh-ve) के व्यक्ति के रक्त को आर एच सहित (Rh+ve) पॉजिटिव के साथ मिलाया जाता है तो व्यक्ति मे Rh प्रतिजन Rh-ve के विरूद्ध विशेष प्रतिरक्षी बन जाती हैं, अत: रक्त आदान-प्रदान के पहले Rh समूह को मिलना भी आवश्यक है। एक विशेष प्रकार की Rh *अयोग्यता* को एक *गर्भवती* (Rh-ve) माता एवं उसके गर्भ में पल रहे भ्रूण के Rh+ve के बीच पाई जाती है। अपरा द्वारा पृथक रहने के कारण भ्रूण का Rh एंटीजेन *सगर्भता* में माता के Rh-ve को प्रभावित नहीं कर पाता, लेकिन फिर भी पहले प्रसव के समय माता के Rh-ve रक्त से शिशु के Rh+ve रक्त के संपर्क में आने की संभावना रहती है। ऐसी दशा में माता के रक्त में Rh प्रतिरक्षी बनना प्रारंभ हो जाता है। ये प्रतिरोध में एंटीबोडीज बनाना शुरू कर देती है। यदि परवर्ती गर्भावस्था होती है तो रक्त से (Rh-ve) भ्रूण के रक्त (Rh+ve) में Rh प्रतिरक्षी का रिसाव हो सकता है और इससे भ्रूण की लाल रुधिर कणिकाएं नष्ट हो सकती हैं। यह भ्रूण के लिए जानलेवा हो सकती हैं या उसे रक्ताल्पता (खून की कमी) और पीलिया हो सकता है। ऐसी दशा को *इरिथ्रोब्लास्टोसिस फिटैलिस* (गर्भ रक्ताणु कोरकता) कहते हैं। इस स्थिति से बचने के लिए माता को प्रसव के तुरंत बाद Rh प्रतिरक्षी का उपयोग करना चाहिए।

18.1.4 रक्त-स्कंदन (रक्त का जमाव)

किसी चोट या घात की प्रतिक्रिया स्वरूप रक्त स्कंदन होता है। यह क्रिया शरीर से बाहर अत्यधिक रक्त को बहने से रोकती है। *क्या आप जानते हैं ऐसा क्यों होता है?* आपने किसी चोट घात या घाव पर कुछ समय बाद गहरे लाल व भूरे रंग का झाग सा अवश्य देखा होगा। यह रक्त का स्कंदन या थक्का है, जो मुख्यत: फाइब्रिन धागे के जाल से बनता है। इस जाल में मरे तथा क्षतिग्रस्त संगठित पदार्थ भी उलझे हुए होते हैं। फाइब्रिन रक्त प्लैज्मा में उपस्थित एंजाइम थ्रोम्बिन की सहायता से फाइब्रिनोजन से बनती है। थ्रोम्बिन की रचना प्लाज्मा में उपस्थित निष्क्रिय प्रोथोबिंन से होती है। इसके लिए थ्रोंबोकाइनेज एंजाइम समूह की आवश्यकता होती है। यह एंजाइम समूह रक्त प्लैज्मा में उपस्थित अनेक निष्क्रिय कारकों की सहायता से एक के बाद एक अनेक एंजाइमी प्रतिक्रिया की *शृंखला* (सोपानी प्रक्रम) से बनता है। एक चोट या घात रक्त में उपस्थित प्लेटलेट्स को विशेष कारकों को मुक्त करने के लिए प्रेरित करती है जिनसे स्कंदन की प्रक्रिया शुरू होती है। क्षतिग्रस्त ऊतकों द्वारा भी चोट की जगह पर कुछ कारक मुक्त होते हैं जो स्कंदन को प्रारंभ कर सकते हैं। इस प्रतिक्रिया में कैल्सियम आयन की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होती है।

18.2 लसीका (ऊतक द्रव)

रक्त जब ऊतक की कोशिकाओं से होकर गुजरता है तब बड़े प्रोटीन अणु एवं संगठित पदार्थों को छोड़कर रक्त से जल एवं जल में घुलनशील पदार्थ कोशिकाओं से बाहर निकल जाते हैं। इस तरल को अंतराली द्रव या ऊतक द्रव कहते हैं। इसमें प्लैज्मा के समान ही खनिज लवण पाए जाते हैं। रक्त तथा कोशिकाओं के बीच पोषक पदार्थ एवं गैसों का आदान प्रदान इसी द्रव से होता है। वाहिकाओं का विस्तृत जाल जो लसीका तंत्र (लिंफैटिक सिस्टम) कहलाता है इस द्रव को एकत्र कर बड़ी शिराओं में वापस छोड़ता है। लसीका तंत्र में उपस्थित यह द्रव/तरल को लसीका कहते हैं।

लसीका एक रंगहीन द्रव है जिसमें विशिष्ट लिंफोसाइट मिलते हैं। लिंफोसाइट शरीर की प्रतिरक्षा अनुक्रिया के लिए उत्तरदायी है। लसीका पोषक पदार्थ, हार्मोन आदि के संवाहन के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। आंत्र अकुंर में उपस्थित लैक्टियल वसा को लसीका द्वारा अवशोषित करते हैं।

18.3 परिसंचरण पथ

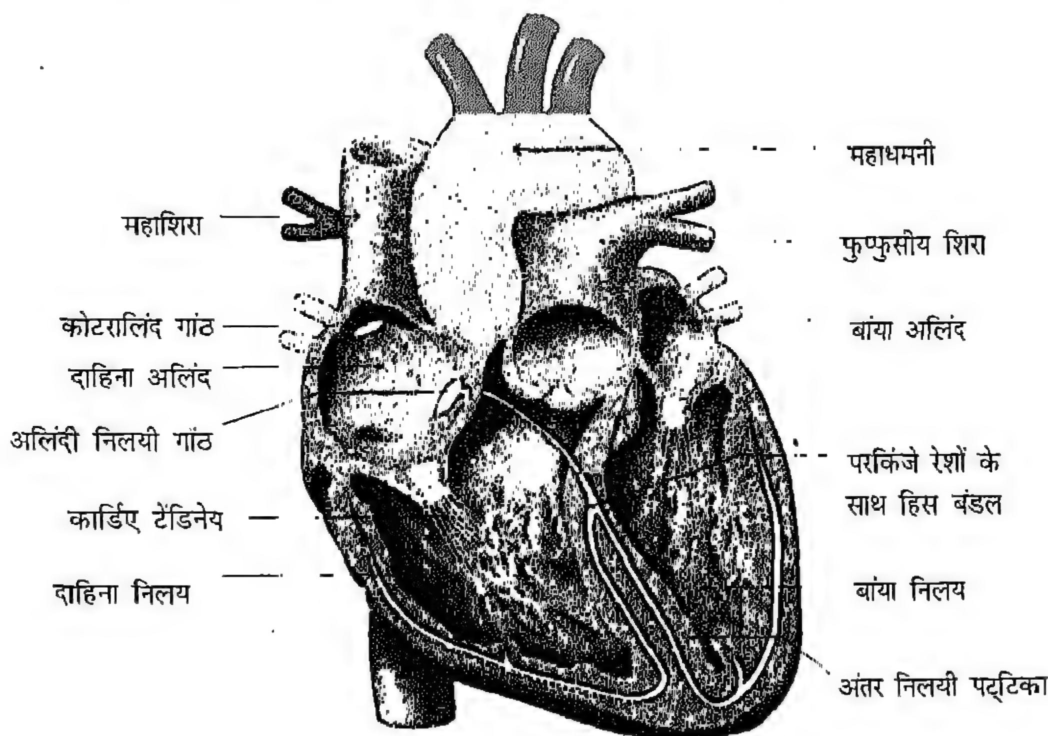
परिसंचरण दो तरह का होता है, जो खुला एवं बंद होता है। **खुला परिसंचरण तंत्र** आर्थोपोडा (संधिपाद) तथा मोलस्का में पाया जाता है। जिसमें हृदय द्वारा रक्त को रक्त वाहिकाओं में पंप किया जाता है, जो कि रक्त स्थान (कोटरों) में खुलता है। एक कोटर वस्तुतः देहगुहा होती है। ऐनेलिडा तथा कशेरुकी में **बंद प्रकार का परिसंचरण** तंत्र पाया जाता है, जिसमें हृदय से रक्त का प्रवाह एक दूसरे से जुड़ी रक्त वाहिनियों के जाल में होता है। इस तरह का रक्त परिसंचरण पथ ज्यादा लाभदायक होता है क्योंकि इसमें रक्त प्रवाह आसानी से नियमित किया जाता है।

सभी कशेरुकी में कक्षों से बना हुआ पेशी हृदय होता है। मछलियों में दो कक्षीय हृदय होता है, जिसमें एक अलिंद तथा एक निलय होता है। उभयचरों तथा सरीसृपों रेप्टाइल का (मगरमच्छ को छोड़कर) हृदय तीन कक्षों से बना होता है, जिसमें दो अलिंद तथा एक निलय होता है। जबकि मगरमच्छ, पक्षियों तथा स्तनधारियों में हृदय चार कक्षों का बना होता है जिसमें दो अलिंद तथा दो निलय होते हैं। मछलियों में हृदय विऑक्सीजनित रुधिर बाहर को पंप करता है जो क्लोम द्वारा ऑक्सीजनित होकर शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचाया जाता है तथा वहाँ से विऑक्सीजनित रक्त हृदय में वापस आता है। इस क्रिया को एकलपरिसंचरण कहते हैं। उभयचरों व सरीसृपों में बांया अलिंद क्लोम / फेफड़ों / त्वचा से ऑक्सीजन युक्त रक्त प्राप्त करता है तथा दाहिना आलिंद शरीर के दूसरे भागों से विऑक्सीजनित रुधिर प्राप्त करता है, लेकिन वे रक्त को निलय में मिश्रित कर बाहर की ओर पंप करते हैं। इस क्रिया को अपूर्ण दोहरा परिसंचरण कहते हैं। पक्षियों एवं स्तनधारियों में ऑक्सीजनित विऑक्सीजनित रक्त क्रमशः बाएं व दाएं आलिंदों में आता है, जहाँ से वह उसी क्रम से बाएं दाएं एवं बाएं निलयों में जाता है। निलय बिना रक्त को मिलाए इन्हें पंप करता है अर्थात् दो तरह के परिसंचरण पथ इन प्राणियों में मिलते हैं। अतः इन प्राणियों में दोहरा परिसंचरण पाया जाता है। अब हम मानव के परिसंचरण तंत्र का अध्ययन करते हैं।

18.3.1 मानव परिसंचरण तंत्र

मानव परिसंचरण तंत्र जिसे रक्तवाहिनी तंत्र भी कहते हैं जिसमें कक्षों से बना पेशी हृदय, शाखित बंद रक्त वाहिनियों का एक जाल, रक्त एवं तरल समाहित होता है। (रक्त इनमें बहने वाला एक तरल है जिसके बारे में आप विस्तृत रूप से इस अध्याय के पूर्ववर्ती पृष्ठों में पढ़ चुके हैं)।

हृदय- की उत्पत्ति मध्यजन स्तर (मीसोडर्म) से होती है तथा यह दोनों फेफड़ों के मध्य, वक्ष गुहा में स्थित रहता है यह थोडा सा बाईं तरफ झुका रहता है। यह बंद मुट्ठी के आकार का होता है। यह एक दोहरी भित्ति के झिल्लीमय थैली, हृदयावरणी द्वारा सुरक्षित होता है जिसमें हृदयावरणी द्रव पाया जाता है। हमारे हृदय में चार कक्ष होते हैं जिसमें दो कक्ष अपेक्षाकृत छोटे तथा ऊपर को पाए जाते हैं जिन्हें **आलिंद** (आर्ट्रिया) कहते हैं तथा दो कक्ष अपेक्षाकृत बड़े होते हैं जिन्हें **निलय (वेंट्रिकल)** कहते हैं। एक पतली पेशीय भित्ति जिसे **अंतर अलिंदी** (पट) कहते हैं, दाएं एवं बाएं आलिंद को अलग करती है जबकि एक मोटी भित्ति, जिसे **अंतर निलयी (पट)** कहते हैं, जो बाएं एवं दाएं निलय को अलग करती है (चित्र 18.2)। अपनी-अपनी ओर के आलिंद एवं निलय एक मोटे रेशीय ऊतक जिसे अलिंद निलय पट द्वारा पृथक रहते हैं। हालांकि; इन पटों में एक-एक छिद्र होता है, जो एक ओर के दोनों कक्षों को जोड़ता है। दाहिने आलिंद और दाहिने निलय के (रंध्र) पर तीन पेशी पल्लों या वलनों से (फ्लैप्स या कप्स) से युक्त एक वाल्व पाया जाता है। इसे ट्राइकसपिड (त्रिवलनी) कपाट या वाल्व कहते हैं। बाएं अलिंद तथा बाएं निलय के रंध्र (निकास) पर एक द्विवलनी कपाट / मिट्रल कपाट



चित्र 18.2 एक मानव हृदय का काट

पाया जाता है। दाएं तथा बाएं निलयों से निकलने वाली क्रमशः फुप्फुसीय धमनी तथा महाधमनी का निकास द्वार अर्धचंद्र कपाटिकर (सेमील्युनर वाल्व) से युक्त रहता है। हृदय के कपाट रुधिर को एक दिशा में ही जाने देते हैं अर्थात् अलिंद से निलय और निलय से फुप्फुस धमनी या महाधमनी। कपाट वापसी या उल्टे प्रवाह को रोकते हैं।

यह हृद् पेशीयों से बना है। निलयों की भित्ति अलिंदों की भित्ति से बहुत मोटी होती है। एक विशेष प्रकार की हृद पेशीन्यास, जिसे **नोडल ऊतक** कहते हैं, भी हृदय में पाया जाता है (चित्र 18.2)। इस ऊतक का एक धब्बा दाहिने अलिंद के दाहिने ऊपरी कोने पर स्थित रहता है, जिसे **शिराअलिंदपर्व** (साइनों-आट्रियल नॉड SAN) कहते हैं। इस ऊतक का दूसरा पिण्ड दाहिने अलिंद में नीचे के कोने पर अलिंद निलयी पट के पास में स्थित होता है जिसे **अलिंद निलय पर्व** (आट्रियो-वेटीकुलर नॉड/ AVN) कहते हैं। नोडल (ग्रंथिल) रेशों का एक बंडल, जिसे अलिंद निलय बंडल (AV बंडल) भी कहते हैं। अंतर निलय पट के ऊपरी भाग में अलिंद निलय पर्व से प्रारंभ होता है तथा शीघ्र ही दो दाईं एवं बाईं शाखाओं में विभाजित होकर अंतर निलय पट के साथ पश्च भाग में बढ़ता है। इन शाखाओं से संक्षिप्त रेशे निकलते हैं जो पूरे निलयी पेशीविन्यास में दोनों तरफ फैले रहते हैं, जिसे पुरकिंजे तंतु कहते हैं। दाईं एवं बाईं शाखाओं सहित ये तंतु हिज के बंडल (Bundle of His) कहलाते हैं। नोडल ऊतक बिना किसी बाह्य प्रेरणा के क्रियाविभव पैदा करने में सक्षम होते हैं। इसे स्वउत्तेजनशील (आटोएक्साइटेबल) कहते हैं। हालांकि; एक मिनट में उत्पन्न हुए क्रियाविभव की संख्या नोडल तंत्र के विभिन्न भागों में घट-बढ़ सकती है।

शिराअलिंदपर्व (गांठ) सबसे अधिक क्रियाविभव पैदा कर सकती है। यह एक मिनट में 70-75 क्रियाविभव पैदा करती है तथा हृदय का लयात्मक संकुचन (रिदमिक कांट्रेक्शन) को प्रारंभ करता है तथा बनाए रखता है। इसलिए इसे **गतिप्रेरक** (पेश मेकर) कहते हैं। इससे हमारी सामान्य हृदय स्पंदन दर 70-75 प्रति मिनट होती है। (औसतन 72 स्पंदन प्रति मिनट)।

18.3.2 हृद चक्र

हृदय काम कैसे करता है? आओ हम जानें। प्रारंभ में माना कि हृदय के चारों कक्ष शिथिल अवस्था में हैं अर्थात् हृदय अनुशिथिलन अवस्था में है। इस समय त्रिवलन या द्विवलन कपाट खुले रहते हैं, जिससे रक्त फुप्फुस शिरा तथा महाशिरा से क्रमशः बाएं तथा दाएं अलिंद से होता हुआ बाएं तथा दाएं निलय में पहुँचता है। अर्ध चंद्रकपाटिका इस अवस्था में बंद रहती है। अब शिराअलिंदपर्व (SAN) क्रियाविभव पैदा करता है, जो दोनों अलिंदों को प्रेरित कर अलिंद प्रकुंचन (atrial systole) पैदा करती है। इस क्रिया से रक्त का प्रवाह निलय में लगभग 30 प्रतिशत बढ़ जाता है। निलय में क्रियाविभव का संचालन अलिंद निलय (पर्व) तथा अलिंद निलय बंडल द्वारा होता है जहाँ से हिज के बंडल इसे निलयी पेशीन्यास (ventricular musculatire) तक पहुँचाता है। इसके कारण निलयी पेशियों में संकुचन होता है अर्थात् निलय प्रकुंचन इस समय अलिंद विश्राम अवस्था में जाते हैं। इसे अलिंद को अनुशिथिलन कहते हैं जो अलिंद प्रकुंचन के साथ-साथ होता है। निलयी प्रकुंचन, निलयी दाब बढ़ जाता है, जिससे त्रिवलनी व

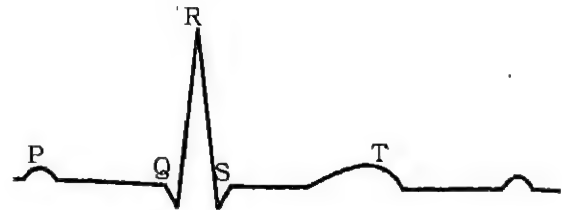
द्विवलनी कपाट बंद हो जाते हैं, अतः रक्त विपरीत दिशा अर्थात् अलिंद में नहीं आता है। जैसे ही निलयी दबाव बढ़ता है अर्ध चंद्रकपाटिकाएं जो फुप्फुसीय धमनी (दाईं ओर) तथा महाधमनी (बाईं ओर) पर स्थित होते हैं, खुलने के लिए मजबूर हो जाते हैं जिसके रक्त इन धमनियों से होता हुआ परिसंचरण मार्ग में चला जाता है। निलय अब शिथिल हो जाते हैं तथा इसे निलयी अनुशिथिलन कहते हैं। इस तरह निलय का दाब कम हो जाता है जिससे अर्धचंद्रकपाटिका बंद हो जाती है, जिससे रक्त का विपरीत प्रवाह निलय में नहीं होता। निलयी दाब और कम होता है, अतः अलिंद में रक्त का दाब अधिक होने के कारण त्रिवलनी कपाट तथा द्विवलनी कपाट खुल जाते हैं। इस तरह शिराओं से आए हुए रक्त का प्रवाह अलिंद से पुनः निलय में शुरू हो जाता है। निलय तथा अलिंद एक बार पुनः (जैसा कि ऊपर लिखा गया है), शिथिलावस्था में चले जाते हैं। शिराआलिंदपर्व (कोटरालिंद गांठ) पुनः क्रियाविभव पैदा करती है तथा उपरोक्त वर्णित से सारी क्रिया को दोहराती है जिससे यह प्रक्रिया लगातार चलती रहती है।

एक हृदय स्पंदन के आरंभ से दूसरे स्पंदन के आरंभ (एक संपूर्ण हृदय स्पंदन) होने के बीच के घटनाक्रम को हृद चक्र (cardiac cycle) कहते हैं तथा इस क्रिया में दोनों अलिंदों तथा दोनों निलयों का प्रकुंचन एवं अनुशिथिलन सम्मिलित होता है। जैसा कि ऊपर वर्णन किया जा चुका है कि हृदय स्पंदन एक मिनट में 72 बार होता है अर्थात् एक मिनट में कई बार हृद चक्र होता है। इससे एक चक्र का समय 0.8 सेकेंड निकाला जा सकता है। प्रत्येक हृद चक्र में निलय 70 मिली. रक्त पंप करता है, जिसे प्रवाह आयतन कहते हैं। प्रवाह आयतन को हृदय दर से गुणा करने पर हृद निकास कहलाता है, इसलिए हृद निकास प्रत्येक निलय द्वारा रक्त की मात्रा को प्रति मिनट बाहर निकालने की क्षमता है, जो एक स्वस्थ मात्रा में औसतन 5 हजार मिली. या 5 लीटर होती है। हम प्रवाह आयतन तथा हृदय दर को बदलने की क्षमता रखते हैं इससे हृदनिकास भी बदलता है। उदाहरण के तौर पर खिलाड़ी/धावकों का हृद निकास सामान्य मनुष्य से अधिक होता है।

हृद चक्र के दौरान दो महत्वपूर्ण ध्वनियाँ स्टेथेस्कोप द्वारा सुनी जा सकती है। प्रथम ध्वनि (लब) त्रिवलनी तथा द्विवलनी कपाट के बंद होने से संबंधित है, जबकि दूसरी ध्वनि (डब) अर्ध चंद्रकपाट के बंद होने से संबंधित है। इन दोनों ध्वनियों का चिकित्सीय निदान में बहुत महत्व है।

18.3.3 विद्युत हृद लेख (इलैक्ट्रोकार्डियोग्राफ)

आप शायद अस्पताल के टेलीविजन के दृश्य से चिरपरिचित होंगे। जब कोई बीमार व्यक्ति हृदयाघात के कारण निगरानी मशीन (मोनीटरिंग मशीन) पर रखा जाता है तब आप पीप.. पीप... पीप और पीपीपी की आवाज सुन सकते हैं। इस तरह की मशीन (इलैक्ट्रोकार्डियोग्राफ) का उपयोग विद्युत हृद लेख (इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम) (ईसीजी) प्राप्त करने के लिए किया जाता है (चित्र 18.3)।



चित्र 18.3 मानव ईसीजी का रेखांकित चित्रण

ईसीजी हृदय के हृदयी चक्र की विद्युत क्रियाकलापों का आरेखीय प्रस्तुतीकरण है। बीमार व्यक्ति के मानक ईसीजी से प्राप्त करने के लिए मशीन से रोगी को तीन विद्युत लीड से (दोनों कलाईयाँ तथा बाईं ओर की एड़ी) जोड़कर लगातार निगरानी करके प्राप्त कर सकते हैं।

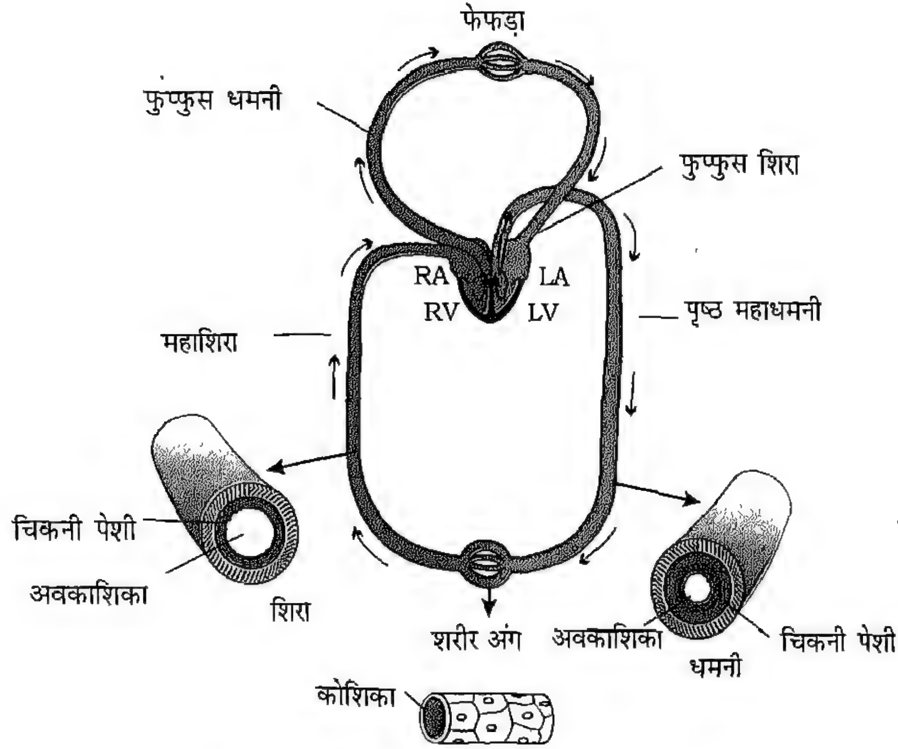
हृदय क्रियाओं के विस्तृत मूल्यांकन के लिए कई तारों (लीड्स) को सीने से जोड़ा जाता है। यहाँ हम केवल मानक ईसीजी के बारे में बताएंगे।

ईसीजी के प्रत्येक चर्मोत्कर्ष को P (पी) से T (टी) तक दर्शाया जाता है, जो हृदय की विशेष विद्युत क्रियाओं के प्रदर्शित करता है। पी तरंग को **आलिंद के उद्दीपन/विध्रुवण के रूप में प्रस्तुत किया** जाता है, जिससे दोनों अलिंदों का संकुचन होता है। QRS (क्यूआरएस) **सम्मिश्र निलय के अध्रुवण** को प्रस्तुत करता है जो निलय के संकुचन को शुरू करता है। संकुचन क्यू तरंग के तुरंत बाद शुरू होता है। जो प्रकुंचन (सिस्टोल) की शुरुआत का द्योतक है। 'टी' तरंग निलय का उत्तेजना से सामान्य अवस्था में वापिस आने की स्थिति को प्रदर्शित करता है। टी तरंग का अंत **प्रकुंचन** अवस्था की समाप्ति का द्योतक है।

स्पष्टतया, एक निश्चित समय में QRS सम्मिश्र की संख्या गिनने पर एक मनुष्य के हृदय स्पंदन दर भी निकाली जा सकती है। यद्यपि तरह-तरह के व्यक्तियों की ईसीजी संरचना एवं आकृति सामान्य होती है। इस आकृति में कोई परिवर्तन किसी संभावित असामान्यता अथवा बीमारी को इंगित करती हैं। अत: यह इसकी चिकित्सीय महत्ता बहुत ज्यादा है।

18.4 द्विसंचरण (डबल सरकुलेशन)

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि दाहिने निलय द्वारा पंप किया गया रक्त फुप्फुसीय धमनियों में जाता है जबकि बाएं निलय से रक्त महाधमनी में जाता है। ऑक्सीजन रहित रक्त, फेफड़ों में ऑक्सीजन युक्त होकर फुप्फुस शिराओं से होता हुआ बाएं अलिंद में आता है। यह संचरण पथ फुप्फुस संचरण कहलाता है। ऑक्सीजनित रक्त महाधमनी से होता हुआ धमनी, धमनिकाओं तथा केशिकाओं (केपिलरीज) से होता हुआ ऊतकों तक जाता है। और वहाँ से ऑक्सीजन रहित होकर शिरा, शिराओं तथा महाशिरा से होता हुआ दाहिने अलिंद में आता है। यह एक क्रमबद्ध परिसंचरण है (चित्र 18.4)। यह क्रमबद्ध परिसंचरण पोषक पदार्थ, ऑक्सीजन तथा अन्य जरूरी पदार्थों को ऊतकों तक पहुँचाता है तथा वहाँ से कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) तथा अन्य हानिकारक पदार्थों को बाहर निकालने के लिए ऊतकों से दूर ले जाता है। एक अनूठी संवहनी संबद्धता आहार नाल तथा यकृत के बीच उपस्थित होती है जिसे **यकृत निवाहिका परिसंचरण तंत्र (हिपेटिकपोर्टल सिस्टम)** कहते हैं। यकृत निवाहिका शिरा रक्त को इसके पहले कि वह क्रमबद्ध परिसंचरण में आंत्र से यकृत तक पहुँचाती है। हमारे शरीर में एक विशेष हृद परिसंचरण तंत्र (कोरोनरी सिस्टम) पाया जाता है, जो रक्त सिर्फ को हृद पेशी न्यास तक ले जाता है तथा वापस लाता है।



चित्र 18.4 मानव रक्त परिसंचरण का आरेखीय चित्र

18.5 हृद क्रिया का नियमन

हृदय की सामान्य क्रियाओं का नियमन अंतरिम होता है अर्थात् विशेष पेशी ऊतक (नोडल ऊतक) द्वारा स्व नियमित होते हैं, इसलिए हृदय को पेशीजनक (मायोजनिक) कहते हैं। मेड्यूला ओबलांगाटा के विशेष तंत्रिका केंद्र स्वायत्त तंत्रिका के द्वारा हृदय की क्रियाओं को संयमित कर सकता है। अनुकंपीय तंत्रिकाओं से प्राप्त तंत्रीय संकेत हृदय स्पंदन को बढ़ा देते हैं व निलयी संकुचन को सुदृढ़ बनाते हैं, अतः हृद निकास बढ़ जाता है। दूसरी तरफ परानुकंपी तंत्रिकय संकेत (जो स्वचालित तंत्रिका केंद्र का हिस्सा है) हृदय स्पंदन एवं क्रियाविभव की संवहन गति कम करते हैं। अतः यह हृद निकास को कम करते हैं। अधिवृक्क अंतस्था (एड्रीनल मेड्यूला) का हार्मोन भी हृद निकास को बढ़ा सकता है।

18.6 परिसंचरण की विकृतियाँ

उच्च रक्त दाब (अति तनाव) : अति तनाव रक्त दाब की वह अवस्था है, जिसमें रक्त चाप सामान्य (120/80) से अधिक होता है। इस मापदंड में 120 मिमी. एच जी (मिलीमीटर में मर्करी दबाव) को प्रकुंचन या पंपिंग दाब और 80 मिमी. एच जी को अनुशिथिलन या विराम काल (सहज) **रक्त दाब** कहते हैं। यदि किसी का रक्त दाब बार-बार मापने पर भी व्यक्ति 140/90 या इससे अधिक होता है तो वह अति तनाव प्रदर्शित करता है। उच्च रक्त चाप हृदय की बीमारियों को जन्म देता है तथा अन्य महत्वपूर्ण अंगों जैसे मस्तिष्क तथा वृक्क जैसे अंगों को प्रभावित करता है।

हृद धमनी रोग (CAD) : हृद धमनी बीमारी या रोग को प्रायः एथिरोकाठिंय (एथिरोस सक्लेरोसिस) के रूप में संदर्भित किया जाता है, जिसमें हृदय पेशी को रक्त की आपूर्ति करने वाली वाहिनियाँ प्रभावित होती हैं। यह बीमारी धमनियों के अंदर कैल्सियम, वसा तथा अन्य रेशीय ऊतकों के जमा होने से होता है, जिससे धमनी की अवकाशिका संकरी हो जाती है।

हृदशूल (एंजाइना) : इसको **एंजाइना पेक्टोरिस (हृदशूल पेक्टोरिस)** भी कहते हैं। हृद पेशी में जब पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं पहुँचती है तब सीने में दर्द (वक्ष पीड़ा) होता है जो एंजाइना (हृदशूल) की पहचान है। हृदशूल स्त्री या पुरुष दोनों में किसी भी उम्र में हो सकता है, लेकिन मध्यावस्था तथा वृद्धावस्था में यह सामान्यतः होता है। यह अवस्था रक्त बहाव के प्रभावित होने से होती है।

हृदपात (हार्ट फेल्योर) : हृदपात वह अवस्था है जिसमें हृदय शरीर के विभिन्न भागों को आवश्यकतानुसार पर्याप्त आपूर्ति नहीं कर पाता है। इसको कभी-कभी **संकुलित हृदपात** भी कहते हैं, क्योंकि फुप्फुस का संकुलन हो जाना भी उस बीमारी का प्रमुख लक्षण है। हृदपात ठीक हृदघात की भाँति नहीं होता (जहाँ हृदघात में हृदय की धड़कन बंद हो जाती है जबकि, हृदपात में हृदयपेशी को रक्त आपूर्ति अचानक अपर्याप्त हो जाने से यकायक क्षति पहुँचती है।

सारांश

कशेरुकी रक्त (द्रव संयोजी ऊतक) को पूरे शरीर में संचारित करते हैं जिसके द्वारा आवश्यक पदार्थ कोशिकाओं तक पहुँचाते हैं तथा वहाँ से अवशिष्टों को शरीर से बाहर निकालते हैं। दूसरा द्रव, जिसे लसीका ऊतक द्रव कहते हैं, भी कुछ पदार्थों को अभिगमित करता है।

रक्त, द्रव आधात्री (मैट्रिक्स) प्लैज्मा (प्लाज्मा) तथा संगठित पदार्थों से बना होता है। लाल रुधिर कणिकाएं (RBcs/इरिथ्रोसाइट), श्वेत रुधिर कणिकाएं (ल्यूकोसाइट) और प्लेट्लेट्स (थ्रोम्बोसाइट), संगठित पदार्थों का हिस्सा है। मानव का रक्त चार समूहों A, B, AB, O में वर्गीकृत किया गया है। इस वर्गीकरण का आधार लाल रुधिर कणिकाओं की सतह पर दो एंटीजेन A अथवा B का उपस्थित अथवा अनुपस्थित होना है। दूसरा वर्गीकरण लाल रुधिर कणिकाओं की सतह पर Rh घटक की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति पर किया गया है। ऊतक की कोशिकाओं के मध्य एक द्रव पाया जाता है जिसे **ऊतक द्रव** कहते हैं। इस द्रव को लसीका भी कहते हैं जो रक्त के समान होता है, परंतु इसमें प्रोटीन कम होती है तथा संगठित पदार्थ नहीं होते हैं।

सभी कशेरुकियों तथा कुछ अकशेरुकियों में बंद परिसंचरण तंत्र होता है। हमारे परिसंचरण तंत्र के अंतर्गत पेशीय पंपिंग अवयव, हृदय, वाहिकाओं का जाल तंत्र तथा द्रव, रक्त आदि सम्मिलित होते हैं। हृदय में दो आलिंद) तथा दो निलय होते हैं। हृद पेशीन्यास स्व-उत्तेजनीय होता है। शिराअलिंद पर्व (कोटरालिंद गाँठ SAN अधिकतम संख्या में प्रति मिनट (70/75 मिनट) क्रियविभव को उत्पन्न करती है और इस कारण यह हृदय की गतिविधियों की गति निर्धारित करती है। इसलिए इसे **पेश मेकर (गति प्रेरक)** कहते हैं। आलिंद द्वारा पैदा किया विभव और इसके बाद निलयों की आकुंचन (प्रकुंचन) का अनुकरण अनुशिथिलन द्वारा होता है। यह प्रकुंचन रक्त के अलिंद से निलयों की ओर बहाव के लिए दबाव डालता है और वहाँ से फुप्फुसीय धमनी और महाधमनी तक ले जाता है। हृदय की इस क्रमिक घटना को एक चक्र के रूप में बार-बार दोहराया जाता है जिसे **हृद चक्र** कहते हैं। एक स्वस्थ व्यक्ति प्रति मिनट ऐसे 72 चक्रों को प्रदर्शित करता है। एक हृद चक्र के दौरान प्रत्येक निलय द्वारा लगभग 70 मिली रक्त हर बार पंप किया जाता है। इसे **स्ट्रोक या विस्पंदन आयतन** कहते हैं। हृदय के निलय द्वारा प्रति मिनट पंप किए गए रक्त आयतन को **हृद निकास** कहते

हैं और यह स्ट्रोक आयतन तथा स्पंदन दर के गुणक बराबर होता है। यह प्रवाह आयतन प्रति मिनट हृदय दर (लगभग 5 लीटर) के बराबर होता है। हृदय में विद्युत क्रिया का आलेख इलैक्ट्रोकार्डियोग्राफ (विद्युत हृद आलेख मशीन) के द्वारा किया जा सकता है तथा विद्युत हृद आलेख को ECG कहते हैं, जिसका चिकित्सीय महत्व है।

हम पूर्ण दोहरा संचरण रखते हैं अर्थात् दो परिसंचरण पथ मुख्यतः फुप्फुसीय तथा दैहिक होते हैं। फुप्फुसीय परिसंचरण में ऑक्सीजनरहित रक्त को दाहिने निलय से फेफड़ों में पहुँचाया जाता है, जहाँ पर यह रक्त ऑक्सीजनित होता है तथा, फुप्फुसीय शिरा द्वारा बांए अलिंद में पहुँचता है। दैहिक परिसंचरण में बाएं निलय से ऑक्सीजन युक्त रक्त को महाधमनी द्वारा शरीर के ऊतकों तक पहुँचाया जाता है तथा वहाँ से ऑक्सीजन रहित रक्त को ऊतकों से शिराओं के द्वारा दाहिने अलिंद में वापस पहुँचाया जाता है। यद्यपि हृदय स्व उत्तेज्य होता है, लेकिन इसकी क्रियाशीलता को तंत्रिकीय तथा होर्मोन की क्रियाओं से नियमित किया जा सकता है।

अभ्यास

1. रक्त के संगठित पदार्थों के अवयवों का वर्णन करें तथा प्रत्येक अवयव के एक प्रमुख कार्य के बारे में लिखें।
2. प्लाज्मा (प्लैज्मा) प्रोटीन का क्या महत्व है?
3. स्तंभ I का स्तंभ II से मिलान करें

स्तंभ I	स्तंभ II
(i) इयोसिनोफिल्स	(क) रक्त जमाव (स्कंदन)
(ii) लाल रुधिर कणिकाएं	(ख) सर्व आदाता
(iii) AB रक्त समूह	(ग) संक्रमण प्रतिरोधन
(iv) पट्टिकाणु प्लेट्लेट्स	(घ) हृदय सकुंचन
(v) प्रकुंचन (सिस्टोल)	(च) गैस परिवहन (अभिगमन)

4. रक्त को एक संयोजी ऊतक क्यों मानते हैं?
5. लसीका एवं रुधिर में अंतर बताएं?
6. दोहरे परिसंचरण से क्या तात्पर्य है? इसकी क्या महत्ता है?
7. भेद स्पष्ट करें-
   (क) रक्त एवं लसीका
   (ख) खुला व बंद परिसंचरण तंत्र
   (ग) प्रकुंचन तथा अनुशिथिलन
   (घ) P तरंग तथा T तरंग
8. कशेरुकी के हृदयों में विकासीय परिवर्तनों का वर्णन करें?
9. हम अपने हृदय को पेशीजनक (मायोजेनिक) क्यों कहते हैं?
10. शिरा अलिंद पर्व (कोटरालिंद गाँठ SAN) को हृदय का गति प्रेरक (पेशमेकर) क्यों कहा जाता है?
11. अलिंद निलय गाँठ (AVN) तथा आलिंद निलय बंडर्ल (AVB) का हृदय के कार्य में क्या महत्व है।
12. हृद चक्र तथा हृदनिकास को पारिभाषित करें?
13. हृदय ध्वनियों की व्याख्या करें।
14. एक मानक ईसीजी को दर्शाएं तथा उसके विभिन्न खंडों का वर्णन करें।

अध्याय 19

उत्सर्जी उत्पाद एवं उनका निष्कासन

प्राणी उपापचयी अथवा अत्यधिक अंत:ग्रहण जैसी क्रियाओं द्वारा अमोनिया, यूरिया, यूरिक अम्ल, कार्बनडाइऑक्साइड, जल और अन्य आयन जैसे सोडियम, पोटैसियम, क्लोरीन, फॉस्फेट, सल्फेट आदि का संचय करते हैं। प्राणियों द्वारा इन पदार्थों का पूर्णतया या आंशिक रूप से निष्कासन आवश्यक है। इस अध्याय में आप इन पदार्थों, साथ ही विशेष रूप से साधारण नाइट्रोजनी अपशिष्टों के निष्कासन का अध्ययन करेंगे।

प्राणियों द्वारा उत्सर्जित होने वाले नाइट्रोजनी अपशिष्टों में मुख्य रूप से अमोनिया, यूरिया और यूरिक हैं। इनमें अमोनिया सर्वाधिक आविष (टॉक्सिक) है और इसके निष्कासन के लिए अत्यधिक जल की आवश्यकता होती है। यूरिक अम्ल कम आविष है और जल की कम मात्रा के साथ निष्कासित किया जा सकता है।

अमोनिया के उत्सर्जन की प्रक्रिया को *अमोनियोत्सर्ग* प्रक्रिया कहते हैं। अनेक अस्थिल मछलियाँ, उभयचर और जलीय कीट अमोनिया उत्सर्जी प्रकृति के हैं। अमोनिया सरलता से घुलनशील है, इसलिए आसानी से अमोनियम आयनों के रूप में शरीर की सतह या मछलियों के क्लोम (गिल) की सतह से विसरण द्वारा उत्सर्जित हो जाते हैं। इस उत्सर्जन में वृक्क की कोई अहम भूमिका नहीं होती है। इन प्राणियों को **अमोनियाउत्सर्जी** (अमोनोटैलिक) कहते हैं।

स्थलीय आवास में अनुकूलन हेतु, जल की हानि से बचने के लिए प्राणी कम आविष नाइट्रोजनी अपशिष्टों जैसे यूरिया और यूरिक अम्ल का उत्सर्जन करते हैं। स्तनधारी, कई स्थली उभयचर और समुद्री मछलियाँ मुख्यत: यूरिया का उत्सर्जन करते हैं और **यूरियाउत्सर्जी** (यूरियोटेलिक) कहलाते हैं। इन प्राणियों में उपापचयी क्रियाओं द्वारा निर्मित अमोनिया को यकृत द्वारा यूरिया में परिवर्तित कर रक्त में मुक्त कर दिया जाता है, जिसे वृक्कों द्वारा निस्यंदन के पश्चात उत्सर्जित कर दिया जाता है। कुछ प्राणियों

के वृक्कों की आधात्री (मैट्रिक्स) में अपेक्षित परासरणता को बनाए रखने के लिए यूरिया की कुछ मात्रा रह जाती है।

सरीसृपों, पक्षियों, स्थलीय घोंघों तथा कीटों में नाइट्रोजनी अपशिष्ट यूरिक अम्ल का उत्सर्जन, जल की कम मात्रा के साथ गोलिकाओं या पेस्ट के रूप में होता है और ये **यूरिकअम्लउत्सर्जी** (यूरिकोटेलिक) कहलाते हैं। प्राणी जगत में कई प्रकार के उत्सर्जी अंग पाए जाते हैं। अधिकांश अकशेरुकियों में यह संरचना सरल नलिकाकार रूप में होती है, जबकि कशेरुकियों में जटिल नलिकाकार अंग होते हैं, जिन्हें वृक्क कहते हैं। इन संरचनाओं के प्रमुख रूप नीचे दिए गए हैं-

आदिवृक्कक (प्रोटोनेफ्रिडिआ) या ज्वाला कोशिकाएं, प्लैटिहेल्मिंथ (चपटे कृमि जैसे *प्लैनेरिया*), रॉटीफर कुछ एनेलिड, सिफेलोकॉर्डेट (*एम्फीऑक्सस*) आदि में उत्सर्जी संरचना के रूप में पाए जाते हैं। आदिवृक्कक प्राथमिक रूप से आयनों व द्रव के आयतन-नियमन जैसे परासरणनियमन से संबंधित हैं।

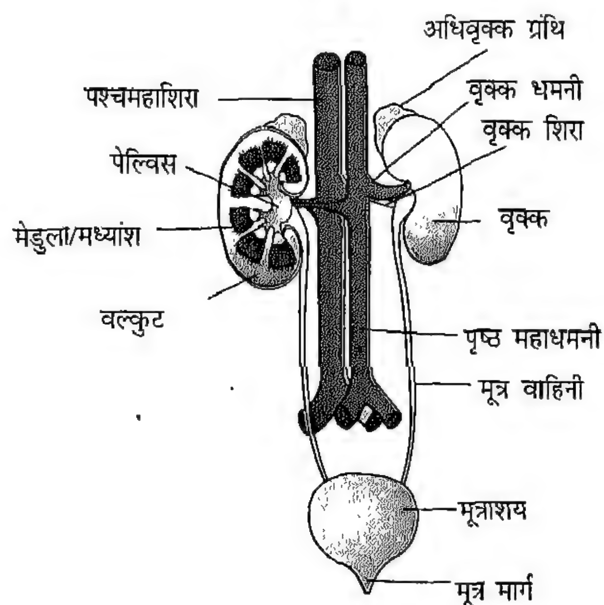
केंचुए व अन्य एनेलिड में नलिकाकार उत्सर्जी अंग वृक्कक पाए जाते हैं। वृक्कक नाइट्रोजनी अपशिष्टों को उत्सर्जित करने तथा द्रव और आयनों का संतुलन बनाए रखने में सहायता करते हैं।

तिलचट्टों (कॉकरोच) सहित अधिकांश कीटों में उत्सर्जी अंग के रूप में मैलपीगी नलिकाएं पाई जाती हैं। मैलपीगी नलिकाएं नाइट्रोजनी अपशिष्टों के उत्सर्जन और परासरणनियमन में मदद करती हैं।

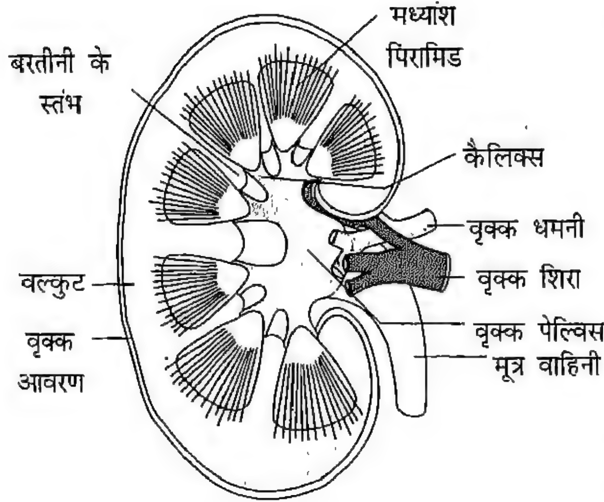
झींगा (प्रॉन) जैसे क्रस्टेशियाई प्राणियों में शृंगिक ग्रंथियाँ (एंटिनलग्लांड) या हरित ग्रंथियाँ उत्सर्जन का कार्य करती हैं।

19.1 मानव उत्सर्जन तंत्र

मनुष्यों में उत्सर्जी तंत्र एक जोड़ी वृक्क, एक जोड़ी मूत्र नलिका, एक मूत्राशय और एक मूत्र मार्ग का बना होता है (चित्र 19.1)। वृक्क सेम के बीज की आकृति के गहरे भूरे लाल रंग के होते हैं तथा ये अंतिम वक्षीय और तीसरी कटि कशेरुका के समीप उदर गुहा में आंतरिक पृष्ठ सतह पर स्थित होते हैं। वयस्क मनुष्य के प्रत्येक वृक्क की लम्बाई 10-12 सेमी., चौड़ाई 5-7 सेमी., मोटाई 2-3 सेमी. तथा भार लगभग 120-170 ग्राम होता है। वृक्क के केंद्रीय भाग की भीतरी अवतल (कॉन्केव) सतह के मध्य में एक खांच होती है, जिसे हाइलम कहते हैं। इसे होकर मूत्र-नलिका, रक्त वाहिनियाँ और तंत्रिकाएं प्रवेश करती हैं। हाइलम के भीतरी ओर कीप के आकार का रचना होती है जिसे वृक्कीय श्रोणि (पेल्विस) कहते हैं तथा इससे निकलने वाले प्रक्षेपों



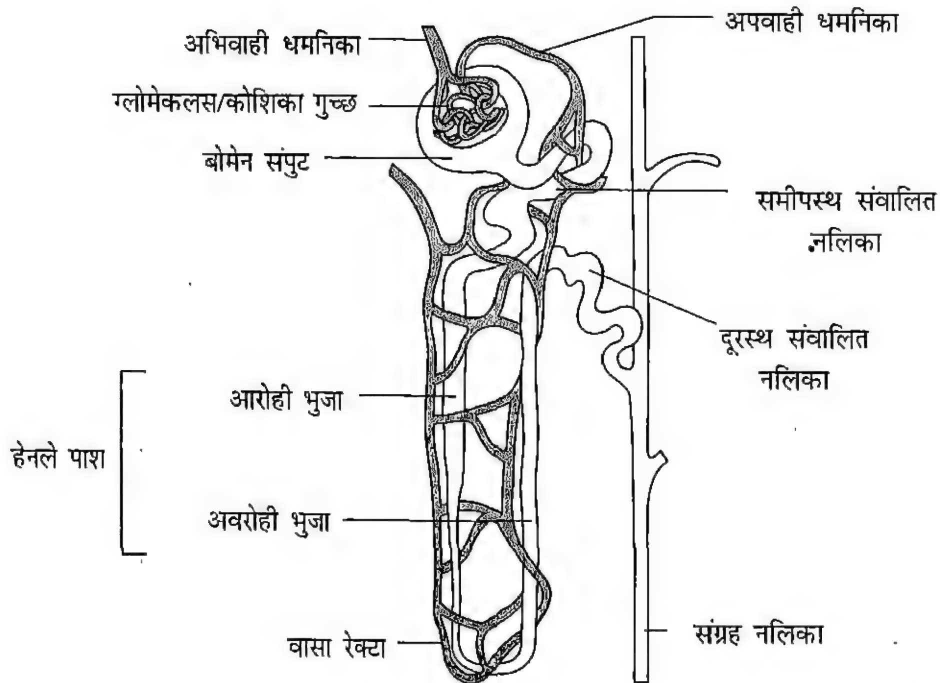
चित्र 19.1 मानव का उत्सर्जन तंत्र



चित्र 19.2 वृक्क का भाग

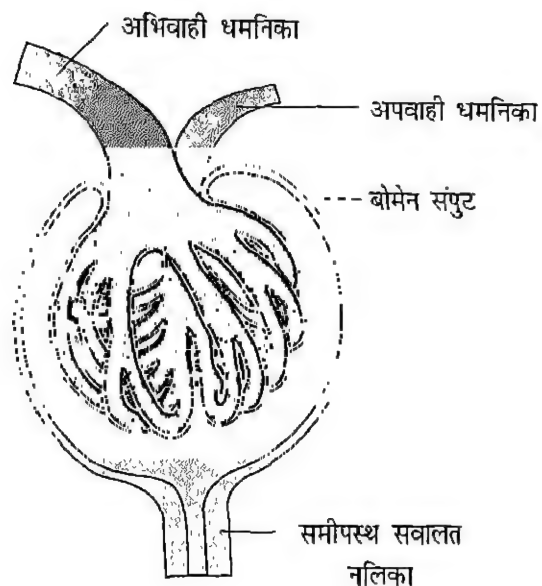
(प्रोजेक्शन) को चषक (कैलिक्स) कहते हैं। वृक्क की बाहरी सतह पर दृढ़ संपुट होता है। वृक्क में दो भाग होते हैं - बाहरी *वल्कुट* (कॉर्टेक्स) और *भीतरी मध्यांश* (मेडुला)। मध्यांश कुछ शंक्वाकार पिरामिड (मध्यांश पिरामिड)में बँटा होता है जो कि चषकों में फैले रहते हैं। वल्कुट मध्यांश पिरामिड (पिंडों) के बीच फैलकर वृक्क स्तंभ बनाते हैं, जिन्हें **बरतीनी-स्तंभ** (Columns of Bertini) कहते हैं (चित्र 19.2)।

प्रत्येक वृक्क में लगभग 10 लाख जटिल नलिकाकार संरचना **वृक्काणु (नेफ्रोन)** पाई जाती हैं जो क्रियात्मक इकाइयाँ हैं (चित्र 19.3)। प्रत्येक वृक्काणु के दो भाग होते हैं। जिन्हें गुच्छ (ग्लोमेरूलस) और वृक्क नलिका कहते हैं। गुच्छा वृक्कीय धमनी की शाखा अभिवाही धमनिकाओं (afferent arteriole) से बनी केशिकाओं (कैपिलरी) का एक गुच्छ है। ग्लोमेरूलस से रक्त अपवाही धमनिका (efferent arteriole) द्वारा ले जाया जाता है।



चित्र 19.3 रक्त वाहिनयाँ, वाहिनियाँ तथा नलिकाएं प्रदर्शित करता हुआ एक नेफ्रोन

वृक्क नलिका दोहरी झिल्ली युक्त प्यालेनुमा बोमेन संपुट से प्रारंभ होती है, जिसके भीतर गुच्छ होता है। गुच्छ और बोमेन संपुट मिलकर *मेल्पीगीकाय* अथवा *वृक्क कणिका (कार्पसल)* बनाते हैं (चित्र 19.4)। **बोमेन संपुट** से एक अति कुंडलित **समीपस्थ संवलित नलिका** (पीसीटी) प्रारंभ होती है, इसके बाद वृक्काणु में हेयर पिन के आकार का **हेनले-लूप** (Henle's loop) पाया जाता है, जिसमें आरोही व अवरोही भुजा होती है। आरोही भुजा से एक ओर अति कुंडलित नलिका, **दूरस्थ संवलित नलिका** (डीसीटी) प्रारंभ होती है।



चित्र 19.4 बोमेन सम्पुट/मैलपीगी काय/वृक्क कार्पसल

अनेक वृक्काणुओं की दूरस्थ संवलित नलिकाएं एक सीधी संग्रह नलिका में खुलती हैं। अनेक संग्रह नलिकाएं मिलकर चषकों के बीच स्थित मध्यांश पिरामिड से गुजरती हुई वृक्कीय श्रोणि में खुलती हैं।

वृक्काणु की वृक्क कणिका, समीपस्थ संवलित नलिका, दूरस्थ संवलित नलिका आदि वृक्क के वल्कुट भाग में, जबकि हेनले-लूप मध्यांश में, स्थित होते हैं।

अधिकांश वृक्काणु के हेनले-लूप बहुत छोटे होते हैं और मध्यांश में बहुत कम धँसे रहते हैं ऐसे वृक्काणुओं को वल्कुटीय वृक्कक कहते हैं। कुछ वृक्काणुओं के हेनले-लूप बहुत लंबे होते हैं तथा मध्यांश में काफी गहराई तक धंसे रहते हैं। इन्हें *सान्निध्य मध्यांश वृक्काणु* (जक्सटा मेडुलरी नेफ्रोन) कहते हैं (चित्र 19.5)।

गुच्छ से निकलने वाली अपवाही धमनिका, वृक्कीय नलिका के चारों ओर सूक्ष्म *केशिकाओं का जाल बनाती हैं, जिसे परिनालिका केशिका जाल कहते हैं।* इस जाल से निकलने वाली एक एक सूक्ष्म वाहिका हेनले-लूप के समानांतार चलते हुए 'यू' ('U') आकार की संरचना *वासा रेक्टा* बनाती है। वल्कुटीय वृक्काणु में वासा रेक्टा या तो अनुपस्थित या अत्यधिक ह्रासित होती है।

19.2 मूत्र निर्माण

मूत्र निर्माण में 3 मुख्य प्रक्रियाएं सम्मिलित हैं - गुच्छीय निस्यंदन, पुनःअवशोषण, स्त्रवण जो वृक्काणु के विभिन्न भागों में होता है।

मूत्र निर्माण के प्रथम चरण में केशिकागुच्छ द्वारा रक्त का निस्यंदन होता है जिसे **गुच्छ या गुच्छीय निस्यंदन** कहते हैं। वृक्कों द्वारा प्रति मिनट औसतन 1100-1200 मिली. रक्त का निस्यंदन किया जाता है जो कि हृदय द्वारा एक मिनट में निकाले गए रक्त के 1/5 वें भाग के बराबर होता है। गुच्छ की केशिकाओं का रक्त-दाब रुधिर का 3 परतों में से निस्यंदन करता है। ये तीन परते हैं गुच्छ की रक्त केशिका की आंतरिक उपकला, बोमेन संपुट की उपकला तथा इन दोनों पर्तों के बीच पाई जाने वाली आधार झिल्ली।

बोमेन संपुट की उपकला कोशिकाएं *पदाणु (पोडोसाइट्स)* कहलाती हैं, जो विशेष प्रकार से विन्यसित होती हैं, जिससे कुछ छोटे-छोटे अवकाश बीच में रह जाते हैं। इन्हें निस्यंदन खांच या खांच छिद्र (स्लिटपोर) कहते हैं। इन झिल्लियों से रुधिर इतनी अच्छी तरह छनता है कि जिससे रुधिर के प्लाज्मा की प्रोटीन को छोड़कर प्लाज्मा का शेषभाग छन कर संपुट की गुहा में इकट्ठा हो जाता है। इसलिए इसे **परा-निस्यंदन** (अल्ट्रा फिल्ट्रेशन) कहते हैं। वृक्कों द्वारा प्रति मिनट निस्यंदित की गई मात्रा **गुच्छीय निस्यंदन दर** (GFR) कहलाती है। एक स्वस्थ व्यक्ति में यह दर 125 मिली. प्रति मिनट अर्थात् 180 लीटर प्रति दिन है।

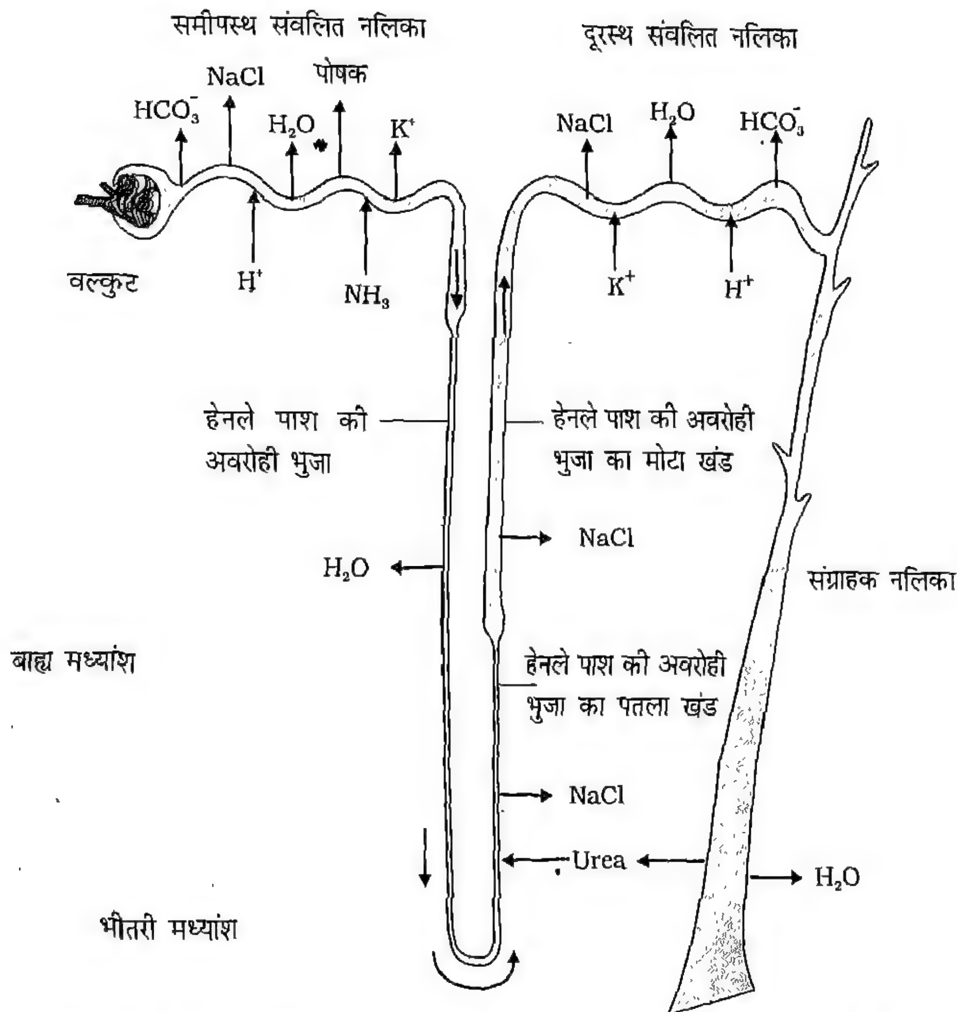
गुच्छ निस्यंदन की दर के नियमन के लिए वृक्कों द्वारा क्रिया विधि अपनाई जाती है। गुच्छीय आसन्न उपकरण द्वारा एक अति सूक्ष्म क्रियाविधि संपन्न की जाती है। यह विशेष संवेदी उपकरण अभिवाही तथा अपवाही धमनिकाओं के संपर्क स्थल पर दूरस्थ संवलित नलिका की केशिकाओं के रूपांतरण से बनता है। गुच्छ निस्यंदन दर में गिरावट इन आसन गुच्छ केशिकाओं को रेनिन के स्रवण के सक्रिय करती है जो वृक्कीय रुधिर का प्रवाह बढ़ाकर गुच्छ निस्यंदन दर को पुनः सामान्य कर देती है।

प्रतिदिन बनने वाले निस्यंद के आयतन (180 लीटर प्रति दिन) की उत्सर्जित मूत्र (1.5 लीटर) से तुलना की जाए तो यह समझा जा सकता है कि 99 प्रतिशत निस्यंद को वृक्क नलिकाओं द्वारा पुनः अवशोषित किया जाता है जिसे **पुनःअवशोषण** कहते हैं। यह कार्य वृक्क नलिका की उपकला कोशिकाएं अलग-अलग खंडों में सक्रिय अथवा निष्क्रिय क्रियाविधि द्वारा करती हैं। उदाहरणार्थ निस्यंद पदार्थ जैसे ग्लूकोज, एमीनो अम्ल, Na^+ इत्यादि सक्रिय रूप से परिवहन से पुनरावशोषित कर लिए जाते हैं; जबकि नाइट्रोजनी निष्क्रिय रूप से अवशोषित होते हैं। वृक्काणु के प्रारंभिक भाग में जल का पुनरावशोषण निष्क्रिय क्रिया द्वारा होता है (चित्र 19.5)। मूत्र निर्माण के दौरान नलिकाकार कोशिकाएं निस्यंद में H^+, K^+ और अमोनिया जैसे पदार्थों को स्रवित करती हैं। नलिकाकार स्रवण भी मूत्र निर्माण का एक मुख्य चरण है; क्योंकि यह शारीरिक तरल आयनी व अम्ल-क्षार संतुलन को बनाए रखता है।

19.3 वृक्क नलिका के विभिन्न भागों के कार्य

समीपस्थ संवलित नलिका : यह नलिका सरल घनाकार ब्रुश बार्डर उपकला से बनी होती है जो पुनरावशोषण के लिए सतह क्षेत्र को बढ़ाती है। लगभग सभी आवश्यक पोषक तत्व, 70-80 प्रतिशत वैद्युत-अपघट्य और जल का पुनः अवशोषण इसी भाग द्वारा होता है। समीपस्थ संवलित नलिका शारीरिक तरलों के पीएच तथा आयनी संतुलन को इससे बनाए रखने के लिए H^+, अमोनिया और K^+ आयनों का निस्यंद में स्रवण और HCO_3^- का पुनरावशोषण करती हैं।

हेनले-लूप : इस भाग में न्यूनतम पुनरावशोषण होता है। यह भाग मंध्यांश में उच्च अंतराकाशी तरल की परासणता के नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हेनले-लूप की अवरोही भुजा जल के लिए पारगम्य होती है, परंतु वैद्युत अपघट्य के लिए लगभग अपारगम्य होती है। यह नीचे की ओर जाते हुए निस्यंद को सांद्र करती है। आरोही भुजा जल के लिए अपारगम्य होती है; लेकिन वैद्युत अपघट्य का अवशोषण सक्रिय या



चित्र 19.5 नेफ्रोन के विभिन्न भागों द्वारा प्रमुख पदार्थों का पुनरावशोषण एवं स्रवण (→ गमन की दिशा को प्रदर्शित करता है)

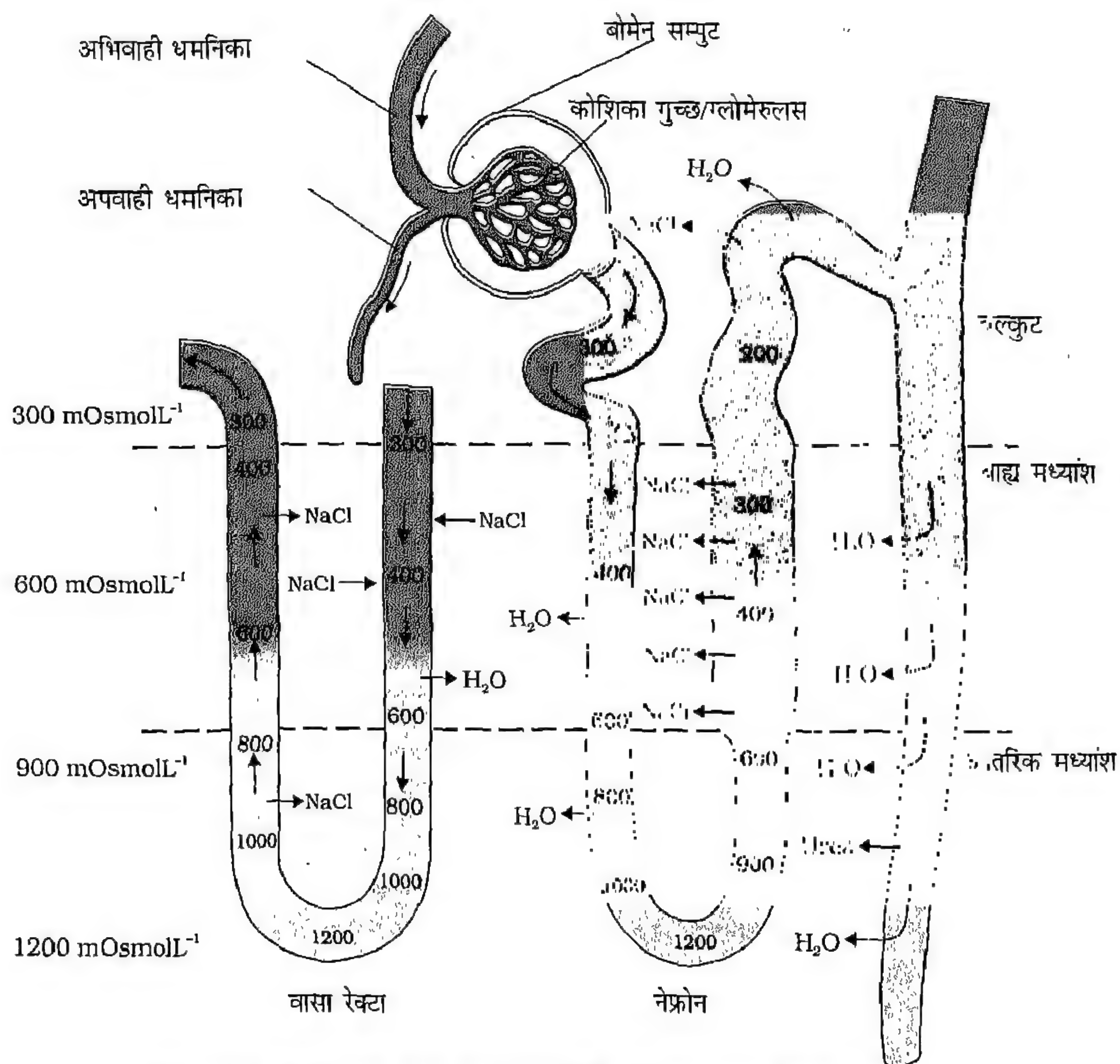
निष्क्रिय रूप से करती है। जैसे-जैसे सांद्र निस्यंद ऊपर की ओर जाता है, वैसे-वैसे वैद्युत अपघट्य के मध्यांश तरल में जाने से निस्यंद तनु (dilute) होता जाता है।

दूरस्थ संवलित नलिका (DCT) : विशिष्ट परिस्थितियों में Na^+ और जल का कुछ पुनरावशोषण इस भाग में होता है। दूरस्थ संवलित नलिका रक्त में सोडियम-पोटैसियम का संतुलन तथा pH बनाए रखने के लिए बाइकार्बोनेटस का पुनरावशोषण एवं H^+, K^+ और अमोनिया का चयनात्मक स्रवण करती है।

संग्रह नलिका : यह लंबी नलिका वृक्क के वल्कुट से मध्यांश के आंतरिक भाग तक फैली रहती है। मूत्र को आवश्यकतानुसार सांद्र करने के लिए जल का बड़ा हिस्सा इस भाग में अवशोषित किया जाता है। यह भाग मध्यांश की अंतरकाशी की परासरणता को बनाए रखने के लिए यूरिया के कुछ भाग को वृक्क मध्यांश तक ले जाता है। यह pH के नियमन तथा H^+ और K^+ आयनों के चयनात्मक स्रवण द्वारा रक्त में आयनों का संतुलन बनाए रखने में भी भूमिका निभाता है (चित्र 19.5)।

19.4 निस्यंद (छनित) को सांद्रण करने की क्रियाविधि

स्तनधारी सांद्रित मूत्र का उत्पादन करते हैं। इस कार्य में हेनले-लूप और वासा रेक्टा महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हेनले-लूप की दोनों भुजाओं में निस्यंद का विपरीत दिशाओं में प्रवाह होता है, जिससे प्रतिधारा उत्पन्न होती है। वासा रेक्टा की दोनों भुजाओं में रक्त का बहाव भी प्रतिधारा प्रतिरूप (पैटर्न) में होता है। हेनले-लूप व वासा रेक्टा के बीच की नजदीकी तथा उनमें प्रतिधारा मध्यांशी अंतराकाश (मेडुलरी इंटरटिशियम) के परासरण दाब को विशेष प्रकार से नियमित करतीं है। परासरण दाब मध्यांश के बाहरी भाग से भीतरी भाग की ओर लगातार बढ़ता जाता है, जैसे कि वल्कुट की ओर 300 mOsm/लीटर से आंतरिक मध्यांश में लगभग 1200 mOsm / लीटर। यह प्रवणता सोडियम क्लोराइड तथा यूरिया के कारण बनती है। NaCl का परिवहन हेनले-लूप की



चित्र 19.6 नेफ्रोन तथा वासा रेक्टा द्वारा निर्मित प्रतिधारा प्रवाह क्रियाविधि

आरोही भुजा द्वारा होता है। जिसे हेनले-लूप की अवरोही भुजा के साथ विनमित किया है। सोडियम क्लोराइड, अंतराकाश को वासा रेक्टा की आरोही भुजा द्वारा लौटा दिया जाता है। इसी प्रकार यूरिया की कुछ मात्रा हेनले-लूप के पतले आरोही भाग में विसरण द्वारा प्रविष्ट होती है जो संग्रह नलिका द्वारा अंतराकाशी को पुन: लौटा दी जाती है। ऊपर वर्णित पदार्थों का परिवहन, हेनले-लूप तथा वासा रेक्टा की विशेष व्यवस्था द्वारा सुगम बनाया जाता है जिसे **प्रतिधारा क्रियाविधि** कहते हैं। यह क्रियाविधि मध्यांश के अंतराकाशी की प्रवणता को बनाए रखती है। इस प्रकार की अंतराकाशीय प्रवणता संग्रह नलिका द्वारा जल के सहज अवशोषण में योगदान करती है और निस्यंद का सांद्रण करती है (चित्र 19.6)। हमारे वृक्क प्रारंभिक निस्यंद की अपेक्षा लगभग चार गुना अधिक सांद्र मूत्र उत्सर्जित करते हैं। यह निश्चित ही जल के ह्रास को रोकने की मुख्य क्रियाविधि है।

19.5 वृक्क क्रियाओं का नियमन

वृक्कों की क्रियाविधि का नियंत्रण और नियमन हाइपोथैलेमस के हार्मोन की पुनर्भरण क्रियाविधि, (सान्निध्य गुच्छ उपकरण), (जेजीए) और कुछ सीमा तक हृदय द्वारा होता है।

शरीर में उपस्थित परासरण ग्राहियाँ रक्त आयतन/शरीर तरल आयतन और आयनी सांद्रण में बदलाव द्वारा सक्रिय होती हैं। शरीर से मूत्र द्वारा जल का अत्यधिक ह्रास (मूत्रलता/डाइयूरेसिस) इन ग्राहियों को सक्रिय करता है, जिससे हाइपोथैलेमस प्रतिमूत्रल हार्मोन (एंटीडाइयूरेटि हार्मोन) (एडीएच) और न्यूरोहाइपोफाइसिस को वैसोप्रेसिन के स्राव हेतु प्रेरित करता है। एडीएच नलिका के अंतिम भाग में जल के पुनरावशोषण को सुगम बनाता है और मूत्रलता को रोकता है। शरीर तरल के आयतन में वृद्धि परासण ग्रहियों को निष्क्रिय कर देती है और पुनर्भरण को पूरा करने के लिए एडीएच के स्रवण का निरोध करती है। एडीएच वृक्क के कार्यों को रक्त वाहिनियों पर सकुचनी प्रभावों द्वारा भी प्रभावित करता है। इससे रक्त दाब बढ़ जाता है। रक्तदाब बढ़ जाने से गुच्छ प्रवाह बढ़ जाता है और इससे जीएफआर बढ़ जाता है।

जेजीए की जटिल नियमनकारी भूमिका है। गुच्छीय रक्त प्रवाह/गुच्छीय रक्त दाब/जीएफआर में गिरावट से जेजी कोशिकाएं सक्रिय होकर **रेनिन** को मुक्त करती है। रेनिन रक्त में उपस्थित ऐंजिओटेंसिनोजन को एंजियोटेंसिन-I और बाद में एंजियोटेंसिन-द्वितीय में बदल देती है। एंजियोटेंसिन द्वितीय एक प्रभावकारी वाहिका संकीर्णक (वेसोकेंसट्रिक्टर) है जो गुच्छीय रुधिर दाब तथा जीएफआर को बढ़ा देता है। एंजोयोटेंसिन द्वितीय अधिवृक्क वल्कुट को एल्डोस्टीरोन हार्मोन स्रवण के लिए प्रेरित करता है। एल्डोस्टीरोन के कारण नलिका के दूरस्थ भाग में Na^+ तथा जल का पुनरावशोषण होता है। इससे भी रक्त दाब तथा जीएफआर में वृद्धि होती है। यह जटिल क्रियाविधि **रेनिन एंजियोटेंसिन** क्रियाविधि कहलाती है।

हृदय के अलिंदों में अधिक रुधिर के बहाव से **अलिंदीय नेट्रियेरेटिक कारक** (एएनएफ) स्रवित होता है। एएनएफ से वाहिकाविस्फारण (रक्त वाहिकाओं का विस्फारण)

होता है जिससे रक्त दाब कम हो जाता है। इस प्रकार से एएनएफ क्रियाविधि रेनिन-एंजियोटेंसिन क्रियाविधि पर नियंत्रक का काम करता है।

19.6 मूत्रण

वृक्क द्वारा निर्मित मूत्र अंत में मूत्राशय में जाता है और केंद्रीय तंत्रिका तंत्र द्वारा ऐच्छिक संकेत दिए जाने तक संग्रहित रहता है। मूत्राशय में मूत्र भर जाने पर उसके फैलने के फलस्वरूप यह संकेत उत्पन्न होता है। मूत्राशय भित्ति से इन आवेगों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में भेजा जाता है। केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से मूत्राशय की चिकनी पेशियों के संकुचन तथा मूत्राशयी-अवरोधिनी के शिथिलन हेतु एक प्रेरक संदेश जाता है, जिससे मूत्र का उत्सर्जन होता है। मूत्र उत्सर्जन की क्रिया मूत्रण कहलाती है और इसे संपन्न करने वाली तंत्रिका क्रियाविधि मूत्रण-प्रतिवर्त कहलाती है।

एक वयस्क मनुष्य प्रतिदिन औसतन 1-1.5 लीटर मूत्र उत्सर्जित करता है। मूत्र एक विशेष गंध युक्त जलीव तरल है, जो रंग में हल्का पीला तथा थोड़ा अम्लीय (pH-6) होता है (pH-6)। औसतन प्रतिदिन 25-30 ग्राम यूरिया का उत्सर्जन होता है। विभिन्न अवस्थाएं मूत्र की विशेषताओं को प्रभावित करती हैं। मूत्र का विश्लेषण वृक्कों के कई उपापचयी विकारों और उनके ठीक से कार्य न करने को कुसंक्रिया जैसे रोग निदान में मदद करता है। उदाहरण के लिए मूत्र में ग्लूकोस की उपस्थिति (ग्लाइकोसूरिया) तथा कीटोन काय की उपस्थिति (कीटोनयूरिया) मधुमेह (डाइबिटीज मेलीटस) के लक्षण है।

19.7 उत्सर्जन में अन्य अंगों की भूमिका

वृक्कों के अलावा फुप्फुस यकृत और त्वचा भी उत्सर्जी अपशिष्टों को बाहर निकालने में मदद करते हैं।

हमारे फेफड़े प्रतिदिन भारी मात्रा में CO_2 (18L/day) और जल की पर्याप्त मात्रा का निष्कासन करते हैं। हमारे शरीर की सबसे बड़ी ग्रंथि यकृत 'पित्त' का स्राव करती है जिसमें बिलिरूबिन, बिलीविरडिन, कॉलेस्ट्रॉल, निम्नीकृत स्टीरॉयड हार्मोन, विटामिन तथा औषध आदि होते हैं। इन अधिकांश पदार्थों को अंततः मल के साथ बाहर निकाल दिया जाता है।

त्वचा में उपस्थित स्वेद ग्रंथियाँ तथा तैल-ग्रंथियाँ भी स्राव द्वारा कुछ पदार्थों का निष्कासन करती हैं। स्वेद ग्रंथि द्वारा निकलने वाला पसीना एक जलीय द्रव है, जिसमें नमक, कुछ मात्रा में यूरिया, लैक्टिक अम्ल इत्यादि होते हैं। हालाकि पसीने का मुख्य कार्य वाष्पीकरण द्वारा शरीर सतह को ठंडा रखना है; लेकिन यह ऊपर बताए गए कुछ पदार्थों के उत्सर्जन में भी सहायता करता है।

तैल-ग्रंथियाँ सीबम द्वारा कुछ स्टेरोल, हाइड्रोकार्बन एवं मोम जैसे पदार्थों का निष्कासन करती हैं। ये स्राव त्वचा को सुरक्षात्मक तैलीय कवच प्रदान करते हैं। क्या आप जानते हैं कि कुछ नाइट्रोजनी अपशिष्टों का निष्कासन लार द्वारा भी होता है?

19.8 वृक्क-विकृतियाँ

वृक्कों की कुसंक्रिया के फलस्वरूप रक्त में यूरिया एकत्रित हो जाता है। जिसे **यूरिमिया** कहते हैं जो कि अत्यंत हानिकारक है। यह वृक्क-पात के लिए मुख्यरूप से उत्तरदायी है। इसके मरीजों में यूरिया का निष्कासन हीमोडायलिसिस (**रक्त अपोहन**) द्वारा होता है। रोगी की धमनी से रक्त निकालकर उसमें हिपेरिन जैसा कोई थक्का रोधी मिलाकर अपोहनकारी इकाई में भेजा जाता है। इस इकाई में कुंडलित सेलोफेन नली होती है और यह ऐस द्रव से घिरी रहती है, जिसका संगठन नाइट्रोजनी अपशिष्टों को छोड़कर प्लाज्मा के समान होता है। छिद्रयुक्त सेलोफेन झिल्ली से अपोहनी द्रव में अणुओं का आवागमन सांद्र प्रवणता के अनुसार होता है। अपोहनी द्रव में नाइट्रोजनी अपशिष्ट अनुपस्थित होते हैं, अतः ये पदार्थ बाहर की ओर गमन करते हैं और रक्त को शुद्ध करते हैं। शुद्ध रक्त में हीपेरिन विरोधी डालकर, उसे रोगी की शिराओं द्वारा पुनः शरीर में भेज दिया जाता है। यह विधि संसार में यूरेमिक व्याधि से हजारों पीड़ितों के लिए एक वरदान है।

वृक्क की क्रियाहीनता को दूर करने का अंतिम उपाय वृक्क प्रत्यारोपण है। प्रत्यारोपण में मुख्यतया निकट संबंधी दाता के क्रियाशील वृक्क का उपयोग किया जाता है, जिससे प्राप्तकर्ता का प्रतिरक्षा तंत्र उसे अस्वीकार नहीं करे। आधुनिक क्लीनिकल विधियाँ इस प्रकार की जटिल तकनीक सफलता की दर को बढ़ाती है।

रीनल केलकलाई: वृक्क में बनी पथरी या अघुलनशील क्रिस्टलित लवण के पिंड (जैसे ऑक्सलेट आदि)।

ग्लोमेलोनेफ्राइटिस (गुच्छ शोथ): वृक्क के गुच्छ-शोथ की प्रदाहकता।

सारांश

शरीर में विभिन्न क्रियाओं द्वारा कई नाइट्रोजनी पदार्थ, आयन, CO_2 जल आदि इकट्ठे हो जाते हैं, जिसमें से अधिकांश शरीर को समस्थापन में रखने के लिए विभिन्न विधियों द्वारा निष्कासित किए जाते हैं।

भिन्न-भिन्न प्राणियों में नाइट्रोजनी अपशिष्टों की प्रकृति, उनका निर्माण और उत्सर्जन विभिन्न प्रकार से होता है जो मुख्यत जल की उपलब्धता पर निर्भर करता है। उत्सर्जित किए जाने वाले मुख्य नाइट्रोजनी अपशिष्ट - अमोनिया, यूरिया, यूरिक अम्ल हैं।

आदिवृक्ककी (प्रोटोनेफ्रीडिया), वृक्कक, मैलपीगी नलिकाएं, हरित ग्रंथियाँ और वृक्क प्राणियों के मुख्य उत्सर्जी अंग हैं। ये न केवल नाइट्रोजनी अपशिष्टों को शरीर से बाहर निकालते हैं; बल्कि शरीर द्रवों में आयनी और अम्ल क्षार संतुलन भी बनाए रखते हैं।

मानव के उत्सर्जी तंत्र में एक जोड़ी वृक्क, एक जोड़ी मूत्रवाहिनी, एक मूत्राशय और मूत्र मार्ग सम्मिलित हैं। प्रत्येक वृक्क में एक मिलियन नलिकाकार संरचनाएं वृक्काणु होते हैं। वृक्काणु वृक्क की क्रियात्मक इकाई है और उसके दो भाग होते हैं - गुच्छ और वृक्क नलिका। गुच्छ अभिवाही धमनिकायों से बना केशिकाओं का गुच्छ है जो कि वृक्क धमनी की सूक्ष्म शाखाएं होती है। वृक्क नलिका का प्रारंभ दोहरी भित्ति युक्त बोमन संपुट से होता है जो आगे समीपस्थ संवलित नलिका (पीसीटी) हेनले-लूप और दूरस्थ संचलित (डीसीटी) नलिका में विभेदित होती है। कई वृक्काणु की दूरस्थ संवलित नलिकाएं एकत्रित होकर संग्रह नलिका बनाती

हैं जो अंत में मध्यांश पिरामिड में से होकर वृक्कीय श्रोणि में खुलती हैं। बोमन-संपुट एवं गुच्छं मिलकर मेलपीगी काय या वृक्क कणिका (कापर्सल) बनाते हैं।

मूत्र निर्माण में 3 मुख्य प्रक्रियाएं होती है – निस्यंदन, पुनरावशोषण और स्रवण।

निस्यंदन, गुच्छ द्वारा केशिकाओं के रक्त दाब का उपयोग कर संपादित की जाने वाली अचयनात्मक प्रक्रिया है। गुच्छ द्वारा बोमेन-संपुट में प्रति मिनट 125 मिली. निस्यंद बनाने के लिए प्रति मिनट 1200 मिली. रक्त का निस्यंदन होता है (जीएफआर)। वृक्काणु के विशेष भाग जेजीए की जीएफआर के नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका है। निस्यंद के 99 प्रतिशत भाग का वृक्काणु के विभिन्न भागों द्वारा पुनरावशोषण किया जाता है। समीपस्थ संवलित नलिका पीसीटी पुनरावशोषण और चयनात्मक स्रवण का मुख्य स्थान है। वृक्क मध्यांश अंतराकाशी में हेनले-लूप परासरण प्रवणता (300 mOsm/L से 1200 mOsm/लीटर) को नियमित करने में सहायता करता है। दूरस्थ संवलित नलिका (डीसीटी) और संग्रह नलिका जल और विद्युत अपघट्यों का पुनरावशोषण करती हैं, जो परासरण नियमन में सहायक है। शरीर-तरल के आयनी साम्य और उसके pH को बनाए रखने के लिए नलिकाओं द्वारा H^+, K^+ और NH_3 निस्यंद स्रवित होते हैं। अमोनिया का नलिकाओं द्वारा स्राव भी होता है।

प्रतिधारा क्रियाविधि हेनले-लूप की दो भुजाओं और वासा-रेक्टा के बीच कार्य करती है। निस्यंद जैसे-जैसे अवरोही भुजा में नीचे उतरता है, वैसे-वैसे सांद्र होता जाता है, लेकिन आरोही भुजा में यह पुनः तनु हो जाता है। इस व्यवस्था के द्वारा वैद्युत अपघट्य और कुछ यूरिया, अंतराकाशी स्थल में बचे रह जाते हैं। डी. सी.टी. और संग्रह नलिका निस्यंद को 4 गुना अधिक सांद्र कर देते हैं – अर्थात् 300 mOsm/लीटर से 1200 mOsm/लीटर तक यह जल संरक्षण की उत्तम क्रियाविधि है। मूत्राशय में मूत्र का संग्रह केंद्रीय तंत्रिका तंत्र द्वारा ऐच्छिक संकेत प्राप्त होने तक किया जाता है। संकेत प्राप्त होने पर मूत्र मार्ग द्वारा इसका निष्कासन मूत्रण कहलाता है। त्वचा, फेफड़े और यकृत भी उत्सर्जन में सहयोग करते हैं।

अभ्यास

1. गुच्छीय निस्यंद दर (GFR) को पारिभाषित कीजिए।
2. गुच्छीय निस्यंद दर (GFR) की स्वनियमन क्रियाविधि को समझाइए।
3. निम्नलिखित कथनों को सही अथवा गलत में इंगित कीजिए।
   (अ) मूत्रण प्रतिवर्ती क्रिया द्वारा होता है।
   (ब) एडीएच मूत्र को अल्पपरासरणी बनाते हुए जल के निष्कासन में सहायक होता है।
   (स) बोमेन-संपुट में रक्तप्लाज्मा से प्रोटीन रहित तरल निस्यंदित होता है।
   (द) हेनले-लूप मूत्र के सांद्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
   (य) समीपस्थ संवलित नलिका (PCT) में ग्लूकोस सक्रिय रूप से पुनः अवशोषित होता है।
4. प्रतिधारा क्रियाविधि का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
5. उत्सर्जन में यकृत, फुप्फुस तथा त्वचा का महत्व बताइए।
6. मूत्रण की व्याख्या कीजिए।

7. स्तंभ I के बिंदुओं का खंड स्तंभ II से मिलान करें।

स्तंभ I	स्तंभ II
(i) अमोनियोत्सर्जन	(अ) पक्षी
(ii) बोमेन-संपुट	(ब) जल का पुनः अवशोषण
(iii) मूत्रण	(स) अस्थिल मछलियाँ
(iv) यूरिकाअम्ल उत्सर्जन	(द) मूत्राशय
(v) एडीएच	(य) वृक्क नलिका

8. परासरण नियमन का अर्थ बताइए।

9. स्थलीय प्राणी सामान्यतया यूरिया उत्सर्जी या यूरिक अम्ल उत्सर्जी होते हैं तथा अमोनिया उत्सर्जी नहीं होते हैं, क्यों?

10. वृक्क के कार्य में जक्सटागुच्छउपकरण (JGA) का क्या महत्व है?

11. नाम का उल्लेख कीजिए:
   (अ) एक कशेरुकी जिसमें ज्वाला कोशिकाओं द्वारा उत्सर्जन होता है।
   (ब) मनुष्य के वृक्क के वल्कुट के भाग जो मध्यांश के पिरामिड के बीच धँसे रहते हैं।
   (स) हेनले-लूप के समानांतर उपस्थित केशिका का लूप।

12. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें :-
   (अ) हेनले-लूप की आरोही भुजा जल के लिए _____ जबकि अवरोही भुजा इसके लिए _____ है।
   (ब) वृक्क नलिका के दूरस्थ भाग द्वारा जल का पुनरावशोषण _______ हार्मोन द्वारा होता है।
   (स) अपोहन द्रव में _______ पदार्थ के अलावा रक्त प्लाज्मा के अन्य सभी पदार्थ उपस्थित होते हैं।
   (द) एक स्वस्थ व्यस्क मनुष्य द्वारा औसतन _______ ग्राम यूरिया का प्रतिदिन उत्सर्जन होता है।

अध्याय 20

गमन एवं संचलन

संचलन जीवों की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। जंतुओं एवं पादपों में अनेकों तरह के संचलन होते हैं। अमीबा सदृश एक कोशिक जीव में जीवद्रव्य का प्रवाही संचलन इसका एक साधारण रूप है। कई जीव पक्ष्माभ, कशाभ और स्पर्शक द्वारा संचलन दर्शाते हैं। मनुष्य अपने पाद, जबड़े, पलक, जिह्वा आदि को गतिशील कर सकता है। कुछ संचलनों में स्थान या अवस्थिति परिवर्तन होता है। ऐसे ऐच्छिक संचलनों को **गमन** कहते हैं। टहलना, दौड़ना, चढ़ना, उड़ना, तैरना आदि सभी गमन या संचलन के ही कुछ रूप हैं। चलन संरचनाओं का अन्य प्रकार की गति में संलग्न संरचनाओं से भिन्न होना आवश्यक नहीं है। उदाहरण के लिए, *पैरामिशियम* में पक्ष्माभ भोजन की कोशिका-ग्रसनी में प्रवाह और चलन दोनों कार्य होते हैं। *हाइड्रा* अपने स्पर्शक शिकार पकड़ने और चलन दोनों के लिए प्रयोग कर सकता है। हम अपने पाद शरीर की मुद्रा बदलने के लिए प्रयोग में लाते हैं और चलन के लिए भी। उपर्युक्त प्रेक्षणों से संकेत मिलता है कि गति और चलन का पृथक् रूप से अध्ययन नहीं किया जा सकता है। दोनों के संबंध को इस उक्ति में समाहित किया जा सकता है कि सभी चलन गति होते हैं; लेकिन सभी गति चलन नहीं हैं। जंतुओं के चलन के तरीके परिस्थिति की माँग और आवास के अनुरूप बदलते हैं। फिर भी चलन की क्रिया प्राय: भोजन, आश्रय, साथी, अनुकूल प्रजनन स्थल, अनुकूल प्राकृतिक स्थिति की तलाश या शत्रुओं/भक्षियों से पलायन के लिए की जाती है।

20.1 गति के प्रकार

मानव शरीर की कोशिकाएं मुख्यत: तीन प्रकार की गति दर्शाती हैं, यथा-अमीबीय, पक्ष्माभी और पेशीय।

हमारे शरीर में कुछ विशिष्ट कोशिकाएं, जैसे - महाभक्षकाणु (macrophages) और श्वेताणु (leucocytes) रुधिर में अमीबीय गति प्रदर्शित करती हैं। यह क्रिया जीवद्रव्य की प्रवाही गति द्वारा कूकूट पाद बनाकर की जाती है (अमीबा सदृश)। कोशिका कंकाल तंत्र जैसे - सूक्ष्मतंतु भी अमीबीय गति में सहयोगी होते हैं।

हमारे अधिकांश नलिकाकार अंगों में, जो पक्ष्माभ उपभित्ति से आस्तारित होते हैं, पक्ष्माभ गति होती है। श्वास नली में पक्ष्माभों की समन्वित गति से वायुमंडलीय वायु के साथ प्रवेश करने वाले धूल कणों एवं बाह्य पदार्थों को हटाने में मदद मिलती है। मादा प्रजनन मार्ग में डिंब का परिवहन पक्ष्माभ गति की सहायता से ही होता है।

हमारे पादों, जबड़ों, जिह्वा, आदि की गति के लिए पेशीय गति आवश्यक है। पेशियों के संकुचन के गुण का प्रभावी उपयोग मनुष्य और अधिकांश बहुकोशिकीय जीवों के चलन और अन्य प्रकार की गतियों में होता है। चलन के लिए पेशीय, कंकाल और तंत्रिका तंत्र की पूर्ण समन्वित क्रिया की आवश्यकता होती है। इस अध्याय में आप पेशियों के प्रकार, उनकी संरचना, उनके संकुचन की क्रियाविधि और कंकाल तंत्र के महत्वपूर्ण पहलू के बारे में जानेंगे।

20.2 पेशी

पेशी एक विशेष प्रकार का ऊतक है जिसकी उत्पत्ति अध्यजनस्तर से होती है। एक वयस्क मनुष्य के शरीर के भार का 40-50 प्रतिशत हिस्सा पेशियों का होता है। इनके कई विशेष गुण होते हैं, जैसे- उत्तेजनशीलता, संकुचनशीलता, प्रसार्य एंव प्रत्यास्थता। पेशियों को भिन्न-भिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया गया है, जैसे-स्थापन, रंग-रूप और उनकी क्रिया की नियमन पद्धति। स्थापन के आधार पर, तीन प्रकार की पेशियाँ पाई जाती हैं - (i) कंकाल (ii) अंतरंग और (iii) हृद।

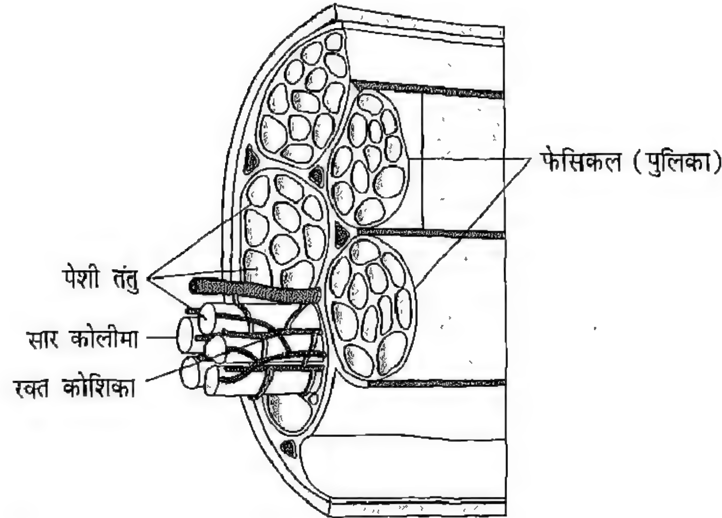
कंकाल पेशियाँ शारीरिक कंकाल अवयवों के निकट संपर्क में होती हैं। सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखने पर इनमें धारियाँ दिखती हैं, अतः इन्हें रेखित पेशी कहते हैं। चूँकि इनकी क्रियाओं का तंत्रिका तंत्र द्वारा ऐच्छिक नियंत्रण होता है, अतः इन्हें **ऐच्छिक पेशी** भी कहते हैं। ये मुख्य रूप से चलन क्रिया और शारीरिक मुद्रा बदलने में सहायक होती हैं।

अंतरंग पेशियाँ शरीर के खोखले अंतरंग अगों; जैसे- आहार नाल, जनन मार्ग आदि की भीतरी भित्ति में स्थित होती हैं। ये अरेखित और चिकनी दिखती हैं। अतः इन्हें **चिकनी पेशियाँ (अरेखित पेशी)** कहते हैं। इनकी क्रिया तंत्रिका तंत्र के ऐच्छिक नियंत्रण में नहीं होती, इसलिए ये अनैच्छिक पेशियाँ कही जाती हैं। ये पाचन मार्ग द्वारा भोजन और जनन मार्ग द्वारा युग्मक (gamete) के अभिगमन (परिवहन) में सहायता करती हैं।

जैसा कि नाम से विदित है, **हृद पेशियाँ** हृदय की पेशियाँ हैं। कई हृद पेशी कोशिकाएं हृद पेशी के गठन के लिए शाश्वत रचना में एकत्रित होती हैं। रंग रूप के आधार पर, हृद पेशियाँ रेखित होती हैं। ये अनैच्छिक स्वभाव की होती हैं; क्योंकि तंत्रिका तंत्र इनकी क्रियाओं को सीधे नियंत्रित नहीं करता।

कंकाल पेशी की संरचना और संकुचन क्रियाविधि को समझने के लिए हम इसका विस्तार से परीक्षण करेंगें। हमारे शरीर में, प्रत्येक संगठित कंकाल पेशी कई **पेशी बंडलों**

या **पूलिकाओं** (fascicles) की बनी होती है, जो संयुक्त रूप से कोलैजनी संयोजी ऊतक स्तर से घिरे रहती हैं जिसे **संपट्ट** (fascia) कहते हैं। प्रत्येक पेशी बंडल में कई पेशी रेशे होते हैं (चित्र 20.1)। प्रत्येक पेशी रेशा प्लाज्मा झिल्ली से आस्तारित होता है



चित्र 20.1 पेशी समूह तथा पेशी तंतु को दर्शाते हुए पेशी का अनुप्रस्थ काट

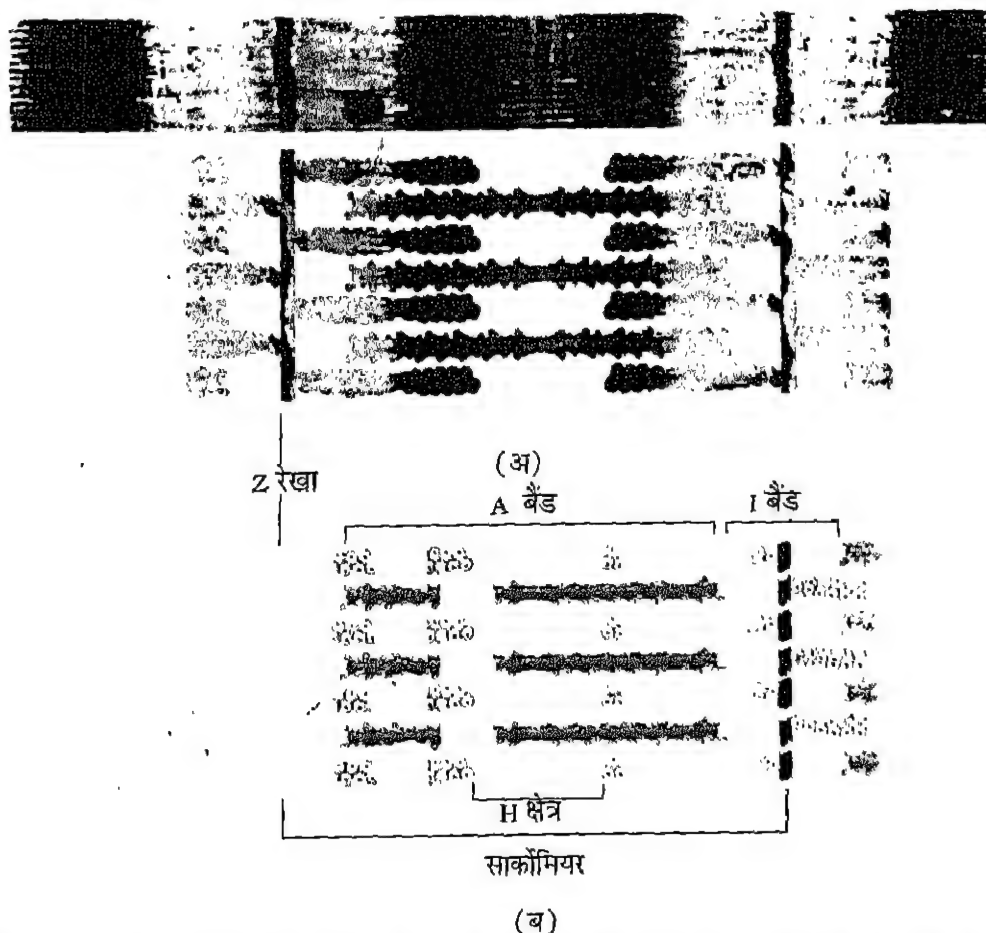
जिसे सार्कोलेमा कहते हैं। पेशी रेशा एक संकोशिका है क्योंकि पेशीद्रव्य (sarcoplasm) में कई केंद्रक होते हैं। अंत:द्रव्य जालिका अर्थात् पेशी रेशों के पेशीद्रव्य जालिका (सारकोप्लाज्मिक रेटीक्यूलम) कैल्सियम आयनों का भंडार गृह है; पेशी रेशा की एक विशेषता पेशीद्रव्य में समांतर रूप से व्यस्थित अनेक तंतुओं की उपस्थिति है जिसे पेशीतंतु (मायोफिलामेंट) **पेशीतंतुक** (मायोफाईब्रिल) कहते हैं। प्रत्येक पेशी तंतुक में क्रमवार गहरे एवं हल्के पट्ट (बैंड) होते हैं। पेशी रेशक के विस्तृत अध्ययन ने यह स्थापित कर दिया है कि इनका रेखित रूप दो प्रमुख प्रोटीन - **एक्टिन** और **मायोसिन** के विशेष प्रकार के वितरण के कारण होता है। हल्के बैंडों में एक्टिन होता है जिसे I - बैंड या समदैशिक बैंड कहते हैं जबकि गहरे बैंडों को 'A' बैंड या विषम दैशिक बैंड कहते हैं जिसमें मायोसिन होता है। दोनों प्रोटीन छड़नुमा संरचनाओं में परस्पर समानांतर पेशी रेशक के अनुदैर्ध्य अक्ष के भी समानांतर व्यवस्थित होते हैं एक्टिन तंतु मायोसिन तंतुओं की तुलना में पतले होते हैं, अत: इन्हें क्रमश: पतले एवं मोटे तंतु कहते हैं। प्रत्येक I-बैंड के मध्य में इसे द्विविभाजित करने वाली एक प्रत्यास्थ रेखा होती है, जिसे 'Z'-रेखा कहते हैं। पतले तंतु 'Z'-रेखा से दृढ़ता से जुड़े होते हैं। 'A' बैंड के मोटे तंतु, 'A' बैंड के मध्य में एक पतली रेशेदार झिल्ली, जिसे 'M'-रेखा कहते हैं, द्वारा जुड़े होते हैं। **पेशी रेशों** की पूरी लंबाई में 'A' और 'I' बैंड एकांतर क्रम में व्यवस्थित होते हैं। दो अनक्रमित 'Z'-रेखाओं के बीच स्थित पेशी रेशक का भाग एक संकुचन कार्य इकाई बनाता है जिसे सार्कोमियर कहते हैं (चित्र 20.2)। विश्राम की अवस्था में, पतले तंतुओं के सिरे दोनों ओर के मोटे तंतुओं के बीच के भाग को छोड़कर स्वतंत्र सिरों पर अतिच्छादित होते हैं।

(पतले तंतुओं के सिरे मोटे तंतुओं के सिरों के बीच में पाए जाते हैं) मोटे तंतुओं का केंद्रीय भाग जो पतले तंतुओं से अतिच्छादित नहीं होता, 'H'-क्षेत्र कहलाता है।

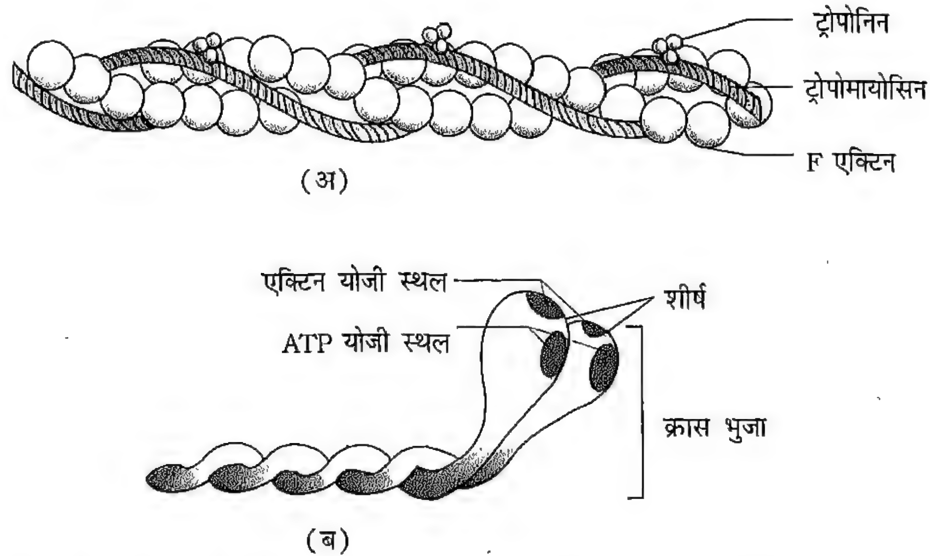
20.2.1 संकुचनशील प्रोटीन की संरचना

प्रत्येक एक्टिन (पतले) तंतु एक दूसरे से सर्पिल रूप में कुंडलित दो 'F' (तंतुमय) एक्टिनों का बना होता है। प्रत्येक 'F' एक्टिन 'G' (गोलाकार) एक्टिन इकाइयों का बहुलक है। एक दूसरे प्रोटीन, ट्रोपोमायोसिन के दो तंतु 'F' एक्टिन के निकट पूरी लंबाई में जाते हैं। एक जटिल ट्रोपोनिन प्रोटीन अणु ट्रोपोमायोसिन पर नियत अंतरालों पर पाई जाती है। विश्राम की अवस्था में ट्रोपोनिन की एक उप-इकाई एक्टिन तंतुओं के मायोसिन के बंध बनाने वाले सक्रिय स्थानों को ढक कर रखती है (चित्र 20.3 अ)।

प्रत्येक मायोसिन (मोटे) तंतु भी एक बहुलक प्रोटीन है। कई एकलकी प्रोटीन जिसे मेरोमायोसिन कहते हैं (चित्र 20.3 ब) एक मोटा तंतु बनाती हैं। प्रत्येक मेरोमायोसिन के दो महत्वपूर्ण भाग होते हैं- एक छोटी भुजा सहित गोलाकार सिर तथा एक पूँछ। सिर को



चित्र 20.2 (अ) सार्कोमियर को दर्शाते हुए एक पेशी तंतु की संरचना (ब) एक सार्कोमियर का आरेख



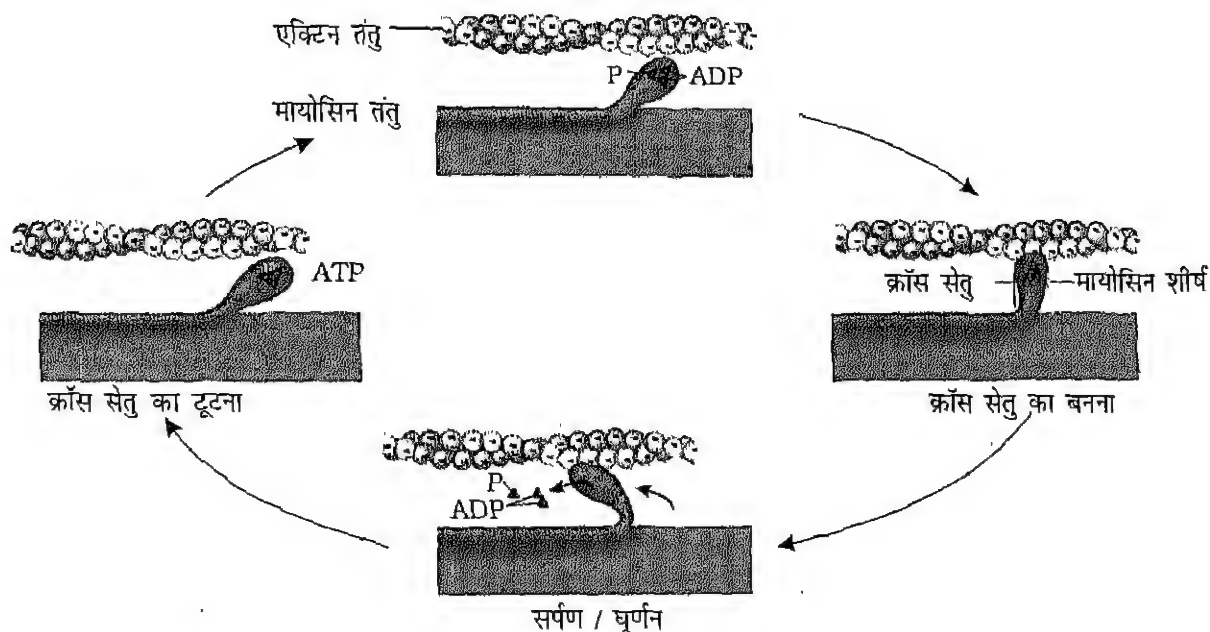
चित्र 20.3 (अ) एक एक्टिन (पतला) तंतु (ब) एकल मायोसिन (मिरोमायोसिन)

भारी मेरोमायोसिन (HMM) और पूँछ को हल्का मेरोमायोसिन (LMM) कहते हैं। मेरोमायोसिन अवयव अर्थात् सिर एवं छोटी भुजा पर नियत दूरी तथा आपस में एक नियत दूरी नियत कोण पर A तंतु पर बाहर की तरफ उभरे होते हैं। जिसे क्रास भुजा (कॉस-आर्म) कहते हैं। गोलाकार सिर एक सक्रिय एटिपीऐज एंजाइम है जिसमें एटीपी के बंधन स्थान तथा एक्टिन के लिए सक्रिय स्थान होते हैं।

20.2.2 पेशी संकुचन की क्रियाविधि

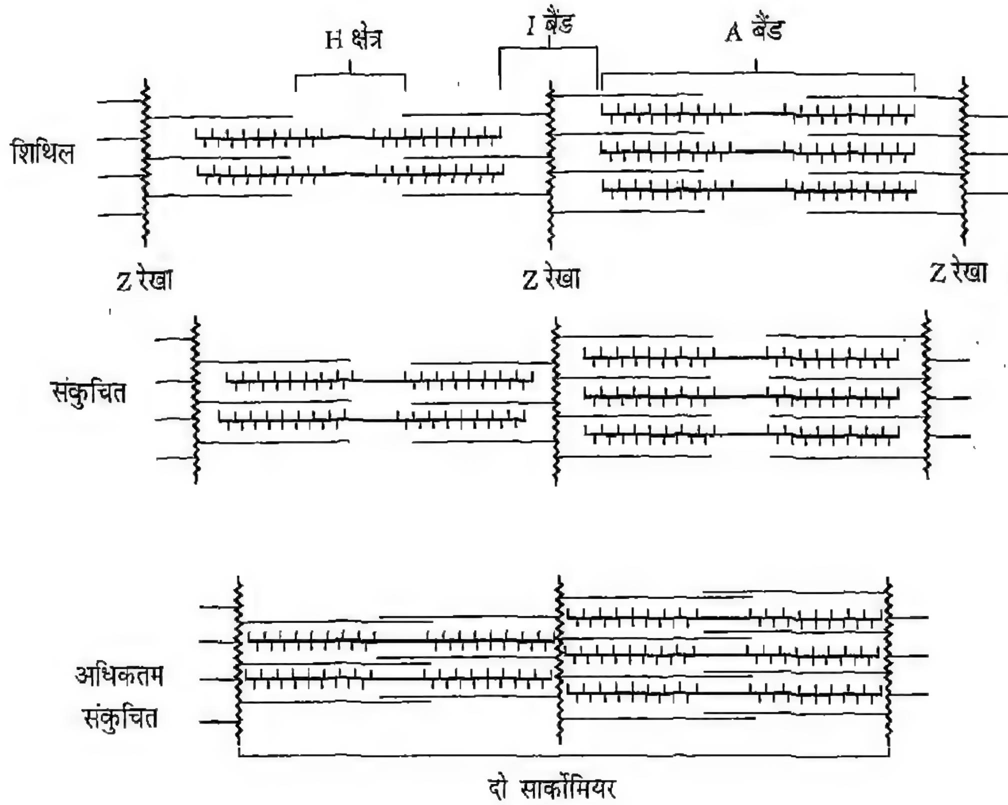
पेशी संकुचन की क्रियाविधि को सर्पीतंतु सिद्धांत द्वारा अच्छी तरह समझाया जा सकता है जिसके अनुसार पेशीय रेशों का संकुचन पतले तंतुओं के मोटे तंतुओं के ऊपर सरकने से होता है।

केंद्रीय तंत्रिका तंत्र की प्रेरक तंत्रिका द्वारा एक संकेत प्रेषण से पेशी संकुचन का आरंभ होता है। एक प्रेरक न्यूरोन तथा इससे पेशीय रेशे एक प्रेरक इकाई का गठन करते हैं। प्रेरक तंत्रिएक और पेशीय रेशा के सार्कोलेमा की संधि को तंत्रिका-पेशीय संगम या प्रेरक अंत्य पट्टिका कहते हैं। इस संगम पर एक तंत्रिक संकेत पहुँचने से एक तंत्रिका संचारी (एसिटिल कोलिन) मुक्त होता है जो सार्कोलेमा में एक क्रिया विभव (action potential) उत्पन्न करता है। यह समस्त पेशीय रेशे पर फैल जाता है जिससे सार्कोप्लाज्म में कैल्सियम आयन मुक्त होते हैं। कैल्सियम आयन स्तर में वृद्धि से एक्टिन तंतु पर ट्रोपोनिन की उप इकाई से कैल्सियम बंध बनाकर एक्टिन के ढके हुए सक्रिय स्थानों को खोल देता है। ATP के जल अपघटन से प्राप्त ऊर्जा का उपयोग कर मायोसिन शीर्ष एक्टिन के खुले सक्रिय स्थानों से क्रास सेतु बनाने के लिए बँध जाते हैं (चित्र 20.4)। इस बंध से जुड़े हुए एक्टिन तंतुओं 'A' बैंड के केंद्र की तरफ खिंचते हैं इन एक्टिनों से जुड़ी हुई 'A' रेखा भी अंदर की तरफ खिंच जाती है जिससे सार्कोमियर



चित्र 20.4 क्रॉस सेतु के बनने की अवस्थाएं/शीर्ष का घूर्णन तथा क्रॉस सेतु का टूटना

छोटा हो जाता है अर्थात् संकुचित हो जाता है। ऊपर के चरणों से स्पष्ट है कि पेशी के छोटा होते समय अर्थात् संकुचन के समय 'I'-बैंडों की लंबाई कम हो जाती है जबकि 'A'-बैंडों की लंबाई ज्यों कि त्यों रहती है (चित्र 20.5)। ADP और P_2 मुक्तकर, मायोसिन विश्राम अवस्था में वापस चला जाता है। एक नए ATP के बंधने से क्रास-सेतु टूटते हैं (चित्र 20.4)। मायोसिन शीर्ष ATP को अपघटित कर पेशी के ओर संकुचन के लिए क्रिया दोहराते हैं किंतु तंत्रिका संवेगी के समाप्त हो जाने पर सार्कोप्लाज्मिक रेटीक्यूलम द्वारा Ca^{++} के अवशोषण से एक्टिन स्थल पुनः ढक जाते हैं। इसके फलस्वरूप 'Z'-रेखाएं अपने मूल स्थान पर वापस हो जाती हैं; अर्थात् शिथिलन हो जाता है। विभिन्न पेशियों में रेशों की प्रतिक्रिया अवधि में अंतर हो सकता है। पेशियों के बार-बार उत्तेजित होने पर उनमें ग्लाइकोजन के अवायवी विखंडन से लैक्टिक अम्ल का जमाव होने लगता है जिससे थकान (श्रांति) होती है। पेशी में ऑक्सीजन भंडारित करने वाला लाल रंग का एक मायोग्लोबिन होता है। कुछ पेशियों में मायोग्लोबिन की मात्रा ज्यादा होती है जिससे वे लाल रंग के दिखते हैं। ऐसी पेशियों को लाल पेशियाँ कहते हैं। ऐसी पेशियों में माइट्रोकोंड्रिया अधिक होती हैं जो ATP के निर्माण हेतु उनमें भंडारित ऑक्सीजन की बड़ी मात्रा का उपयोग कर सकती हैं। इसलिए, इन पेशियों को वायुजीवी पेशियाँ भी कह सकते हैं। दूसरी तरफ, कुछ पेशियों में मायोग्लोबिन की बहुत कम मात्रा पाई जाती है जिससे वे हल्के रंग की अथवा श्वेत प्रतीत होती हैं। ये श्वेत पेशियाँ हैं। इनमें माइटोकोंड्रिया तो अल्पसंख्यक होती है, लेकिन पेशीद्रव्य जालिका अत्यधिक मात्रा में होती हैं। ये अवायवीय विधि द्वारा ऊर्जा प्राप्त करती हैं।

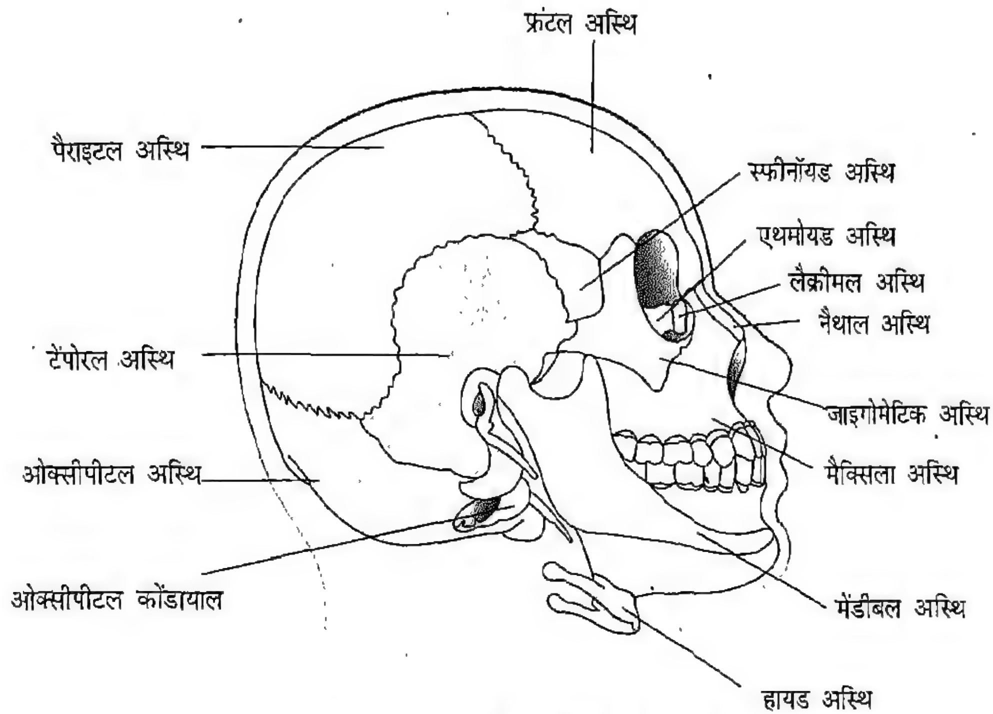


चित्र 20.5 पेशी संकुचन का सर्पी तंतु सिद्धांत (पतले तंतु की गति एवं I बैंड तथा H क्षेत्र की तुलनात्मक आकार)

20.3 कंकाल तंत्र

कंकाल तंत्र में अस्थियों का एक ढांचा और उपास्थियां होती हैं। शरीर की गति में इस तंत्र की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कल्पना कीजिए; जब बिना जबड़ों के भोजन चर्वण करना पड़े और बिना पाद अस्थियों के टहलना हो। अस्थि एवं उपास्थि विशेष प्रकार के संयोजी ऊतक हैं। मैट्रिक्स में लवणों की उपस्थिति से अस्थियाँ कठोर होती हैं जबकि कोंड्रोइटिन (chondroitin) लवण उपास्थियों के मैट्रिक्स को आनन्य (pliable) बनाते हैं। मनुष्य में, यह तंत्र 206 अस्थियों और कुछ उपास्थियों का बना होता है। इसे दो मुख्य समूहों में बाँटा गया है- अक्षीय कंकाल एवं उपांगीय कंकाल।

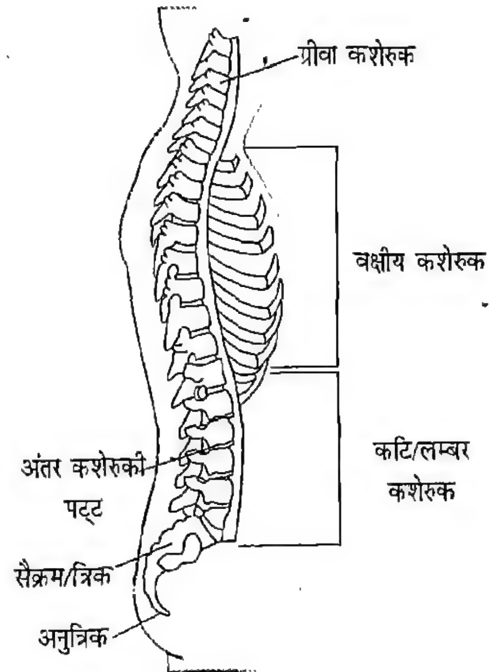
अक्षीय कंकाल में 80 अस्थियाँ होती हैं जो शरीर की मुख्य अक्ष पर वितरित होती हैं। करोटि, मेरुदंड, उरोस्थि (स्टर्नम) और पसलियाँ अक्षीय कंकाल का गठन करती हैं। **करोटि** (चित्र 20.6) अस्थियों के दो समुच्चय- कपालीय (cranial) और आननी (facial) से बना है जिनका योग 22 है। कपालीय अस्थियों की संख्या 8 होती है। ये मस्तिष्क के लिए कठोर रक्षक बाह्य आवरण- कपाल को बनाती हैं। आननी भाग में 14 कंकाली अवयव (skeletal elements) होते हैं जो करोटि के सामने का भाग बनाते हैं।



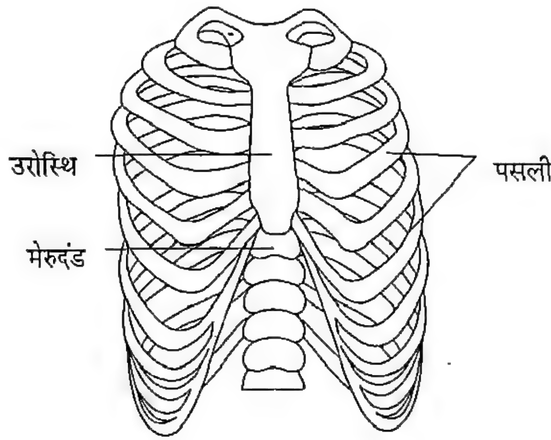
चित्र 20.6 मनुष्य की करोटि का आरेख

एक U - आकार की एकल अस्थि हाइऑइड (hyoid) मुख गुहा के नीचे स्थित होती है, यह भी कपाल में ही सन्निहित है। प्रत्येक मध्यकर्ण में तीन छोटी अस्थियाँ होती हैं-मैलियस, इनकस एवं स्टेपीज। इन्हें सामूहिक रूप से **कर्ण अस्थिकाएं** कहते हैं। कपाल भाग कशेरूक दंड के अग्र भाग के साथ दो अनुकपाल अस्थिकंदों (occipital condyles) की सहायता से संधियोजन करता है (द्विकंदीय करोटिया डाइकोंडाइलिक स्कल)।

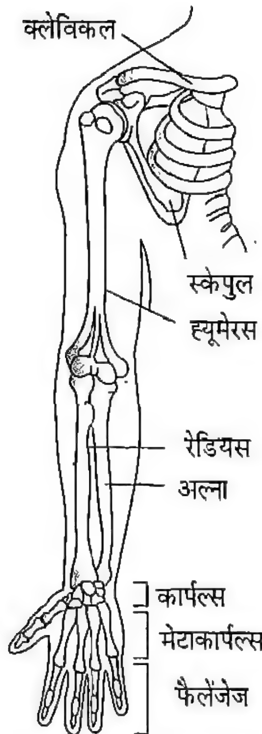
हमारा **कशेरुक दंड** (चित्र 20.7) क्रम में व्यस्थित पृष्ठ भाग में स्थित 26 इकाइयों का बना है जिन्हें कशेरुक कहते हैं। यह कपाल के आधार से निकलता और धड़ भाग का मुख्य ढांचा तैयार करता है। प्रत्येक कशेरुक के बीच का भाग खोखला (तंत्रकीय नाल) होता है जिससे होकर मेरुरज्जु (spinal cord) गुजरती है। प्रथम कशेरुक एटलस है और यह अनुकपाल अस्थिकंदों के साथ संधियोजन करता है। कशेरुक दंड, कपाल की ओर से प्रारंभ करने पर, ग्रीवा (7), वक्षीय (12), कटि (5), त्रिक सेक्रमी (1-संयोजित) और अनुत्रिक (1-संयोजित) कशेरुकों में विभेदित होता है। ग्रीवा कशेरुकों की संख्या मनुष्य सहित लगभग सभी स्तनधारियों में



चित्र 20.7 मेरुदंड (दायाँ पार्श्व दृश्य)



चित्र 20.8 पसलियाँ तथा पिंजर



चित्र 20.9 दाँयी अंस मेखला तथा अग्रपाद अस्थियां (सामने से अभिदर्शित)

7 (सात) होती है। कशेरुक दंड मेरुरज्जु (spinal cord) की रक्षा करता है, सिर का आधार.बनाते हैं और पसलियों तथा पीठ की पेशियों के संधि स्थल का निर्माण करते हैं। **उरोस्थि** (sternum) वक्ष की मध्य अधर रेखा पर स्थित एक चपटी अस्थि है।

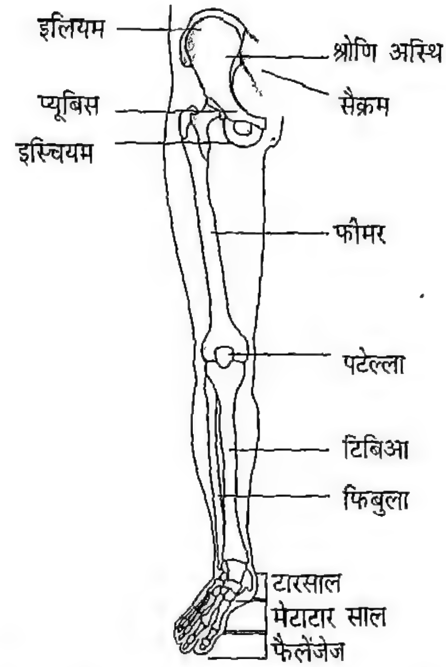
पसलियों (Ribs) की 12 जोड़ियाँ होती हैं। प्रत्येक पसली एक पतली चपटी अस्थि है जो पृष्ठ भाग में कशेरुक दंड और अधर भाग में उरोस्थि के साथ जुड़ी होती हैं। इसके पृष्ठ सिरे पर दो संधियोजन सतहें होती हैं जिसके कारण इसे द्विशिरस्थ (bicephalic) भी कहते हैं। प्रथम सात जोड़ी पसलियों को वास्तविक पसलियाँ कहते हैं। पृष्ठ में ये वक्षीय कशेरुकों और अधरीय भाग में उरोस्थि से काचाभ उपास्थि (hyaline cartilage) की सहायता से जुड़ी होती हैं। 8वीं, 9वीं और 10वीं जोड़ी-पसलियाँ उरोस्थि के साथ सीधे संधियोजित नहीं होतीं, बल्कि काचाभ उपास्थि के सहयोग से सातवीं पसली से जुड़ती हैं। इन्हें वर्टिब्रोकांड्रल (कूट) पसलियाँ कहते हैं। पसलियों की अंतिम दो जोड़ियाँ (11वीं और 12वीं) अधर में जुड़ी हुई नहीं होतीं, इसलिए उन्हें प्लावी पसलियाँ (floating ribs) कहते हैं। वक्षीय कशेरुक, पसलियाँ और उरोस्थि मिलकर पसली पंजर (rib cage) की संरचना करते हैं (चित्र 20.8)।

पादों की अस्थियाँ अपनी मेखला के साथ **उपांगीय कंकाल** बनाती हैं। प्रत्येक **पाद** में 30 अस्थियाँ पाई जाती हैं अग्रपाद (भुजा) की अस्थियाँ हैं- ह्यूमेरस, रेडियस और अल्ना, कार्पल्स (कलाई की अस्थियाँ - संख्या में 8), मेटा कार्पल्स (हथेली की अस्थियाँ- संख्या में 5) और फैलेंजेज (अंगुलियों की अस्थियाँ -संख्या में 14) (चित्र 20.9)। फीमर (उरु अस्थि - सबसे लम्बी अस्थि), टिबिया और फिबुला, टार्सल (टखनों की अस्थियाँ - संख्या में 7), मेटाटार्सल (संख्या में 5) और अंगुलि अस्थियाँ फैलेंजेज (चित्र 20.10)। कप के आकार की एक अस्थि जिसे पटेल्ला (Patella) कहते हैं। घुटने को अधर की ओर से ढकती है (घुटना फलक)।

अंस और **श्रोणि मेखला** अस्थियाँ अक्षीय कंकाल तथा क्रमशः अग्र एवं पश्च पादों के बीच संधियोजन में सहायता करती हैं। प्रत्येक मेखला के दो अर्ध भाग होते हैं। अंस मेखला के प्रत्येक अर्ध भाग में एक क्लेविकल एवं एक स्कैपुला होती है (चित्र 20.9)। स्कैपुला वक्ष के पृष्ठ भाग

में दूसरे एवं सातवीं पसली के बीच स्थित एक बड़ी चपटी, त्रिभुजाकार अस्थि है। स्कैपुला के पश्च चपटे त्रिभुजाकार भाग में एक उभार (कंटक) एक विस्तृत चपटे प्रबंध के रूप में होता है जिसे **एक्रोमिन** कहते हैं। क्लैविकिल इसके साथ संधियोजन करती हैं। एक्रोमिन के नीचे एक अवनमन जिसे ग्लीनॉयड गुहा कहते हैं ह्युमूरस के शीर्ष के साथ कंधों की जोड़ बनाने के लिए संधियोजन करती है। प्रत्येक क्लैविकल एक लंबी पतली अस्थि है, जिसमें दो वक्र पाए जाते हैं। इस अस्थि को सामान्यत: जत्रुक (collar bone) कहते हैं।

श्रोणि मेखला (Pelvic girdle) में दो श्रोणि अस्थियाँ होती हैं (चित्र 20.10)। प्रत्येक श्रोणि अस्थि तीन अस्थियों के संलयन से बनी होती है- इलियम, इस्चियम और प्युबिस। इन अस्थियों के संयोजन स्थल पर एक गुहा एसिटैबुलम होती है जिससे उरु अस्थि संधियोजन करती है। अधर भाग में श्रोणि मेखला के दोनों भाग मिलकर प्युबिक संलयन (Pubic symphysis) बनाते हैं जिसमें रेशेदार उपास्थि होती है।



चित्र 20.10 दाईं श्रोणि अस्थि एवं पश्च पाद अस्थियाँ (सामने से अभिदर्शित)

20.4 संधियाँ या जोड़

संधियाँ या जोड़ हर प्रकार की गति के लिए आवश्यक है जिनमें शरीर की अस्थियाँ सहयोगी होती हैं चलन गति भी इसका अपवाद नहीं है। जोड़ अस्थियों अथवा एक अस्थि एवं एक उपास्थि के बीच का संधिस्थल है। जोड़ों द्वारा गति के लिए पेशी जनित बल का उपयोग किया जाता है। यहाँ जोड़ आलंब (fulcrum) का कार्य करते हैं। इन जोड़ों पर गति विभिन्न कारकों पर निर्भरता के कारण बदलती हैं। जोड़ों को मुख्यत: तीन संरचनात्मक रूपों में वर्गीकृत किया गया है, जैसे- रेशीय, उपास्थियुक्त और साइनोवियल (स्राव)।

रेशीय जोड़ किसी प्रकार की गति नहीं होने देते। इस तरह के जोड़ द्वारा कपाल की चपटी अस्थियाँ, जो घने रेशीय संयोजी ऊतक की सहायता से सीवन (sutures) के रूप में कपाल बनाने के लिए संयोजित होती हैं।

उपास्थि युक्त जोड़ों में, अस्थियाँ आपस में उपास्थियों द्वारा जुड़ी होती हैं। कशेरुक दंड में दो निकटवर्ती कशेरुकों के बीच इसी प्रकार के जोड़ हैं जो सीमित गति होने देते हैं।

साइनोवियल जोड़ों की विशेषता दो अस्थियों की संधियोजन सतहों के बीच तरल से भी साईनोवियल गुहा की उपस्थिति है। इस तरह की व्यवस्था में पर्याप्त गति संभव है। ये जोड़ चलन सहित कई तरह की गति में सहायता करते हैं। कंदुक खल्लिका संधि (ह्युमूरस और अंस मेखला के बीच), कब्जा संधि (घुटना संधि), धुराग्र संधि (पाइवट

संधी - एटलस और अक्ष के बीच), विसर्पी संधि (ग्लाइडिंग संधि कार्पल्स के बीच) और सैडल जोड़ (अंगूठे के कार्पल और मेटा कार्पल के बीच) इनके कुछ उदाहरण हैं।

20.5 पेशीय और कंकाल तंत्र के विकार

माइस्थेनिया ग्रेविस (Myasthenia gravis): एक स्वप्रतिरक्षा विकार जो तंत्रिका- पेशी संधि को प्रभावित करता है। इससे कमजोरी और कंकाली पेशियों का पक्षघात होता है।

पेशीय दुष्पोषण (Muscular dystrophy): विकारों के कारण कंकाल पेशी का अनुक्रमित अपह्रासन।

अपतानिका : शरीर में कैल्सियम आयनों की कमी से पेशी में तीव्र ऐंठन।

संधि शोथ (Arthritis): जोड़ों की शोथ।

अस्थि सुषिरता (Osteoporosis) : यह उम्र संबंधित विकार है जिसमें अस्थि के पदार्थों में कमी से अस्थि भंग की प्रबल संभावना हैं। एस्ट्रोजन स्तर में कमी इसका सामान्य कारक है।

गाउट (Gout): जोड़ों में यूरिक अम्ल कणों के जमा होने के कारण जोड़ों की शोथ।

सारांश

गति सजीवों की एक आवश्यक विशेषता है। जीवद्रव्य की प्रवाही गति, पक्ष्माभी गति, पख, पादों, पंखों, आदि की गति प्राणियों द्वारा दर्शित गतियों के कुछ रूप हैं। ऐच्छिक गति जिनसे प्राणियों में स्थान परिवर्तित होता है, चलन कहलाती है। प्राणी प्रायः भोजन, आश्रय, साथी, प्रजनन स्थल, अनुकूल प्राकृतिक स्थिति की तलाश या अपनी रक्षा के लिए चलते हैं।

मनुष्य शरीर की कोशिकाएं अमीबीय, पक्ष्माभी और पेशीय गति दर्शाती हैं। चलन और अन्य प्रकार की गतियों के लिए समन्वित पेशीय क्रियायों की आवश्यकता होती है। हमारे शरीर में तीन प्रकार की पेशियाँ होती हैं। कंकाल पेशियाँ कंकाल अवयवों से जुड़ी होती हैं। वे रेखित एवं ऐच्छिक स्वभाव की होती हैं। अंतरंग अंगों की भीतरी भित्ति में स्थित अंतरंग पेशियाँ अरेखित एवं अनैच्छिक होती हैं। हृद पेशियाँ हृदय की पेशियाँ हैं। वे रेखित, शाखित और अनैच्छिक होती हैं। पेशियों में उत्तेजनशीलता, संकुचनशीलता, प्रसार्य और प्रत्यास्थता जैसे गुण होते हैं।

पेशीरेशा, पेशी की शारीरीय इकाई है। प्रत्येक पेशीरेशे में कई सामानांतर रूप से व्यवस्थित पेशीतंतुक (मायोफाईब्रिल) होते हैं। प्रत्येक पेशीतंतुक में कई क्रमवार व्यवस्थित क्रियात्मक इकाइयाँ, सार्कोमियर होते हैं। प्रत्येक सार्कोमियर के केंद्र में घने मायोसिन तंतुओं से बना A-बैंड, और Z-रेखा के दोनों तरफ पतले एक्टिन तंतुओं से बने दो अर्द्ध I-बैंड होते हैं। एक्टिन और मायोसिन संकुचनशील बहुलक प्रोटीन हैं। विश्राम की अवस्था में, एक्टिन तंतु पर मायोसिन के लिए सक्रिय स्थान ट्रोपोनिन (प्रोटीन) से ढके होते हैं। मायोसिन शीर्ष पर एटिपेज, एटीपी बंध स्थल और एक्टिन के लिए सक्रिय स्थान होते हैं। पेशीरेशे में प्रेरक तंत्रिका के संकेत से क्रिया विभव उत्पन्न होती है। इससे सार्कोप्लाजमिक जालिका कैल्सियम आयन (Ca^{++}) मुक्त करती है। कैल्सियम आयन, एक्टिन को मायोसिन के शीर्ष से कॉस-सेतु निर्माण हेतु सक्रिय करते हैं। ये

क्रास-सेतु एक्टिन तंतुओं को खींचते हैं जिससे एक्टिन तंतु मायोसिन तंतुओं पर सरकने लगते हैं और संकुचन होता है। तत्पश्चात् कैल्सियम आयन सार्कोप्लाजमिक जालिका में वापस चले जाते हैं, जिससे एक्टिन निष्क्रिय हो जाते हैं। कॉस-सेतु टूट जाता है और पेशियाँ शिथिलित हो जाती हैं।

बार-बार उत्तेजित करने से पेशी में थकान (श्रांति) हो जाती है। लाल रंग के मायोग्लोबिन वर्णक की मात्रा की उपस्थिति के आधार पर पेशियाँ लाल और श्वेत पेशी रेशों में वर्गीकृत की गई हैं।

अस्थियाँ एवं उपास्थियाँ कंकाल तंत्र बनाते हैं। कंकाल तंत्र को अक्षीय और उपांगीय प्रकारों में विभाजित किया गया है। करोटि, कशेरुक दंड, पसलियाँ और उरोस्थि अक्षीय कंकाल बनाते हैं। पाद अस्थियाँ और मेखला उपांगीय कंकाल का गठन करते हैं। अस्थियों या अस्थि और उपास्थि के बीच तीन प्रकार के जोड़ (संधि) पाए जाते हैं- रेशीय, उपास्थियुक्त और साइनोवियल। साइनोवियल जोड़ों में पर्याप्त गति संभव है और इसलिए ये चलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

अभ्यास

1. कंकाल पेशी के एक सार्कोमियर का चित्र बनाएं और विभिन्न भागों को चिंहित करें।
2. पेशी संकुचन के सर्पी तंतु सिद्धांत को पारिभाषित करें।
3. पेशी संकुचन के प्रमुख चरणों का वर्णन करें।
4. 'सही' या 'गलत' लिखें:
   (क) एक्टिन पतले तंतु में स्थित होता है।
   (ख) रेखित पेशीरेशे का H-क्षेत्र मोटे और पतले, दोनों तंतुओं को प्रदर्शित करता है।
   (ग) मानव कंकाल में 206 अस्थियाँ होती हैं।
   (घ) मनुष्य में 11 जोड़ी पसलियाँ होती हैं।
   (च) उरोस्थि शरीर के अधर भाग में स्थित होती है।
5. इनके बीच अंतर बताएं:
   (क) एक्टिन और मायोसिन
   (ख) लाल और श्वेत पेशियाँ
   (ग) अंस एवं श्रोणि मेखला
6. स्तंभ I का स्तंभ II से मिलान करें:

स्तंभ I	स्तंभ II
(i) चिकनी पेशी	(क) मायोग्लोबिन
(ii) ट्रोपोमायोसिन	(ख) पतले तंतु
(iii) लाल पेशी	(ग) सीवन (suture)
(iv) कपाल	(घ) अनैच्छिक

7. मानव शरीर की कोशिकाओं द्वारा प्रदर्शित विभिन्न गतियाँ कौन सी हैं?
8. आप किस प्रकार से एक कंकाल पेशी और हृद पेशी में विभेद करेंगे?

9. निम्नलिखित जोडों के प्रकार बताएं:
   (क) एटलस/अक्ष (एक्सिस)
   (ख) अंगूठे के कार्पल/मेटाकार्पल
   (ग) फैलेंजेज की बीच
   (घ) फीमर/एसिटैबुलम
   (च) कपालीय अस्थियों के बीच
   (छ) श्रोणि मेखला की प्युबिक अस्थियों के बीच

10. रिक्त स्थानों में उचित शब्दों को भरें:
   (क) सभी स्तनधारियों में (कुछ को छोड़कर) ________ ग्रीवा कशेरुक होते हैं।
   (ख) प्रत्येक मानव पाद में फैलेंजेज की संख्या ________ है।
   (ग) मायोफाइब्रिल के पतले तंतुओं में 2 'F' एक्टिन और दो अन्य दूसरे प्रोटीन, जैसे ________ और ________ होते हैं।
   (घ) पेशी रेशा में कैल्सियम ________ में भंडारित रहता है।
   (च) ________ और ________ पसलियों की जोड़ियों को प्लानी पसलियाँ कहते हैं।
   (ज) मनुष्य का कपाल ________ अस्थियों से बना होता है।

अध्याय 21

तंत्रिकीय नियंत्रण एवं समन्वय

जैसा कि तुम जानते हो मानव शरीर में बहुत से अंग एवं अंग तंत्र पाए जाते हैं जो कि स्वतंत्र रूप से कार्य करने में समर्थ होते हैं। जैव स्थिरता (समअवस्था) बनने हेतु इन अंगों के कार्यों में समन्वय अत्यधिक आवश्यक है। समन्वयता एक ऐसी क्रियाविधि है, जिसके द्वारा दो या अधिक अंगों में क्रियाशीलता बढ़ती है व एक-दूसरे अंगों के कार्यों में मदद मिलती है। उदाहरणार्थ, जब हम शारीरिक व्यायाम करते हैं तो पेशियों के संचालन हेतु ऊर्जा की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। ऑक्सीजन की आवश्यकता में भी वृद्धि हो जाती है। ऑक्सीजन की अधिक आपूर्ति के लिए श्वसन दर, हृदय स्पंदन, दर एवं वृक्क वाहिनियों में रक्त प्रवाह की दर बढ़ना स्वाभाविक हो जाता है। जब शारीरिक व्यायाम बंद कर देते हैं तो तंत्रिकीय क्रियाएं, फुप्फुस, हृदय रुधिर वाहिनियों, वृक्क व अन्य अंगों के कार्यों में समन्वय स्थापित हो जाता है। हमारे शरीर में तंत्रिका तंत्र एवं अंतःस्रावी तंत्र सम्मिलित रूप से अन्य अंगों की क्रियाओं में समन्वय करते हैं तथा उन्हें एकीकृत करते हैं, जिससे सभी क्रियाएं एक साथ संचालित होती रहती हैं।

तंत्रिकीय तंत्र ऐसे व्यवस्थित जाल तंत्र गठित करता है, जो त्वरित समन्वय हेतु बिंदु दर बिंदु जुड़ा रहता है। अंतःस्रावी तंत्र हार्मोन द्वारा रासायनिक समन्वय बनाता है। इस अध्याय में आप मनुष्य के तंत्रिकीय तंत्र एवं तंत्रिकीय समन्वय की क्रियाविधि जैसे तंत्रिकीय आवेग का संचरण, आवेगों का सिनेप्स से संचरण तथा प्रतिवर्ती क्रियाओं की कार्यिकी का अध्ययन करेंगे।

21.1 तंत्रिकीय तंत्र

सभी प्राणियों का तंत्रिका तंत्र अति विशिष्ट प्रकार की कोशिकाओं से बनता है, जिन्हें **तंत्रिकोशिका** कहते हैं। ये विभिन्न उद्दीपनों को पहचान कर ग्रहण करती हैं तथा इनका संचरण करती हैं।

निम्न अकशेरुकी प्राणियों में तंत्रिकीय संगठन बहुत ही सरल प्रकार का होता है। उदाहरणार्थ *हाइड्रा* में यह तंत्रिकीय जाल के रूप में होता है। कीटों का तंत्रिका तंत्र अधिक व्यवस्थित होता है। यह मस्तिष्क अनेक गुच्छिकाओं एवं तंत्रिकीय ऊतकों का बना होता है। कशेरुकी प्राणियों में अधिक विकसित तंत्रिका तंत्र पाया जाता है।

21.2 मानव का तंत्रिकीय तंत्र

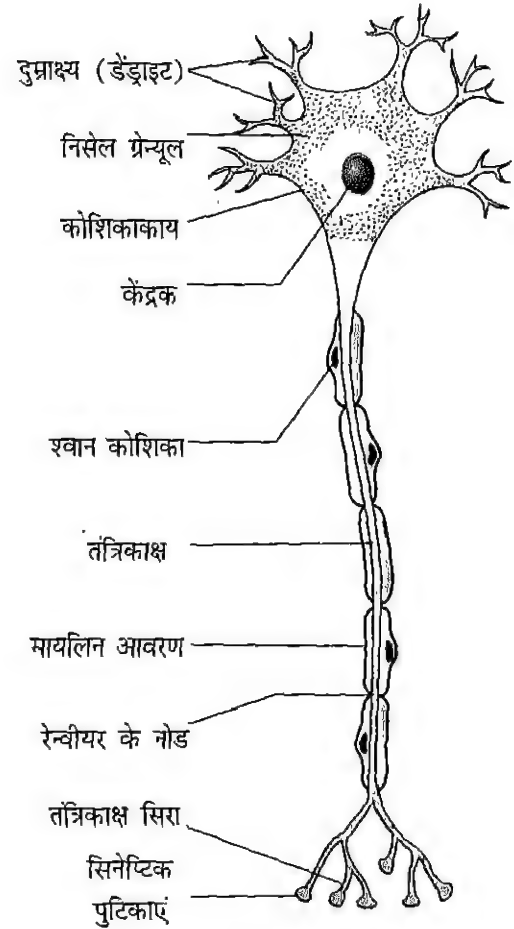
मानव का तंत्रिका तंत्र दो भागों में विभाजित होता है (क) **केंद्रीय तंत्रिका तंत्र** तथा (ख) **परिधीय तंत्रिका तंत्र**। केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में **मस्तिष्क** तथा **मेरूरज्जु** सम्मिलित है, जहाँ सूचनाओं का संसाधन एवं नियंत्रण होता है। मस्तिष्क एवं परिधीय तंत्रिका तंत्र सभी तंत्रिकाओं से मिलकर बनता है, जो केंद्रीय तंत्रिका तंत्र (मस्तिष्क व मेरूरज्जू) से जुड़ी होती हैं। परिधीय तंत्रिका तंत्र में दो प्रकार की तंत्रिकाएं होती हैं (अ) **संवेदी या अभिवाही** एवं (ब) **चालक/प्रेरक या अपवाही**। संवेदी या अभिवाही तंत्रिकाएं उद्दीपनों को ऊतकों/अंगों से केंद्रीय तंत्रिका तंत्र तक तथा चालक/अभिवाही तंत्रिकाएं नियामक उद्दीपनों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से संबंधित परिधीय ऊतक/अंगों तक पहुँचाती हैं।

परिधीय तंत्रिका तंत्र दो भागों में विभाजित होता है **कायिक तंत्रिका तंत्र** तथा **स्वायत्त तंत्रिका तंत्र**। कायिक तंत्रिका तंत्र उद्दीपनों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से शरीर के अनैच्छिक अंगों व चिकनी पेशियों में पहुँचाता है। स्वायत्त तंत्रिका तंत्र पुन: दो भागों – (अ) **अनुकंपी तंत्रिका तंत्र** व (ब) **परानुकंपी तंत्रिका** तंत्र में वर्गीकृत किया गया है।

21.3 तंत्रिकोशिका (न्यूरॉन) तंत्रिका तंत्र की संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई

न्यूरॉन एक सूक्ष्मदर्शीय संरचना है जो तीन भागों से मिलकर बनती है - **कोशिका काय**, **दुम्राक्ष्य** व **तंत्रिकाक्ष** (चित्र 21.1)। कोशिका काय में कोशिका द्रव्य व प्रारूपिक कोशिकांग व विशेष दानेदार अंगक **निसेल ग्रेन्यूल** पाए जाते हैं। छोटे तंतु जो कोशिका काय से प्रवर्धित होकर लगातार विभाजित होते हैं तथा जिनमें निसेल ग्रेन्यूल भी पाए जाते हैं, दुम्राक्ष्य कहलाते हैं। ये तंतु उद्दीपनों को कोशिका काय की ओर भेजते हैं। एक तंत्रिकोशिका में एक तंत्रिकाक्ष निकलता है। इसका दूरस्थ भाग शाखित व प्रत्येक शाखित भाग का अंतिम छोर लड़ीनुमा संरचना सिनेप्टिक नोब जिसमें **सिनेप्टी पुटिकाएं** होती हैं, इसमें रसायन **न्यूरोट्रांसमीटर्स** पाए जाते हैं। तंत्रिकाक्ष तांत्रिकीय आवेगों को कोशिका काय से दूर सिनेप्स पर अथवा तांत्रिकीयपेशी संधि पर पहुँचाते हैं। तंत्रिकाक्ष तथा दुम्राक्ष की संख्या के आधार पर न्यूरोंस को तीन समूहों में बाँटते हैं। जैसे **बहुध्रुवीय** (एक तंत्रिकाक्ष व दो या अधिक दुम्राक्ष्य युक्त जो प्रमस्तिष्क वल्कुट में पाए जाते हैं।) तथा **द्विध्रुवीय** (एक तंत्रिकाक्ष एवं एक द्रुमाक्ष्य जो दृष्टि पटल में पाए जाते हैं।) तंत्रिकाक्ष दो प्रकार के होते हैं: **आच्छदी** व **आच्छदहीन**। आच्छदी तंत्रिका तंतु **श्वान कोशिका** से ढके रहते हैं, जो तंत्रिकाक्ष के चारो ओर माइलिन आवरण बनाती है। माइलिन आवरणों के बीच

अंतराल पाए जाते हैं, जिन्हें **रेनवीयर के नोड** कहते हैं। आच्छदी तंत्रिका तंतु मेरू व कपाल तंत्रिकाओं में पाए जाते हैं। आच्छदहीन तंत्रिका तंतु भी श्वान कोशिका से घिरे रहते हैं; लेकिन वे ऐक्सोन के चारों ओर माइलीन आवरण नहीं बनाते हैं। सामान्यतया स्वायत्त तथा कायिक तंत्रिका तंत्र में मिलते हैं।

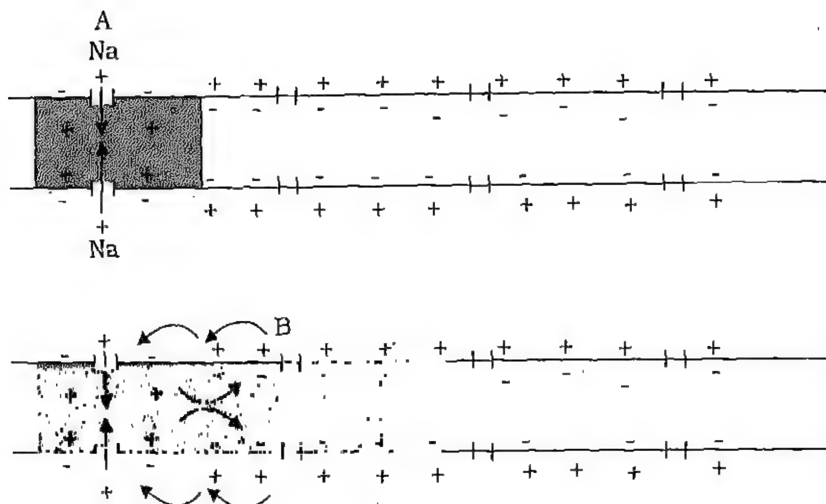


चित्र 21.1 तंत्रिकोशिका की संरचना

21.3.1 तंत्रिका आवेगों की उत्पत्ति व संचरण

तंत्रिकोशिकाएं (न्यूरोंस)उद्दीपनशील कोशिकाएं हैं; क्योंकि उनकी झिल्ली ध्रुवीय अवस्था में रहती है। *क्या आप जानते हैं, यह झिल्ली ध्रुवीय अवस्था में क्यों रहती है?* विभिन्न प्रकार के आयन पथ (चैनल) तंत्रिका झिल्ली पर पाए जाते हैं। ये आयन पथ विभिन्न आयनों के लिए चयनात्मक पारगम्य हैं। जब कोई न्यूरॉन आवेगों का संचरण नहीं करते हैं जैसे कि विराम अवस्था में तंत्रिकाक्ष झिल्ली सोडियम आयंस की तुलना में पोटैसियम आयंस तथा क्लोराइड आयंस के लिए अधिक पारगम्य होती है। इसी प्रकार से झिल्ली, तंत्रिकाक्ष द्रव्य में उपस्थित ऋण आवेषित प्रोटिकाल में भी अपारगम्य होती है। धीरे-धीरे तंत्रिकाक्ष के तंत्रिका द्रव्य में K^+ तथा ऋणात्मक आवेषित प्रोटीन की उच्च सांद्रता तथा Na^+ की निम्न सांद्रता होती है। इस भिन्नता के कारण सांद्रता प्रवणता बनती है। झिल्ली पर पाई जाने वाली इस आयनिक प्रवणता को सोडियम पोटैसियम पंप द्वारा नियमित किया जाता है। इस पंप द्वारा प्रतिचक्र $3Na^+$ बाहर की ओर व $2K^+$ कोशिका में प्रवेश करते हैं। परिणामस्वरूप तंत्रिकाक्ष झिल्ली की बाहरी सतह धन आवेशित; जबकि आंतरिक सतह ऋण आवेशित हो जाती है; इसलिए यह ध्रुवित हो जाती है। विराम स्थिति में प्लाज्मा झिल्ली पर इस विभवांतर को **विरामकला विभव** कहते हैं।

आप यह जानने के लिए उत्सुक होंगे कि तंत्रिकाक्ष पर तंत्रिका आवेग की उत्पत्ति एवं उसका संचरण किस प्रकार होता है? जब किसी एक स्थान पर ध्रुवित झिल्ली पर आवेग होता है (चित्र 21.2 का उदाहरण) तब A स्थल की ओर स्थित झिल्ली Na^+ के लिए मुक्त पारगमी हो जाती है। जिसके फलस्वरूप Na^+ तीव्र गति से अंदर जाते हैं और एक सतह पर विपरीत ध्रुवता हो जाती है अर्थात् झिल्ली की बाहरी सतह ऋणात्मक आवेशित तथा आंतरिक सतह धनात्मक आवेशित हो जाती है। A स्थल पर झिल्ली की विपरीत ध्रुवता होने से विध्रुवीकरण हो जाता है। A झिल्ली की सतह पर विद्युत विभवांतर **क्रियात्मक विभव** कहलाता है, जिसे तथ्यात्मक रूप से **तंत्रिका आवेग** कहा जाता है।



चित्र 21.2 एक तंत्रिकाक्ष में तंत्रिका आवेग का संचरण प्रदर्शित करते हुए आरेख

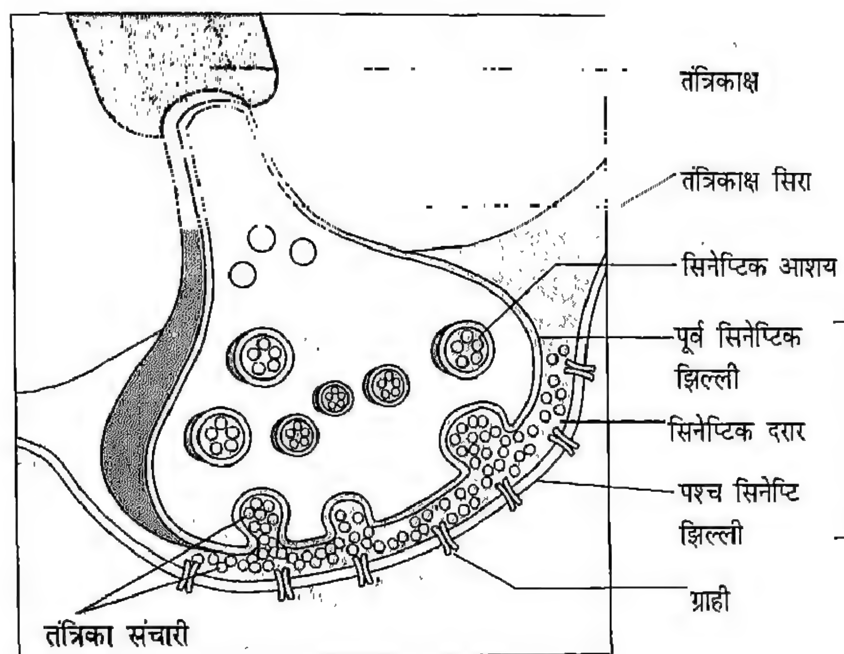
तंत्रिकाक्ष से कुछ आगे (जैसे स्थान B) झिल्ली की बाहरी सतह पर धनात्मक आवेश तथा आंतरिक सतह पर ऋणात्मक आवेश होता है। परिणामस्वरूप A स्थल से B स्थल की ओर झिल्ली की आंतरिक सतह पर **आवेग विभव** का संचरण होता है। अतः स्थान A पर **आवेग** क्रियात्मक विभव उत्पन्न होता है। तंत्रिकाक्ष की लंबाई के समांतर क्रम का पुनरावर्तन होता है और आवेग का संचरण होता है। उद्दीपन द्वारा प्रेरित Na^+ के लिए बढ़ी पारगम्यता क्षणिक होती है उसके तुरंत पश्चात K^+ की प्रति पारगम्यता बढ़ जाती है। कुछ ही क्षणों के भीतर K^+ झिल्ली के बाहरी ओर परासरित होता है और उद्दीपन के स्थान पर (विराम विभव का) पुनः संग्रह करता है तथा तंतु आगे के उद्दीपनों के लिए एक बार फिर उत्तरदायी हो जाते हैं।

21.3.2 आवेगों का संचरण

तंत्रिका आवेगों का एक न्यूरॉन से दूसरे न्यूरॉन तक संचरण सिनेप्सिस द्वारा होता है। एक **सिनेप्स** का निर्माण पूर्व सिनैप्टिक न्यूरॉन तथा पश्च सिनेप्टिन न्यूरॉन की झिल्ली द्वारा होता है, जो कि **सिनेप्टिक दरार** द्वारा विभक्त हो भी सकती है या नहीं भी। सिनेप्स दो प्रकार के होते हैं, विद्युत सिनेप्स एवं रासायनिक सिनेप्स। विद्युत सिनेप्सिस पर, पूर्व और पश्च सिनेप्टिक न्यूरॉन की झिल्लियाँ एक दूसरे के समीप होती है। एक न्यूरॉन से दूसरे न्यूरॉन तक विद्युत धारा का प्रवाह सिनेप्सिस से होता है। विद्युतीय सिनेप्सिस से आवेग का संचरण, एक तंत्रिकाक्ष से आवेग के संचरण के समान होता है। विद्युतीय-सिनेप्सिस से आवेग का संचरण, रासायनिक सिनेप्सिस से संचरण की तुलना में अधिक तीव्र होता है। हमारे तंत्र में विद्युतीय सिनेप्सिस बहुत कम होते हैं।

रासायनिक सिनेप्स पर, पूर्व एवं पश्च सिनेप्टिक न्यूरोंस की झिल्लियाँ द्रव से भरे अवकाश द्वारा पृथक होती है जिसे सिनेप्टिक दरार कहते हैं (चित्र 21.3)। *क्या आप*

जानते हैं किस प्रकार पूर्व सिनेप्टिक आवेग (सक्रिय विभव) का संचरण सिनेप्टिक दरार से पश्च सिनेप्टिक न्यूरॉन तक करते हैं? सिनेप्सिस द्वारा आवेगों के संचरण में न्यूरोट्रॉसमीटर (तंत्रिका संचारी) कहलाने वाले रसायन सम्मिलित होते हैं। तंत्रिकाक्ष के छोर पर स्थित (आश्रय पुटिकाऐं) तंत्रिका संचारी अणुओं से भरी होती हैं। जब तक आवेग तंत्रिकाक्ष के छोर तक पहुँचता है। यह सिनेप्टिक पुटिका की गति को झिल्ली की ओर उत्तेजित करता है, जहाँ वे प्लाज्मा झिल्ली के साथ जुड़कर तंत्रिका संचारी अणुओं को सिनेप्टिक दरार में मुक्त कर देते हैं। मुक्त किए गए तंत्रिका संचारी अणु पश्च सिनेप्टिक झिल्ली पर स्थित विशिष्ट **ग्राहियों** से जुड़ जाते हैं। इस जुड़ाव के फलस्वरूप आयन चैनल खुल जाते हैं और उसमें आयनों के आगमन से पश्च सिनेप्टिक झिल्ली पर नया विभव उत्पन्न हो जाता है। उत्पन्न हुआ नया विभव उत्तेजक या अवरोधक हो सकता है।



चित्र 21.3 तंत्रिकाक्ष सिरा एवं सिनेप्स को प्रदर्शित करते हुए

21.4 केंद्रीय तंत्रिका तंत्र - मानव मस्तिष्क

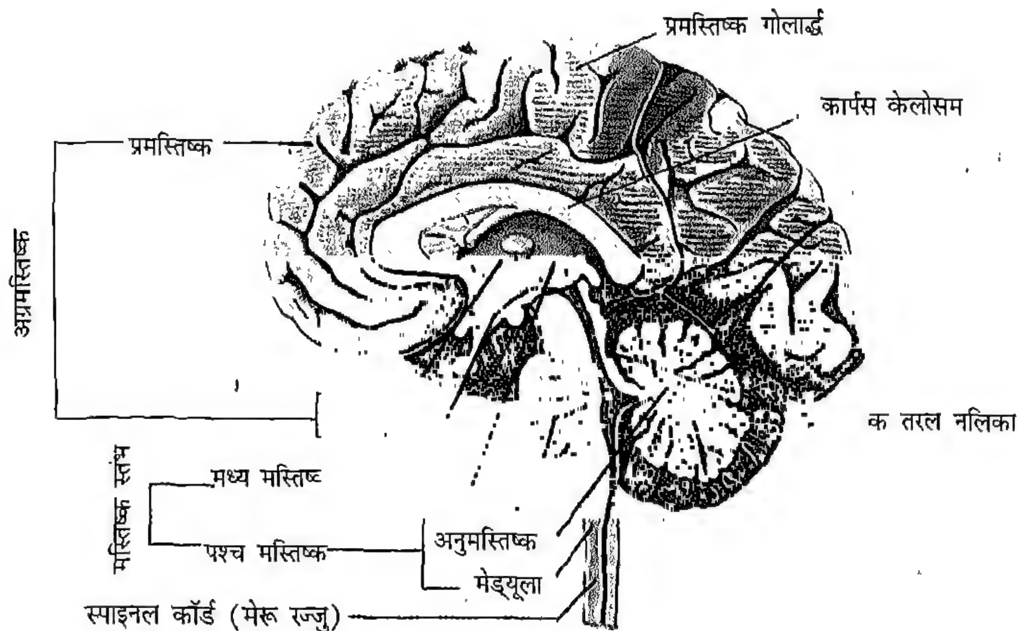
मस्तिष्क हमारे शरीर का केंद्रीय सूचना प्रसारण अंग है और यह 'आदेश व नियंत्रण तंत्र' की तरह कार्य करता है। यह ऐच्छिक गमन शरीर के संतुलन, प्रमुख अनैच्छिक अंगों के कार्य (जैसे फेफड़े, हृदय, वृक्क आदि), तापमान नियंत्रण, भूख एवं प्यास, परिवहन, लय, अनेकों अंत:स्रावी ग्रंथियों की क्रियाएं और मानव व्यवहार का नियंत्रण करता है। यह देखने, सुनने, बोलने की प्रक्रिया, याददाश्त, कुशाग्रता, भावनाओं और विचारों का भी स्थल है।

मानव मस्तिष्क खोपड़ी के द्वारा अच्छी तरह सुरक्षित रहता है। खोपड़ी के भीतर **कपालीय मेनिंजेज** से घिरा होता है, जिसकी बाहरी परत **ड्यूरा मैटर**, बहुत पतली मध्य परत **एरेक्नॉइड** और एक आंतरिक परत **पाया मैटर** (जो कि मस्तिष्क ऊतकों के संपर्क में होती है) कहलाती है। मस्तिष्क को 3 मुख्य भागों में विभक्त किया जा सकता है: (i) **अग्र मस्तिष्क**, (ii) **मध्य मस्तिष्क**, और (iii) **पश्च मस्तिष्क** (चित्र 21.4)।

21.4.1 अग्र मस्तिष्क

अग्र मस्तिष्क **सेरीब्रम**, **थेलेमस** और **हाइपोथेलेमस** का बना होता हैं सेरीब्रम (प्रमस्तिष्क) मानव मस्तिष्क का एक बड़ा भाग बनाता है। एक गहरी लंबवत विदर प्रमस्तिष्क को दो भागों, दाएं व बाएं **प्रमस्तिष्क गोलार्द्धों** में विभक्त करती है। ये गोलार्द्ध तंत्रिका तंतुओं की पट्टी **कार्पस कैलोसम** द्वारा जुड़े होते हैं (चित्र 21.4)

प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध को कोशिकाओं की एक परत आवरित करती है, जिसे प्रमस्तिष्क वल्कुट कहते हैं तथा यह निश्चित गर्तो में बदल जाती है। प्रमस्तिष्क वल्कुट को इसके धूसर रंग के कारण धूसर द्रव्य कहा जाता है। तंत्रिका कोशिका काय सांद्रित होकर इसे रंग प्रदान करती है। प्रमस्तिष्क वल्कुट में प्रेरक क्षेत्र, संवेदी भाग और बड़े भाग होते हैं, जो स्पष्टतया न तो प्रेरक क्षेत्र होते हैं न ही संवेदी। ये भाग **सहभागी क्षेत्र** कहलाते हैं तथा जटिल क्रियाओं जैसे अंतर संवेदी सहभागिता, स्मरण, संपर्क सूत्र आदि के लिए उत्तरदायी होते हैं। इस पथ के रेशे माइलिन आच्छद से आवरित रहते हैं जो कि प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध का आंतरिक भाग बनाते हैं। ये इस परत को सफेद अपारदर्शी रूप प्रदान करते



चित्र 21.4 मानव मस्तिष्क का सममितार्धी (सेजीटल) काट

हैं, जिसे श्वेत द्रव्य कहते हैं। प्रमस्तिष्क थेलेमस नामक संरचना के चारों ओर लिपटा होता है, जो कि संवेदी और प्रेरक संकेतों का मुख्य संपर्क स्थल है। थेलेमस के आधार पर स्थित मस्तिष्क का दूसरा मुख्य भाग **हाइपोथेलेमस** स्थित होता है। हाइपोथेलेमस में कई केंद्र होते हैं, जो शरीर के तापमान, खाने और पीने का नियंत्रण करते हैं। इसमें कई तंत्रिका स्रावी कोशिकाएं भी होती हैं जो हाइपोथेलेमिक हार्मोन का स्रवण करती हैं। प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध का आंतरिक भाग और अंदरूनी अंगों जैसे एमिगडाला, हिप्पोकैंपस आदि का समूह मिलकर एक जटिल संरचना का निर्माण करता है, जिसे लिंबिकलोब या **लिबिंक तंत्र** कहते हैं। यह हाइपोथेलेमस के साथ मिलकर लैंगिक व्यवहार, मनोभावनाओं की अभिव्यक्ति (जैसे उत्तेजना, खुशी, गुस्सा और भय) आदि का नियंत्रण करता है।

21.4.2 मध्य मस्तिष्क

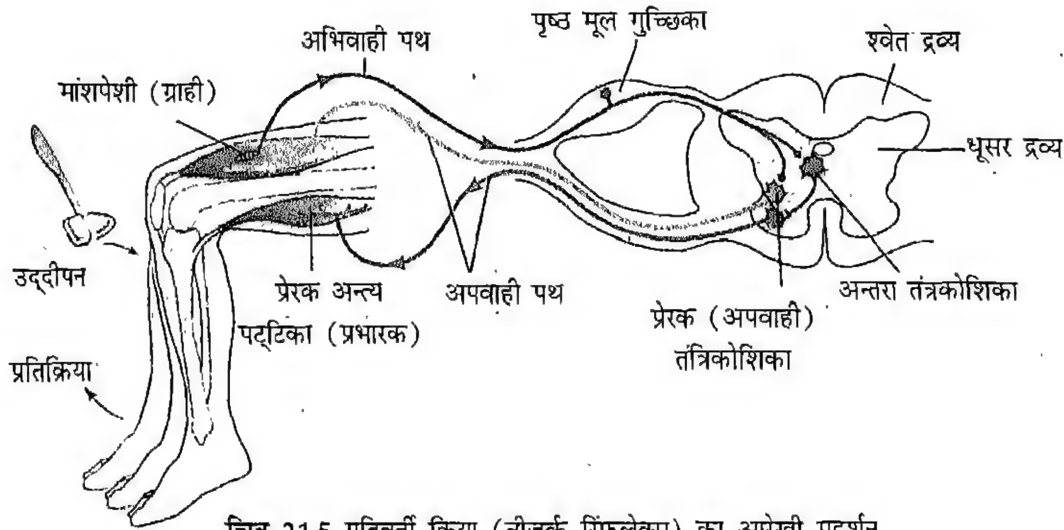
मध्य मस्तिष्क अग्र मस्तिष्क के थेलेमस/हाइपोथेलेमस तथा पश्च मस्तिष्क के पोंस के बीच स्थित होता है। एक नाल **प्रमस्तिष्क तरल नलिका** मध्य मस्तिष्क से गुजरती है। मध्य मस्तिष्क का ऊपरी भाग चार लोबनुमा उभारों का बना होता है जिन्हें **कॉर्पोरा क्वाड्रीजेमीन** कहते हैं। मध्य मस्तिष्क और पश्च मस्तिष्क, मस्तिष्क स्तंभ बनाते हैं।

21.4.3 पश्च मस्तिष्क

पश्च मस्तिष्क **पोंस, अनुमस्तिष्क** और **मध्यांश** (मेड्यूला ओबलोगेंटा) का बना होता है। पोंस रेशेनुमा पथ का बना होता है जो कि मस्तिष्क के विभिन्न भागों को आपस में जोड़ते हैं। अनुमस्तिष्क की सतह विलगित होती है जो न्यूरोंस को अतिरिक्त स्थान प्रदान करती है। मस्तिष्क का मध्यांश मेरूरज्जु से जुड़ा होता है। मध्यांश में श्वसन, हृदय परिसंचारी प्रतिवर्तन और पाचक रसों के स्राव के नियंत्रण केंद्र होते हैं।

21.5 प्रतिवर्ती क्रिया और प्रतिवर्ती चाप

जब हमारे शरीर का कोई अंग अत्यधिक गर्म, ठंडी, नुकीली वस्तु या जहरीले अथवा डरावने जानवर के संपर्क में आता है तो उस अंग को अचानक हटा लिए जाने को आपने अनुभव किया होगा। अनुभव की संपूर्ण क्रियाविधि एक अनैच्छिक क्रिया है जो कि परिधीय तंत्रिकीय उद्दीपन के फलस्वरूप केंद्रीय तंत्रिका तंत्र के भाग विशेष की अनुपस्थिति में होती है, **प्रतिवर्ती क्रिया** कहलाती है। प्रतिवर्ती क्रिया पथ अभिवाही न्यूरॉन (ग्राही) और अपवाही न्यूरॉन (प्रभावक/उत्तेजक), जो कि निश्चित क्रम में लगे होते हैं, से बना होता है (चित्र 21.5)। अभिवाही न्यूरॉन संवेदी अंगों से संकेत ग्रहण करके पृष्ठ तंत्रिकीय मूल के द्वारा केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में आवेगों का संप्रेषण करता है। प्रभावक/प्रेरक न्यूरॉन तब संकेतों को प्रभावी अंगों तक पहुँचाती है। इस प्रकार उद्दीपन एवं प्रतिवर्ती क्रिया मिलकर प्रतिवर्ती चाप का निर्माण करते हैं, जैसाकि दी गई रिफलेक्स में प्रदर्शित किया गया है। नी जर्क रिफलेक्स (Knee Jerk reflex) क्रियाविधि का अध्ययन करने के लिए चित्र 21.5 का सावधानीपूर्वक अध्ययन कीजिए।



चित्र 21.5 प्रतिवर्ती क्रिया (नीजर्क रिंफलेक्स) का आरेखी प्रदर्शन

21.6 संवेदिक अभिग्रहण एवं संसाधन

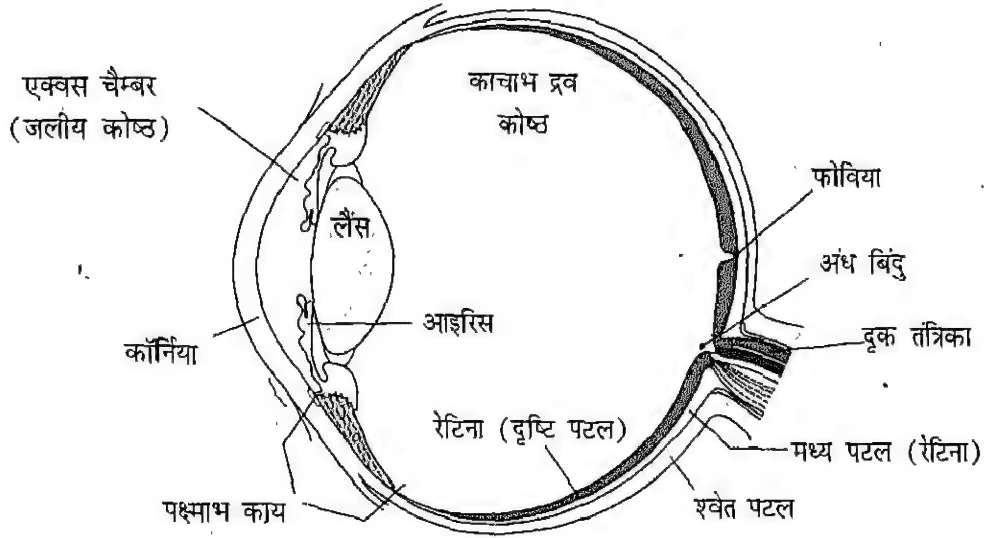
क्या आपने कभी सोचा है कि आपको वातावरण के परिवर्तन की पहचान किस प्रकार होती है? आप किस प्रकार किसी वस्तु एवं उसके रंग को देख पाते हैं? कैसे आप ध्वनि को सुनते हैं? संवेदी अंग सभी प्रकार की वातावरणीय बदलावों का पता लगाकर समुचित संदेशों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र को भेजते हैं जहाँ सभी अंतर क्रियाएं संचालित व विश्लेषित की जाती हैं। इसके बाद संदेशों को मस्तिष्क के विभिन्न भागों या केंद्रों तक भेजा जाता है। इस प्रकार आप वातावरणीय बदलावों को अनुभव करते हैं। नीचे दिए गए भागों में आँख (देखने हेतु संवेदी अंग) और कान (सुनने हेतु संवेदी अंग) की संरचना और क्रियाविधि से आपका परिचय करवाया जाएगा।

21.6.1 नेत्र

हमारे एक जोड़ी नेत्र खोपड़ी में स्थित अस्थि गर्तिक, जिसे **नेत्र कोटर** कहते हैं, में स्थित होते हैं। मानव नेत्र की संरचना और कार्य का संक्षिप्त विवरण अगले भाग में दिया गया है।

21.6.1.1 नेत्र के भाग

वयस्क मनुष्य के नेत्र लगभग गोलाकार संरचना है। नेत्र की दीवारें तीन परतों की बनी होती हैं। बाहरी परत घने संयोजी ऊतकों की बनी होती हैं जिसे **स्क्लेरा** (श्वेत पटल) कहते हैं (चित्र 21.6)। अग्र भाग **कॉर्निया** कहलता है। मध्य परत, **कोरॉइड** (रक्त पटल) में अनेक रक्त वाहिनियाँ होती हैं और यह हल्के नीले रंग की दिखती हैं। नेत्र गोलक के पिछले दो-तीहाई भाग पर कोरॉइड की परत पतली होती है, लेकिन यह अग्र भाग में मोटी होकर **पक्ष्माभ** काय बनाती है।



चित्र 21.6 नेत्र के भागों को प्रदर्शित करते हुए चित्र

पक्ष्माभ काय आगे की ओर निरंतरता बनाते हुए वर्णक युक्त और अपारदर्शी संरचना **आइरिस** बनाती है, जो कि आँख का रंगीन देखने योग्य भाग होता है। नेत्र गोलक के भीतर पारदर्शी क्रिस्टलीय **लैंस** होता है जो कि तंतुओं द्वारा पक्ष्माभ काय से जुड़ा रहता है। लैंस के सामने आइरिस से घिरा हुआ एक छिद्र होता है, जिसे **प्यूपिल** कहते हैं। प्यूपिल के घेरे का नियंत्रण आइरिस के पेशी तंतु करते हैं।

आंतरिक परत **रेटिना** (दृष्टि पटल) कहलाती है और यह कोशिकाओं की तीन परतों से बनी होती है अर्थात् अंदर से बाहर की ओर गुच्छिका कोशिकाएं, द्विध्रुवीय कोशिकाएं और प्रकाश ग्राही कोशिकाएं। प्रकाश ग्राही कोशिकाएं दो प्रकार की होती हैं। **शलाका** और **शंकु**। इन कोशिकाओं में प्रकाश संवेदी प्रोटीन प्रकाशीय वर्णक होता है। दिन की रोशनी में देखना (प्रकाशानुकूली) और रंग देखना शंकु के कार्य है तथा स्कोटोपिक (तिमिरानुकूलित) दृष्टि शलाका का कार्य है। शलाकाओं में बैंगनी लाल रंग का प्रोटीन रोडोप्सिन या दृष्टि बैंगनी होता है, जिसमें विटामिन ए का व्युत्पन्न होता है। मानव नेत्र में तीन प्रकार के शंकु होते हैं, जिनमें कुछ विशेष प्रकाश वर्णक होते हैं, जो कि लाल, हरे और नीले प्रकाश को पहचानने में सक्षम होते हैं। विभिन्न प्रकार के शंकुओं और उनके प्रकाश वर्णकों के मेल से अलग-अलग रंगों के प्रति संवेदना उत्पन्न होती है। जब इन शंकुओं को समान मात्रा में उत्तेजित किया जाता है तो सफेद रंग के प्रति संवेदना उत्पन्न होती है।

दृक तंत्रिका नेत्र तथा दृष्टि पटल को नेत्र गोलक के मध्य तथा थोड़ी पश्च ध्रुव के ऊपर छोड़ती है तथा रक्त वाहिनी यहाँ प्रवेश करती है। प्रकाश संवेदी कोशिकाएं उस भाग में नहीं होती है, अंतः इसे **अंधबिंदु** कहते हैं। अंधबिंदु के पार्श्व में आँख के पिछले ध्रुव पर पीला वर्णक बिंदु होता है, जिसे **मैक्यूला ल्यूटिया** कहते हैं और जिसके केंद्र में एक गर्त होता है जिसे **फोविया** कहते हैं। फोविया रेटिना का पतला भाग होता है, जहाँ केवल शंकु संघनित होते हैं। यह वह बिंदु है जहाँ दृष्टि क्रियाएं (दिखाई देना) अधिकतम होती हैं।

कॉर्निया और लैंस के बीच की दूरी को **एक्वस चैंबर** (जलीय कोष्ठ) कहते हैं। जिसमें पतला जलीय द्रव नेत्रोद होता है। लैंस और रेटिना के बीच के रिक्त स्थान को **काचाभ/द्रव कोष्ठ** कहते हैं और यह पारदर्शी द्रव काचाभ द्रव कहलाता है।

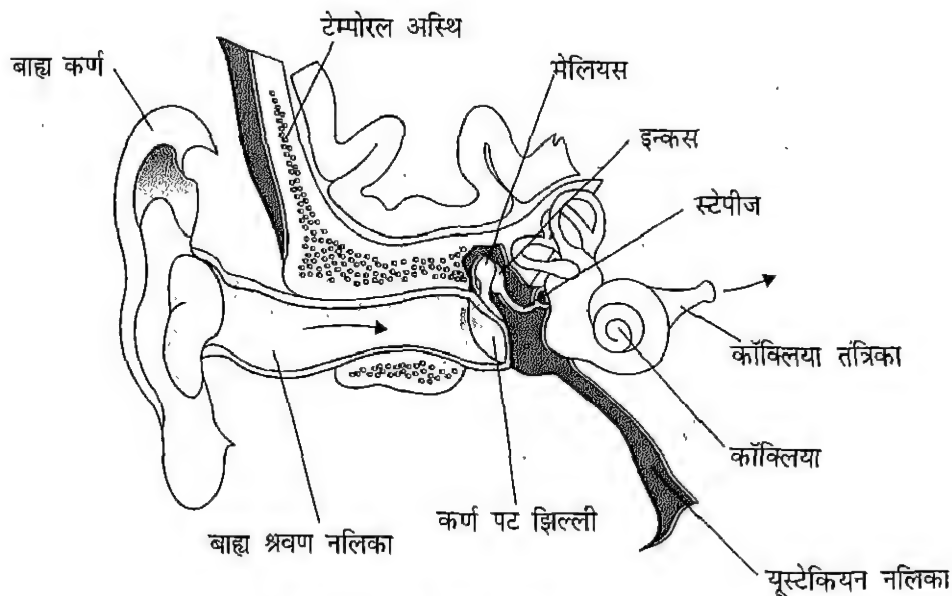
21.6.1.2 देखने की प्रक्रिया

दृश्य तरंगदैर्ध्य में प्रकाश किरणों को कॉर्निया व लैंस द्वारा रेटिना पर फोकस करने पर शलाकाओं व शंकु में आवेग उत्पन्न होते हैं। यह पहले इंगित किया जा चुका है कि मानव नेत्र में प्रकाश संवेदी यौगिक (प्रकाश वर्णक) **ओप्सिन** (एक प्रोटिन) और **रेटिनल** (विटामिन ए का एल्डिहाइड से) बने होते हैं। प्रकाश ओप्सिन से रेटिनल के अलगाव को प्रेरित करता है, फलस्वरूप ऑप्सिन की संरचना में बदलाव आता है तथा यह झिल्ली की पारगम्यता में बदलाव लाता है।

इसके परिणामस्वरूप विभावांतर प्रकाश ग्राही कोशिका में संचरित होती है तथा एक संकेत की उत्पत्ति होती है, जो कि गुच्छिका कोशिकाओं में द्विध्रुवीय कोशिकाओं द्वारा सक्रिय कोशिका विभव उत्पन्न करता है। इन सक्रिय विभव के आवेगों का दृक तंत्रिका द्वारा मस्तिष्क के **दृष्टि वल्कुट** क्षेत्र में भेजा जाता है, जहाँ पर तंत्रिकीय आवेगों की विवेचना की जाती है और छबि को पूर्व स्मृति एवं अनुभव के आधार पर पहचाना जाता है।

21.6.2 कर्ण

कर्ण दो संवेदी क्रियाएं करते हैं, सुनना और शरीर का संतुलन बनाना। शरीर क्रिया विज्ञान की दृष्टि से कर्ण को तीन मुख्य भागों में विभक्त किया जा सकता है – **बाह्य कर्ण, मध्य कर्ण** और **अंतःकर्ण** (चित्र 21.7)। बाह्य कर्ण **पिन्ना** या **ऑरीकुला** तथा **बाह्य**



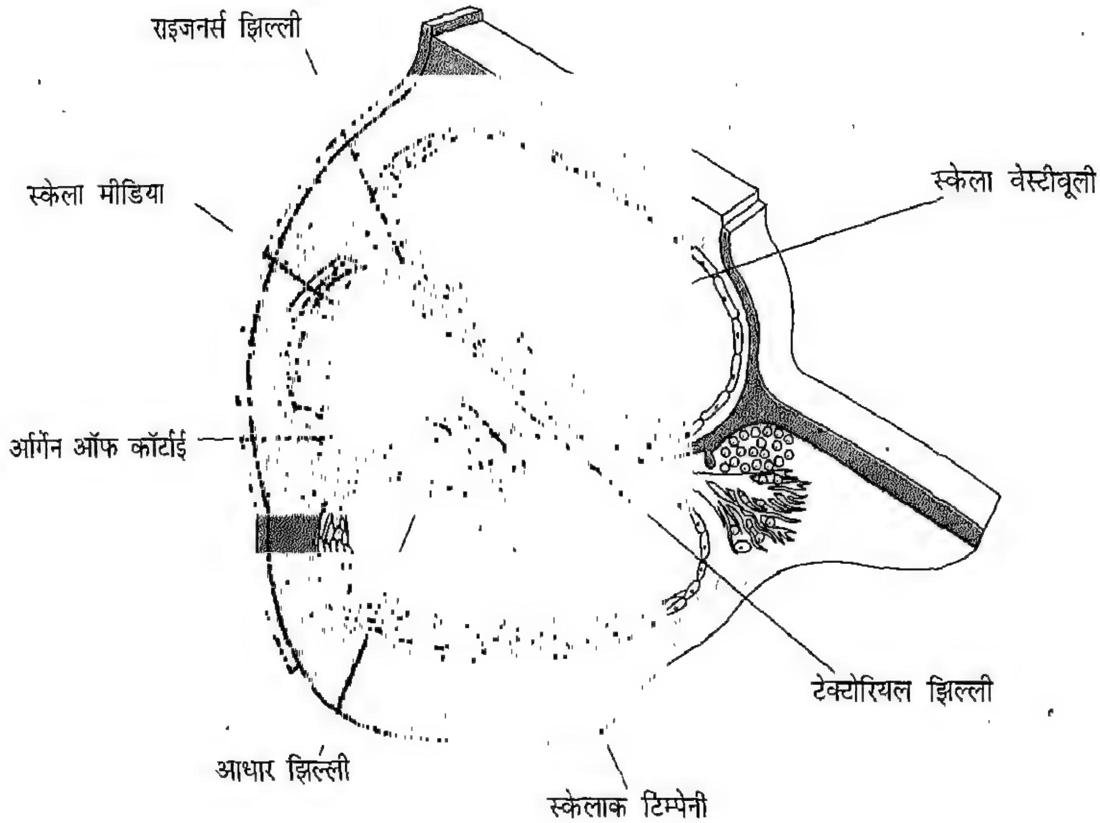
चित्र 21.7 कर्ण का आरेखी दृश्य

श्रवण गुहा का बना होता है। पिन्ना वायु में उपस्थित तरंगों को एकत्र करता है जो ध्वनि उत्पन्न करती है। बाह्य श्रवण गुहा, **कर्ण पटह झिल्ली** तक भीतर की ओर जाती है। पिन्ना तथा मिटस में कुछ महीन बाल और मोम स्रवित करने वाली तैल/वसा ग्रंथियाँ होती हैं। कर्ण पटह झिल्ली संयोजी ऊतकों की बनी होती है जो बाहरी ओर त्वचा से तथा अंदर श्लेष्मा झिल्ली से आवरित होती है। मध्य कर्ण तीन अस्थिकाओं से बना होता है जिन्हें **मैलियस, इंकस** और **स्टेपीज** कहते हैं। ये एक दूसरे से शृंखला के रूप में जुड़ी रहती है। मैलियस कर्ण पटह झिल्ली से और स्टेपीज कोक्लिया की **अंडाकार खिड़की** से जुड़ी होती है। कर्ण अस्थिकाएं ध्वनि तरंगों को अंतःकर्ण तक तक पहुँचाने की क्षमता को बढ़ाती है। **यूस्टेकीयन नलिका** मध्यकर्ण गुहा को फेरिंक्स से जोड़ती है। यूस्टेकियन नलिका कर्ण पटह के दोनों ओर दाब को समान रखती हैं।

द्रव से भरा अंतःकर्ण लेबरिंथ कहलाता है, जो कि अस्थिल और झिल्लीनुमा लेबरिंथ से बना होता है। अस्थिल लेबरिंथ वाहिकाओं की एक शृंखला होती है। इन वाहिकाओं के भीतर झिल्ली नुमा **लेबरिंथ** होता है, जो कि परिलसिका द्रव से घिरा रहता है; किंतु झिल्लीनुमा लेबरिंथ एंडोलिंफ नामक द्रव से भरा रहता है। लेबरिंथ के घुमावदार भाग को **कोक्लिया** कहते हैं। कोक्लिया को दो झिल्लियों द्वारा तीन कक्षों में विभक्त किया जाता है, जिन्हें बेसिलर झिल्ली और राइजनर्स झिल्ली कहते हैं। ऊपरी कक्ष को स्केला वेस्टीब्यूली, मध्य कक्ष को स्केला मीडिया और निचले कक्ष को स्केला टिंपेनी कहते हैं। स्केला वेस्टीब्युली और स्केला टिंपेनी परिलसिका द्रव से तथा स्केला मीडिया अंर्तलसिका द्रव से भरा होता है (चित्र 21.8)। कोक्लिया के नीचे स्केला वेस्टीब्युली अंडाकार खिड़की में समाप्त होती हैं; जबकि स्केला टिंपनी गोलाकार खिड़की में समाप्त होते हैं।

आर्गन ऑफ कॉर्टाई आधारीय झिल्ली पर स्थित होता है जिसमें पाई जाने वाली **रोम कोशिकाएं** श्रवण ग्राही के रूप में कार्य करती है। रोम कोशिकाएं आर्गन ऑफ कॉर्टाई की आंतरिक सतह पर शृंखला में पाई जाती है। रोम कोशिकाएं का आधारीय भाग अभिवाही तंत्रिका तंतु के निकट संपर्क में होता है। प्रत्येक रोम कोशिका के ऊपरी भाग से कई स्टीरियो सिलिया नामक प्रवर्ध निकलता है। रोम कोशिकाओं की शृंखला के ऊपर पतली लचीली टेंक्टोरियल झिल्ली होती है।

अंतःकर्ण में कोक्लिया के ऊपर जटिल तंत्र, **वेस्टीब्युलर तंत्र** भी होता है। वेस्टीब्युलर तंत्र तीन **अर्द्धचंद्राकार** नलिकाओं और लघुकोश तथा यूट्रीकल से निर्मित **आर्गन ऑफ ऑटोलिथ** से बना होता है। प्रत्येक अर्द्धचंद्राकार नलिका एक दूसरे से समकोण पर भिन्न तल पर स्थित होती है। झिल्लीनुमा नलिकाएं अस्थिल नलिकाओं के परिलसिका द्रव में डुबी रहती हैं। नलिका का फुला हुआ आधार भाग एंपुला जिसमें एक उभार निकलता है, जिसे **क्रिस्टा एंपुलैरिस** कहते हैं। प्रत्येक क्रिस्टा में रोम कोशिकाएं होती हैं। लघुकोश और यूट्रीकल में उभारनुमा संरचना **मैक्यूला** होता है। क्रिस्टा व मैक्यूला वेस्टीब्युलर तंत्र के विशिष्ट ग्राही होते हैं, जो शरीर के संतुलन व सही स्थिति के लिए उत्तरदायी होते हैं।



चित्र 21.8 कोक्लिया के काट का दृश्य

21.6.2.1 श्रवण की क्रिया

कर्ण किस प्रकार ध्वनि तरंगों को तंत्रिकीय आवेगों में बदलता है, जो कि मस्तिष्क द्वारा उदीप्त व क्रियात्मक होकर हमें ध्वनि की पहचान कराते हैं? बाह्य कर्ण ध्वनि तरंगों को ग्रहण कर कर्ण पटह तक भेजता है। ध्वनि तरंगों के प्रतिक्रिया में कर्ण पटह में कंपन्न होता है और ये कंपन्न कर्ण अस्थिकाओं (मैलियस, इंकस और स्टेपीस) से होते हुए गोलाकार खिड़की तक पहुँचते हैं। गोलाकार खिड़की से कंपन्न कोक्लिया में भरे द्रव तक पहुँचते हैं, जहां वे लिंफ में तरंगे उत्पन्न करते हैं। लिंफ की तरंगें आधार कला में हलचल उत्तेजित करती हैं।

आधारीय झिल्ली में गति से रोम कोशिकाएं मुड़ती हैं और टैक्टोरियल झिल्ली पर दबाव डालती हैं। फलस्वरूप संगठित अभिवाही न्यूरोंस में तंत्रिका आवेग उत्पन्न होते हैं। ये आवेग अभिवाही तंतुओं द्वारा श्रवण तंत्रिका से होते हुए मस्तिष्क के श्रवण वल्कुट तक भेजे जाते हैं जहाँ आवेगों का विश्लेषण कर ध्वनि को पहचाना जाता है।

सारांश

तंत्रिका तंत्र समन्वयी तथा एकीकृत क्रियाओं के साथ ही अंगों की उपापचयी और समस्थैनिक क्रियाओं का नियंत्रण करता है। तंत्रिका तंत्र की क्रियात्मक इकाई न्यूरोंस, झिल्ली के दोनों ओर सांद्रता प्रवणता अंतराल के कारण उत्तेजक कोशिकाएं होती हैं। स्थिर तंत्रिकीय झिल्ली के दोनों ओर का विद्युत विभवांतर विरामकला विभव कहलाता है। तंत्रिकाक्ष झिल्ली पर विद्युत विभावांतर प्रेरित उद्दीपन द्वारा संचारित होता है। इसे सक्रिय विभव कहते हैं। तंत्रिकाक्ष झिल्ली की सतह पर आवेगों का संचरण विध्रुवीकरण और पुनध्रुवीकरण के रूप में होता है। पूर्व सिनेप्टिक न्यूरॉन और पश्च सिनेप्टिक न्यूरॉन की झिल्लियाँ सिनेप्स का निर्माण करती है, जो कि सिनैप्टिक विदर द्वारा पृथक हो सकती है या नहीं होती है। सिनेप्स दो प्रकार के होते हैं - विद्युत सिनैप्स और रासायनिक सिनेप्स। रासायनिक सिनैप्स पर आवेगों के संचरण में भाग लेने वाले रसायन न्यूरोट्रांसमीटर कहलाते हैं।

मानव तंत्रिका तंत्र दो भागों का बना होता है -

(i) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र और (ii) परीधीय तांत्रिका तंत्र। सी एन एस मस्तिष्क और मेरूरज्जु का बना होता है। मस्तिष्क को तीन मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है। (i) अग्र मस्तिष्क (ii) मध्य मस्तिष्क (iii) पश्च मस्तिष्क। अग्र मस्तिष्क प्रमस्तिष्क, थेलेमस और हाइपोथेलेमस से बना होता है। प्रमस्तिष्क लंबवत् दो अर्धगोलार्धो में विभक्त होता है, जो कॉर्पस कैलोसम से जुड़े रहते हैं। अग्र मस्तिष्क का महत्वपूर्ण भाग हाइपोथेलेमस शरीर के तापक्रम, खाने और पीने आदि क्रियाओं का नियंत्रण करता है। प्रमस्तिष्क गोलार्द्धों का आंतरिक भाग और संगठित गहराई में स्थित संरचनाएं मिलकर एक जटिल संरचना बनाते हैं, जिसे लिम्बिक तंत्र कहते हैं और यह सूंघने, प्रतिवर्त्ती क्रियाओं, लैंगिक व्यवहार के नियंत्रण, मनोभावों की अभिव्यक्ति और अभिप्रेरण से संबंधित होता है। मध्य मस्तिष्क ग्राही व एकीकरण तथा एकीकृत दृष्टि तंतु तथा श्रवण अंतर क्रियाओं से संबंधित है।

पश्च मस्तिष्क पोंस, अनु मस्तिष्क और मेड्यूला का बना होता है। अनु मस्तिष्क कर्ण की अर्द्धचंद्राकार नलिकाओं तथा श्रवण तंत्र से प्राप्त होने वाली सूचनाओं को एकीकृत करता है। मध्यांश (मैड्यूला) में श्वसन, हृदय परिसंचयी, प्रतिवर्तित और जठर स्रावों के नियंत्रण केंद्र होते हैं। पोंस रेशेनुमा पथ का बना होता है, जो मस्तिष्क के विभिन्न भागों को आपस में जोड़ता है। परिधीय तंत्रिका तंत्र को प्राप्त उद्दीपनों के लिए अनैच्छिक प्रतिक्रियाओं को प्रतिवर्ती क्रियाएं कहा जाता है।

वातावरणीय बदलाव की सूचना सी एन एस को संवेदी अंगों से प्राप्त होती हैं, जिन्हें संचरित और विश्लेषित किया जाता है। इसके बाद संदेशों को आवश्यक समायोजन हेतु भेजा जाता है।

मानव नेत्र गोलक की दीवारें तीन उपपरतों से बनी होती है। कॉर्निया को छोड़कर बाहरी परत स्क्लेरा (शुक्ल पटल) है। स्क्लेरा के भीतर की ओर मध्य परत कॉरोइड कहलाती है। आंतरिक परत रेटिना में दो प्रकार की प्रकाश ग्राही कोशिकाएं होती हैं - शलाका और शंकु। इन कोशिकाओं में प्रकाश संवेदी प्रोटीन प्रकाश वर्णनक पाए जाते हैं।

दिन-रात की दृष्टि (फोटोपिक दृष्टि) शंकु का कार्य है तथा स्कोटोपिक दृष्टि शलाका का कार्य है। प्रकाश रेटिना से प्रवेश कर लैंस तक पहुँचता है और रेटिना पर वस्तु की छवि बनती है। रेटिना में उत्पन्न आवेगों को मस्तिष्क के दृष्टि वल्कुट भाग तक दृक तंत्रिका द्वारा भेजा जाता है। जहाँ पर तंत्रिकीय आवेगों का विश्लेषण होता है और रेटिना पर बनने वाली छवि को पहचाना जाता है।

कर्ण को बाह्य कर्ण, मध्य कर्ण व अंत:कर्ण में विभाजित किया जा सकता है। बाह्य कर्ण पिन्ना तथा बाह्य श्रवण गुहा से बना होता है। मध्य कर्ण तीन अस्थिकाओं मैलियस, इंकस और स्टेप्सीज से बना होता है। द्रव्य से भरा अंत:कर्ण लेबरिंथ का घुमावदार भाग कोक्लिया कहलाता है। कोक्लिया दो झिल्लियों बेसिलर झिल्ली

और राइजनर्स झिल्ली द्वारा तीन कक्षों में विभाजित किया जाता है। ऑर्गन कॉफ कॉर्टाई आधारीय झिल्ली द्वारा तीन कक्षों में विभाजित किया जाता है। ऑर्गन ऑफ कॉर्टाई आधारीय झिल्ली पर स्थित होता है और इसमें पाई जाने वाली रोम कोशिकाएं श्रवण ग्राही की तरह कार्य करती हैं। कर्ण ड्रम में उत्पन्न कंपन्न कर्ण अस्थिकाओं और अंडाकार खिड़की द्वारा द्रव से भरे अंतः कर्ण तक भेजे जाते हैं, जहाँ वे आधारीय झिल्ली में एक तरंग उत्पन्न करती हैं।

आधारीय झिल्ली में होने वाली गति रोम कोशिकाओं को मोड़ती है और टेक्टोरियस झिल्ली के विरूद्ध दबाव उत्पन्न करते हैं। फलस्वरूप तंत्रिका आवेग उत्पन्न होते हैं और अभिवाही तंतुओं द्वारा मस्तिष्क के श्रवण वल्कुट तक भेजे जाते हैं। अंतः कर्ण में भी कोक्लिया के ऊपर जटिल तंत्र होता है और शरीर के संतुलन और सही स्थिति को बनाए रखने में हमारी मदद करता है।

अभ्यास

1. निम्नलिखित संरचनाओं का संक्षेप में वर्णन कीजिए-
   (अ) मस्तिष्क (ब) नेत्र (स) कर्ण
2. निम्नलिखित की तुलना कीजिए-
   (अ) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र और परिधीय तंत्रिका तंत्र
   (ब) स्थिर विभव और सक्रिय विभव
   (अ) कॉरोइड और रेटिना
3. निम्नलिखित प्रक्रियाओं का वर्णन कीजिए-
   (अ) तंत्रिका तंतु की झिल्ली का ध्रुवीकरण
   (ब) तंत्रिका तंतु की झिल्ली का विध्रुवीकरण
   (स) तंत्रिका तंतु के समांतर आवेगों का संचरण
   (द) रासायनिक सिनेप्स द्वारा तंत्रिका आवेगों का संवहन
4. निम्नलिखित का नामांकित चित्र बनाइए-
   (अ) न्यूरॉन (ब) मस्तिष्क (स) नेत्र (द) कर्ण
5. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-
   (अ) तंत्रीय समन्वयन (ब) अग्र मस्तिष्क
   (स) मध्य मस्तिष्क (द) पश्च मस्तिष्क
   (ध) रेटिना (य) कर्ण अस्थिकाएं
   (र) कॉक्लिया (ल) ऑर्गन ऑफ कॉर्टाई व सिनेप्स
6. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी दीजिए-
   (अ) सिनेप्टिक संचरण की क्रियाविधि
   (ब) देखने की प्रक्रिया
   (स) श्रवण की प्रक्रिया
7. (अ) आप किस प्रकार किसी वस्तु के रंग का पता लगाते हैं?
   (ब) हमारे शरीर का कौन सा भाग शरीर का संतुलन बनाए रखने में मदद करता है?
   (स) नेत्र किस प्रकार रेटिना पर पड़ने वाले प्रकाश का नियमन करते हैं?

8. (अ) सक्रिय विभव उत्पन्न करने में Na^{+} की भूमिका का वर्णन कीजिए।
   (ब) सिनेप्स पर न्यूरोट्रांसमीटर मुक्त करने में Ca^{++} की भूमिका का वर्णन कीजिए।
   (स) रेटिना पर प्रकाश द्वारा आवेग उत्पन्न होने की क्रियाविधि का वर्णन कीजिए।
   (द) अंतः कर्ण में ध्वनि द्वारा तंत्रिका आवेग उत्पन्न होने की क्रियाविधि का वर्णन कीजिए।
9. निम्न के बीच में अंतर बताइए-
   (अ) आच्छादित और अनाच्छादित तंत्रिकाक्ष
   (ब) दुम्राक्ष्य और तंत्रिकाक्ष
   (स) शलाका और शंकु
   (द) थेलेमस और हाइपोथेलेमस
   (ध) प्रमस्तिष्कं और अनुमस्तिष्क
10. (अ) कर्ण का कौन सा भाग ध्वनि की पिच का निर्धारण करता है?
   (ब) मानव मस्तिष्क का सर्वाधिक विकसित भाग कौन सा है?
   (स) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र का कौन सा भाग मास्टर क्लॉक की तरह कार्य करता है?
11. कशेरुकी के नेत्र का वह भाग जहाँ से दृकतंत्रिका रेटिना से बाहर निकलती हैं, क्या कहलाता है-
   (अ) फोविया
   (ब) आइरिस
   (स) अंध बिंदु
   (द) ऑप्टिक चाएज्मा (चाक्षुष काएज्मा)
12. निम्न में भेद स्पष्ट कीजिए-
   (अ) संवेदी तंत्रिका एवं प्रेरक तंत्रिका
   (ब) आच्छादित एवं अनाच्छादित तंत्रिका तंतु में आवेग संचरण
   (स) एक्विअस ह्यूमर (नेत्रोद) एवं विट्रियस ह्यूमर (काचाभ द्रव)
   (द) अंध बिंदु एवं पीत बिंदु
   (य) कपालीय तंत्रिकाएं एवं मेरू तंत्रिकाए

अध्याय 22

रासायनिक समन्वय तथा एकीकरण

22.1 *अंत:स्रावी ग्रंथियां और हार्मोन*

22.2 *मानव अंत:स्रावी तंत्र*

22.3 *हृदय, वृक्क और जठर आंत्रीय पथ के हार्मोन*

22.4 *हार्मोन क्रिया की क्रियाविधि*

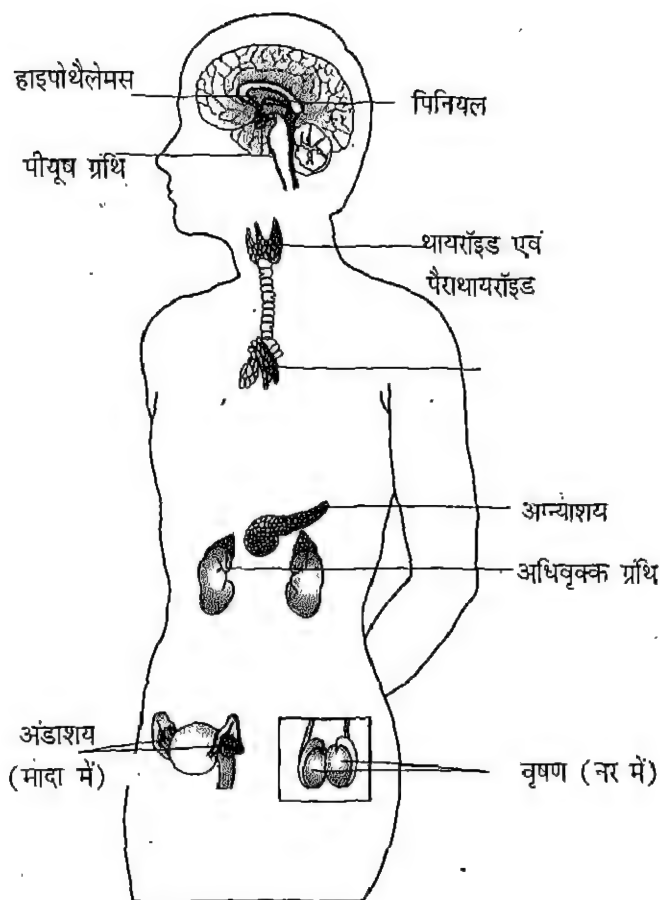
आप अध्ययन कर चुके हैं कि तंत्रिका तंत्र विभिन्न अंगों के बीच एक बिंदु दर बिंदु द्रुत समन्वय का कार्य करता है। तंत्रिकीय समन्वय काफी तेज लेकिन अल्प अवधि का होता है। तंत्रिका तंतुओं द्वारा शरीर की सभी कोशिकाओं का तंत्रिकायन नहीं होने के करण कोशिकीय क्रियाओं के लिए तथा निरंतर नियमन के लिए एक विशेष प्रकार के समन्वय की आवश्यकता होती है। यह कार्य हार्मोन द्वारा संपादित होता है। तंत्रिका तंत्र और अंत:स्रावी तंत्र मिलकर शरीर की शरीर क्रियात्मक कार्यों का समन्वय और नियंत्रण करते हैं।

22.1 अंत:स्रावी ग्रंथियां और हार्मोन

अंत:स्रावी ग्रंथियों में नलिकाएं नहीं होती हैं अत: वे नलिकाविहीन ग्रंथियां कहलाती हैं। इनके स्राव हार्मोन कहलाते हैं। हार्मोन की चिरसम्मत परिभाषा के अनुसार 'हार्मोन अंत:स्रावी ग्रंथियों द्वारा स्रवित रक्त में मुक्त किए जाने वाले रसायन हैं, जो दूरस्थ लक्ष्य अंग तक पहुँचाए जाते हैं।' परंतु इस परिभाषा को अब रूपांतरित किया गया है जिसके अनुसार 'हार्मोन सूक्ष्म मात्रा में उत्पन्न होने वाले अपोषक रसायन हैं जो अंतरकोशिकीय **संदेशवाहक** के रूप में कार्य करते हैं' इस नई परिभाषा के अंतर्गत सुनियोजित अंत:स्रावी ग्रंथियों से स्रावित हार्मोन के अतिरिक्त कई नये अणु भी सम्मिलित हो जाते हैं। अकशेरुकियों में कम हार्मोन के साथ एक सरल अंत:स्रावी तंत्र होता है जबकि कशेरूकियों में कई रसायन हार्मोन की तरह कार्य कर उनमें समन्वय स्थापित करते हैं। यहाँ मानव अंत:स्रावी तंत्र का वर्णन किया गया है।

22.2 मानव अंतःस्त्रावी तंत्र

अंतःस्त्रावी ग्रंथियां और शरीर के विभिन्न भागों में स्थित हार्मोन स्त्रवित करने वाले ऊतक/कोशिकाएं मिलकर अंतःस्त्रावी तंत्र का निर्माण करते हैं। पीयूष ग्रंथि, पिनियल ग्रंथि, थाइरॉयड, एड्रीनल, अग्नाशय, पैराथायरॉइड, थाइमस और जनन ग्रंथियां (नर में वृषण और मादा में अंडाशय) हमारे शरीर के सुनियोजित अंतःस्त्रावी अंग हैं (चित्र 22.1)। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य अंग जैसे कि जठर-आंत्रीय मार्ग, यकृत, वृक्क, हृदय आदि भी हार्मोन का उत्पादन करते हैं। मानव शरीर की सभी प्रमुख अंतःस्त्रावी ग्रंथियों तथा हाइपोथैलेमस की संरचना और उनके कार्य का संक्षिप्त विवरण अगले भाग में दिया गया है।

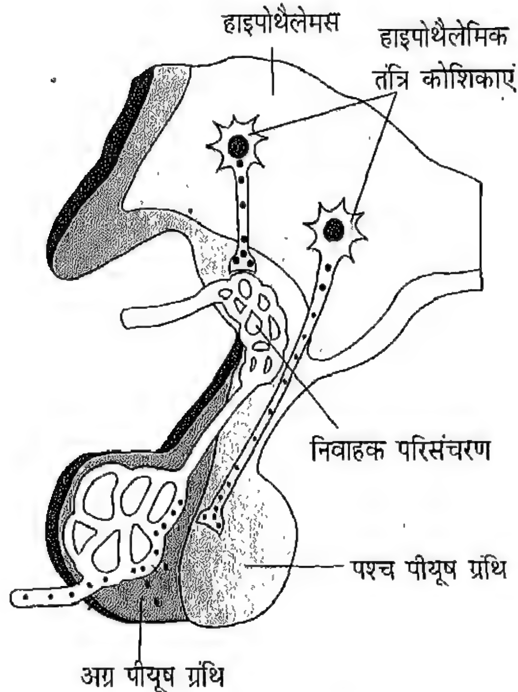


चित्र 22.1 अंतःस्त्रावी ग्रंथियों की स्थिति

22.2.1 हाइपोथैलेमस

जैसा कि आप जानते हैं कि हाइपोथैलेमस, डाइनसिफेलॉन (अग्रमस्तिष्क पश्च) का आधार भाग है और यह शरीर के विविध प्रकार के कार्यों का नियंत्रण करता है। इसमें हार्मोन का उत्पादन करने वाली कई तंत्रिकास्त्रावी कोशिकाएं होती हैं जिन्हें न्यूक्ली कहते हैं। ये हार्मोन पीयूष ग्रंथि से स्त्रवित होने वाले हार्मोन के संश्लेषण और स्त्राव का नियंत्रण करते हैं। हाइपोथैलेमस से स्त्रावित होने वाले हार्मोन दो प्रकार के होते हैं-

मोचक हार्मोन (जो पीयूष ग्रंथि से हार्मोन से स्त्राव को प्रेरित करते हैं) और निरोधी हार्मोन (जो पीयूष ग्रंथि से हार्मोन को रोकते हैं)। उदाहरणार्थः हाइपोथैलेमस से निकलने वाला गोनेडोट्रोफिन मुक्तकारी हार्मोन के स्त्राव पीयूष ग्रंथि में गोनेडोट्रोफिन हार्मोन के संश्लेषण एवं स्त्राव को प्रेरित करता है। वहीं दूसरी ओर हाइपोथैलेमस से ही स्त्रवित सोमेटोस्टेटिन हार्मोन, पीयूष ग्रंथि से वृद्धि हार्मोन के स्त्राव का रोधक है। ये हार्मोन हाइपोथैलेमस की तंत्रिकोशिकाओं से प्रारंभ होकर, तंत्रिकाक्ष होते हुए तंत्रिका सिरों पर मुक्त कर दिए जाते हैं। ये हार्मोन निवाहिका परिवहन-तंत्र द्वारा पीयूष ग्रंथि तक पहुंचते हैं और अग्र पीयूष ग्रंथि के कार्यों का नियमन करते हैं। पश्च पीयूष ग्रंथि का तंत्रिकीय नियमन सीधे हाइपोथैलेमस के अधीन होता है (चित्र 22.2)।



चित्र 22.2 पीयूष ग्रंथि तथा हाइपोथैलेमस के साथ इसके संबद्धता की आरेखीय प्रस्तुति

22.2.2 पीयूष ग्रंथि

पीयूष ग्रंथि एक सेला टर्सिका नामक अस्थिल गुहा में स्थित होती है और एक वृंत द्वारा हाइपोथैलेमस से जुड़ी होती है (चित्र 22.2)। आंतरिकी के अनुसार पीयूष ग्रंथि **एडिनोहाइपोफाइसिस** और **न्यूरोहाइपोफाइसिस** नामक दो भागों में विभाजित होती है। एडिनोहाइपोफाईसिस दो भागों का बना होता है – पार्स डिस्टेलिस और पार्स इंटरमीडिया। पार्स डिस्टेलिस को साधारणतया अग्र पीयूष ग्रंथि कहते हैं, जिससे **वृद्धि हार्मोन** या **सोमेटोट्रोपिन** (GH), **प्रोलैक्टिन** (PRL) या **मेमोट्रोपिन, थाइरॉइड प्रेरक हार्मोन** (TSH) **एड्रिनोकार्टिकोट्रॉफिक हार्मोन** (ACTH) या **कॉर्टिकोट्रोफिन, ल्यूटीनाइजिंग हार्मोन** (LH) और **पुटिका प्रेरक हार्मोन** का स्राव करता है। पार्स इंटरमीडिया एक मात्र हार्मोन **लेनोसाइट प्रेरक हार्मोन** (MSH) या मेलेनोट्रोफिन का स्राव करता है। यद्यपि मानव में पार्स इंटरमीडिया (मध्यपिंड) पार्स डिस्टेलिस (दूरस्थ पिंड) में लगभग जुड़ा होता है।

न्यूरोहाइपोफाइसिस (पार्स नर्वोसा) या पश्च पीयूष ग्रंथि, यह हाइपोथैलेमस द्वारा उत्पादित किए जाने वाले हार्मोन **ऑक्सीटॉसिन** और **वेसोप्रेसिन** का संग्रह और स्राव करती है। ये हार्मोन वास्तव में हाइपोथैलेमस द्वारा संश्लेषित होते हैं और तंत्रिकाक्ष होते हुए पश्च पीयूष ग्रंथि में पहुँचा दिए जाते हैं।

वृद्धिकारी हार्मोन (GH) के अति स्राव से शरीर की असामान्य वृद्धि होती है जिसे जाइगेंटिज्म (अतिकायकता) कहते हैं और इसके अल्प स्राव से वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है जिसे पिट्यूटरी ड्वार्फिज्म (बौनापन या वामनता) कहते हैं। प्रोलैक्टिन हार्मोन स्तन ग्रंथियों की वृद्धि और उनमें दुग्ध निर्माण का नियंत्रण करता है। थाइरॉइड प्रेरक हार्मोन थाइरॉइड ग्रंथियों पर कार्य कर उनसे थाइरॉइड हार्मोन के संश्लेषण और स्राव को प्रेरित करता है। एड्रिनोकार्टिकोट्रॉफिक हार्मोन (ACTH) एड्रीनल वल्कुट पर कार्य करता है और इसे **ग्लूकोकॉर्टिकॉइड्स** नामक, स्टीरॉइड हार्मोन के संश्लेषण, और स्रवण के लिए प्रेरित करता है। ल्यूटिनाइजिंग और पुटिका प्रेरक हार्मोन जननांगों की क्रिया को प्रेरित करते हैं और लिंगी हार्मोन का उत्पादन करते हैं अतः **गोनेडोट्रोपिन** कहलाते हैं। नरों में ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन, एंड्रोजेन नामक हार्मोन के संश्लेषण और स्राव के लिए प्रेरित करता है। इसी तरह नरों में पुटिका प्रेरक हार्मोन और **एंड्रोजेन** शुक्रजनन को नियंत्रित करता है। मादाओं में ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन पूर्ण विकसित पुटिकाओं (ग्राफियन पुटिका) से अंडोत्सर्ग को प्रेरित करता है और ग्राफियन पुटिका के बचे भाग से कॉपर्स ल्यूटियम बनाता है। पुटिका प्रेरक हार्मोन, मादाओं में अंडाशयी पुटिकाओं की वृद्धि और परिवर्धन को प्रेरित करता है।

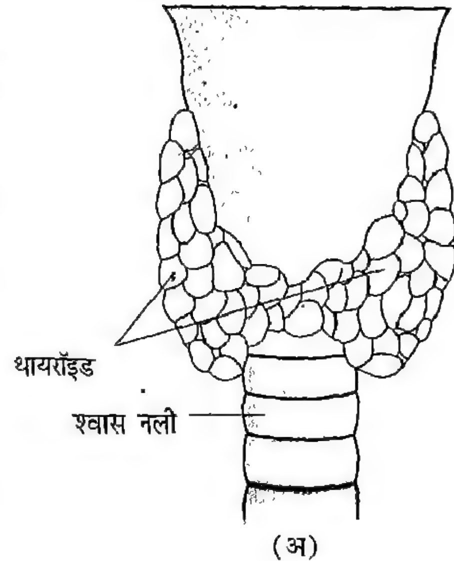
मेलानोसाइट प्रेरक हार्मोन, मेलानोसाइट्स (मेलानीन युक्त कोशिकाओं) पर क्रियाशील होता है तथा त्वचा की वर्णकता का नियमन करता है। ऑक्सीटॉसिन हमारे शरीर की चिकनी पेशियों पर कार्य करता है और उनके संकुचन को प्रेरित करता है। मादाओं में यह प्रसव के समय गर्भाशयी पेशियों के संकुचन और दुग्ध ग्रंथियों से दूध के स्राव को प्रेरित करता है। वेसोप्रेसिन मुख्यत: वृक्क की दूरस्थ संवलित नलिका से जल एवं आयनों के पुनरावशोषण को प्रेरित करता है, जिससे मूत्र के साथ जल का ह्रास (डाइयूरेसिस) कम हो। अत: इसे प्रतिमूत्रल हार्मोन या **एंटी-डाइयूरेटिक हार्मोन** (ADH) भी कहते हैं।

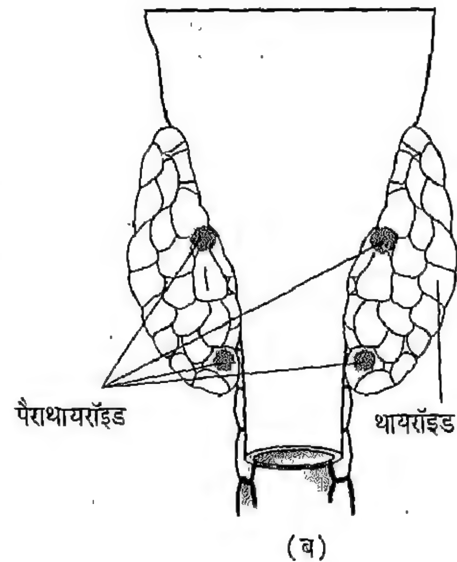
22.2.3 पिनियल ग्रंथि

पिनियल ग्रंथि अग्र-मस्तिष्क के पृष्ठीय (ऊपरी) भाग में स्थित होती है। पिनियल ग्रंथि **मेलेटोनिन** हार्मोन स्रावित करती है। मेलेटोनिन हमारे शरीर की दैनिक लय (24 घंटे) के नियमन का एक महत्वपूर्ण कार्य करता है। उदाहरण के लिए यह सोने-जागने के चक्र एवं शरीर के तापक्रम को नियंत्रित करता है। इन सबके अतिरिक्त मेलेटोनिन उपापचय, वर्णकता, मासिक (आर्तव) चक्र प्रतिरक्षा क्षमता को भी प्रभावित करता है।

22.2.4 थाइरॉइड ग्रंथि

थाइरॉइड ग्रंथि श्वास नली के दोनों ओर स्थित दो पालियों से बनी होती है (चित्र 22.3)। दोनों पालियाँ संयोजी ऊतक के पतली पल्लीनुमा इस्थमस से जुड़ी होती है। प्रत्येक थाइरॉइड **ग्रंथि पुटकों** और **भरण ऊतकों** की बनी होती हैं। प्रत्येक थाइरॉइड पुटक एक गुहा को घेरे पुटक कोशिकाओं से निर्मित होता है। ये पुटक कोशिकाएं दो हार्मोन, **टेट्राआयडोथाइरोनीनस** (T_4) अथवा **थायरोक्सीन** तथा **ट्राईआइडोथायरोनीन** (T_3) का संश्लेषण करती हैं। थाइरॉइड हार्मोन के सामान्य दर से संश्लेषण के लिए आयोडीन आवश्यक है। हमारे भोजन में आयोडीन की कमी से **अवथाइरॉइडता** एवं थाइरॉइड ग्रंथि की वृद्धि हो जाती है, जिसे साधारणतया **गलगंड** कहते हैं। गर्भावस्था के समय अवथाइरॉइडता के कारण गर्भ में विकसित हो रहे बालक की वृद्धि विकृत हो जाती है। इससे बच्चे की अवरोधित वृद्धि (क्रिटेनिज्म) या वामनता तथा मंदबुद्धि, त्वचा असामान्यता, मूक बधिरता आदि हो जाती हैं। वयस्क स्त्रियों में





चित्र 22.3 थायरॉइड की स्थिति की आरेखी प्रस्तुति (अ) अधर दृश्य (ब) पृष्ठ दृश्य

अवथाइराइडता मासिक चक्र को अनियमित कर देता है। थाइरॉइड ग्रंथि के कैंसर अथवा इसमें गाँठों की वृद्धि से थाइरॉइड हारर्मोन के संश्लेषण की दर असामान्य रूप से अधिक जाती है। इस स्थिति को **थाइरॉइड अतिक्रियता** कहते हैं, जो शरीर की कार्यिकी पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

थाइरॉइड हार्मोन आधारीय उपापचयी दर के नियमन में मुख्य भूमिका निभाते हैं। ये हार्मोन लाल रक्त कणिकाओं के निर्माण की प्रक्रिया में भी सहायता करते हैं। थाइरॉइड हार्मोन कार्बोहाइड्रेट्, प्रोटीन और वसा के उपापचय (संश्लेषण और विखंडन) को भी नियंत्रित करते हैं। जल और विद्युत उपघट्यों का नियमन भी थाइरॉइड हार्मोन प्रभावित करते हैं। थाइरॉइड ग्रंथि से एक प्रोटीन हार्मोन, थाइरोकैल्सिटोनिन (TCT) का भी स्राव होता है जो रक्त में कैल्सियम स्तर को नियंत्रण करता है।

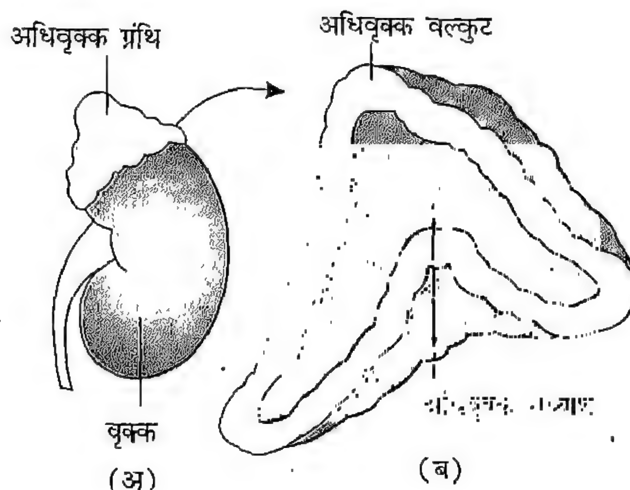
22.2.5 पैराथाइरॉइड ग्रंथि

मानव में चार पैराथाइरॉइड ग्रंथियाँ, थाइरॉइड ग्रंथि की पश्च सतह पर स्थित होती है। थाइरॉइड ग्रंथि की दो पालियों पर प्रत्येक में एक जोड़ी पैराथाइरॉइड ग्रंथियाँ पाई जाती हैं (चित्र 22.3बी), जो **पैराथाइरॉइड हार्मोन** (PTH) नामक एक पेप्टाइड हार्मोन का स्राव करती हैं। पीटीएच का स्राव रक्त के साथ परिसंचारित कैल्सियम आयन के द्वारा नियमित होता है।

पैराथाइरॉइड हार्मोन रक्त में Ca^{2+} के स्तर को बढ़ाता है। पी टी एच अस्थियों पर कार्य कर अस्थि अवशोषण (विघटन/विखनिजन) प्रक्रम में सहायता करता है। पी टी एच वृक्क नलिकाओं से Ca^{2+} के पुनरावशोषण तथा पचित भोजन से Ca^{2+} के अवशोषण को भी प्रेरित करता है। अत: यह स्पष्ट है कि पी टी एच एक अतिकैल्सियम रक्तता हार्मोन (hypercalemic hormone) है, क्योंकि यह रक्त में Ca^{2+} स्तर को बढ़ाता है। यह थाइरोकैल्सिटोनिन के साथ मिलकर, यह शरीर में Ca^{2+} स्तर को बढ़ाता है। टी सी टी के साथ मिलकर, यह शरीर में Ca^{2+} का संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

22.2.6 थाइमस ग्रंथि

थाइमस हृदय तथा महाधमनी के ऊपरी भाग में स्थित ग्रंथि एक पालीयुक्त रचना है। थाइमस ग्रंथि प्रतिरक्षा तंत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह ग्रंथि **थाइमोसिन** नामक पेप्टाइड हार्मोन का स्राव करती है। थाइमोसिन टी-लिंफोसाइट्स के विभेदीकरण में मुख्य भूमिका निभाते हैं जो **कोशिका माध्य प्रतिरक्षा** के लिए महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त **थाइमोसिन तरल प्रतिरक्षा** (humoral immunity) के लिए प्रतिजैविक के उत्पादन को भी प्रेरित करते हैं। बढ़ती उम्र के साथ थाइमस का अपघटन होने लगता है, फलस्वरूप थाइमोसिन का उत्पादन घट जाता है। इसी के परिणामस्वरूप वृद्धों में प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया कमजोर पड़ जाती है।



चित्र 22.4 (अ) वृक्क एवं अधिवृक्क ग्रंथि (ब) अधिवृक्क ग्रंथि के दो भागों का अनुप्रस्थकाट प्रदर्शन

22.2.7 अधिवृक्क ग्रंथि

हमारे शरीर में प्रत्येक वृक्क के अग्र भाग में एक स्थित एक जोड़ी अधिवृक्क ग्रंथियां होती हैं, (चित्र 22.4 अ)। ग्रंथियां दो प्रकार के ऊतकों से निर्मित होती हैं। ग्रंथि के बीच में स्थित ऊतक **अधिवृक्क मध्यांश** और बाहरी ओर स्थित ऊतक **अधिवृक्क वल्कुट** कहलाता है (चित्र 22.4बी)।

अधिवृक्क मध्यांश दो प्रकार के हार्मोन का स्राव करता है जिन्हें एड्रिनलीन या एपिनेफ्रीन और **नॉरएंड्रिनलीन** या **नारएपिनेफ्रीन** कहते हैं। इन्हें सम्मिलित रूप में **कैटेकॉलमीनस** कहते हैं। एड्रिनलीन और नॉरएड्रिनलीन किसी भी प्रकार के दबाव या आपातकालीन स्थिति में अधिकता में तेजी से स्रावित होते हैं, इसी कारण ये **आपातकालीन हार्मोन** या **युद्ध हार्मोन** या **फ्लाइट हार्मोन** कहलाते हैं। ये हार्मोन सक्रियता (तेजी), आँखों की पुतलियों के फैलाव, रोंगटे खड़े होना, पसीना आदि को बढ़ाते हैं। दोनों हार्मोन हृदय की धड़कन,, हृदय संकुचन की क्षमता और श्वसन दर को बढ़ाते हैं। कैटेकोलएमीन, ग्लाइकोजन के विखंडन को भी प्रेरित करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप रक्त में ग्लूकोज का स्तर बढ़ जाता है। साथ ही ये लिपिड और प्रोटीन के विखंडन को भी प्रेरित करते हैं।

अधिवृक्क वल्कुट को तीन परतों में विभाजित किया जा सकता है- **जोना रेटिक्यूलेरिस** (आंतरिक परत), **जोना फेसिक्यूलेटा** (मध्य परत) और **जोना ग्लोमेरूलोसा** (बाहरी परत)। अधिवृक्क वल्कुट कई हार्मोन का स्राव करता है- जिन्हें सम्मिलित रूप से **कोर्टिकोस्टीरॉइड हार्मोन या कोर्टिकॉइड** कहते हैं, जो कॉर्टिकोस्टीरॉइड कार्बोहाइड्रेट के उपापचय में संलग्न होते हैं **ग्लूकोकार्टिकॉइड** कहलाते हैं। हमारे शरीर में, कॉर्टिसॉल मुख्य ग्लूकोकॉर्टिकॉइड है। जल और विद्युत अपघट्यों का संतुलन करने वाले कॉर्टिकॉस्टीराइड, मिनरलोकॉर्टिकॉइड्स कहलाते हैं। हमारे शरीर में एल्डोस्टीरॉन मुख्य मिनरलोकॉर्टिकाइड है।

ग्लूकोकॉर्टिकोइड ग्लाइकोजन संश्लेषण, ग्लूकोनियोजिनेसिस, वसा अपघटन और प्रोटीन अपघटन को प्रेरित करते हैं तथा एमीनो अम्लों के कोशिकीय ग्रहण और उपयोग को अवरोधित करते हैं। कॉर्टिसॉल, हृदय संवहनी तंत्र के रखरखाव तथा वृक्क की क्रियाओं में भी संलग्न होता है। ग्लूकोकॉर्टिकोइड एवं विशेष रूप से कॉर्टिसाल प्रतिशोथ प्रतिक्रियाओं को प्रेरित करता है तथा प्रतिरक्षा तंत्र की प्रतिक्रिया को अवरोधित करता है। कॉर्टिसाल लाल रुधिर कणिकाओं के उत्पादन को प्रेरित करता है। एल्डोस्टीरॉन मुख्यत: वृक्क नलिकाओं पर कार्य करता है और Na^+ एवं जल के पुनरावशोषण तथा K^+ व फॉस्फेट आयन के उत्सर्जन को प्रेरित करता है। इस प्रकार एल्डोस्टीरॉन, वैद्युत अपघट्यों, शरीर द्रव के आयतन, परासरणी दाब और रक्त दाब को बनाए रखने में सहायक होता है। एड्रीनल वल्कुट द्वारा कुछ मात्रा में एंड्रोजेनिक स्टीराइड का भी स्राव होता है जो यौवनारंभ के समय अक्षीय रोम, जघन रोम, तथा मुख (आनन) रोम की वृद्धि में भूमिका अदा करते हैं।

22.2.8 अग्नाशय

अग्नाशय एक संयुक्त ग्रंथि है जो अंत:स्रावी और बहि:स्रावी दोनों के रूप में कार्य करती है (चित्र 22.1)। अंत:स्रावी अग्नाशय 'लैंगरहैंस द्वीपों' से निर्मित होता है। साधारण मनुष्य के अग्नाशय में लगभग 10 से 20 लाख लैंगरहैंस द्वीप होते हैं जो अग्नाशयी ऊतकों का 1 से 2 प्रतिशत होता है। प्रत्येक लैंगरहैंस द्वीप में मुख्य रूप से दो प्रकार की कोशिकाएं होती हैं जिन्हें α और β **कोशिकाएं** कहते हैं। **α कोशिकाएं** का **ग्लूकगॉन** तथा β **कोशिकाएं इंसुलिन** हार्मोन का स्राव करती हैं।

ग्लूकागॉन एक पेप्टाइड हार्मोन है जो सामान्य रक्त शर्करा स्तर के नियमन में मुख्य भूमिका निभाता है। ग्लूकागॉन मुख्य रूप से यकृत कोशिकाओं पर कार्य कर ग्लाइकोजेन अपघटन को प्रेरित करता है जिसके फलस्वरूप रक्त शर्करा का स्तर बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त पेट ग्लूकोनियोजिनेसिस की प्रक्रिया को भी प्रेरित करता है जिससे कि **हाइपरग्लाइसिमिया (अति ग्लूकोज रक्तता)** होती है। ग्लूकागॉन कोशिकीय शर्करा के अभिग्रहण और उपयोग को कम करता है। अत: ग्लूकोगॉन **हाइपरग्लाइसिमिक हार्मोन** है। इंसुलिन भी एक प्रोटीन हार्मोन है जो ग्लूकोज समस्थापन के नियमन में मुख्य भूमिका निभाता है। इंसुलिन मुख्यत: हिपेटोसाइट और एडीपोसाइट पर कार्य करता है और कोशिकीय ग्लूकोज अभिग्रहण और उपयोग को बढ़ाता है। इसके फलस्वरूप ग्लूकोज तीव्रता से रक्त हिपेटोसाइट और एडीपोसाइट में जाता है और तथा रक्त शर्करा का स्तर कम **(हाइपोग्लासीमिया)** हो जाता है। इंसुलिन लक्ष्य कोशिकाओं में ग्लूकोज से **ग्लाइकोजेन** बनने की प्रक्रिया को भी प्रेरित करता है। रक्त में ग्लूकोज समस्थापन का नियमन सम्मिलित रूप से दो हार्मोन इंसुलिन और ग्लूकागॉन द्वारा होता है।

लंबी अवधि तक हाइपरग्लाइसीमिया (अति ग्लूकोज रक्तता) होने पर **डायबिटीज मेलीटस** (मधुमेह) बीमारी हो जाती है जो मूत्र के साथ शर्करा का ह्रास और हानिकारक पदार्थों जैसे कीटोन बॉडीज़ के निर्माण से जुड़ी है। मधुमेह के मरीजों का इंसुलिन द्वारा सफलतापूर्वक उपचार किया जा सकता है।

22.2.9 वृषण

नर में उदर गुहा (पेडू) के बाहर वृषण कोष में एक जोड़ी वृषण स्थित होता हैं (चित्र 22.1)। वृषण प्राथमिक लैंगिक अंग के साथ ही अंतःस्रावी ग्रंथि के रूप में भी कार्य करता है। वृषण **शुक्रजनक नलिका** और **भरण या अंतराली ऊतक** का बना होता है। **लेइडिग कोशिकाएं या अंतराली कोशिकाएं** अंतरनलिकीय स्थानों में उपस्थित होती हैं और **एंड्रोजेन** या नर हार्मोन तथा **टेस्टोस्टेरॉन** प्रमुख हार्मोन का स्राव करती हैं।

एंड्रोजेन नर के सहायक जनन अंगों जैसे कि एपीडिडाईमस, शुक्रवाहिका, सेमिनल वेसीकल, प्रोस्टेट ग्रंथि, यूरिथ्रा आदि के परिवर्धन, परिपक्वन और क्रियाओं का नियमन करते हैं। ये हार्मोन पेशीय वृद्धि, मुख और अक्षीय रोम की वृद्धि, क्रोधात्मकता, निम्न स्वरमान या आवाज इत्यादि को उत्तेजित करते हैं। एंड्रोजेन शुक्राणु निर्माण की प्रक्रिया में प्रेरक भूमिका निभाते हैं। एंड्रोजेन केंद्रीय तंत्रिका तंत्र पर कार्य कर नर लैंगिक व्यवहार (लिबिडो) को प्रभावित करता है। ये हार्मोन प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट उपापचय पर उपाचयी प्रभाव डालते हैं।

22.2.10 अंडाशय

मादाओं के उदर में अंडाशय का एक युग्म (जोड़ा) होता है (चित्र 22.1)। अंडाशय एक प्राथमिक मादा लैंगिक अंग है जो प्रत्येक मासिक चक्र में एक अंडे को उत्पादित करते हैं। इसके अतिरिक्त अंडाशय दो प्रकार के स्टीरॉइड हार्मोन समूहों का भी उत्पादन करते हैं, जिन्हें **एस्ट्रोजेन** और **प्रोजेस्टेरॉन** कहते हैं। अंडाशय अंडपुटक और भरण ऊतक का बना होता है। एस्ट्रोजेन का संश्लेषण एवं स्राव प्रमुख रूप से परिवर्धित हो रहे अंडाशयी पुटकों द्वारा होता है। अंडोत्सर्ग के पश्चात विखंडित पुटिका, **कॉर्पसल्यूटियम** में बदल जाता है जो कि मुख्यतया प्रोजेस्टेरॉन हार्मोन का स्राव करता है।

एस्ट्रोजेन स्त्रियों में द्वितीयक लैंगिक अंगों की वृद्धि तथा क्रियाओं का प्रेरण, अंडाशयी पुटिकाओं का परिवर्धन, द्वितीयक लैंगिक लक्षणों का प्रकटन (जैसे उच्च आवाज की स्वरमान) स्तन ग्रंथियों का परिवर्धन इत्यादि अनेक क्रियाएं करते हैं। एस्ट्रोजेन स्त्रियों के लैंगिक व्यवहार का नियामक भी है।

प्रोजेस्टेरॉन प्रसवता में सहायक होते हैं। प्रोजेस्टेरॉन दुग्ध ग्रंथियों पर भी कार्य कर के दुग्ध संग्रह कूपिकाओं के निर्माण और दुग्ध के स्राव में सहायता करते हैं।

22.3 हृदय, वृक्क और जठर आंत्रीय पथ के हार्मोन

अब तक आप अंतःस्रावी ग्रंथियों और उनके हार्मोन के बारे में समझ चुके होंगे। यद्यपि पहले इंगित किया जा चुका है कि हार्मोन का स्राव कुछ अन्य अंगों द्वारा भी होता है जो अंतःस्रावी ग्रंथियां नहीं हैं। उदाहरण के लिए हृदय की अलिंद भित्ति द्वारा एक पेप्टाईड हार्मोन का स्राव होता है, जिसे **एट्रियल नेट्रियुरेटिक कारक** (एएनएफ) कहते हैं। यह रक्त दाब को कम करता है। जब रक्त दाब बढ़ जाता है, तो एएनएफ के स्राव और इसकी क्रिया के फलस्वरूप रक्त वाहिकाएं विस्फारित हो जाती हैं तथा रक्त दाब कम हो जाता है।

वृक्क की जक्स्टाग्लोमेरूलर कोशिकाएं, **इरिथ्रोपोईटिन** नामक हार्मोन का उत्पादन करती हैं जो रक्ताणु उत्पत्ति (आरबीसी के निर्माण) को प्रेरित करता है। जठर आंत्रीय पथ के विभिन्न भागों में उपस्थित अंत:स्रावी कोशिकाएं चार मुख्य पेप्टाइड हार्मोन का स्राव करती हैं; **गैस्ट्रिन**, **सेक्रेटिन**, **कोलिसिस्टोकाइनिन** – और **जठर अवरोधी पेप्टाइड** (जी आई पी)। गैस्ट्रिन, जठर ग्रंथियों पर कार्य कर हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और पेप्सिनोजेन के स्राव को प्रेरित करता है। सेक्रेटिन बहि:स्रावी अग्नाशय पर कार्य करता है और जल तथा बाइकार्बोनेट आयनों के स्राव को प्रेरित करता है। कोलिसिस्टोकाइनिन अग्नाशय और पित्ताशय दोनों पर कार्य कर क्रमश: अग्नाशयी एंजाइम और पित्त रस के स्राव को प्रेरित करता है। जी आई पी जठर स्राव और उसकी गतिशीलता को अवरुद्ध करता है। अनेक अन्य ऊतक, जो अंत:स्रावी नहीं है, कई हार्मोन का स्राव करते हैं जिन्हें **वृद्धिकारक** कहते हैं। ये वृद्धिकारक, ऊतकों की सामान्य वृद्धि और उनकी मरम्मत और पुनर्जनन के लिए आवश्यक हैं।

22.4 हार्मोन क्रिया की क्रियाविधि

हार्मोन लक्ष्य ऊतकों पर उपस्थि **हार्मोनग्राही** विशिष्ट प्रोटीन से जुड़कर अपना प्रभाव डालते हैं। लक्ष्य कोशिका झिल्लियों पर उपस्थित हार्मोनग्राही, झिल्ली योजित ग्राही, और कोशिका के अंदर उपस्थित ग्राही अंतरा कोशिकीयग्राही कहलाते हैं, जिसमें से अधिकांश केंद्रकीय ग्राही (केंद्रक में उपस्थित) होते है,

हार्मोन, ग्राहियों के साथ जुड़कर **हार्मोनग्राही सम्मिश्र** का निर्माण करते हैं (चित्र 22. 5 a,b)। प्रत्येक ग्राही सिर्फ एक हार्मोन के लिए विशिष्ट होता है, अत: ग्राही विशिष्ट होते हैं। हार्मोनग्राही सम्मिश्र के बनने से लक्ष्य ऊतक में कुछ जैव रासायनिक परिवर्तन होते हैं। अत: लक्ष्य ऊतक में उपापचय एवं कार्यिकी का नियमन हार्मोन द्वारा होता है। रासायनिक प्रकृति के आधार पर हार्मोन को समूहों में विभाजित किया जा सकता है:

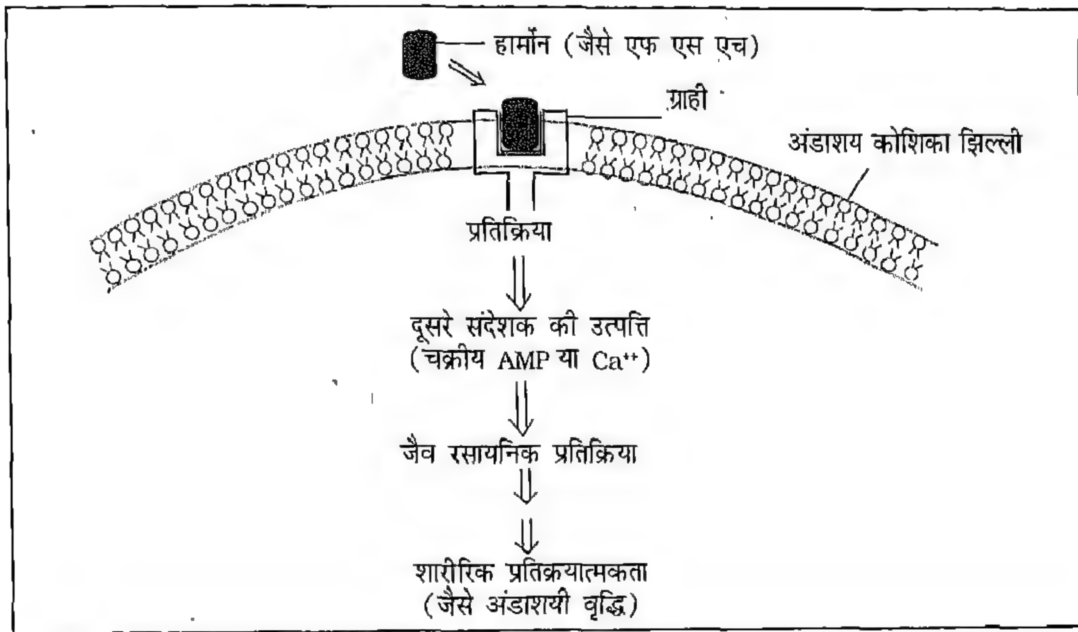
(ट) **पेप्टाइड, पॉलीपेप्टाइड, प्रोटीन** हार्मोन (जैसे इंसुलिन, ग्लूकागॉन, पीयूष ग्रंथि हार्मोन, हाइपोथैलेमिक हार्मोन इत्यादि)

(ब) **स्टीरॉइड** (उदाहरण के लिए कोटीसोल, टेस्टोस्टेरोन, एस्ट्राडायोल और प्रोजेस्टरॉन)

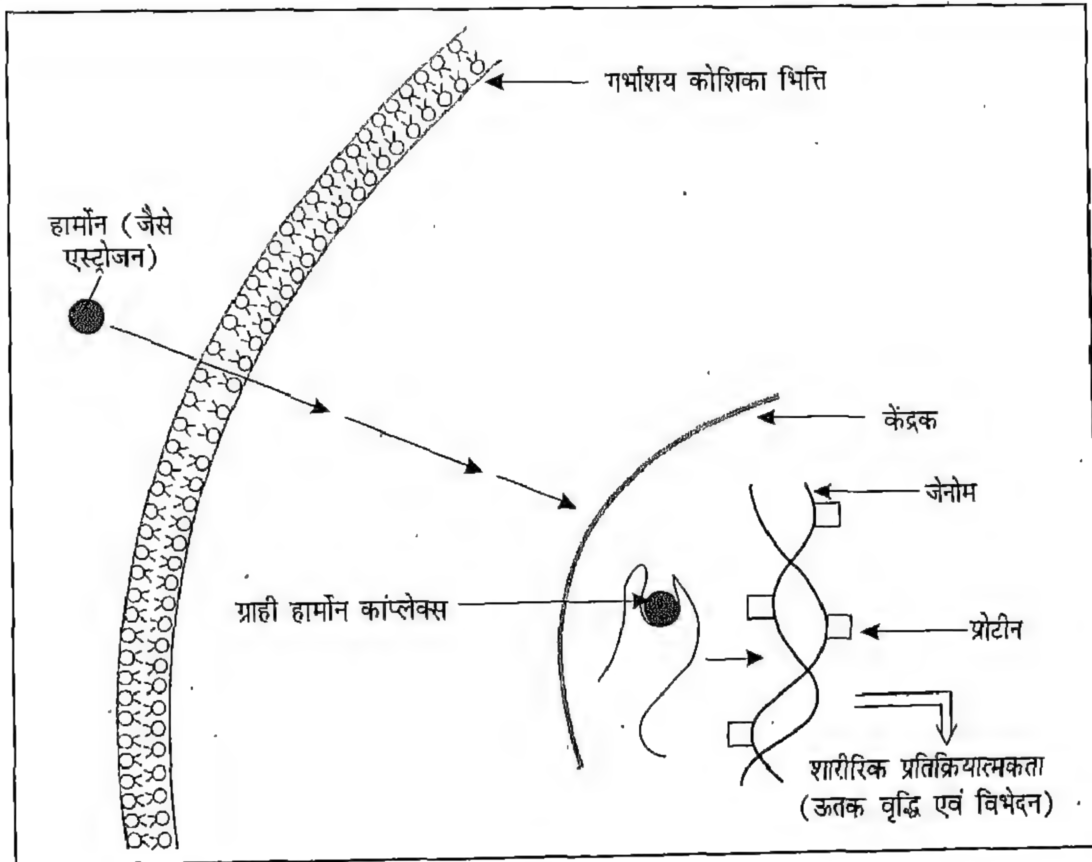
(स) **आयोडोथाइरोनिन** (थायराइड हार्मोन)

(द) **अमीनो अम्लों के व्युत्पन्न** (उदाहरण के लिए एपीनेफ्रीन)।

जो हार्मोन झिल्ली योजित ग्राहियों से क्रिया करते हैं वे साधारणतया लक्ष्य कोशिकाओं में प्रवेश नहीं कर पाते हैं, लेकिन द्वितीयक संदेशवाहकों का उत्पादन कर (जैसे कि चक्रीय ए एम पी, आई $पी_3$, Ca^{2+} आदि) अंतत: कोशिकीय उपापचय का नियमन करते हैं (चित्र 22.5 अ)। अंतरकोशिकीय ग्राहियों से क्रिया करने वाले हार्मोन (जैसे स्टीरॉइड हार्मोन, आयोडोथाइरोनिन आदि) हार्मोनग्राही सम्मिश्र एवं जीनोम के पारस्परिक क्रिया से जीन की अभिव्यक्ति अथवा गुणसूत्र क्रिया का नियमन करते हैं। संयुक्त जैव-रासायनिक क्रियाएं शरीर की कार्यिकी तथा वृद्धि को प्रभावित करती हैं (चित्र 22.5 बी)।



(अ)



(ब)

चित्र 22.5 (अ) प्रोटीन हार्मोन (ब) स्टेरॉयड हार्मोन - हार्मोन क्रियात्मकता की प्रक्रिया की आरेखीय प्रस्तुति

सारांश

कुछ विशेष प्रकार के रसायन हार्मोन की तरह कार्य कर मानव शरीर में रासायनिक समन्वय, एकीकरण और नियमन प्रदान करते हैं। ये हार्मोन कुछ विशेष कोशिकाओं अंत:स्रावी ग्रंथियों तथा हमारे अंगों की वृद्धि उपापचय एवं विकास को नियमित करते हैं।

अंत:स्रावी तंत्र का निर्माण हाइपोथैलेमस, पीयूष, पीनियल, थायरॉइड, अधिवृक्क, अग्नाशय, पैराथायरॉइड, थाइमस और जनन (वृषण एवं अंडाशय) द्वारा होता है। इनके साथ ही कुछ अन्य अंग जैसे जठर आंत्रीय पथ, वृक्क हाइपोथैलेमस, हृदय आदि भी हार्मोन का उत्पादन करते हैं। हाइपोथैलेमस द्वारा 7 मुक्तकारी हार्मोन और 3 निरोधी हार्मोन का उत्पादन होता है जो पीयूष ग्रंथि पर कार्य कर उससे उत्सर्जित होने वाले हार्मोन के संश्लेषण और स्रवण का नियंत्रण करते हैं। पीयूष ग्रंथि तीन मुख्य भागों में विभक्त होती है- पार्स डिस्टेलिस, पार्स इंटरमीडिया, पार्स नर्वोसा। पार्स डिस्टेलिस द्वारा 6 ट्रॉफिक हार्मोन का स्रवण होता है। पार्स इंटरमीडिया केवल एक हार्मोन का स्राव करता है, जबकि पार्स नर्वोसा दो हार्मोन का स्राव करता है। पीयूष ग्रंथि से स्रवित हार्मोन कायिक ऊतकों की वृद्धि, परिवर्धन एवं परिधीय अंत:स्रावी ग्रंथियों की क्रियाओं का नियंत्रण करते हैं। पिनियल ग्रंथि मेलाटोनिन का स्राव करती है जो कि हमारे शरीर की 24 घंटे की लय को नियंत्रित करता है, (जैसे कि सोने व जागने की लय, शरीर का तापक्रम आदि)। थाइरॉइड ग्रंथि से स्रवित होने वाले हार्मोन थाइरॉक्सीन आधारीय उपापचयी दर, केंद्रीय तंत्रिका तंत्र के परिवर्धन और परिपक्वन, रक्ताणु उत्पत्ति कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा के उपापचय, मासिक चक्र आदि का नियंत्रण करता है।

अन्य थायरॉइड हार्मोन थाइरोकैल्स्टिोनिन हमारे रक्त में कैल्सियम की मात्रा को कम करके उसका नियंत्रण करता है। पैराथायरॉइड ग्रंथियों द्वारा स्रवित पैराथायरॉइड हार्मोन (PTH) Ca^{2+} के स्तर को बढ़ाकर, Ca^{2+} के समस्थापन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। थाईमस ग्रंथियों द्वारा स्रावित थाइमोसिन हार्मोन टी-लिम्फोसाइट्स के विभेदीकरण में मुख्य भूमिका निभाता है, जो कोशिका केंद्रित असंक्राम्यता (प्रतिरक्षा) प्रदान करते हैं। साथ ही थाइमोसिन एंटीबॉडी का उत्पादन भी बढ़ाते हैं जो शरीर को तरल असंक्राम्यता (प्रतिरक्षा) प्रदान करते हैं। अधिवृक्क ग्रंथि मध्य में उपस्थित अधिवृक्क मध्यांश और बाहरी अधिवृक्क वल्कुट की बनी होती है। अधिवृक्क मध्यांश एपीनेफ्रीन और नॉरएपीनेफ्रीन हार्मोन का स्राव करता है।

ये हार्मोन सतर्कता, पुतलियों का फैलना, रोंगटे खड़े करना, पसीना आना, हृदय की धड़कन, हृदय संकुचन की क्षमता, श्वसन की दर, ग्लाइकोजेन अपघटन , वसा अपघटन को बढ़ाते हैं। अधिवृक्क वल्कुट ग्लूकोकॉर्टिकाइड्स (कॉर्टिसॉन) और मिनरेलोकॉर्टिकाइड्स (एल्डोस्टीरॉन) का स्राव करता है। ग्लूकोकॉर्टिकॉइड्स ग्लाईकोजन संश्लेषण, ग्लूकोनियोजिनेसिस, वसा अपघटन, प्रोटीन अपघटन, रक्ताणु उत्पत्ति, रक्त दाब और ग्लोमेरूलर निस्पंदन को बढ़ाते हैं तथा प्रतिरोधक क्षमता को दबा कर शोथ प्रतिक्रियाओं को रोकता है। खनिज कोर्टिकॉइडस शरीर में जल एवं वैद्युत अपघट्यों का नियमन करते हैं। अंत:स्रावी अग्नाशय ग्लूकागॉन एवं इंसुलिन हार्मोन का स्राव करता है। ग्लूकागॉन कोशिका में ग्लाइकोजेनोलिसिस तथा ग्लूकोनियोजेनेसिस को प्रेरित करता है, जिससे रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है। इसे हाइपरग्लासीमिया (अति ग्लूकोज रक्तता) कहते हैं। इंसुलिन शर्करा के अभिग्रहण और उपयोग को प्रेरित करती है और ग्लाइकोजिनेसिस के फलस्वरूप हाइपोग्लासिमिया हो जाता है। इंसुलिन की कमी से डायबिटीज मेलीटस (मधुमेह) नामक रोग हो जाता है।

वृषण एंड्रोजन हार्मोन का स्राव करता है जो नर के आवश्यक लैंगिक अंगों के परिवर्धन, परिपक्वन और क्रियाओं को, द्वितीयक लैंगिक लक्षणों का प्रकट होना, शुक्राणु जनन, नर लैंगिक व्यवहार, उपचयी पथक्रम और

रक्ताणु उत्पत्ति को प्रेरित करता है। अंडाशय द्वारा एस्ट्रोजेन और प्रोजेस्टेरॉन का स्राव होता है। एस्ट्रोजेन स्त्रियों में आवश्यक लैंगिक अंगों की वृद्धि व परिवर्धन और द्वितीयक लैंगिक लक्षणों के प्रकट होने को प्रेरित करता है। प्रोजेस्टेरॉन गर्भावस्था की देखभाल के साथ ही दुग्ध ग्रंथियों के परिवर्धन और दुग्धस्राव को बढ़ाता है। हृदय की अलिंद भित्ति एंट्रियल नेट्रियूरेटिक कारक का उत्पादन करता है, जो रक्त दाब कम करता है। वृक्क में एरीथ्रोपोइटिन का उत्पादन होता है जो रक्ताणु उत्पत्ति को प्रेरित करता है। जठर आंत्रीय पथ के द्वारा गैस्ट्रिन सेक्रेटिन, कोलीसिस्टोकाइनिन -पैंक्रियोजाइमिन और जठर अवरोधी पेप्टाइड का स्राव होता है। ये हार्मोन पाचक रसों के स्राव और पाचन में सहायता करते हैं।

अभ्यास

1. निम्नलिखित की परिभाषा लिखिए:
   (अ) बहि:स्रावी ग्रंथियाँ
   (ब) अंत: स्रावी ग्रंथियाँ
   (स) हार्मोन
2. हमारे शरीर में पाई जाने वालीं अंत:स्रावी ग्रंथियों की स्थिति चित्र बनाकर प्रदर्शित कीजिए।
3. निम्न द्वारा स्रवित हार्मोन का नाम लिखिए-
   (अ) हाइपोथैलेमस (ब) पीयूष ग्रंथि (स) थायरॉइड
   (द) पैराथायरॉइड (य) अधिवृक्क ग्रंथि (र) अग्नाशय
   (ल) वृषण (व) अंडाशय (श) थायमस
   (स) एट्रियम (ष) वृक्क (ह) जठर-आंत्रीय पथ
4. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

हार्मोन	लक्ष्य ग्रंथि
(अ) हाइपोथेलैमिक हार्मोन	____________
(ब) थायरोट्रॉफिन (टीएसएच)	____________
(स) कॉर्टिकोट्रॉफिन (एसीटीएच)	____________
(द) गोनेडोट्रोपिन (एलएच, एफएसएच)	____________
(य) मेलानोट्रोफिन (एमएसएच)	____________

5. निम्नलिखित हार्मोन के कार्यों के बारे में टिप्पणी लिखिए-
   (अ) पैराथायरॉइड हार्मोन (पीटीएच) (ब) थायरॉइड हार्मोन
   (स) थाइमोसिन (द) एंड्रोजेन
   (य) एस्ट्रोजेन (र) इंसुलिन एवं ग्लूकागॉन
6. निम्न के उदाहरण दीजिए-
   (अ) हाइपर ग्लाइसीमिक हार्मोन एवं हाइपोग्लासीमिक हार्मोन
   (ब) हाइपर कैलसीमिक हार्मोन
   (स) गोनेडोट्रॉफिक हार्मोन

(द) प्रोजिस्टेशनल हार्मोन

(य) रक्तदाब निम्नकारी हार्मोन

(र) एंड्रोजेन एवं एस्ट्रोजेन

7. निम्न लिखित विकार किस हार्मोन की कमी के कारण होते हैं–
(अ) डायबिटीज (ब) गॉइटर (स) क्रेटीनिज्म

8. एफ एस एच की कार्यविधि का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

9. निम्न लिखित के जोड़े बनाइए–

स्तंभ I	स्तंभ II
(i) टी$_4$	(अ) हाइपोथैलेमस
(ii) पीटीएच	(ब) थायरॉइड
(iii) गोनेडोट्रॉफिक रिलीजंग हार्मोन	(स) पीयूष ग्रंथि
(iv) ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन	(द) पैराथायरॉइड